काश्मीर

समस्या और पृष्ठभूमि

गोपीनाथ श्रीवास्तव

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली--६

इस पुस्तक में व्यक्त विचार स्वयं लेखक के हैं,
सरकारी नीति को वे प्रतिबिंबित नहीं करते। —लेखक

मूल्य : बारह रुपये
पहला संस्करण : १९६९

मुद्रक : हरि मुद्रण प्रतिष्ठान, कुकरेजा प्रेस, दिल्ली—३२

KASHMIR : SAMASYA AUR PRISHTHA BHOOMI
by Gopi Nath Shrivastava : Politics Rs.12

प्राक्कथन

काश्मीर का इतिहास बहुत प्राचीन है और साथ ही रोचक भी। कहते हैं कि आज जहां पर घाटी है वहीं पहले सतीसर झील थी जिसमें 'जलोद्भव' नामक दानव रहता था। कश्यप ऋषि से इस दानव के अत्याचारों की शिकायत उनके पुत्र, काश्मीर के नागों के राजा, नील ने की। ऋषि ने विष्णु की सहायता ली। विष्णु के भाई बलभद्र ने झील के पानी को अपने हल से सोख लिया और विष्णु ने अपने चक्र से दानव को मार डाला। कहा जाता है कि काश्मीर की सुरक्षा नील, शंख और पद्मनाग करते हैं। इस प्रकार घाटी की उत्पत्ति कश्यप ऋषि से हुई बताई जाती है। यह भी कहा जाता है कि पांडव राजाओं ने काश्मीर पर राज्य किया था। परीक्षित के पुत्र तथा अर्जुन के प्रपौत्र हरनदेव का काश्मीर पर शासन रहा है—यह भी माना जाता है। तीसरी शताब्दी में काश्मीर सम्राट् अशोक के शासनाधीन रहा। यह घाटी अशोक ने बौद्ध भिक्षुओं को उपहार में दे दी थी—इसका भी उल्लेख है। यह भी कहा जाता है कि सम्राट् ने वर्तमान श्रीनगर के निकट 'श्रीनगरी' की स्थापना की थी।

बाद में काश्मीर 'गोनन्द' वंश के एक राजा मिहिरकुल के भी अधीन रहा, जो बौद्ध अनुयायियों को मारने और उनके विहारों एवं स्तूपों को नष्ट करने में ही गौरवान्वित होता था। उसने अपने मनोरंजनार्थ पीर पंजाल दर्रे से १०० हाथियों को नीचे गिराने का आदेश दिया था। काश्मीर भारतीय राजाओं के भी अधीन रहा और भारतीय नरेश काश्मीर पर अपने गवर्नरों और वाइसरायों द्वारा शासन करते रहे। मातृगुप्त काश्मीर का एक ऐसा ही गवर्नर था। कुछ विद्वानों का मत है कि मातृगुप्त ही वास्तव में कवि-सम्राट् कालिदास था। प्रवरसेन काश्मीर का एक ऐसा राजा हुआ जो प्रदेश जीत-जीतकर पराजित राजाओं को फिर वापस कर देता था। सन् ७११-७१९ में चन्द्रापीड एक शक्तिशाली राजा हुआ जिसकी महत्ता चीन का राजा भी स्वीकार करता था। काश्मीर के सिंहासन को ललितादित्य जैसे प्रतापी और वीर सम्राट् ने भी सुशोभित किया, जिसकी विजय-पताका पंजाब, कन्नौज, तिब्बत तक फहराती थी और जिसके राज्य का विस्तार उत्तर में तिब्बत से लेकर द्वारका तक और उड़ीसा के सागर-तट तक और दक्षिण में दकन तक, पूर्व में बंगाल तक और पश्चिम में मध्य एशिया तक था। काश्मीर का वह स्वर्ण-युग था; कला और व्यापार उन्नति

के शिखर पर थे; संस्कृत की शिक्षा-दीक्षा, दर्शनशास्त्र, ललितकला, धर्म, विज्ञान और वास्तुकला में काश्मीर भारत के सब भागों से अद्वितीय था। काश्मीर भारत का मुकुट था।

काश्मीर में दिद्दा, सूर्यमती और कोटा जैसी कुशल, यद्यपि विलासप्रिय, रानियां भी हुईं। कोटा रानी की मृत्यु से काश्मीर में हिन्दू राज्य का अन्त हो गया।

सन् १३३९ में हिन्दू-आधिपत्य की समाप्ति पर काश्मीर मुसलमान शासकों के अधीन हो गया। जैनुल-आब्दीन (१४१७-६९) के जमाने में काश्मीर ने फिर उन्नति की, हिन्दू धर्म पुनर्जीवित हुआ, ललित कलाएं अर्थ-पोषित हुईं। मुगलों का भी आधिपत्य काश्मीर पर रहा। मुगल साम्राज्य के पतन के बाद काश्मीर सन् १७५२ में पठान शासकों के अधीन हो गया। यह शासन-काल अपनी बर्बरता और निर्दयता के लिए कुख्यात रहा। इसी शासनावधि में असंख्य पंडित घास के बोरों में बन्द करके डल झील में डुबो दिए गए थे और हिन्दुओं पर जजिया फिर से लगाया गया था। सन् १८१९ में रणजीतसिंह की सेना ने काश्मीर पर अधिकार कर लिया, बाद में यह राज्य डोगरा शासन के अधीन आ गया।

पन्द्रह अगस्त, सन्, १९४७ को 'इंडियन इण्डिपेंडेंस ऐक्ट' के लागू हो जाने से देशी राज्यों पर ब्रिटिश साम्राज्य की सर्वोच्च सत्ता समाप्त हो गई। भारत या पाकिस्तान में मिलने के लिए देशी राज्य स्वतंत्र हो गए। पाकिस्तान में काश्मीर के विलयन के लिए जिन्ना दांव-पेच खेलने लगे। जब सफलता नहीं मिली तब काश्मीर की सीमा पर हमले शुरू कर दिए गए और सशस्त्र पाकिस्तानियों ने घाटी में घुसपैठ शुरू कर दी। फिर नियमित रूप से कबाइलियों ने घाटी पर धावा बोल दिया। महाराजा ने भारत सरकार से सहायता की याचना और भारत में अधिमिलन के लिए प्रार्थना की। २७ अक्तूबर, १९४७ को महाराजा द्वारा हस्ताक्षरित अधिमिलन-पत्र को भारत के गवर्नर-जनरल ने स्वीकार कर लिया और काश्मीर संवैधानिक दृष्टि से भारत का अंग हो गया। भारत ने २८ अक्तूबर, १९४७ को पाकिस्तान को सूचित किया कि काश्मीर भारत में मिल गया है और यह आशा व्यक्त की कि पाकिस्तान आक्रमणकारियों को काश्मीर से हटाने में भारत को सहयोग देगा। पाकिस्तान ने इस अधिमिलन को मानने से इन्कार कर दिया। दोनों देशों में विवाद उठ खड़ा हुआ। भारत ने १ जनवरी, सन् १९४८ को सुरक्षा-परिषद् में पाकिस्तान के विरुद्ध शिकायत की। काश्मीर का मामला सुरक्षा-परिषद् में आ गया और तभी से काश्मीर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में शतरंज का मोहरा बनकर रह गया है।

इसके बाद काश्मीर का इतिहास बहुत संघर्षमय रहा है। किस प्रकार भारत ने आक्रमणकारियों को घाटी से खदेड़ा, किस प्रकार युद्ध-विराम लागू हुआ और काश्मीर का तिहाई भाग पाकिस्तान के कब्ज़े में आ गया और यह अभी तक उसके पास है; किस प्रकार सुरक्षा-परिषद् में दोनों ओर से तर्क-वितर्क होते रहे; संयुक्त राष्ट्र द्वारा नियुक्त मध्यस्थ अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते रहे; और किस प्रकार पाकिस्तान युद्ध-विराम रेखा का अतिक्रमण करता रहा, सैनिक संगठनों का सदस्य बनकर

अपने को शस्त्रों से लैस करता रहा, विभिन्न देशों से सांठ-गांठ करता रहा ; और किस प्रकार अपनी सैनिक शक्ति के घमंड में ५ अगस्त, सन् १९६५ को युद्ध-विराम रेखा को पार करके पाकिस्तानी सैनिक काश्मीर में घुस आए; किस प्रकार उनको मुंह की खानी पड़ी, और किस प्रकार बलपूर्वक काश्मीर लेने की पाकिस्तान की योजना पूर्णतया निष्फल हो गई—इस सब पर इस पुस्तक में सविस्तार प्रकाश डाला गया है।

शेख अब्दुल्ला के रवैये पर भी इस पुस्तक में विस्तृत चर्चा की गई है; वह पहले क्या थे और अब क्या हो गए हैं, इसका इसमें उल्लेख किया गया है। काश्मीर में अपनी सल्तनत कायम करने के शेख के मंसूबे पर क्योंकर पानी पड़ा, इसका भी पुस्तक में विशद वर्णन है। शेख ने अक्तूबर, १९६८ में पांच-दिवसीय सम्मेलन क्यों आयोजित किया, इस पर भी प्रकाश डाला गया है।

यदि यह पुस्तक काश्मीर राज्य के गौरवपूर्ण प्राग्-इतिहास में पाठकों की अभिरुचि पैदा कर सकी, राज्य की राजनीतिक गतिविधियों के समझने में उनकी सहायता कर सकी, और काश्मीर की वर्तमान समस्या के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में उनकी जिज्ञासा को शांत कर सकी तथा उनके विभिन्न प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर दे सकी, तो मैं अपना प्रयास सफल समझूंगा।

वसन्त-पंचमी, १९६९

—गोपीनाथ श्रीवास्तव

अनुक्रम

अपने प्रिय बच्चों को !

काश्मीर : समस्या और पृष्ठभूमि

अध्याय १

काश्मीर का इतिहास

जम्मू और काश्मीर राज्य का क्षेत्रफल ८६,०२३ वर्गमील है। आकार में यह इंग्लैंड, वेल्स और स्काटलैंड के बराबर है। यह उत्तर में अफगानिस्तान, चीन और रूस तथा पश्चिम और दक्षिण में पाकिस्तान से घिरा है। इसकी आबादी मिश्रित है। ७७ प्रतिशत मुसलमान, २० प्रतिशत हिन्दू, ३ प्रतिशत सिख और बौद्ध मत के अनुयायी व अन्य अल्पसंख्यक वर्ग के लोग हैं।

इसके उत्तर में गिलगित, चितराल और बाल्टिस्तान हैं, जहां के लोग मुख्यत: मुसलमान हैं। केन्द्र में काश्मीर की घाटी है। यहां हिन्दू और मुसलमान दोनों आबाद हैं। दक्षिण में जम्मू है जहां की आबादी अधिकांशत: हिन्दू है। ये हिन्दू डोगरा जाति के हैं। तिब्बत और काश्मीर घाटी के बीच लद्दाख है जहां तिब्बती वंश के बौद्ध रहते हैं।

जम्मू और काश्मीर में एक ज़बान नहीं बोली जाती। यहां के लोग मुख्तलिफ ज़बानें बोलते हैं, उनके धर्म मुख्तलिफ हैं, और उनकी पोशाक, रीति-रिवाज भी मुख्तलिफ हैं। काश्मीरी, डोगरी, बाल्टी, दर्दी, पंजाबी, हिन्दी और उर्दू राज्य की भाषाएं हैं। ३४ प्रतिशत लोग काश्मीरी, १५ प्रतिशत डोगरी और ३० प्रतिशत पंजाबी बोलते हैं। शेष लोग अन्य भाषाएं बोलते हैं, जैसे भोटिया, लद्दाखी और बाल्टी। काश्मीर की घाटी में लोग काश्मीरी बोलते हैं।

जम्मू से पूर्व की ओर पंजाब के मैदानी क्षेत्र तक जो भी रहते हैं, चाहे वे हिन्दू हों, मुसलमान हों, सिख हों, उच्च जाति के राजपूत हों या निम्नवर्ग के लोग हों, डोगरा कहलाते हैं। इन सबकी एक भाषा है। काश्मीर के मुसलमान वहां के हिन्दुओं से बहुत घुले-मिले हैं। उनमें कट्टरपन बिल्कुल नहीं है और न धार्मिक असहिष्णुता। काश्मीर के लगभग ९५ फीसदी मुसलमान सुन्नी हैं, और जैसा 'इम्पीरियल गज़ेटियर' में कहा गया है, ये मुसलमान हृदय से हिन्दू हैं और उनके रीति-रिवाजों से प्रभावित हैं। हिन्दुओं में ब्राह्मण, राजपूत, खत्री और ठाकुर पाए जाते हैं; मुसलमानों में शेख, सैयद, मुगल और पठान हैं। शेख काश्मीर के पुराने बाशिन्दे हैं जो धर्म-परिवर्तन से मुसलमान बन गए थे। वे अपने नामों के आगे पंडित, कौल, भट्ट, ऋषि और दर लगाते हैं।

काश्मीर की मुख्य समस्या उसकी गरीबी रही है। अधिकतर लोगों के जीविकोपार्जन का मुख्य साधन कृषि है। काश्मीर के आर्थिक ढांचे में वनों का प्रमुख स्थान है। देवदार के स्लीपर बाहर भेजे जाते हैं। खनिज पदार्थ के रूप में जिप्सम और लाइमस्टोन पाए जाते हैं। कोयला और लोहा थोड़ा-बहुत पाया जाता है, लेकिन इतना नहीं कि वाणिज्य की दृष्टि से उनका उपयोग किया जा सके। घरेलू धन्धों में लकड़ी और ऊन का काम बहुत प्रसिद्ध है। काश्मीरी शाल जगत्-विख्यात हैं। किन्तु उद्योग-धन्धे होते हुए भी साधारण काश्मीरी बहुत गरीब हैं।

काश्मीर की घाटी की रमणीकता और उसकी छटा अवर्णनीय है। सही अर्थ में वह 'पूर्व का स्वर्ग' है। जहांगीर को यह स्थल बहुत प्रिय था। यदि काश्मीर अपनी अलौकिक सुन्दरता के कारण आक्रमणकारियों को सदैव से आकर्षित करता रहा है तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं।

काश्मीर के इतिहास को चार दौरों में विभाजित किया जा सकता है। पहले दौर में स्थानीय शासक आते हैं जिनपर भारत के सम्राटों ने विजय पाई या जिन्होंने स्वयं घाटी के बाहर भारत और केन्द्रीय एशिया में अपने राज्य की सीमा का विस्तार किया। सम्राट् अशोक ने ईसा-पूर्व तीसरी शताब्दी में काश्मीर में बौद्ध धर्म फैलाया। पहली शताब्दी में कनिष्क ने इस धर्म को और प्रश्रय दिया। कुषाण सम्राटों की अवनति के बाद काश्मीर के स्थानीय सूबेदारों ने शासन की बागडोर संभाली और ब्राह्मण मत को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। छठी शताब्दी में घाटी को हूणों ने अपने कब्ज़े में किया। सन् ५३० ई० में काश्मीर फिर स्वतंत्र हुआ, लेकिन तुरन्त बाद उज्जैन साम्राज्य के अधीन हो गया। उज्जैन के विक्रमादित्य-वंश के बाद काश्मीर एक बार फिर स्वतंत्र हुआ और तब उसका स्वर्ण-युग प्रारम्भ हुआ। इसी समय काश्मीर में हिन्दू और बौद्ध धर्म का एकीकरण हुआ। सन् ६९७-७३८ में ललितादित्य नामक एक बहुत वीर और प्रसिद्ध शासक काश्मीर में हुआ। उसकी सेनाओं ने पूर्व में बंगाल तक, दक्षिण में कोंकण तक, उत्तर-पश्चिम में तुर्किस्तान तक और उत्तर-पूर्व में तिब्बत तक अपनी विजय-पताका फहराई। उसके शासन-काल में बहुत-से निर्माण-कार्य हुए। इसी सम्राट् के एक वंशज, अवन्तिवर्मन, ने सन् ८५५-८३ में घाटी में बहुत से सुधार किए। उसके एक इंजीनियर ऋषि सुय्य ने जल-निष्कासन की उत्तम व्यवस्था की। काश्मीर में हिन्दू-आधिपत्य की अवधि में एक सम्राज्ञी भी हुई जिसका नाम था दिद्दा।

मुस्लिम शासन

हिन्दू-आधिपत्य का दौर लगभग सन् १३३९ में समाप्त हुआ और मुसलमान शासकों का दौर प्रारम्भ हुआ। चौदहवीं शताब्दी के शुरू में जुल्जू या दुलाहा नामक आक्रमणकारी ने काश्मीर पर बड़ा ज़बरदस्त हमला किया। इस आक्रमणकारी को हराने के लिए घाटी के सेनापति ने पश्चिम में स्थित स्वात के शाहमीर और पूर्व में

तिब्बत के रेंछन शाह से सहायता ली। रेंछन शाह ने सेनापति को मार डाला और उसकी पुत्री कोटा रानी से विवाह करके स्वयं काश्मीर की गद्दी पर बैठ गया। बाद में रेंछन शाह मुसलमान हो गया और अपना नाम सदरुद्दीन रखा। रेंछन शाह फिर हिन्दू नहीं बन सका, क्योंकि हिन्दू जाति उसे अपनाने को तैयार नहीं थी। कहा जाता है कि एक दिन सुबह उसने बुलबुल शाह को नमाज पढ़ते देखा और नमाज पढ़ने के ढंग से प्रभावित होकर तुरन्त इस्लाम धर्म को ग्रहण कर लिया। सदरुद्दीन की मृत्यु के बाद कोटा रानीका शासन केवल ५० दिन रह सका। स्वात के शाहमीर ने काश्मीर पर कब्ज़ा कर लिया और अपना नाम शमसुद्दीन रखा। काश्मीर का यह पहला सुल्तान बना। सन् १३९४ में मूर्तिभंजी सिकन्दर नामक व्यक्ति गद्दी पर बैठा। उसने हिन्दुओं से कहा कि या तो वे अपना धर्म-परिवर्तन करें या देश के बाहर जाएं, अन्यथा उन्हें मौत के घाट उतार दिया जाएगा। हिन्दुओं की सभी धर्म-पुस्तकें डल झील में फेंक दी गईं और असंख्य ब्राह्मण मार डाले गए। मारे गए ब्राह्मणों के जनेऊओं का वज़न ही ७ मन था। सिकन्दर के बाद सन् १४१७-६९ में जैनुल-आब्दीन काश्मीर का शासक बना। यह सहिष्णु शासक था। इसके ज़माने में हिन्दू मंदिर फिर बनाए गए। ब्राह्मण काश्मीर में वापस बुलाए गए और हिन्दू धर्म पुनर्जीवित हुआ। नहरों और पुलों का निर्माण हुआ, कर कम किए गए और ललित कलाओं का पोषण किया गया। उसका पुत्र हैदरशाह एक कमजोर शासक था जिसे उत्तर के चक लोगों ने हरा दिया। चक शासन-काल में सुन्नी मुसलमान और हिन्दू दोनों ही परेशान किए गए। दोनों ने अपने दुःख-निवारण के लिए भारत के मुगल-साम्राज्य से सहायता की याचना की। सन् १५८६ में अकबर की सेना ने काश्मीर पर कब्ज़ा कर लिया और इस तरह काश्मीर मुगल बादशाहों के आधिपत्य में आ गया। इस समय काश्मीर में बड़ी उन्नति हुई। गांवों की देख-भाल के लिए अधिकारी नियुक्त किए गए। औरंगज़ेब के सम्राट् होने पर उसकी हिन्दू-विरोधी नीति का असर काश्मीर पर भी पड़ा। मुगल-साम्राज्य के पतन पर काश्मीर में अशांति और अराजकता का बोल-बाला हो गया। सन् १७५२ में काश्मीर पठान शासकों के अधीन आ गया। यह शासन-काल बहुत ही बर्बर और निर्दयी रहा। पठान गवर्नर असद खां, कहा जाता है, दो-दो पंडितों को घास के बोरों में बन्द कर देता और डल झील में उन्हें फिकवा देता था। हिन्दुओं पर जज़िया फिर से लगाया गया। मीर हज़ार एक दूसरा गवर्नर हुआ जो घास के बोरों की जगह चमड़े के बोरों का इस्तेमाल करता था। वह हिन्दुओं और शिया मुसलमानों, दोनों को डल झील में डुबो देता था। अता मुहम्मद खां एक अन्य गवर्नर हुआ जो औरतों के लिए भयानक था। लोग अपनी लड़कियों के सिर मुड़ा देते थे या उनकी नाक काट देते थे जिससे वे देखने में कुरूप लगें और अता मुहम्मद खां के चंगुल से बच सकें।

सिख-विजय

अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में पंजाब में सिख शक्ति का प्रादुर्भाव हुआ और काश्मीर के इतिहास का तीसरा दौर प्रारम्भ हुआ। पठान गवर्नरों से पीड़ित जनता ने सहायता के लिए सिखों से याचना की। काश्मीर घाटी के एक सरदार बीरबल दर लाहौर के सिख-दरबार में गए और रणजीतसिंह से अनुरोध किया कि काश्मीर पर वह आक्रमण करें। सन् १८१९ में रणजीतसिंह की सेनाओं ने काश्मीर पर आधिपत्य कर लिया। काबुल के पठानों के कुशासन का इस प्रकार अन्त हुआ और पीड़ित जनता ने सुख और शांति की सांस ली। उसने सिख-शासन का स्वागत किया। सिख-शासन पठानों के शासन से बेहतर था। सिख-शासनकाल में काश्मीर के गवर्नर मोतीराम, कृपाराम, शेरसिंह, मियांसिंह, गुलाम मोहिउद्दीन और इमामुद्दीन थे। मोतीराम मुसलमानों को तंग करता रहता था। कृपाराम दुर्बल और नाकारा था। शेरसिंह भोग-विलास में लिप्त रहता था। इसी के ज़माने में एक बड़ा ज़बरदस्त अकाल काश्मीर में पड़ा जिसमें काश्मीर की आबादी घटकर एक-चौथाई रह गई। मियांसिंह बहुत तेज़ था। वह सिख सेना की दुर्बलताओं को रोकना चाहता था। मोहिउद्दीन व इमामुद्दीन रणजीतसिंह की मृत्यु से बाद कुछ समय के लिए काश्मीर के गवर्नर रहे। यह वह समय था जब अंग्रेज़ काश्मीर को ललचाई दृष्टि से देखने लगे थे। उन्होंने काश्मीर पर कब्ज़ा करने के लिए रणजीतसिंह के दरबार के एक मंत्री गुलाबसिंह से सहयोग की याचना की।

डोगरा शासन

राजपूत वंश के डोगरा सरदार राना रणजीतदेव अठारहवीं शताब्दी के मध्य में जम्मू के राजा थे। उस समय पास-पड़ोस में कई छोटे-मोटे पहाड़ी राज्य थे जो सदैव एक-दूसरे से लड़ा करते थे। इस आपसी फूट और सन् १७८० में रानादेव की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार के झगड़े के कारण पंजाब के महाराजा रणजीतसिंह का १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ में जम्मू और निकटवर्ती क्षेत्रों पर कब्ज़ा हो गया। महाराजा रणजीतसिंह को रानादेव के भतीजे के तीनों पोतों—गुलाबसिंह, ध्यानसिंह और सुचेतसिंह—ने अपनी सेनाएं अर्पित कीं। ध्यानसिंह को महाराजा ने अपना मंत्री बना लिया, गुलाबसिंह को जम्मू का राज्य दे दिया। ध्यानसिंह पूंछ के राजा भी बना दिए गए और सुचेतसिंह को रामनगर का सूबेदार बना दिया गया। १५ वर्ष की अवधि में तीनों भाइयों ने आसपास के सभी प्रदेशों को जीत लिया। ध्यानसिंह की हत्या के बाद और सुचेतसिंह तथा उसके पुत्र हीरासिंह की हत्या के बाद, भाइयों का राज्य भी गुलाबसिंह के हाथ में आ गया—पूंछ के राज्य को छोड़कर, जिसको लाहौर की सरकार ने जब्त कर लिया। काश्मीर के इतिहास का यह चौथा दौर था।

सन् १८४६ में पहली सिख-लड़ाई के बाद अंग्रेज और लाहौर-दरबार के बीच समझौता कराने के लिए गुलाबसिंह को भेजा गया था। ९ मार्च, सन् १८४६ को एक संधि हुई। इस संधि द्वारा सिख शासक से कहा गया कि वह ईस्ट इंडिया कम्पनी को युद्ध की क्षतिपूर्ति के रूप में एक करोड़ रुपया दें, या सतलुज व ब्यास की नदियों के बीच सभी पहाड़ियों और मैदानी प्रदेशों को समर्पित कर दें। चूंकि सिख शासक एक करोड़ रुपये की क्षति-पूर्ति नहीं दे सके, इसलिए उन्हें ब्यास और सिंध नदियों के बीच के सभी पहाड़ी प्रदेशों को, जिनमें जम्मू और काश्मीर भी शामिल था, छोड़ देना पड़ा। १६ मार्च, सन् १८४६ की अमृतसर-संधि[1] के अनुसार यह तय हुआ कि गुलाबसिंह ७५ लाख रुपया

१. (क) यह संधि गुलाबसिंह और गवर्नर-जनरल हार्डिंज के दो प्रतिनिधियों एफ० कर्री और लारेंस के बीच हुई थी। इसमें १० अनुच्छेद थे। पहले अनुच्छेद के द्वारा बाहुल को छोड़कर जम्मू-काश्मीर, गिलगित आदि महाराजा गुलाबसिंह और उसके उत्तराधिकारियों को दिए गए। दूसरे अनुच्छेद में पूर्व की सीमा-निर्धारण की बात कही गई। तीसरे अनुच्छेद में कहा गया कि महाराजा गुलाबसिंह ७५ लाख रुपये ब्रिटिश सरकार को प्रतिफलस्वरूप देंगे, जिसमें से २५ लाख रुपये १ अक्तूबर, सन् १८४६ को और शेष ५० लाख संधि की अन्तिम स्वीकृति पर दिए जाएंगे। चौथे अनुच्छेद में कहा गया कि ब्रिटिश सरकार की सहमति के बिना महाराजा के राज्य की सीमा में कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा। पांचवें अनुच्छेद में महाराजा और ब्रिटिश सरकार के बीच वाद-विवाद उठ खड़े होने पर मध्यस्थता की बात कही गई। छठे अनुच्छेद में ब्रिटिश सरकार द्वारा महाराजा की सेनाओं का पहाड़ी क्षेत्रों अथवा उनके राज्य के समीपवर्ती इलाकों के उपयोग करने की बात कही गई। सातवें अनुच्छेद में महाराजा को किसी भी अंग्रेज, यूरोपियन या अमेरिकन को ब्रिटिश सरकार की रजामंदी के बिना सेवा में रखने की मनाही की गई। आठवें अनुच्छेद में महाराजा से कहा गया कि वह ११ मार्च, सन् १८४६ को ब्रिटिश सरकार और लाहौर-दरबार से की गई संधि का, जहांतक उसका सम्बन्ध महाराजा को हस्तांतरित प्रदेशों से है, पालन करेगा। नौवें अनुच्छेद में महाराजा को आश्वासन दिया गया कि ब्रिटिश सरकार बाहरी आक्रमणों से महाराजा के राज्य की रक्षा करेगी। दसवें अनुच्छेद में कहा गया कि महाराजा ब्रिटिश सरकार की श्रेष्ठता को स्वीकार करते हैं और इसके प्रतिफलस्वरूप वह प्रतिवर्ष ब्रिटिश सरकार को एक घोड़ी, १२ ऊन वाली बकरियां और बकरे (६ नर और ६ मादा) और ६ जोड़े काश्मीरी शाल देंगे।

(ख) लद्दाख पर १७वीं शताब्दी के प्रारम्भ में स्कार्दू के बाल्टी-सरदार ने विजय प्राप्त की। बाद में लद्दाख स्वतंत्र हो गया। १८वीं शताब्दी के अन्त में सोकपास की मुगल वन जाति ने हमला किया। इस हमले को काश्मीर के मुस्लिम गवर्नर की सहायता से निष्फल कर दिया गया। उस समय से लेकर सन् १८३४ तक लद्दाख काश्मीर का करद राज्य बना रहा।

बाल्टिस्तान सन् १८४० तक स्कार्दू के राजा के अधीन स्वतंत्र रहा। सन् १८४२ के लगभग गुलाबसिंह की सेना ने इसको जीत लिया और अपने कब्जे में कर लिया।

गिलगित पर १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक ट्राखेन राजवंश के राजा राज्य करते रहे। यासीन के खुशवक्त-परिवार के सुलेमान शाह ने इसे अंतिम ट्राखेन राजा से छीन लिया। सुलेमान शाह की हत्या के बाद आजाद खां गिलगित का शासक हुआ। उसकी भी हत्या कर दी गई और नागर के तानीशाह गिलगित पर काबिज हो गए। इसके बाद उसके पुत्र शाह सिकन्दर ने शासन किया। उसकी भी हत्या कर दी गई और यासीन के गौहर अमन खुशवक्त ने गिलगित पर कब्जा कर लिया। सन् १८४२ में शाह सिकन्दर के भाई करीम खां ने विजय प्राप्त की और गिलगित का राजा बन बैठा। उसने गौहर अमन को काश्मीर के गवर्नर से सहायता लेकर सिख सेना की मदद से हराया था।

इस प्रकार पहली सिख लड़ाई के प्रारम्भ होने से पूर्व सिखों का राज्य जम्मू, काश्मीर और

ब्रिटिश सरकार को देंगे और ब्रिटिश सरकार जम्मू, काश्मीर और गिलगित पर गुलाबसिंह के आधिपत्य को स्वीकार कर लेगी किन्तु सर्वोच्च सत्ता अंग्रेज़ सरकार की ही रहेगी। गुलाबसिंह के लिए फिर भी पूरे प्रदेश पर जो, उसे मिला था, कब्ज़ा करना सरल नहीं था। सिखों द्वारा नियुक्त काश्मीर के गवर्नर इमामुद्दीन ने प्रतिरोध किया। ब्रिटिश और जम्मू सरकार ने मिलकर उससे मोर्चा लिया और तब इमामुद्दीन ने आत्म-समर्पण किया और गुलाबसिंह के आधिपत्य में पूरा प्रदेश आ गया। गुलाबसिंह योग्य, बुद्धिमान् और न्यायप्रिय शासक थे। इनके शासन-काल में जनता की आर्थिक दशा सुधरी और राज्य में शांति और व्यवस्था स्थापित हुई। सन् १८५७ में गुलाबसिंह की मृत्यु के बाद उनके पुत्र रणवीरसिंह राजा हुए। रणवीरसिंह की मृत्यु सन् १८८५ में हुई और गद्दी प्रतापसिंह को मिली। इनके शासन-काल में अंग्रेज़ों ने राज्य का नियंत्रण अपने हाथ में लेने का प्रयास किया। सन् १८८९ में अंग्रेज़ों ने ब्रिटिश पोलीटिकल एजेण्ट के अधीन गिलगित-एजेन्सी कायम की। इसी समय से गिलगित काश्मीर-दरबार के नियंत्रण से बाहर हो गया। काश्मीर के निकट रूस के होने की वजह से अंग्रेज़ों ने न केवल गिलगित को अपने नियंत्रण में ले लिया बल्कि उसे राज्य में एक रीजेण्ट रखने के लिए बाध्य कर दिया। सन् १९२५ में प्रतापसिंह का देहान्त हुआ और जम्मू की गद्दी लेफ्टिनेंट जनरल महाराज सर हरीसिंह को मिली। हरीसिंह प्रतापसिंह के भतीजे थे। हरीसिंह सन् १९२५ से १९४८ तक जम्मू और काश्मीर के महाराजा रहे। सन् १९३४ में काश्मीर में विधान-सभा स्थापित हुई। इसके ७५ सदस्यों में से ३५ सदस्य महाराजा द्वारा मनोनीत थे। केवल ८ प्रतिशत जनता को मताधिकार प्राप्त था। सन् १९३९ में मंत्रि-परिषद् की स्थापना की गई किन्तु वास्तविक सत्ता महाराजा के हाथ में ही रही।

काश्मीर घाटी का प्राचीन इतिहास

काश्मीर की घाटी के सम्बन्ध में कल्हण की 'राजतरंगिणी' में एक उपकथा दी हुई है। कहा जाता है कि आज जहां पर घाटी है, वहां पहले एक झील थी। यह झील पर्वतों की बर्फ के पिघलने से बनी थी। झील को सतीसर कहते थे। सातवें मनु के समय जलोद्भव नाम का एक दानव इस झील में रहता था। यह दानव पड़ोसी प्रदेशों पर बड़ा अत्याचार करता था। एक समय ऋषि कश्यप, जो सभी नागों के पूज्य पिता हैं, उत्तरी भारत की तीर्थयात्रा पर निकले हुए थे। उन्हें अपने पुत्र नील से, जो काश्मीर के नागों का राजा था, जलोद्भव दानव के अत्याचारों का पता चला। ऋषि ने दानव को दंड देने का निश्चय किया और इस प्रयोजन से वे ब्रह्माजी के पास सहा-

---

समीपवर्ती क्षेत्रों में फैला हुआ था। सन् १८४६ में पहली सिख लड़ाई के बाद ९ मार्च, १९४६ की लाहौर-संधि द्वारा जम्मू, काश्मीर और समीपवर्ती पहाड़ी प्रदेश अंग्रेज सरकार को हस्तांतरित हो गए, जिन्हें उसने १९ मार्च, १९४६ की संधि द्वारा ७५ लाख रुपये लेकर गुलाबसिंह को दे दिया।

यतार्थ गए। ब्रह्माजी से उन्होंने प्रार्थना की। उनकी प्रार्थना स्वीकार हुई। ब्रह्माजी के आदेश से सभी देवता सतीसर गए और पहाड़ी की चोटियों पर अपना-अपना स्थान ग्रहण कर लिया। दानव झील से निकल नहीं रहा था, इसलिए विष्णु ने अपने भाई बलभद्र से झील को सुखा देने का अनुरोध किया। बलभद्र ने अपने हल से झील के पानी को सोख लिया। जब झील सूख गई तो विष्णु ने जलोद्भव पर प्रहार किया और अपने चक्र से उसे मार डाला। इस प्रकार कश्यप ने काश्मीर घाटी को उत्पन्न किया। अनेकों और देवताओं ने वहां वास करना प्रारम्भ कर दिया और कहा जाता है कि देवियों ने अनेकों नदियों का रूप ग्रहण किया।

कश्यप के एक श्राप के कारण पहले लोग घाटी में ६ महीने रहते थे और ६ महीने वे घाटी से बाहर चले जाते थे। कहा जाता है कि यहां पिशाच व यक्ष रहते थे। चार युग बीत जाने के बाद नील नाग की कृपा से चन्द्रदेव ब्राह्मण ने देश को पिचाशों तथा कड़ी सर्दी से परित्राण दिलाया और काश्मीर वर्ष-भर रहने योग्य बन गया। आज भी दिसम्बर-जनवरी में पौष के कृष्णपक्ष में १५वीं तिथि को काश्मीरी ब्राह्मणों द्वारा खिचड़ी-अमावस्या का त्योहार मनाया जाता है। खिचड़ी हर घर में बनाई जाती है और आखिर में उपहारस्वरूप पिशाचों और यक्षों के लिए रख दी जाती है।

इस घाटी में सबसे पहले बसने वाले लद्दाख, दर्दिस्तान और भारत के मैदान के लोग थे। भारत के जो लोग वहां बस गए थे वे जाड़ों में वहां से वापस चले आते थे। धीरे-धीरे वे लोग वहां जाड़ों में भी रहने के अभ्यस्त हो गए और मूल निवासी की तरह रहने लगे। इस प्रदेश में जो आर्य भाषाएं बोली जाती हैं वे 'दर्दी' कहलाती हैं। बाद में काश्मीर में और भी बहुत-से वंशों के लोग—मुगल, पठान, पंजाबी, पहाड़ी—आकर बस गए।

कल्हण के अनुसार काश्मीर संस्कृत-साहित्य का पीठ था। काश्मीर के लोग सुसभ्य और सुसंस्कृत थे और लगभग दो हज़ार वर्ष तक काश्मीरी विद्वानों ने न्याय-शास्त्र और काव्य, व्याकरण आदि पर महत्त्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं।

कल्हण ने 'राजतरंगिणी' में सर्वप्रथम गोनन्द प्रथम का उल्लेख किया है। गोनन्द का शासन ६५३ कलि सम्वत् से प्रारम्भ हुआ, जब कि महाराजा युधिष्ठिर का राज्याभिषेक हुआ था। कल्हण का कहना है कि गोनन्द प्रथम मगध के राजा जरासंध का सम्बन्धी था। जब जरासंध और कृष्ण में यमुना-तट पर लड़ाई हो रही थी, गोनन्द जरासंध के सहायतार्थ गया था और मथुरा में कृष्ण को घेर लिया था। घमासन युद्ध के बाद कृष्ण के भाई बलभद्र ने गोनन्द को मार डाला। उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र दामोदर राजगद्दी पर बैठा। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए दामोदर ने कृष्ण पर उस समय आक्रमण किया जब वह और कृष्ण गांधार में एक स्वयंवर में भाग लेने गए थे। लड़ाई में दामोदर मारा गया और उसकी पत्नी यशोवती कृष्ण की सलाह से काश्मीर की रानी बनी। यशोवती के एक पुत्र हुआ, जिसका नाम गोनन्द रखा गया। गोनन्द द्वितीय का बचपन में ही राज्याभिषेक किया

गया। इसी समय महाभारत का युद्ध छिड़ गया और चूंकि गोनन्द द्वितीय बहुत छोटा था, इसलिए कौरव और पांडवों में से किसीने भी उसकी सहायता की याचना नहीं की। यही कारण है कि महाभारत के युद्ध में काश्मीर और उसके शासक का उल्लेख नहीं आता है।

कल्हण के अनुसार गोनन्द द्वितीय के बाद ३५ राजा और हुए। उनके सम्बन्ध में सारे अभिलेख नष्ट हो गए, इसलिए उनका कोई विवरण नहीं मिलता है। काश्मीरियों का विश्वास है कि पांडव वंश के राजाओं ने भी काश्मीर पर राज्य किया था और इन ३५ 'लुप्त' राजाओं में २३ राजा पांडव वंश के थे। मार्तण्ड तथा अन्य मंदिरों के भग्नावशेष 'पांडव लरी' या 'पांडव भवन' कहलाते हैं। उन लुप्त राजाओं में परीक्षित का पुत्र और अर्जुन का प्रपौत्र हरनदेव भी था जो हस्तिनापुर के राज्य के लिए अपने भाई जनमेजय से लड़ा था। किन्तु जब वह अपने भाई का सामना नहीं कर सका तो छम्ब पहाड़ी की तरफ भागा और एक कुटी में जा बसा। वहां एक ऋषि तपस्या कर रहे थे। ऋषि ने उससे कहा कि वह एक दिन काश्मीर का राजा होगा। कहा जाता है कि हरनदेव तब काश्मीर गया और गोनन्द द्वितीय की सेना में भर्ती हो गया। अपनी योग्यता के कारण वह प्रधान मंत्री बन बैठा। लोभवश उसने कुछ लोगों की सहायता से गोनन्द को मार डाला और स्वयं राजा बन बैठा। काश्मीर में पांडव वंश का यह पहला राजा हुआ और इसने ३० वर्ष तक राज्य किया।

शंकराचार्य पहाड़ी पर एक पुराना मंदिर है। उसके बारे में एक कथा प्रचलित है। कहा जाता है, उसे पांडव राजा संदीपन ने बनवाया था। यह भी कहा जाता है कि इस राजा का राज्य गांधार से लेकर कन्नौज तक फैला हुआ था। इस वंश का दूसरा राजा भीमसेन हुआ जो अपनी सेनाएं कराकोरम तक ले गया और एशिया के केन्द्रीय नगरों पर कब्ज़ा किया। एक अन्य राजा सुदर्शन पांडव हुआ। इसके शासन-काल में संधि नगर ऊलर झील में समा गया। उसके समय में जनता का नैतिक स्तर बहुत गिर गया था। नन्दगुप्त ने, जो जाति का कुम्हार, किन्तु संन्यासी था, लोगों को पापमय काम करने से बहुत मना किया; किन्तु जब उसकी किसीने नहीं सुनी तो उसने वह स्थान छोड़ दिया। एक रात भारी भूकम्प आया। पृथ्वी से जल निकला और पूरा शहर ऊलर झील में समा गया। साथ ही पहाड़ी का एक हिस्सा गिर गया और बारामूला पर रुक गया। इस प्रकार जलमग्न शहर झील में परिवर्तित हो गया।

कल्हण ने पहली पुस्तक में जिन राजाओं का वर्णन किया है उनमें से एक हैं मगध के सम्राट् अशोक, जिनका राज्य बंगाल से हिन्दूकुश तक फैला हुआ था। दूसरी पुस्तक में ६ राजाओंका वर्णन है। राज्यकाल की अवधि १९२ वर्ष दी गई हैं। तीसरी पुस्तक में १० राजाओं का वर्णन है और राज्यकाल की अवधि ५८९ वर्ष, १० महीने १ दिन बताई गई है। चौथी पुस्तक में कार्कोट के राजाओं का वर्णन है जिनके राज्यकाल की अवधि २५४ वर्ष, ५ महीने, २७ दिन बताई गई है। इसमें १७ राजा हुए। पांचवीं पुस्तक में उत्पल वंश का उल्लेख है, जिनका प्रारम्भ ८५५-५६ ई० से हुआ और ९३९ ई० तक रहा। इस अवधि में १५ राजा हुए। 'राजतरंगिणी' की छठी

पुस्तक में २१ राजाओं का उल्लेख है और राज्यकाल की अवधि ६३६ ई० से लेकर ६८० ई० तक बताई गई है। सातवीं पुस्तक में लोहर वंश का उल्लेख है जो १००३ ई० से लेकर १०८६ ई० तक रहा। इस वंश का अन्तिम राजा हर्ष था। आठवीं पुस्तक में द्वितीय लोहर वंश का उल्लेख है। यह वंश सन् ११०१ से लेकर सन् ११२८ ईं० तक रहा और इसमें ७ राजा हुए।

उपर्युक्त अवधि के मुख्य-मुख्य राजाओं का संक्षिप्त उल्लेख नीचे दिया जाता है। कल्हण के अनुसार, अशोक ने काश्मीर में ६६,००० निवासगृह बनवाए थे। उसने बहुत-से विहार और स्तूप भी बनवाए। बृजेश्वर मंदिर के चारों तरफ पत्थर की एक दीवार बनवाई और उसके अन्दर मंदिर बनवाया जिसे 'अशोकेश्वर' कहते हैं। भूतेश में अशोक ने शिवजी की उपासना की थी। अशोक के शासन-काल में काश्मीर में बौद्ध-धर्म का विकास हुआ। पाटलिपुत्र में मौग्गलिपुत्र की अध्यक्षता में एक बौद्ध परिषद् बुलाई गई थी। उसके बाद अशोक ने काश्मीर में बौद्धधर्म फैलाने के लिए अपने दूत भेजे। ह्वेनसांग आदि ने यह उल्लेख किया है कि अशोक ने पांच हज़ार बौद्ध भिक्षु काश्मीर भेजे थे जो घाटी में बसाए गए थे। इसका भी उल्लेख है कि अशोक ने भिक्षुओं को यह घाटी उपहार में दे दी थी जिससे वे उसे आध्यात्मिक और धार्मिक केन्द्र बना सकें। कल्हण के अनुसार अशोक ने 'श्रीनगरी' की स्थापना भी की थी जो वर्तमान श्रीनगर के निकट थी।

४० वर्ष के शासन के बाद लगभग २३२ ईसा-पूर्व में अशोक की मृत्यु हो गई। शिवजी की उपासना के फलस्वरूप उसके एक पुत्र हुआ जिसका नाम जलौक था। अपने पिता की मृत्यु के बाद वह काश्मीर का राजा हुआ। वह प्रतिदिन भूतेश-बृजेश मंदिरों में शिव जी की पूजा-अर्चना करता था। अशोक के शासन के अन्तिम दिनों में म्लेच्छों का आक्रमण होने लगा था। जलौक बड़ा वीर था। उसने न केवल म्लेच्छों से अपने देश को बचाया अपितु कन्नौज और गांधार तक अपनी विजय-पताका फहराई। दूर-दूर के देशों से विद्वान् लोगों को लाकर उसने उन्हें काश्मीर में बसाया। जलौक ने अनेकों मंदिर बनवाए। उसकी पत्नी ईशानदेवी ने भी मंदिरों का निर्माण कराया और ६० वर्ष के बाद राजा अपनी पत्नी के साथ चीरमोचन चला गया जहां उसका स्वर्गवास हो गया।

इसके बाद दामोदर द्वितीय राजा हुआ। एक दिन जब दामोदर झेलम में श्राद्ध के बाद स्नान के लिए जा रहा था, कुछ ब्राह्मणों ने उससे स्नान के पूर्व भोजन कराने को कहा। राजा ने कहा कि स्नान करने से पहले वह ब्राह्मणों को भोजन नहीं करा सकता। उसने ब्राह्मणों से सरपट भाग जाने को कहा। इसपर, कहा जाता है, ब्राह्मणों ने उसे 'सर्प हो जाने' का श्राप दिया। राजा की अनुनय-विनय के बाद ब्राह्मणों ने कहा कि जब वह एक दिन में पूरी रामायण सुनेगा, तभी सर्पयोनि से उसका उद्धार होगा। लोगों का विश्वास है कि दामोदर आज तक सर्प है।

जलौक के शासन-काल में काश्मीर और यूनान में काफी सम्पर्क था। यही कारण है कि यहां के मंदिरों की निर्माण-शैली यूनानी शैली से बहुत कुछ मिलती-

जुलती है। हुष्क, जुष्क और कनिष्क दामोदर द्वितीय के बाद राजा हुए। ये राजा तुरुष्क अथवा तुर्क राष्ट्रीयता के थे। इन राजाओं ने कनिष्कपुर, हुष्कपुर और जुष्कपुर नामक नगरों का निर्माण कराया। कनिष्क ने तृतीय बौद्ध परिषद् काश्मीर में बुलाई थी। तुरुष्क राजाओं के शासन-काल में बौद्धधर्म को बड़ा प्रश्रय मिला। लंका, बर्मा, जावा में बौद्धधर्म फैल गया था। कनिष्क के समय में इस धर्म का प्रचार तिब्बत, केन्द्रीय एशिया और चीन में भी हुआ। इस धर्म का प्रसार ३७२ ई० में कोरिया में और ५५९ ई० में जापान में हुआ। कल्हण के अनुसार नागार्जुन की देख-रेख में बौद्धधर्म का प्रसार काश्मीर में हुआ था, और महायान का संस्थापन नागार्जुन ने ही किया था। सन् १४० ई० में हुष्क गद्दी पर बैठा। उसके बाद जुष्क राजा हुआ। जुष्क की मृत्यु सन् १७८ ई० के लगभग हुई और कुश-शासन का अन्त काश्मीर में इसी समय में हुआ।

कनिष्क के बाद अभिमन्यु प्रथम राजा हुआ। कनिष्क के बाद बौद्धधर्म का पतन होने लगा। अभिमन्यु के समय में पारस्परिक रीति-रिवाजों की उपेक्षा हुई जिसके फलस्वरूप काश्मीर घाटी के देवता नाग कुपित हो गए। कहा जाता है कि उन्होंने इतनी हिम-वर्षा की कि सभी बौद्धों का विनाश हो गया और राजा को घाटी छोड़ने के लिए बाध्य होना पड़ा।

अभिमन्यु के बाद गोनन्द तृतीय राजा हुआ। उसने पुरानी परम्पराएं और रीति-रिवाज फिर से कायम किए। गोनन्द ने ३५ वर्ष तक राज्य किया और गोनन्द वंश की स्थापना की। गोनन्द के बाद विभीषण प्रथम, इन्द्रजीत, रावण और विभीषण द्वितीय राजा हुए जिन्होंने कई नगरों और मंदिरों का निर्माण कराया। इसके बाद नर किन्नर राजा हुआ। पहले यह राजा न्यायप्रिय और दयालु था, बाद में इसमें क्रूरता आ गई। कहा जाता है कि नगर के एक तालाब में नाग सुरवास और उसकी दो कन्याएं रहती थीं। एक दिन बैसाख नामक एक ब्राह्मण उस ताल के निकट विश्राम कर रहा था। जब वह कुछ जलपान करने को हुआ तो उस ताल से दो सुन्दर कन्याएं निकलीं और ताल के निकट उगी घास खाने लगीं। ब्राह्मण को आश्चर्य हुआ और उसने इसका कारण उन कन्याओं से पूछा। कन्याओं ने बताया कि वे नाग की पुत्रियां हैं। यद्यपि वे अमीर हैं और किन्नरपुर के चारों तरफ फसलें उगी हुई हैं तो भी वे खड़ी फसलों का एक दाना तब तक नहीं खा सकतीं जब तक खेत का रक्षक नई फसल को नहीं खाता, और चूंकि रक्षक नई फसल को नहीं खा रहा है इसलिए बाध्य होकर उन्हें घास खाकर अपनी भूख मिटानी पड़ रही है। ब्राह्मण को बड़ी दया आई और उसने चुपके से नई फसल का अनाज लाकर उस बर्तन में डाल दिया जिसमें खेत का रक्षक अपना भोजन पका रहा था। जैसे ही रक्षक ने भोजन किया, तूफान और वर्षा आ गई और शहर के चारों तरफ की पूरी फसल नष्ट हो गई। नाग बहुत ही प्रसन्न हुआ और ब्राह्मण को उसने अपनी एक लड़की शादी में दे दी। राजा नर को जब ब्राह्मण की इस स्त्री की सुन्दरता का हाल मालूम हुआ तो उसने उसे भगा ले जाने का प्रयास किया। बचने का कोई उपाय न देखकर बैसाख और उसकी स्त्री ताल में कूद गए जिसमें नाग सुरवास रहता था। नाग बहुत कुपित हुआ। उसने इतनी वर्षा कराई कि

किन्नरपुर का सुन्दर नगर पूरी तरह ध्वस्त हो गया। तत्पश्चात् नाग[१] ने अपनी पुत्रियों और दामाद को उस नगर से अलग ले जाकर एक बहुत सुन्दर झील का निर्माण किया जिसे आजकल शेषनाग कहते हैं।

गोनन्द वंश में एक राजा मिहिरकुल हुआ जो वासुकुल का पुत्र और उत्तराधिकारी था। यह मिहिरकुल हूण शासक था। मिहिरकुल बहुत ही निर्दयी राजा था। इसकी राजधानी साकल थी जो आजकल सियालकोट के नाम से प्रसिद्ध है। बौद्ध अनुयायियों को मारने और उनके विहारों और स्तूपों को नष्ट करने का श्रेय इसीको है। यह राजा बहुत दिनों तक राज्य न कर सका। मालवा के यशोवर्मन ने इसे पराजित किया। मगध के राजा बालादित्य ने मिहिरकुल को पकड़ लिया था। बाद में बालादित्य की माता की कृपा से वह छोड़ दिया गया और वह काश्मीर चला गया। वहां उसने दांव-पेंच खेलकर काश्मीर की गद्दी को हथिया लिया। मिहिरकुल स्वभाव से बहुत निर्दयी था। कहा जाता है, एक बार पीर पंजाल दर्रा पार करते समय उसका एक हाथी नीचे गिर गया। हाथी की चिल्लाहट और चिंघाड़ से उसे इतनी खुशी हुई कि उसने उसी दर्रे पर से १०० हाथियों को नीचे गिराने का आदेश दिया और इस प्रकार अपना मनोरंजन किया। इसी प्रकार एक बार उसने सैकड़ों औरतों, उनके पतियों, भाइयों व बच्चों को मौत के घाट उतार दिया। राजा को एक स्वप्न हुआ कि एक बड़े पत्थर में एक यक्षिणी का निवास है और उस बड़े पत्थर को कोई पतिव्रता स्त्री ही हटा सकती है। राजा ने सभी बड़े-बड़े लोगों की स्त्रियों को पत्थर हटाने का आदेश दिया, किन्तु कोई भी पत्थर को नहीं हटा सकी। एक कुम्हार की स्त्री चन्द्रावती के स्पर्शमात्र से वह पत्थर स्वयं हट गया। इस बहाने राजा ने उन सभी स्त्रियों और उनके सम्बन्धियों को मार डाला। मिहिरकुल की जीवन-लीला आत्महत्या से समाप्त हुई।

मिहिरकुल की मृत्यु के बाद उसका पुत्र बक राजा हुआ। उसने एक शिव मंदिर और एक नहर का निर्माण किया। कहा जाता है कि उसकी मृत्यु टोना-टोटका से हुई। इसके बाद कई और राजा हुए। एक राजा खिंखिल नरेन्द्रादित्य हुआ। उसके बाद उसका पुत्र युधिष्ठिर प्रथम राजा हुआ। उसकी आंखें बहुत छोटी थीं इसलिए उसे लोग अंधा कहते थे। अपने शासन-काल के प्रारम्भ में वह बहुत न्यायप्रिय था किन्तु बाद में वह बहुत लम्पट हो गया। विद्वानों का वह अनादर करने लगा। यह जानकर कि उसके दरबारी लोग उसे राज्यच्युत करना चाहते हैं, वह अपनी स्त्रियों के साथ पंजाब भाग गया। कुछ समय बाद उसने अपनी राजगद्दी लेने का प्रयास किया किन्तु वह हरा दिया गया और दुर्गलिक जेल में, जो श्रीनगर में शंकराचार्य पहाड़ी पर है, उसे बन्दी बना दिया गया। वहीं उसकी मृत्यु हुई।

युधिष्ठिर के राजसिंहासन से च्युत होने के बाद काश्मीर के अमीरों ने राजा विक्रमादित्य के एक मंत्री को भारत से आमंत्रित किया और उसे प्रतापादित्य

---

१. जेम्स फरग्यूसन के मतानुसार, "नाग सर्प नहीं थे किन्तु यह एक जाति थी जो सर्पों की पूजा करती थी। नाग अपने को सूर्यवंशीय मानते थे।"

प्रथम के नाम से काश्मीर की राजगद्दी पर बैठाया। प्रतापादित्य के शासन-काल से राजतरंगिणी की तीसरी पुस्तक का प्रारम्भ होता है। प्रतापादित्य ने सहृदयता से जनता पर शासन किया। इस सम्बन्ध में मतभेद है कि उज्जैन के राजा विक्रमादित्य के अधीन काश्मीर राज्य था या नहीं। हां, इतना स्पष्ट है कि काश्मीर का राजा भारतीय राजाओं के अधीन था और भारतीय राजा गवर्नर अथवा वाइसराय द्वारा काश्मीर पर शासन करते थे। प्रतापादित्य प्रथम और उसके उत्तराधिकारी पुत्र जलौक दोनों ने ३२-३२ वर्ष तक राज्य किया। जलौक के पश्चात् तुंजीन प्रथम राजा हुआ। उसकी स्त्री वाक्पुष्टा धर्मपरायणा थी। राजा और रानी ने अनेक नगरों और मंदिरों का निर्माण किया। उनके शासन-काल में ललित कला को बहुत प्रश्रय मिला। उन्हींके समय में 'चन्दक' नामक कवि हुआ और राजदरबार में नाटक खेला जाने लगा।

तुंजीन के शासन-काल में ज़बरदस्त अकाल पड़ा जिससे असंख्य लोगों की मृत्यु हुई। कहा जाता है कि भादों के महीने में बहुत हिमपात हुआ। खड़ी फसल नष्ट हो गई। इतनी तबाही मची कि लोग भूखों मरने लगे। राजा इस दृश्य को सहन नहीं कर सका। रानी ने भगवान् से प्रार्थना की कि वह कृपा करके लोगों को भुखमरी से बचा ले। कहा जाता है कि दूसरे दिन से ही प्रत्येक आदमी को दो रोटियां आसमान से गिरकर मिलने लगीं। वाक्पुष्टा ने कतीमूस और रामूस नगरों का निर्माण किया और अपने पति की मृत्यु पर सती हो गई। कतीमूस झेलम की उपनदी वेशाऊ के बायें तट पर आधुनिक कैमू है और रामूस आजकल का रामू है जो श्रीनगर और सोपियान मार्ग पर स्थित है। राजा और रानी का दाह-संस्कार वाक्पुष्टाटवी नामक स्थान पर हुआ। रानी बहुत दानी स्वभाव की थी और उसने एक धर्मादा कायम किया था जिससे उसकी मृत्यु के बाद भी गरीब लोगों को अनाज और भोजन बांटा जाता था।

उसके बाद विजय राजा हुआ। वह दूसरे कुटुम्ब का था। विजय ने विजयेश्वर नाम के प्राचीन मंदिर के पास एक नगर का निर्माण किया। उसका पुत्र जयेन्द्र उसके बाद राजा हुआ। जयेन्द्र के कोई पुत्र नहीं था। कहा जाता है कि जयेन्द्र ने अपने प्रधान मंत्री संधिमति को निर्दयता से मार डाला था। जयेन्द्र की मृत्यु के कुछ दिन बाद राजगद्दी खाली पड़ी रही और उसके बाद संधिमति, जो पहले प्रधान मंत्री था, आकाश-मार्ग से आकर काश्मीर की राजगद्दी पर बैठ गया और अपने को संधिमति आर्य राजा कहलाने लगा। यह राजा साधु प्रकृति का था और उसने बहुत-सी धार्मिक संस्थाएं खोलीं और बहुत-से विहार बनवाए। संधिमति आर्य राजा ने स्वेच्छा-पूर्वक राजसिंहासन त्याग दिया और शिवभूतेश के पावन और पवित्र स्थल पर उसने अपने अंतिम दिन बिताए।

आर्य राजा के सिंहासन त्याग देने के पश्चात् गोनन्द वंश की पुनःस्थापना हुई। दूसरी पुस्तक में, जिन उपर्युक्त ६ राजाओं का उल्लेख है, उन्होंने १९२ वर्ष तक राज्य किया। तीसरी पुस्तक में पुनःस्थापित गोनन्द वंश का उल्लेख है। इस वंश का राज्यकाल ५८९ वर्ष, १० महीने और १ दिन रहा। इस वंश का प्रथम राजा

मेघवाहन था। यह गोपादित्य का पुत्र और युधिष्ठिर का प्रपौत्र था। युधिष्ठिर उस समय गांधार के राजा के दरबार में जाकर रहता था। मेघवाहन को आसाम के राजा की पुत्री अमृतप्रभा ब्याही थी। मेघवाहन प्रतिभाशाली व्यक्ति था और उसके सम्बन्ध में बहुत-सी दंतकथाएं प्रचलित हैं। बौद्धधर्म का इसपर बड़ा प्रभाव था क्योंकि गांधार उस समय बौद्धधर्म का गढ़ था। यही कारण है कि उसने न केवल काश्मीर में पशुवध का निषेध कर दिया था अपितु पूरे भारतवर्ष में पशुओं के वध की मनाही कर दी थी। अपनी इस निषेधाज्ञा को लागू करने के लिए उसने दक्षिण की ओर लंका तक कूच किया था और अनेक स्थानों पर पशुओं के वध को और नरवध को रोका। कल्हण के समय तक जो ध्वजदंड इस्तेमाल किया जाता था, उसके सम्बन्ध में यह कथा प्रचलित थी कि वह मेघवाहन को लंका के राजा ने दिया था। मेघवाहन ने मेघवन नामक वन और मेघनाथ का मठ तथा विहार का निर्माण कराया। उसकी रानी अमृतप्रभा ने विदेशी भिक्षुओं के रहने के लिए अमृत भवन नामक मठ का निर्माण कराया था। इस विहार को यूकांग कहा जाता था। रानी के पिता के गुरु लेह से आए थे और उन्होंने एक स्तूप का निर्माण कराया था। कई और विहार उस राज्य की अन्य रानियों द्वारा निर्मित कराए गए। मेघवाहन के बाद उसका पुत्र श्रेष्ठसेन, जिसे प्रवरसेन तथा तुंजीन भी कहते हैं, राजा हुआ। उसने भी अनेक मंदिर बनवाए। श्रेष्ठसेन के दो पुत्र थे—हिरण्य और तोरमाण। हिरण्य पिता की गद्दी पर बैठा और तोरमाण युवराज बना। कुछ समय पश्चात् तोरमाण की अवज्ञा से हिरण्य कुपित हो गया और उसे बंदी बना लिया। तोरमाण की स्त्री अंजना ने एक कुम्हार के घर में शरण ली और उसने अपने पुत्र का नाम उसके पितामह प्रवरसेन के नाम पर रखा। बचपन से ही इस बालक प्रवरसेन में बड़प्पन के चिह्न मौजूद थे। कुछ दिन बाद हिरण्य ने तोरमाण को मुक्त कर दिया। किन्तु तोरमाण अधिक समय तक जीवित न रह सका। हिरण्य की मृत्यु के बाद राजगद्दी रिक्त हो गई क्योंकि उसके कोई पुत्र नहीं था। सभासदों ने उज्जैन के राजा विक्रमादित्य से अनुरोध किया कि वह काश्मीर को अपने अधीन कर लें तथा उसकी रक्षा और प्रशासन के लिए किसी को नियुक्त कर दें।

कुछ समय पूर्व काश्मीर का एक ब्राह्मण मातृगुप्त, जो बड़ा विद्वान् और दयालु व्यक्ति था, विक्रमादित्य के उज्जैन-दरबार में गया था। छः महीने तक वह राजभवन के मुख्य द्वार पर बैठा रहा। एक दिन जाड़े की रात्रि में विक्रमादित्य ने जागने पर देखा कि पूरा महल अंधकारमय है और बत्तियां हवा से बुझ गई हैं। उसने अपने सेवकों को बुलाया जो सब सो गए थे। मातृगुप्त, जो बाहर बैठा हुआ था, राजा की आवाज़ सुनकर आया और उसने तुरन्त सब बत्तियों को जला दिया। कहा जाता है, मातृगुप्त और राजा में तत्पश्चात् संवाद हुआ और राजा मातृगुप्त की विद्वत्ता से बहुत प्रभावित हुआ और साथ ही उसकी निर्धनता से द्रवित भी हुआ। उसने मातृगुप्त को तुरन्त काश्मीर का गवर्नर बनाने का संकल्प किया। उसने इस आशय का एक पत्र काश्मीर-दरबार के अमीर को लिखा। मातृगुप्त उस पत्र को

लेकर काश्मीर गया यद्यपि उसे नहीं मालूम था कि इस पत्र में क्या लिखा हुआ है। उसने पत्र काश्मीर में जाकर अमीरों को दिया और वह तुरन्त काश्मीर का गवर्नर बना दिया गया।

मातृगुप्त केवल ९ वर्ष, ४ महीने और १ दिन तक काश्मीर का गवर्नर रहा। एक बड़ी दिलचस्प बात इस सम्बन्ध में कही जाती है। डाक्टर भाऊदाजी का यह मत है कि मातृगुप्त सम्राट् ही कवि कालिदास था। कालिदास वास्तव में काश्मीर के ही निवासी थे यद्यपि वह उज्जैन में रहते थे। जिस सुन्दरता से कालिदास ने अपनी कृतियों में हिमालय की प्राकृतिक छटा का वर्णन किया है उसे देखते हुए कोई सन्देह नहीं रह जाता कि वे काश्मीर के निवासी नहीं थे। डाक्टर भाऊदाजी के इस कथन के आधार पर बाद में डाक्टर कल्ला ने कालिदास के जन्मस्थान के बारे में बहुत खोज की और उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि कालिदास का जन्मस्थान काश्मीर था।

मातृगुप्त बहुत ही सफल शासक था। उसने पशुओं के वध का निषेध किया और मातृगुप्त स्वामी नामक एक मंदिर का निर्माण किया। उसने इस मंदिर के खर्च के लिए कई गांव दान में दिए। विक्रमादित्य की मृत्यु के बाद मातृगुप्त बनारस चला गया और अपना अन्तिम समय संन्यासी के रूप में बिताया। तोरमाण के पुत्र प्रवरसेन द्वितीय को विक्रमादित्य की मृत्यु तथा मातृगुप्त के राजसिंहासन के त्याग का समाचार कांगड़ा में मिला, जहां वह अपने पूर्वजों के राजसिंहासन को लेने के लिए एक सेना का संगठन कर रहा था। प्रवरसेन अंततः काश्मीर का राजा बना। उसकी राजधानी प्रवर सेन नगर थी, जो अब श्रीनगर कहलाती है। प्रवरसेन बहुत नेक और वीर था। उसने सौराष्ट्र तक हमला किया। प्रवरसेन इतना विशालहृदय था कि जिस देश को वह जीत लेता था, उसे वह पराजित शासक को फिर से दे देता था। ६० वर्ष तक शासन करने के बाद प्रवरसेन का स्वर्गवास हो गया। कहा जाता है कि वह सशरीर स्वर्ग को गया था।

उसके पुत्र युधिष्ठिर द्वितीय ने कई विहार बनवाए। युधिष्ठिर द्वितीय के पुत्र नरेन्द्रादित्य ने नरेन्द्र स्वामी मंदिर का निर्माण कराया। नरेन्द्रादित्य का नाम ल:खण भी था। उसके बाद रणादित्य राजगद्दी पर बैठा। कहा जाता है, उस वंश ने ३०० वर्ष राज्य किया। सम्भव है, उस अवधि में छोटे-मोटे ६ राजा हुए। इसके बाद विक्रमादित्य काश्मीर के सिंहासन पर बैठा। उसने ४२ वर्ष तक राज्य किया और अपनी शासन-अवधि में बहुत-सी इमारतों का निर्माण कराया। ये इमारतें अब नहीं हैं। इसका छोटा भाई बालादित्य इसके बाद राजा हुआ। इसके एक सुन्दर पुत्री अनंगलेखा थी। किसी ज्योतिषी ने बताया था कि अनंगलेखा का पति काश्मीर का राजा होगा और बालादित्य का वंश समाप्त हो जाएगा। बालादित्य यह नहीं चाहता था। इसलिए उसने अपनी पुत्री का विवाह दुर्लभवर्धन से किया जो घोड़ों की देख-भाल करता था। लेकिन वास्तव में दुर्लभवर्धन एक छिपा हुआ राजकुमार था और वह नाग कार्कोट का पुत्र था, जिसे बालादित्य नहीं जानता था।

खंख मंत्री की सहायता से दुर्लभवर्धन राजसिंहासन पर बैठा और उसने कार्कोट वंश की स्थापना की। दुर्लभवर्धन के शासन के इतिहास से कल्हण की चौथी पुस्तक का प्रारम्भ होता है। कार्कोट वंश २५४ वर्ष ५ महीने रहा। दुर्लभवर्धन सन् ६२५-६६१ ई० में काश्मीर की राजगद्दी पर बैठा। वास्तव में कार्कोट वंश का इतिहास अपेक्षाकृत अधिक प्रामाणिक है। उसके शासन-काल में ह्वेनसांग काश्मीर घाटी में आया था। इस समय काश्मीर के शासक का राज्य तक्षशिला तक फैला हुआ था। दुर्लभवर्धन ने ३६ वर्ष तक राज्य किया। इस वंश में १७ राजा हुए। चन्द्रापीड सन् ७११-१९ ई० तक काश्मीर का राजा रहा। यह राजा इतना शक्तिशाली था कि चीन का राजा भी इसकी महत्ता को स्वीकार करता था। इसने सन् ७१३ ई० में चीनी दरबार में अपना एक दूत इस आशय से भेजा था कि चीन की सहायता से वह अरब से युद्ध करे। चन्द्रापीड बहुत ही न्यायप्रिय राजा था। उसके बाद तारापीड ७१९ ई० में राजा हुआ। यह एक निर्दयी राजा था और इसने अधिकतर नगरों को ध्वस्त कर दिया जिससे लोग नगर छोड़कर जंगलों और पहाड़ों में भाग गए।

प्रतापादित्य का तीसरा पुत्र ललितादित्य ७२४ ई० में काश्मीर की गद्दी पर बैठा। इसने ३७ वर्ष तक राज्य किया। इसकी तुलना सिकन्दर से की जाती है, जहां तक राजा की वीरता, पराक्रम और दूर-दूर देशों के जीतने का सम्बन्ध है। पंजाब, कन्नौज, तिब्बत और कई अन्य प्रदेशों पर ललितादित्य ने अपना आधिपत्य कर लिया था। ललितादित्य के शासन-काल में लोग बहुत खुशहाल थे। वह बौद्धधर्म और ब्राह्मण-वाद को बराबर प्रश्रय देता था। उसने बुद्ध, विष्णु और शिव आदि देवताओं के मंदिर बनवाए। काश्मीर ऐसा स्थल बन गया जहां दूर-दूर से और बाहर से लोग पढ़ने आते थे। सिंचाई की सुविधाएं पहली बार किसानों को दी गईं और धर्मार्थ बहुत-सी संस्थाएं खोली गईं जहां निर्धनों को प्रतिदिन भोजन दिया जाता था। संसार-प्रसिद्ध मार्तण्ड मंदिर उसी समय बनवाया गया था। कहा जाता है कि जब लजितादित्य की सेना पंजाब में कूच कर रही थी तो पंजाब की पूरी जनता उसके स्वागत के लिए खड़ी हो गई थी। पंजाब का शासक यशोवर्मन पदच्युत किया गया और पूरा पंजाब काश्मीर के अधीन हो गया। ललितादित्य बिहार, बंगाल और उड़ीसा तक अपनी सेनाएं ले गया और उसने अपने राज्य का विस्तार किया। ललितादित्य की सेना गुजरात, काठिया-वाड़, मालवा और मेवाड़ तक गई। काश्मीर उस समय सबसे बड़ा और शक्तिशाली राज्य था। इसी प्रकार उत्तर में तिब्बत से लेकर द्वारिका और उड़ीसा के सागर तट तक और दक्षिण में दकन, पूर्व में बंगाल, पश्चिम में विदिशा और मध्य एशिया तक काश्मीर का राज्य फैला हुआ था जिसकी राजधानी प्रवरसेन नगर थी। ललितादित्य के अंग-अंग से वीरता फूटती थी। उन दिनों कन्नौज में यशोवर्मन का राज्य था। ललितादित्य ने कन्नौज पर चढ़ाई करके यशोवर्मन को परास्त किया और उसके अधीन समस्त क्षेत्र को अपने कब्जे में कर लिया।

ललितादित्य का साम्राज्य बहुत ही सम्पन्न और समृद्धिशाली था। एशिया के सभी देशों से व्यापार होता था और काश्मीर की वस्तुएं विदेशी बाज़ारों में बिकती थीं।

काश्मीर में बेरोज़गारी नहीं थी। कला और व्यापार उन्नति के शिखर पर था। धार्मिक मेलों और उत्सवों का आयोजन होता था। ललितादित्य स्वयं पुस्तकें लिखता था। वीणा भी वह बहुत सुन्दर बजाता था। चित्रकला और मूर्तिकला में भी उसकी अभिरुचि थी।

इस समय तिब्बत के लोगों में आक्रमणकारी प्रवृत्ति जाग्रत् थी इसलिए ललितादित्य अपनी सेनाएं लद्दाख तक ले गया और लद्दाख को अपने कब्ज़े में कर लिया। कहा जाता है कि सम्राट् ललितादित्य अपनी सेना लेकर आरण्यक, जो आजकल का ईरान है, गया था और अत्यधिक हिमपात के कारण वहीं उसकी मृत्यु हो गई। एक कथा यह भी है कि उसकी सेना एक पहाड़ी दर्रे में फंस गई थी और वहीं उसने आत्महत्या कर ली। कुछ भी हो, सम्राट् ललितादित्य ने न केवल अपना ही नाम रोशन किया बल्कि अपने साथ काश्मीर का भी। इसके दरबार में बड़े-बड़े विद्वान् और कलाकार रहते थे। उसने खेती के लिए सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध कीं। बहुत-सी नहरें बनवाईं। ललितादित्य और उसकी रानियों ने अनेक नगरों का निर्माण किया। विदेशों में अपनी विजय के प्रतीक स्वरूप उसने सुनिश्चितपुर और दर्पितपुर दो नगर बसाए, यद्यपि इन नगरों के अब कोई निशान नहीं हैं। उसने फलपुर और पर्णोत्स नाम के भी दो नगर बसाए। फलपुर आजकल का शादीपुर गांव है और पर्णोत्स नगर आजकल का पूंछ है। ललितादित्य ने ललितपुर में, जो आजकल लेतापुर है, एक बड़ा मंदिर बनवाया। हुष्कपुर में, जो आजकल उशकुर है, सम्राट् ने एक बड़ा विहार और बुद्ध-मंदिर का निर्माण किया। काश्मीर के इतिहास में मार्तंड का मंदिर और परिहासपुर का शहर अमर है। आजकल के शादीपुर के पास ही परिहासपुर नगर था।

ललितादित्य के शासन की एक विशेष बात यह थी कि यद्यपि वह हिन्दू था किन्तु सभी धर्मों के अनुयायी उसके यहां काम करते थे और वह सभीको समानता की दृष्टि से देखता था। उसके प्रधान सेनापति बौद्धधर्म के अनुयायी थे। भारत के सभी कोनों से वह विद्वान् और कलाकारों को अपने दरबार में बुलाता था। कन्नौज के दो प्रसिद्ध कवि भवभूति व वाक्पतिराज को वह अपने दरबार में लाया था और उसने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया। कभी-कभी, जैसा कि कल्हण का कहना है, शराब के नशे में वह उल्टे-सीधे आदेश भी दे देता था। एक बार उसने यह आदेश दिया कि प्रवरसेन नगर को जला दिया जाए किन्तु उसके मंत्रियों ने उसके आदेश को कार्यान्वित नहीं किया। एक बार उसने काश्मीर में बंगाल के राजा को बुलाया और उसे आश्वासन दिया कि काश्मीर से वह कुशल-क्षेम के साथ वापस चला जाएगा किन्तु अकारण सम्राट् ने उसको मरवा दिया। काश्मीर में अपने राजा की मृत्यु को सुनकर कुछ कुपित बंगाली युवकों ने परिहास केशव मंदिर पर हमला किया। यद्यपि काश्मीरी सिपाही बंगालियों को मार गिरा रहे थे, फिर भी कुछ व्यक्ति मंदिर में पहुंच गए और भूल से परिहास केशव के बजाय एक दूसरी प्रतिमा को तोड़ डाला।

ललितादित्य के बाद उसके पुत्र वज्रादित्य ने परिहासपुर से राजधानी शादीपुर कर दी और शंकरवर्मन ने बाद में परिहासपुर की इमारतों को तोड़कर मंदिरों

के सोने और चांदी की मूर्तियों को गलाकर दूसरे शहर पट्टन और हर्षपुर बसाए। ललितादित्य के बाद जो राजा हुए वे बहुत ही दुर्बल थे और उन्होंने राज्य का बहुत-सा धन नष्ट कर दिया। लोगों को बहुत कष्ट हुआ। कुवलयापीड, वज्रादित्य, पृथिव्यापीड, संग्रामपीड, जज्ज के बाद जयापीड, जो वज्रादित्य का छोटा लड़का था, गद्दी पर बैठा। उसने ३१ वर्ष तक राज्य किया। ललितादित्य की तरह उसका भी नाम हुआ। कल्हण के अनुसार प्रयाग तक का सारा प्रदेश उसने अपने कब्जे में कर लिया था। प्रयाग में उसने पंडों को १०,००० घोड़े दान में दिए और यह आदेश दिया कि प्रत्येक तीर्थयात्री जिस बर्तन में गंगाजल ले जाएगा उसमें उसकी मुहर लगी होगी। यह भी कहा जाता है कि वह बंगाल गया और वहां उसने राजकुमार जयन्त की लड़की से शादी की। वीर वह इतना था कि अकेले उसने एक शेर को बंगाल में मार दिया था। उसने और जयन्त ने मिलकर आसपास के कई प्रदेशों को अपने आधिपत्य में कर लिया। काश्मीर लौटते समय जयापीड ने कन्नौज के राजा वज्रयुद्ध को परास्त किया। काश्मीर पहुंचने पर उसे मालूम हुआ कि उसके बहनोई जज्ज ने राजगद्दी पर कब्ज़ा कर लिया है। जज्ज को उसने युद्ध में हरा दिया। जयापीड ने ऊलर झील के पास जयपुर नगर का निर्माण किया और अन्दरपुर गांव को बसाया। इसी प्रकार झेलम तट पर उसने दो नगर द्वारावती और मल्हाणपुर बसाए। उसकी रानियां कल्याणदेवी और कमलदेवी ने कल्याणपुर, जो आजकल कलमपुर है, और कमलापुर नगर बसाए।

नेपाल पर भी उसने आक्रमण किया, ऐसा कहा जाता है, किन्तु बाढ़ में वह एक नदी में बह गया और उसके शत्रु ने उसे पकड़ लिया और किले में उसको बन्द कर दिया। अपने एक मंत्री देवशर्मन की राजभक्ति के कारण वह वहां से भाग सका। देवशर्मन ने अपनी हत्या कर ली जिससे उसकी लाश के सहारे जयापीड नदी को तैर सका। दूर-दूर के प्रदेशों में जो अभियान उसने किया, उससे उसके राज्य के राजस्व पर बड़ा असर पड़ा और उसका खजाना बहुत कुछ खाली हो गया। फलत: अपने शासन के अंतिम दिनों में वह प्रत्येक से हर सम्भव उपाय से पैसा वसूलने लगा और एक निर्दयी शासक बन गया। लोग बहुत तंग आ गए। भुखमरी फैल गई और कितने ही लोग काश्मीर छोड़कर भाग गए। ब्राह्मणों को उसने बहुत तंग किया। तूलमूल्य के ब्राह्मणों ने उसकी नृशंसता के लिए उसको श्राप दिया और शामियाने का एक सुनहरा डंडा गिरा दिया। जयापीड को चोट आई और वह मर गया। उसके पुत्र ललितपीड ने काफी पैसा बरबाद किया। उसके बाद कई राजा हुए। वे बहुत ही कमज़ोर, निर्दयी और अत्याचारी थे। उत्पलापीड के बाद थोड़े-थोड़े समय के लिए कुछ राजा और हुए। वे भी कमज़ोर थे। फलस्वरूप आसपास के अनेक शहर और प्रदेश स्वाधीन हो गए। सुखवर्मन कार्कोट वंश का अंतिम राजा था। उसे उसके सम्बन्धियों ने मार डाला।

उस समय के प्रधान मंत्री शूर की सहायता से सुखवर्मन का पुत्र अवन्तिवर्मन काश्मीर की गद्दी पर बैठा। उसने उत्पल वंश की स्थापना की। अवन्तिवर्मन ८५५ ई० में राजगद्दी पर बैठा था। इस वंश में १६ राजा हुए। अवन्तिवर्मन के शासन-काल में फिर से शांति स्थापित हुई। लोग खुशहाल हुए। निर्माण-कार्य फिर से प्रारम्भ किए

८९ : प्रधान मंत्री शूर ने डल झील पर शूरशिव मंदिर बनवाया और एक शूर मठ बनवाया। शूरपुर नगर का भी उसने निर्माण कराया। अवन्तिवर्मन ने वितस्ता नदी के दक्षिण तट पर अवन्तिपुर बसाया। अवन्तिपुर श्रीनगर-जम्मू मार्ग पर श्रीनगर से १७ मील की दूरी पर था। काश्मीर में बाढ़ बहुत आती थी जिसके कारण पैदावार कम होती थी। सम्राट् ललितादित्य ने बाढ़ को रोकने का कुछ उपाय किया था किन्तु बाद में कोई उपाय नहीं किया गया। अवन्तिवर्मन के समय अनाज का उत्पादन कम हो जाने से अकाल पड़ा। उस समय सुय्य नाम के एक व्यक्ति ने बहुत सरल उपाय बाढ़ रोकने का बताया। अवन्तिवर्मन ने उसे बुलाया और उससे उसकी योजना पूछी। उसने योजना बताने से इन्कार कर दिया किन्तु अपने साथ रुपयों से भरे बहुत-से बर्तन लेकर एक नाव पर चढ़ गया। रुपये से भरा एक बर्तन उसने नन्दक गांव के पास फेंका। यह गांव वेशाऊ नदी के किनारे पर स्थित था और जलमग्न हो गया था। फिर उसने कुछ रुपया बारामूला के नीचे नदी में फेंक दिया। लोगों ने कहा कि यह आदमी पागल है किन्तु अवन्तिवर्मन यह जानना चाहता था कि उसकी कार्रवाई का क्या असर हुआ। अकाल से पीड़ित व्यक्ति सुय्य को यह सब करते देख रहे थे। जहां-जहां उसने रुपया फेंका था वे नदी में कूद पड़े और पूरी नदी छान डाली। नतीजा यह हुआ कि जितनी मिट्टी और पत्थर आदि नदी में जमा हो गए थे और पानी के बहाव को रोक रहे थे वे दूर हो गए और नदी ठीक ढंग से बहने लगी। तब नदी के दोनों तरफ उसने बांध बनवाया। जलमग्न प्रदेश फिर दृष्टिगोचर हो गया। इस प्रकार बाढ़ की समस्या हल हो गई। उसने फिर एक योजना बनाई जिससे वितस्ता नदी ऊलर झील के बीचोंबीच से बहने लगी।

अवन्तिवर्मन के पुत्र शंकरवर्मन ने अपने राज्य की सीमा बढ़ाने का बहुत प्रयास किया और दूर-दूर देशों तक अपनी सेनाओं के साथ गया। शंकरवर्मन संकीर्ण हृदय का और नृशंस राजा था। उसके समय में बेगार प्रथा जारी की गई जो बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक काश्मीर में प्रचलित रही। शंकरवर्मन की मृत्यु सन् ९०२ ई० में उरशा में हुई जब कि वहां के कबीलों ने उसपर धावा बोल दिया था और उसको मार डाला था।

गोपालवर्मन बच्चा ही था जब वह अपने पिता शंकरवर्मन की मृत्यु के बाद राजगद्दी पर बैठा। प्रशासन की बागडोर वास्तव में उसके मंत्री प्रभाकरदेव के हाथ में थी और उस मंत्री ने दो वर्ष पश्चात् गोपालवर्मन को मार डाला। उसके बाद संकट राजा बना जिसने केवल दस दिन तक राज्य किया। सन् ९१७-१८ ई० में बड़ा जबरदस्त अकाल पड़ा किन्तु राजमंत्रियों ने सहायता करने के बजाय जनता का शोषण किया और दसगुने दाम पर अन्न बेचकर बहुत-सा धन कमाया। एक के बाद दूसरा राजा गद्दी पर बैठता रहा किन्तु उनमें से कोई भी वीर, पराक्रमी राजा नहीं हुआ। अन्त में, गोपालवर्मन का कोषाध्यक्ष प्रभाकरदेव का ब्राह्मण-पुत्र यशस्करदेव सन् ९३९ ई० में काश्मीर की राजगद्दी पर बैठा। राज्य में कुछ शांति आई।

अवन्तिवर्मन के बाद जल्दी-जल्दी राजा बदलते रहे जिससे राज्य में अशांति

और निर्धनता फैल गई थी। अहलकार लूट-खसोट कर रहे थे। व्यापार समाप्त हो चुका था। यशस्करदेव के शासन-काल में स्थिति में सुधार हुआ, व्यापार की उन्नति हुई और लोगों की सम्पन्नता बढ़ी। जनता अपने को सुरक्षित समझने लगी। यशस्कर न्याय-प्रिय शासक था और पीड़ित लोगों की सहायता करता था। भारत के अन्य भागों से आनेवाले विद्यार्थियों के निवास के लिए यशस्कर ने एक मठ का निर्माण कराया।

यशस्कर पर लल्ला नामक एक औरत का, जो बदमाश थी, बड़ा प्रभाव था। अपने बड़े भाई से यशस्कर खुश नहीं था इसलिए उसकी मृत्यु पर उसने बहुत खुशी मनाई। ९ वर्ष शासन करने के बाद वह एक भयंकर रोग से पीड़ित हो गया। यशस्कर की मृत्यु बहुत ही शोचनीय परिस्थिति में हुई थी। उसके परिवार के लोगों ने उसको भुला दिया था। उसके पास ढाई हज़ार सोने की मुहरें थीं जिन्हें उसके मंत्रियों ने छीन लिया और वह घुल-घुलकर मर गया। यशस्कर के बाद उसका चचेरा भाई वर्णाट राजगद्दी पर बैठा। संग्रामदेव को गद्दी नहीं मिली। वर्णाट ने केवल एक ही दिन राज्य किया। वर्णाट के बाद संग्रामदेव, और उसके बाद पर्वगुप्त राजा हुआ। पर्वगुप्त ने यशस्कर की विधवा स्त्री गौरी से विवाह का प्रस्ताव किया लेकिन गौरी बहुत ही निर्मल हृदय की स्त्री थी और उसने आत्महत्या कर ली। डेढ़ वर्ष के पश्चात् पर्वगुप्त की मृत्यु हो गई। उसके बाद जितने और राजा हुए वे सभी निर्बल थे।

क्षेमगुप्त सन् ९५० ई० में राजगद्दी पर बैठा। उसका विवाह लोहर के सरदार सिंहराज की पुत्री दिद्दा से हुआ था। क्षेमगुप्त अपनी स्त्री से इतना प्रभावित था कि लोग उसको दिद्दा क्षेम कहते थे। क्षेमगुप्त ने अपने प्रधान मंत्री फाल्गुन की पुत्री चन्द्रलेखा से भी शादी की थी। क्षेमगुप्त की मृत्यु सन् ९५८ ई० में हुई। उसके बाद उसका बेटा अभिमन्यु राजगद्दी पर बैठा। उसकी मां दिद्दा राज-काज देखती रही। दिद्दा बहुत ही निर्दयी और कामुक स्त्री थी। प्रशासन में वह बहुत ही कुशल थी। सन् ९७२ ई० में अभिमन्यु की मृत्यु के बाद उसका पुत्र नन्दिगुप्त राजा हुआ। अभिमन्यु की मृत्यु से दिद्दा को बहुत रंज पहुंचा और उसने कुछ समय के लिए अपने अनैतिक कार्य बन्द कर दिए। उसने कई मन्दिर और गांव बनवाए जिनमें से एक दिद्दा मठ था जो अब श्रीनगर में दिद्दा मार्ग नामक मुहल्ला है। दिद्दा का तीसरा पौत्र भीमगुप्त सन् ९७५ ई० में काश्मीर की राजगद्दी पर बैठा। भीमगुप्त को जब अपनी दादी के दुराचरण की जानकारी हुई तो उसे बड़ा दुःख हुआ किन्तु दिद्दा ने उसे कैद कर लिया और मार डाला। वह स्वयं सन् ९८० में काश्मीर की रानी बन बैठी। उसने अपने प्रेमी तुंग को, जो भैंस चराता था, प्रधान मंत्री बना दिया। इससे अन्य मंत्री बहुत रुष्ट हुए किन्तु तुंग ने सबको हरा दिया। दिद्दा २५ वर्ष तक रानी बनी रही। इस अवधि में उसने कितने ही षड्यंत्र रचे, कितनी ही निर्मम हत्याएं कीं और कितने ही लोगों को देश से निर्वासित किया। यह सब उसने अपना राज्य कायम रखने के लिए ही किया था।

यद्यपि दिद्दा का चरित्र बहुत कलुषित था और जीवन पापमय, तो भी उसने शासन बहुत ही कुशलतापूर्वक चलाया था। उसने अपने भाई उदयराज, जो लोहर का शासक था, के पुत्र संग्रामराज को काश्मीर का राजकुमार नियुक्त किया। सन् १००३

ई० में दिद्दा की मृत्यु हुई और उसके बाद काश्मीर का राज लोहर वंश द्वारा शासित होता रहा। उस वंश का पहला राजा संग्रामराज था। प्रथम लोहर वंश में संग्रामराज के अतिरिक्त पांच राजा और हुए —हरिराज, अनन्त, कलश, उत्कर्ष और हर्ष। कलश ने अपने राज्य को सुव्यवस्थित ढंग से चलाने का प्रयास किया। भ्रष्ट अहलकारों को उसने दंड दिया और राज्य में शांति और सुव्यवस्था कायम की। कलश और उसके पुत्र के सम्बन्ध कटु थे। कुछ लोगों ने हर्ष को भड़काया कि वह अपने पिता कलश की हत्या कर दे। उसके पिता कलश ने अपने छोटे लड़के उत्कर्ष को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। हर्ष बन्दी बना लिया गया। लेकिन हर्ष ने होशियारी से काम लिया और जेल से भाग गया। उसने उत्कर्ष से गद्दी छीन ली और सन् १०८९ ई० में स्वयं राजा बन बैठा।

हर्ष स्वयं एक महान् कवि था। ललितकला से उसको प्रेम था। कई भाषाओं को वह अच्छी तरह जानता था। वह सुन्दर, वीर और पराक्रमी था। उसने अच्छी तरह हुकूमत की। उसने पोशाक और ज़ेवरों के नये-नये फैशन चालू किए। कवियों, संगीतज्ञों का हर्ष के दरबार में बहुत आदर किया जाता था। फिज़ूलखर्ची से हर्ष आर्थिक कठिनाइयों में पड़ गया। फलस्वरूप उसने बहुत-से नये कर लगाए, मंत्रियों की जागीरें ज़ब्त कर लीं। भीमशाही मंदिर में उसे बड़ा खज़ाना मिला। उसने अन्य मंदिरों की सोने-चांदी की मूर्तियों को गलाकर रुपया इकट्ठा किया। लोगों में अशांति फैल गई और हर्ष की लोकप्रियता जाती रही।

सन् १०९९ ई० में काश्मीर में प्लेग फैली। यह वह समय था जब काश्मीर में हर जगह चोर और डाकू नज़र आते थे। वे पकी हुई फसलों को काट लेते थे लेकिन उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की जाती थी। इस समय अकाल भी पड़ा और बाढ़ भी आई। लोगों का ध्यान अन्यत्र आकर्षित करने के लिए हर्ष ने सामन्तशाही ज़मींदारों पर आक्रमण कर दिया और उनपर बड़ा अत्याचार किया।

जब हर्ष सामन्तशाही ज़मींदारों से लड़ रहा था, उसको यह शक हो गया कि सुस्सल और उच्चल उसकी राजगद्दी छीनना चाहते हैं। इस डर से कि कहीं हर्ष उन दोनों को मरवा न दे, दोनों भाई एक रात्रि को भाग गए और पहाड़ी सरदारों से जा मिले। उच्चल रजौरी गया और सुस्सल कलिंजर। सरदारों ने बड़े भाई पर काश्मीर का सिंहासन लेने के लिए ज़ोर दिया। उच्चल ने सरदारों की सहायता से काश्मीर पर आक्रमण कर दिया। उच्चल ने परिहासपुर में अपनी स्थिति दृढ़ कर ली थी। हर्ष ने परिहासपुर में ही उच्चल की फौजों को करारी हार दी और बड़ी मुश्किल से उच्चल भाग निकला। फिर दूसरा भाई सुस्सल ने कलिंजर-शासक की सहायता से दक्षिण की ओर से काश्मीर पर आक्रमण कर दिया। उच्चल ने फिर ज़ोर पकड़ा। दोनों की फौजें श्रीनगर के निकट पहुंच गई थीं किन्तु हर्ष कोई निर्णय न ले सका। कुछ लोगों ने उसको नगर छोड़कर भाग जाने की सलाह दी। कुछ लोगों ने कहा कि वह लड़कर अपनी जान दे दे। जब हर्ष से कुछ नहीं बन पड़ा तो उसने सुस्सल और उच्चल के पिता मल्ल को बेरहमी से मार डाला। मल्ल एक संन्यासी था। उसकी मृत्यु के बाद उसकी पत्नी

नन्दा सती हो गई। अपने पिता और माता की मृत्यु का समाचार पाकर उच्चल और सुस्सल बहुत कुपित हो गए। सुस्सल ने विजयेश्वर पर हमला करके हर्ष की सेना को परास्त कर श्रीनगर पर धावा बोल दिया। उच्चल ने उत्तर की ओर से नगर पर आक्रमण कर दिया। यद्यपि हर्ष स्वयं लड़ने के लिए गया किन्तु उसकी कुछ नहीं चली और उसे भागना पड़ा। पटरानी सहित १७ रानियों ने अपने को जला डाला। हर्ष का पूरा महल रौंद डाला गया। हर्ष राजप्रासाद से भागा किन्तु पकड़ा गया और मार डाला गया। उसका सिर उच्चल के पास ले जाया गया।

सन् ११०१ ई० में द्वितीय लोहर वंश का प्रथम राजा उच्चल हुआ। ८ दिसम्बर, ११११ ई० को महल में उच्चल की निर्मम हत्या कर दी गई। उच्चल के बाद रड्ड शंखराज, सल्हण, सुस्सल, भिक्षाचर, और फिर सुस्सल राजा हुए। इनमें से प्रत्येक राजगद्दी छीनने के लिए ही कोशिश और षड्यन्त्र करता रहा। सन् ११२० ई० में सुस्सल को काश्मीर से भागना पड़ा और भिक्षाचर राजा हुआ। किन्तु सुस्सल मई, सन् ११२१ ई० में फिर श्रीनगर आ उपस्थित हुआ और राजगद्दी पर बैठ गया। भिक्षाचर भाग गया किन्तु उसने सुस्सल को चैन नहीं लेने दिया। सुस्सल को कई बार मोर्चा लेना पड़ा। शत्रु ने नगर के एक भाग को जला दिया। जनता में त्राहि-त्राहि मच गई। सुस्सल इससे बड़ा दुखी हुआ और उसने जून, सन् ११२३ ई० में अपने पुत्र जयसिंह के पक्ष में राज्य त्याग दिया। किन्तु राजसत्ता सुस्सल ने अपने हाथ में ही रखी। अपने शत्रुओं को मार डालने का षड्यन्त्र वह रच ही रहा था कि फरवरी, सन् ११२८ ई० में उन्होंने सुस्सल की निर्मम हत्या कर दी। जयसिंह को अपने पिता की हत्या का समाचार पाकर बड़ा दुःख हुआ। जयसिंह ने २२ वर्ष तक राज्य किया। बाकी राजाओं ने बहुत थोड़े समय तक राज्य किया। सन् ११५४ ई० में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र परमजुदेव राजगद्दी पर बैठा। १० वर्ष तक उसने राज्य किया। सन् ११६४ ई० में उसका पुत्र बन्तिदेव काश्मीर का राजा हुआ। ७ वर्ष तक उसने राज्य किया और सन् ११७१ ई० में उसकी मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के साथ लोहर वंश का अन्त हो गया।

तदुपरान्त, उप्यदेव राजा बनाया गया। यह बिल्कुल मूर्ख था। सन् ११८० ई० में उसकी मृत्यु पर उसका भाई जाशक राजा बना। यह और अधिक मूर्ख था। जाशक ने १८ वर्ष तक राज्य किया और सन् ११९८ ई० में उसकी मृत्यु के बाद जगदेव राजगद्दी पर बैठा। इसने प्रशासन में सुधार करना चाहा किन्तु सन् १२१२ ई० में पद्म द्वारा ज़हर देकर उसकी हत्या कर दी गई। जगदेव का पुत्र राजदेव, जो अपने पिता की मृत्यु के बाद किश्तवाड़ भाग गया था, राजगद्दी पर बैठा। सन् १२३५ ई० में २२ वर्ष राज्य के बाद उसकी मृत्यु पर काश्मीर की गद्दी उसके पुत्र संग्रामदेव को मिली। संग्रामदेव की हत्या १२५२ ई० में कर दी गई। उसके बाद उसका पुत्र रामदेव राजगद्दी पर बैठा। यह कुशल प्रशासक था। उसके कोई पुत्र नहीं था इसलिए उसने लक्ष्मणदेव को गोद लिया जो सन् १२७३ ई० में उसकी मृत्यु के बाद राजा बना। लक्ष्मणदेव विद्वान् था। सन् १२८६ ई० में कज्जल नामक तुरुष्क मुसलमान ने लक्ष्मणदेव को परास्त किया और उसकी हत्या कर दी। सन् १२८६ ई० से सन्

१२८१ ई० तक दो राजा और हुए किन्तु उनके सम्बन्ध में कोई बात विशेष उल्लेखनीय नहीं है। सन् १३०१ ई० में सूहदेव राजगद्दी पर बैठा। काश्मीर घाटी से पूरे रजौरी के पूर्व तक प्रदेश इसने अपने आधिपत्य में कर लिया था। इसके शासन-काल में स्वात से शाहमीर और तिब्बत से रेंछन नामक यात्री आए जिनको सूहदेव ने शरण दी। इसी के फलस्वरूप काश्मीर राज्य का अन्त हो गया और शाहमीर वंश के मुसलमान बादशाह काश्मीर के राजा हो गए।

तेरहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में उत्तर भारत और केन्द्रीय एशिया में इस्लाम का काफी ज़ोर हो गया था, यद्यपि काश्मीर पर मुसलमान आक्रमण नहीं कर सके थे, तब भी इस्लाम से काश्मीर प्रभावित होने लगा था। सूहदेव के समय में सन् १३०१-२० ई० में काश्मीर के लोगों ने इस्लाम धर्म को कबूल कर लिया था और अन्ततः काश्मीर में मुसलमान बादशाहों का राज्य हो गया। उसी समय तिब्बत से सैकड़ों सशस्त्र आदमी लेकर रेंछन नामक एक भागा हुआ राजकुमार काश्मीर में आया। तिब्बत में गृहयुद्ध छिड़ा हुआ था और पश्चिमी तिब्बत के शासक को मार डाला गया था। रेंछन वहीं से भागकर काश्मीर में आया था। उसने सूहदेव की शरण ली। सूहदेव के प्रधान सेनापति रामचन्द्र ने उसको नौकरी दे दी। उसी समय स्वात से एक दूसरा मुसलमान शाहमीर भी काश्मीर आ गया। शाहमीर को स्वप्न हुआ था कि वह काश्मीर का राजा हो जाएगा। सूहदेव ने शाहमीर का स्वागत किया और उसे अच्छा-खासा वेतन देने लगा।

इसी बीच केन्द्रीय एशिया के सरदार दुलूच ने काश्मीर पर आक्रमण किया। सूहदेव रामचन्द्र को राज्य में छोड़कर भाग खड़ा हुआ। इस समय घाटी की दशा बिल्कुल खराब हो गई थी। खाने को कुछ नहीं था, लोग हज़ारों की संख्या में मर रहे थे। दुलूच वापस जाने लगा किन्तु बर्फीले तूफानों में वह और उसकी फौज फंस गई और सब मर गए। रामचन्द्र काश्मीर का राजा बन बैठा। रामचन्द्र के राजगद्दी पर बैठने से रेंछन को ईर्ष्या हुई और मौका पाकर उसने विद्रोह कर दिया। रामचन्द्र अपनी लड़की कोटा के साथ भाग गया और लोहर के दुर्ग में शरण ली। रेंछन ने धूर्तता से काम लिया और उस दुर्ग में सौदागरों को भेजा जो अपने बड़े-बड़े कुर्तों के नीचे शस्त्र-अस्त्र छिपाए थे। उन सौदागरों ने रामचन्द्र को मार डाला और दुर्ग पर कब्ज़ा कर लिया।

रेंछन इस प्रकार काश्मीर का स्वामी बन बैठा। रेंछन कोटा को अपनी तरफ मिलाना चाहता था इसलिए उसने उसके भाई को मंत्री नियुक्त कर दिया। कोटा रानी का दुःख जब कुछ कम हुआ तो उसने रेंछन से हिन्दू धर्म अपनाने के लिए जोर दिया। किन्तु रेंछन ने इस्लाम धर्म ग्रहण किया। रेंछन काश्मीर का पहला मुसलमान राजा हुआ। उसने कोटा रानी से शादी कर ली। रेंछन ने बहुत खुबसूरती और कुशलतापूर्वक काश्मीर का राज्य चलाया। तीन वर्ष तक राज्य करने के बाद सन् १३२० ई० में एक घाव लग जाने के कारण उसकी मृत्यु हो गई और काश्मीर में एक बार फिर अव्यवस्था फैल गई।

कोटा रानी ने सुहदेव के भाई उदयनदेव को काश्मीर की गद्दी पर बैठाने का वचन दिया और उससे शादी कर ली। यद्यपि उदयनदेव काश्मीर का राजा हो गया किन्तु वास्तविक शासक कोटा रानी थी। कोटा रानी मंत्रियों की नियुक्ति करती और उनको पदच्युत करती। पूरे शासन की बागडोर वह अपने हाथ में लिए रहती थी। उदयनदेव की मृत्यु सन् १३३८ ई० में हुई।

शाहमीर इस बीच काफी प्रबल हो गया था और वह राजगद्दी छीनने का प्रयास कर रहा था। शाहमीर ने कोटा रानी के पुत्र हैदर से सांठ-गांठ कर ली थी। शाहमीर को रोकने के लिए कोटा रानी ने हैदर को अपना पुत्र मानने से इनकार कर दिया। कोटा रानी स्वयं वास्तविक रानी बन बैठी। शाहमीर से वह भयभीत रहती थी। एक दिन शाहमीर ने बीमारी का बहाना किया। रानी ने भिक्षणभट्ट को, जो उसका हितैषी था, शाहमीर को देखने के लिए भेजा। जैसे ही भट्ट उसके कमरे में गया और उससे हाल-चाल पूछने लगा, शाहमीर ने झपटकर भट्ट को तलवार से मार डाला। कोटा रानी इससे बहुत कुपित हुई लेकिन शाहमीर से बदला लेना उसने मुनासिब नहीं समझा।

शाहमीर की ताकत बढ़ती गई। राजगद्दी पर बैठने के ५ महीने बाद कामराज ज़िले में विद्रोह हुआ और कोटा रानी उसे दबाने के लिए स्वयं गई। जैसे ही कोटा रानी बाहर गई, शाहमीर ने अपने को बादशाह घोषित कर दिया। एक महीने तक शाहमीर और कोटा रानी की फौजों में बराबर मुठभेड़ होती रही। शाहमीर जानता था कि कोटा रानी को राज्य से बड़ा मोह है। इसी मोह के कारण कोटा रानी ने अपने पिता के हत्यारे रेंछन से शादी कर ली थी और इसी कारण उसने अपने पुत्र को त्याग दिया था और उदयनदेव से शादी कर ली थी। उसने कोटा रानी को राज्य का लालच दिया और कहा कि कोटा रानी आत्मसमर्पण कर सकती है। लेकिन शादी उसे उससे करनी पड़ेगी। कोटा रानी यह समझती थी कि शाहमीर से वह कोई आशा नहीं कर सकती। लेकिन उसके पास कोई चारा नहीं था। वह सजधज कर शाहमीर के कमरे में गई। इसके पूर्व कि शाहमीर उसका आलिंगन करे उसने आत्महत्या कर ली। कोटा रानी बहुत ही वीर और कुशल प्रशासक थी। उसकी मृत्यु से काश्मीर से हिन्दू राज का अन्त हो गया।

नवीं शताब्दी से काश्मीर के शासकों ने घाटी को भारत से बिलकुल अलग कर लिया था। भारत के उत्तर पश्चिम में इस्लाम धर्म का प्रचार हो गया था। यद्यपि काश्मीर की स्वतंत्रता बड़े-बड़े पर्वतों के कारण सुरक्षित थी तो भी वहां के लोगों में बहुत असंतोष और बेचैनी फैल गई थी। जब तक काश्मीर का भारत के अन्य भाग से व्यापार चलता रहा और लोगों का आना-जाना बना रहा, काश्मीर में ललित-कला और संस्कृति की बड़ी उन्नति हुई और देश की आर्थिक सम्पन्नता भी बढ़ी।

अशोक का आधिपत्य काश्मीर पर भी था। उसने काश्मीर में बड़े-बड़े मंदिर बनवाए। अशोक का सम्पर्क यूनान और मिस्र देश से भी था। यही कारण था कि काश्मीर में जो भी निर्माण हुए वे बहुत ही सुन्दर थे और उनमें यूनानी कला की झलक

थी। कनिष्क का शासन-काल ऐतिहासिक रहा। केन्द्रीय एशिया और बंगाल तक उसके राज्य की सीमा थी। काश्मीर में उसने बौद्धपरिषद् आयोजित की। फलतः काश्मीर में बौद्धधर्म का बड़ा प्रसार हुआ। ललितादित्य और उसके बाद कुछ अन्य राजाओं के समय में भी काश्मीर का सम्पर्क भारत से था। वास्तव में काश्मीर के ही शासक पंजाब के आसपास के प्रदेशों में अपनी विजय-पताका फहराते रहे। ललितादित्य के समय में काश्मीर अपनी उन्नति के शिखर पर था। अवन्तिवर्मन और शंकरवर्मन ने भी इस उन्नति को बनाए रखने का प्रयास किया। उनका यह भी प्रयास रहा कि उत्तरी भारत के सम्राट् काश्मीर में न आने पाएं। इस उद्देश्य से प्रेरित होकर उन्होंने दर्रों को बन्द कर दिया था। नतीजा यह हुआ कि काश्मीर का दम घुट गया। राजदरबार के खर्च बढ़ने रहे और चूंकि बाहर से कोई व्यापार नहीं होता था इसलिए लोगों की आर्थिक स्थिति बिगड़ती गई। अपने खर्चे को बनाए रखने के लिए बाद के राजा जनता पर मनमाने कर लगाने लगे। यहीं तक नहीं, उन्होंने मंदिरों की सोने और चांदी की मूर्तियों को भी गलाने में संकोच नहीं किया। राज्य की आमदनी घट गई। सिपाहियों को तनख्वाहें नहीं मिलीं और वे सेना छोड़कर भागने लगे। इसलिए इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं कि बाद के काश्मीर के राजाओं के दरबार में अनेकों षड्यन्त्र रचे जाने लगे और विद्रोह तथा उपद्रव दिन-प्रतिदिन होने लगे। राज्य का कोई अस्तित्व नहीं रह गया। राजा और रानी विलासप्रिय हो गए। पुरानी परम्परा लुप्त हो गई और राज्य के कर्मचारियों में भ्रष्टाचार फैल गया।

इधर भारत के उत्तर-पश्चिम में इस्लाम धर्म ज़ोर पकड़ रहा था। यद्यपि घाटी के दर्रे बन्द कर लिए गए थे तो भी लोगों पर उसका प्रभाव पड़ने लगा था। बारहवीं शताब्दी के बाद से घाटी के लोग धीरे-धीरे इस्लाम धर्म को अपनाने लगे। यही कारण था कि शाहमीर को स्थानीय समर्थक मिल गए और उनकी सहायता से वह काश्मीर का राजा बन बैठा।

यह देखने में आया है कि हिन्दू शासन-काल में रानियां अपेक्षाकृत अधिक योग्य और कुशल प्रशासक थीं, भले ही वे विलासप्रिय रही हों। दिद्दा, सूर्यमती और कोटा इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। अवन्तिवर्मन और यशस्कर के समय में लोग सच्चाई, निःस्वार्थ सेवा और नैतिकता पर बड़ा बल देते थे। ललितकला, संगीत और नृत्य को काश्मीर में उच्च स्थान प्राप्त था। राजा, रानियां और उनके कर्मचारी भी विहार और मंदिर के निर्माण-कार्य में लगे रहते थे। धर्म का भी बड़ा प्रचार था।

कल्हण के अनुसार अशोक ने श्रीनगर का निर्माण कराया था, जो छठी शताब्दी तक काश्मीर घाटी की राजधानी रहा। प्रवरसेन द्वितीय ने आधुनिक श्रीनगर के स्थल पर प्रवरसेन नगर का निर्माण कराया था। श्रीनगर कितनी ही बार आग लगने से ध्वस्त हुआ और पुनर्निर्मित हुआ। मकान आज की तरह पहले भी लकड़ी के बने होते थे। मकानों के सामने बाग और बगीचे रहते थे। हिन्दू शासन-काल में कोई मुस्तकिल पुल तो नहीं था किन्तु नाव-पुल कई थे। नगर भर में पत्थर के मंदिर बने हुए थे, जिनके भग्नावशेष आज भी दिखाई देते हैं। ललितादित्य ने अपनी राजधानी

परिहासपुर में निर्माण कराई थी यद्यपि अब उसके खंडहर भी नहीं हैं ।

प्रशासकीय दृष्टि से काश्मीर घाटी को कई परगनों में विभाजित किया गया था । अबुलफ़ज़ल के अनुसार ३८ परगने उस समय थे । काश्मीर की जनसंख्या क्या थी, इसका ठीक-ठीक अनुमान तो नहीं है किन्तु कहा जाता है कि काश्मीर में गांवों की संख्या ६६,०६३ थी । कुछ का विचार है कि पहाड़ियों को मिलाकर एक लाख गांव थे और इन गांवों में घनी आबादी थी । काश्मीर की आबादी में कई जातियों के लोग थे । ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, निषाद, किरात व राजपूत । ब्राह्मणों का बड़ा आदर किया जाता था और वे उच्च स्थानों पर पदासीन थे । दिद्दा रानी के मुख्य मंत्री तो बहुत समय तक भट्टफाल्गुन रहे । सेना में भी ब्राह्मण थे । निषाद सम्भवतः घाटी के पुराने निवासी थे और वे छोटे-मोटे काम करते थे । 'राजतरंगिणी' में उनका ज़िक्र नाविक के रूप में है । किरात जंगलों में रहते थे और जंगली जानवरों को मारते थे। ये शिकारी थे । डोम भंगियों का काम करते थे । वे पहरा भी देते थे और उनमें से कुछ गाने-बजाने का भी काम करते थे ।

काश्मीर में नाग-पूजा प्रचलित थी । इस सम्बन्ध में अनेक कथाएं प्रचलित हैं । कल्हण के अनुसार काश्मीर की सुरक्षा नील, शंख और पद्मनाग करते हैं । बौद्ध-धर्म का प्रचार और प्रसार अशोक के ज़माने में हुआ था । बाद के राजाओं ने भी उसको प्रश्रय दिया और घाटी में अनेक विहार बनवाए । तेरहवीं शताब्दी के अन्त तक घाटी से बौद्धधर्म का लोप हो गया था । कुछ लोगों ने इस्लाम धर्म को ग्रहण कर लिया और बाकी लद्दाख चले गए, जहां अब भी वे बौद्धधर्म के अनुयायी हैं । शिवभक्ति भी घाटी में प्रचलित थी । कार्कोट राजाओं के शासन-काल में शिवपूजा के निमित्त अनेक मंदिर बनवाए गए थे। ललितादित्य की मां ने स्वयं एक शिव-मंदिर --नरेन्द्रेश्वर--का निर्माण कराया था । उत्पल वंश का राजा भी शैवधर्म का पोषक और समर्थक था । बौद्धधर्म और शैवधर्म के साथ ही साथ वैष्णवधर्म का प्रसार घाटी में हुआ था । कार्कोट वंश के राजाओं के समय में लोगों में वैष्णवधर्म का बड़ा प्रसार हुआ था । ललितादित्य ने कई विष्णु-मंदिर बनवाए थे। इसके अतिरिक्त अनेक देवियों के भी मंदिर थे। दुर्गादेवी का मंदिर बड़ा प्रसिद्ध था । लक्ष्मी और सर-स्वतीदेवी जी की मूर्तियां भी मंदिरों में स्थापित की गई थीं । मंदिरों में देवदासी की प्रथा थी । जलौक राजा ने अपने हरम की १०० लड़कियों को, जो संगीत और नृत्य में निपुण थीं, ज्येष्ठ रुद्र के मंदिर में गाने-बजाने के लिए अर्पित कर दिया था ।

चावल की खेती मुख्य रूप से की जाती थी किन्तु काश्मीर जाफ़रान की खेती के लिए प्रसिद्ध था । घाटी में कपड़े, धातु और चमड़े के उद्योग थे । आभूषण भी बनाए जाते थे । ऊनी और सूती दोनों प्रकार के कपड़े बनाए जाते थे । यही नहीं, काश्मीर में रेशम का उद्योग-धंधा उच्च शिखर पर था । चूड़ियां बनाने में काश्मीर अग्रणी था । 'राजतरंगिणी' में इस बात का उल्लेख है कि काश्मीर के एक व्यापारी पद्मराज मालवा के भोजराजा को पापसूदन तीर्थ का जल शीशे के बड़े-बड़े जारों में भरकर भेजता था ।

काश्मीर में भारत के अन्य भागों से लोग संस्कृत पढ़ने आते थे। संस्कृत का इतना प्रचलन था कि काश्मीर की औरतें भी सुगमतापूर्वक संस्कृत और प्राकृत बोलती थीं। भारत के अलावा अन्य देशों के लोग भी संस्कृत पढ़ने काश्मीर आते थे। ह्वेनसांग ने दो वर्ष तक संस्कृत में बौद्ध धर्म-ग्रन्थों का यहां अध्ययन किया था। अशोक के समय में संस्कृत खरोष्ट्री और ब्राह्मी लिपि में लिखी जाती थी। काश्मीर के विद्वानों ने अपनी एक नई लिपि शारदा लिपि का विकास किया। नवीं शताब्दी में तिब्बत के लोगों ने, जिनकी कोई अपनी लिपि नहीं थी, काश्मीर की शारदा लिपि को ग्रहण कर लिया। कार्कोट वंश के कुछ राजा स्वयं संस्कृत के विद्वान् कवि थे।

श्रीनगर में शंकराचार्य मंदिर बड़ा प्रसिद्ध है। एक हज़ार फुट की ऊंचाई पर शंकराचार्य पहाड़ी पर यह मंदिर स्थित है। यह मंदिर ठोस पत्थर का बना हुआ है। मंदिर तक पहुंचने के लिए ३१ सीढ़ियां हैं। १० और सीढ़ियां हैं जो मंदिर के द्वार तक ले जाती हैं। मंदिर की छत अन्दर से ११ फुट ऊंची है और उसकी दीवार साढ़े सात फुट मोटी है। पूरा मंदिर बहुत ही सुन्दर है और पत्थर का बना हुआ है। ऐसा मालूम पड़ता है कि इसके बनाने में सीमेंट का प्रयोग बिल्कुल नहीं किया गया है। 'राजतरंगिणी' से प्रकट होता है कि यह मंदिर पहले सम्राट् अशोक के पुत्र जलौक ने २०० वर्ष ईसा-पूर्व में बनवाया था। बाद में गोपादित्य ने, जिसने सन् २५३-३२८ तक राज्य किया, इसका पुनर्निर्माण कराया और ज्येष्ठेश्वर को अर्पित कर दिया। उस समय उस पहाड़ी को, जिसपर यह मंदिर स्थित है, गोपाद्रि कहा जाता था और उसके नीचे के गांव को पोपकर।

दूसरा मंदिर मार्तंड मंदिर है जो बहुत सुन्दर है। इसके भग्नावशेष देखने से मंदिर का महत्त्व और उसके आकार का पता चलता है। मंदिर ४० फुट ऊंचा है, किन्तु इसकी दीवालें बहुत मोटी हैं। इसमें ८४ स्तम्भ हैं। बड़े-बड़े पत्थर एक पर एक बड़ी सुन्दरता से रखे गए हैं, जिसे देखकर आज भी आश्चर्यचकित होना पड़ता है। ऐसा अनुमान है कि मंदिर ६० फुट लम्बा, ३८ फुट चौड़ा, ७५ फुट ऊंचा रहा होगा।

संस्कृत की शिक्षा-दीक्षा में, दर्शनशास्त्र, ललितकला, धर्म, विज्ञान और वास्तुकला में काश्मीर भारत के सब भागों से अद्वितीय था और हिन्दू शासन-काल में वास्तव में भारत का मुकुट था।

अध्याय २

देशी राज्य और भारत में उनका अधिमिलन

अगस्त, सन् १९४७ में भारत के स्वतंत्र होने से पूर्व भारत उपमहाद्वीप में लगभग ५६५ देशी राज्य थे। इनमें से १४० ऐसे थे जिन्हें पूरी सत्ता प्राप्त थी, ३०० पश्चिमी भारत के आस्थान और ताल्लुकें थे और शेष मध्यवर्ती वर्ग के राज्य थे। भारतीय नरेश, जहां तक सर्वोच्च सत्ता का सम्बन्ध था, ब्रिटिश सम्राज्ञी-सम्राट् के अधीन थे, लेकिन अपने-अपने राज्यों और ताल्लुकों में स्वेच्छाचारी शासकों की तरह शासन करते थे। अधिकांश नरेशों ने तो अंग्रेज़ों से संधियां कर ली थीं। इन नरेशों को राजच्युत करके उनके प्रदेशों को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लेना अंग्रेज़ों के लिए कोई कठिन काम नहीं था, पर बात यह थी कि सन् १८५७ से पूर्व इस सम्बन्ध में अंग्रेज़ों की कोई स्पष्ट नीति ही नहीं थी। सन् १८५७ के सैनिक विद्रोह के बाद अंग्रेज़ यह अनुभव करने लगे थे कि भारत में ऐसे मित्र होने चाहिए जिनपर वक्त-जरूरत पर निर्भर किया जा सके और जो अपने हितों में ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा कर सकें। सम्राज्ञी की घोषणा का मुख्य उद्देश्य यही था। उन्होंने अपनी घोषणा में स्पष्ट रूप से कहा कि ब्रिटिश सरकार राजाओं के अधिकारों और स्वत्वों का आदर करेगी। उन्होंने कहा :

> हम अपने वर्तमान राज्य का विस्तार नहीं चाहते किन्तु साथ ही हम यह भी नहीं चाहते कि कोई हमारे डोमिनियन पर किसी प्रकार का आक्रमण करे। हम राजाओं की गरिमा, उनके अधिकारों और स्वत्वों का उतना ही आदर करते हैं जितना हम अपने अधिकारों और स्वत्वों का करते हैं। हम चाहते हैं कि देशी नरेश और हमारी प्रजा शांति और सुख से रहें।

सम्राज्ञी की घोषणा के प्रतिफलस्वरूप राजाओं की पदस्थिति में परिवर्तन हो गया। वे अंग्रेज़ी साम्राज्य के स्वतंत्र मित्र रहने के बजाय अंग्रेज़ों की सर्वोच्च सत्ता के अधीन हो गए।

तदनन्तर भारत में बहुत-से सुधार-कार्य किए गए—नये-नये उद्योग-धंधे खोले गए, यातायात सुगम किया गया, व्यापार और वाणिज्य का विकास किया गया, विश्वविद्यालय खोले गए, नये-नये कानून बनाए गए। जहां ब्रिटिश भारत में ये परिवर्तन और सुधार-कार्य हो रहे थे, देशी राज्य पहले ही की तरह पिछड़े रहे। भारत के आधुनिकीकरण का देशी राज्यों पर केवल एक प्रभाव पड़ा और वह यह कि वहां

की जनता में अपने शासकों के भोग-विलासयुक्त सुखमय जीवन की ओर उदासीनता आ गई और वे अपने शासकों के कुप्रबन्धों से मुक्त होने की सोचने लगे। देशी राज्यों में जनता का आर्थिक शोषण हो रहा था। जनता तो दुखमय और निर्धन जीवन व्यतीत कर रही थी और राजा-महाराजा अपने-अपने प्रासादों में राग-रंग मनाते थे। राज्य का अधिकांश धन उनके व्यक्तिगत आमोद-प्रमोद पर खर्च होता था, जनता की बेहतरी, उसके बच्चों की शिक्षा-दीक्षा, चिकित्सालयों आदि पर खर्चा नगण्य था। जनता पर कर मनमाने ढंग से लगाए जा रहे थे। जैसा कि 'टाइम्स' (लन्दन) ने उस समय लिखा था, "ऐसा प्रतीत होता था कि देशी राज्यों में सरकार जनता के लिए नहीं थी बल्कि जनता राजा-महाराजाओं के लिए थी।" ब्रिटिश सरकार राजाओं की स्वेच्छाचारिता में कोई हस्तक्षेप नहीं करती थी। केवल अपने हितों के प्रसार और सुरक्षा के समय ही ब्रिटिश सरकार दखल देती थी।

यद्यपि देशी राज्यों की जनता अपने मामलों में हस्तक्षेप करने के लिए कांग्रेस पर बराबर ज़ोर-दबाव डालती रही तो भी कांग्रेस ने प्रारम्भ में उनके अन्दरूनी मामलों में कोई प्रत्यक्ष हस्तक्षेप नहीं किया। गांधी जी चाहते थे कि रियासतों की जनता अपने आंदोलनों को बाहरी मदद के बिना स्वयं चलाए और अपनी शिकायतों को दूर करने के लिए राजाओं के विरुद्ध सत्याग्रह करे। गांधी जी उस समय ब्रिटिश भारत में अंग्रेज़ों के विरुद्ध संघर्ष करने में ही अपना सारा प्रयास केन्द्रित किए हुए थे। उनका कहना था कि ब्रिटिश भारत से पैर उखड़ने के बाद अंग्रेज़ देशी राज्यों में भी न टिक सकेंगे।

किन्तु देशी राज्यों के बारे में कांग्रेस में उग्र विचारों के लोगों का मत गांधी जी के मत से भिन्न था। पं० जवाहरलाल नेहरू का मत स्वयं गांधी जी के मत से भिन्न था। अप्रैल, सन् १९३६ में लखनऊ कांग्रेस में सभापति के आसन से बोलते हुए पंडित जी ने कहा कि भारत के लोग देशी राज्यों के तानाशाह शासक बने रहने के अधिकार को कभी नहीं स्वीकार कर सकते। वे बाहरी सत्ता द्वारा पोषित हैं और स्वतंत्र भारत में तानाशाही और सामन्तशाही का कोई स्थान नहीं है।

देशी राज्यों में जनता के आन्दोलन के ज़ोर पकड़ते ही कांग्रेस के दृष्टिकोण में भी परिवर्तन हुआ। अखिल भारतीय स्टेट्स पीपुल कान्फरेंस का जन्म सन् १९२७ में हुआ और वह उसी समय से रियासतों के मामलों में कांग्रेस की उदासीन नीति के अन्त के लिए ज़ोर देने लगी। यही कारण था कि सी० वाई० चिन्तामणि ने मई, सन् १९२९ में, रामानन्द चटर्जी ने जून, सन् १९३१ में और पट्टाभि सीतारमय्या ने सन् १९३६ में भारत की अभिन्नता और उसकी एकता पर बल दिया और कहा कि कांग्रेस की पूर्ण स्वराज की मांग में देशी राज्यों में लोगों की उत्तरदायी सरकार की स्थापना भी शामिल है। सन् १९३९ में अखिल भारतीय स्टेट्स पीपुल कान्फरेस ने अपना संविधान बनाया जिसका उद्देश्य यह था कि शांतिमय और वैध तरीकों से देशी राज्यों में जनता की उत्तरदायी सरकार कायम की जाए। और ऐसी सरकार स्वतंत्र भारत संघ का अभिन्न अंग हो। देशी राज्यों में स्वतंत्रता आन्दोलन से कांग्रेस का सम्बन्ध घनिष्ठ होता गया।

देशी राज्यों के मामलों में कांग्रेस की दिलचस्पी को देखकर अन्य दलों ने भी दिलचस्पी लेना शुरू कर दिया। हिन्दू महासभा और मुस्लिम लीग के दृष्टिकोण साम्प्रदायिक थे। हिन्दू महासभा का कहना था कि देशी राज्यों में शासकों के विरुद्ध जनता के आन्दोलन को जो समर्थन और प्रश्रय कांग्रेस द्वारा मिल रहा है, उसका ध्येय केवल हिन्दू राजाओं को निर्बल करना है। हिन्दू राजा हिन्दू संस्कृति और सभ्यता के प्रतीक हैं और हिन्दुत्व के दुर्ग हैं, इसलिए उनके खिलाफ जनता को खड़ा करने से हिन्दू दुर्ग ढह जाएगा। हिन्दू महासभा के नेता वी०जी०खापार्डे की आलोचना थी कि गांधी जी हिन्दू राज्यों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए जनता को उकसाते हैं किन्तु मुस्लिम शासकों के विरुद्ध, जो हिन्दू प्रजा पर अनगनित अत्याचार करते हैं, गांधी जी कुछ नहीं कहते। हिन्दू महासभा ने हिन्दू जनता से हिन्दू शासकों के प्रति आदर और सम्मान के भाव रखने की अपील की। दूसरी ओर मुस्लिम लीग ने यह नारा लगाना शुरू किया कि कई राज्यों में 'इस्लाम खतरे में है' और इसलिए मुसलमानों को विशेष अधिकार और सुविधाएं मिलनी चाहिए। मुस्लिम लीग ने हैदराबाद, भोपाल में विशेष रुचि लेना शुरू कर दिया। प्रत्येक अवसर पर अखिल भारतीय मुस्लिम लीग और राज्य मुस्लिम लीग मुस्लिम शासकों के शासन की सराहना में भाषण और व्याख्यान देने लगे। संविधान-सभा के निर्माण के समय मुस्लिम लीग ने मांग करना शुरू किया कि देशी राज्यों के प्रतिनिधियों में मुसलमानों की अलग से संख्या निर्धारित होनी चाहिए। किन्तु जहां तक रियासतों के अन्दरूनी और राजनैतिक मसलों का सम्बन्ध था, लीग पहले तटस्थ रही। रियासतों के लोगों को उनके आन्दोलन में मदद करने के लिए उसने काफी अर्से तक कुछ नहीं किया। उसकी कार्यवाही केवल कांग्रेस विरोधी तत्त्व से सांठ-गांठ करने तक ही सीमित रही। देश का बंटवारा हो जाने के बाद उसकी बराबर कोशिश यही रही कि भारत में स्थित रियासतें किसी प्रकार भारत-संघ में न शामिल हों। उसके नेता यही कहते रहे कि सर्वोच्च सत्ता के व्यपगत हो जाने पर वह सत्ता रियासतों को प्राप्त हो जाएगी और वे पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न राज्य बन जाएंगे।

देश-बंटवारा-योजना के स्वीकृत हो जाने पर देशी रियासतों के मसले पर कांग्रेस और लीग के दृष्टिकोणों में अन्तर और बढ़ गया। माउंटबैटन ने १३ जून, सन् १९४७ को पार्टी नेताओं की बैठक बुलाई। उस बैठक में नेहरू ने कहा कि वे इससे सहमत हैं कि कोई भी रियासत पाकिस्तान में शामिल हो सकती है किन्तु कैबिनेट मिशन के ज्ञाप के अधीन वह स्वतंत्र रहने का दावा नहीं कर सकती। जिन्ना ने यह मत व्यक्त किया कि रियासतों को यह अधिकार प्राप्त है कि वे यदि चाहें तो किसी भी संविधान सभा में शामिल न हों और यह कि हर देशी रियासत सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न राज्य है। उसे पाकिस्तान या हिन्दुस्तान में शामिल होने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। २५ जुलाई, सन् १९४७ को शासकों की एक कान्फरेंस दिल्ली में विलयन तथा अन्य प्रश्नों पर विचार करने के लिए बुलाई गई और जिन्ना ने अधिमिलन (एक्सेशन) की मांग पर आपत्ति की और खुलेआम रियासतों को आश्वासन

दिया कि वे पाकिस्तान में स्वतंत्र रहेंगे।

स्वतंत्र भारत संघ में भारतीय राज्यों का क्या स्थान हो, इस बारे में कैबिनेट मिशन ने १२ मई, सन् १९४६ को स्पष्टीकरण किया था। उसमें राजा-महाराजाओं को यह आश्वासन दिया गया था कि ब्रिटिश सरकार किसी भी परिस्थिति में किसी भारत सरकार को उसकी सहमति के बिना सर्वोच्च सत्ता हस्तांतरित नहीं करेगी। यह कहा गया था कि जब भारत स्वतंत्र हो जाएगा सर्वोच्च सत्ता व्यपगत हो जाएगी, क्योंकि ब्रिटिश सरकार भारतीय सरकारों के माध्यम से उस सत्ता का प्रयोग नहीं कर सकती और न उस सत्ता के अधीन अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए स्वतंत्र भारत में फौज ही रख सकती है। चूंकि देशी राज्यों द्वारा सर्वोच्च सत्ता को समर्पित स्वत्व व अधिकार किसी तीसरे पक्ष को नहीं हस्तांतरित किए जा सकते इसलिए वे देशी राज्यों को ही प्राप्त हो जाएंगे। किन्तु इस बीच यह आवश्यक हो जाएगा कि देशी राज्य भारतीय सरकार अथवा सरकारों से अपना कोई सम्बन्ध स्थापित कर लें। देशी राज्यों के शासकों ने इसका स्वागत किया क्योंकि उनका मत था कि इससे उनको भावी भारत में अपनी पदस्थिति, जो उन्होंने सर्वोच्च सत्ता को समर्पित कर रखी थी, निर्धारित करने का अवसर मिलता है। इस संबंध में कांग्रेस का मत शासकों से भिन्न था। कांग्रेस का यह कहना था कि देशी राज्यों की क्या पदस्थिति स्वतंत्र भारत में हो, इसका निर्णय शासक नहीं बल्कि देशी राज्यों की जनता कर सकती है और वही यह तय कर सकती है कि स्वतंत्र भारत के साथ उसके क्या सम्बन्ध हों। ब्रिटिश सरकार ने देशी राज्यों को यह सलाह दी कि वह समझौता समिति कायम करें जो ब्रिटिश भारतीय संविधान सभा की तत्स्थानीय समिति से यह समझौता करेगी कि भारत से उसके क्या सम्बन्ध रहें। २१ दिसम्बर, सन् १९४६ को संविधान सभा ने इस प्रयोजन के लिए एक समझौता समिति मुकर्रर की। किन्तु कोई इसका प्रत्यक्ष फल नहीं निकला क्योंकि २९ जनवरी, सन् १९४७ को बम्बई में देशी राज्यों और शासकों की कान्फरेंस ने एक प्रस्ताव पास किया जिसमें कहा गया कि प्रत्येक राज्य यह स्वयं निश्चित करेगा कि संघ में शामिल हो या न हो, संघ उनकी सीमाओं में और उनके संविधान में कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता और न कोई हस्तक्षेप उत्तराधिकारी नियुक्त करने में ही किया जा सकता है। देशी रियासतों के अन्दरूनी प्रयोजन में भी कोई हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता और महाराजाओं की समझौता समिति और भारतीय संविधान की समझौता समिति में जो भी निश्चय लिए जाएंगे वे महाराजाओं के संवैधानिक परामर्शदात्री समिति के अनुमोदनाधीन होंगे और उनकी पुष्टि देशी राज्य स्वयं करेंगे।

लार्ड माउण्टबैटन ने २५ जुलाई, सन् १९४७ को चेम्बर आफ प्रिंसेज़ के समक्ष भाषण दिया जिसमें उन्होंने कहा कि,

> सैद्धांतिक रूप से देशी राज्य अपना भविष्य निर्धारण के लिए स्वतंत्र हैं। वे अपना भविष्य किसी भी डोमिनियन से जोड़ सकते हैं, जिसे वे चाहें। किन्तु किसी भी डोमिनियन से अपना भविष्य जोड़ते समय यह ध्यान रखना पड़ेगा कि उनकी भौगोलिक स्थिति क्या है। भौगोलिक बाध्यताओं से वे भाग नहीं

> सकते हैं। इस समय लगभग ५६५ रियासतें हैं और इनमें से अधिकतर भारत डोमिनियन से भौगौलिक दृष्टि से सम्बद्ध हैं।
>
> माउंटबैटन ने आगे कहा :
>
> आप अपने पड़ोसी डोमिनियन सरकार से दूर नहीं भाग सकते जिस प्रकार आप अपनी प्रजा से, जिसके कल्याण के लिए आप उत्तरदायी हैं, दूर भाग नहीं सकते।

यहां इसका भी ज़िक्र करना आवश्यक मालूम पड़ता है कि जब हैदराबाद निज़ाम की कार्यकारिणी परिषद् के प्रेसीडेंट नवाब छतारी ने माउण्टबैटन से यह अनुरोध किया कि हैदराबाद को एक अलग डोमिनियन घोषित कर दिया जाए तब वायसराय ने ११ जुलाई, सन् १९४७ को नवाब साहब से कहा कि ब्रिटिश सरकार हैदराबाद को ब्रिटिश राष्ट्रमंडल का सदस्य बनाने के लिए कतई राज़ी नहीं होगी जब तक कि ऐसी प्रार्थना दोनों नई डोमिनियनों में से किसी एक के माध्यम से नहीं प्राप्त होती। यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार की दृष्टि में देशी रियासतों का कोई स्वतंत्र अस्तित्व हिन्दुस्तान को आज़ादी मिलने के बाद नहीं रह गया था। हाउस आफ कामन्स में जब इंडियन इंडिपैंडेंस ऐक्ट १९४७ पर बहस हो रही थी तो एटारनी जनरल सर सक्रास ने कहा था :

> ब्रिटिश सरकार देशी रियासतों को १५ अगस्त, सन् १९४७ से अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से पृथक् राष्ट्र के रूप में मान्यता देने का विचार नहीं करती। ब्रिटिश सरकार आशा करती है कि देशी रियासतें भी नई डोमिनियन से समुचित समझौता करके उसमें शामिल हो जाएंगी।

अन्त में, श्री वल्लभभाई पटेल के ५ अप्रैल, सन् १९४७ के बयान की ओर, जिसमें उन्होंने देशी राज्यों से भारत के डोमिनियन में सम्मिलित होने को कहा था, ध्यान आकृष्ट करना इष्टकर होगा :

> अगर आप भारत की डोमिनियन में शामिल होना चाहते हैं तो आप ऐसा १५ अगस्त के पहले करें। इसमें संदेह नहीं कि ऐसा करना प्रत्येक देशी राज्य के हित में होगा और हर होशियार और अकलमंद सरकार भारत की डोमिनियन में सम्मिलित होना चाहेगी। इस विलयन का आधार ऐसा होगा कि आपको अन्दरूनी मामलों में काफी स्वतंत्रता रहेगी और साथ ही सुरक्षा, यातायात और वैदेशिक मामलों में आपकी सब चिन्ताएं जाती रहेंगी।

राज्यों का अधिमिलन

मोहम्मद अली जिन्ना के इस बयान से कि १५ अगस्त, सन् १९४७ को सर्वोच्च सत्ता के समाप्त हो जाने पर सभी देशी राज्य सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न राज्य हो जाएंगे और यह कि उन्हें पाकिस्तान या हिन्दुस्तान डोमिनियन में शामिल होने के लिए किसी भी प्रकार से बाध्य नहीं किया जा सकता, रियासतों को अपने को स्वतंत्र घोषित करने

के लिए बल मिल गया। यद्यपि कुछ राज्यों के महाराजा, चैम्बर आफ प्रिंसेज द्वारा नियुक्त समझौता समिति के इस निश्चय से कि संघ सरकार रियासतों की सीमाओं में और उनके अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप न करेगी सहमत थे; और बड़ौदा के महाराजा ने स्पष्ट रूप से यह घोषणा भी कर दी कि वह सीधे भारतीय संविधान सभा में शामिल होने के लिए बातचीत करेंगे और कोचीन के शासक ने यह ऐलान कर दिया था कि वे अपना प्रतिनिधि भारतीय संविधान सभा में भेजेंगे, तो भी कुछ राजा-महाराजा ऐसे थे जो अपने को स्वतंत्र घोषित करना चाहते थे।

११ जून, सन् १९४७ को ट्रावनकोर ने यह घोषणा की कि वह स्वतंत्र हो जाएगा। दूसरे दिन, हैदराबाद ने भी इसी आशय की घोषणा की। मोहम्मद अली जिन्ना ने तुरन्त ट्रावनकोर के दीवान से वार्ता प्रारम्भ कर दी और यह ऐलान किया कि पाकिस्तान और ट्रावनकोर प्रतिनिधियों का आदान-प्रदान करेंगे। मुस्लिम लीग के पत्र 'डान' ने इसका बड़ा स्वागत किया और कहा कि सर्वप्रथम हिन्दू राज्य ट्रावनकोर ने पाकिस्तान में अपना राजदूत भेजना स्वीकार कर लिया है। 'डान' ने हैदराबाद के निज़ाम के स्वतंत्र रहने के निर्णय का भी हार्दिक स्वागत किया। इस बीच भारतीय संविधान सभा में प्रतिनिधि भेजने या न भेजने पर चैम्बर आफ प्रिंसेज़ के चांसलर, नवाब भोपाल और पटियाला के महाराजा में मतभेद हो गया था। नवाब भोपाल चांसलर की हैसियत से राजा-महाराजाओं को भारतीय संविधान सभा में शामिल होने से रोक रहे थे। प्रोचांसलर महाराजा पटियाला नवाब भोपाल से सहमत नहीं थे। बीकानेर के महाराजा भी नवाब से इत्तिफाक नहीं रखते थे। उनका कहना था कि यदि देशी रियासतें इस प्रकार का रुख अपनाएंगी तो जनता में यह धारणा दृढ़ हो जाएगी कि रियासतें कुछ राजनीतिक दलों के हाथ में खिलौना बन रही हैं। उन्होंने कहा कि रियासतों को सविधान सभा में अपना प्रतिनिधि भेजना चाहिए और संविधान बनाने में पूरा-पूरा सहयोग देना चाहिए जिससे कि रियासतें भी लाभान्वित हो सकें। नवाब साहब और इन महाराजाओं में जो मतभेद था वह समय के साथ बढ़ता गया। नतीजा यह हुआ कि २८ अप्रैल, सन् १९४७ तक बड़ौदा, बीकानेर, कोचीन, जयपुर, जोधपुर, पटियाला और रीवां रियासतों के प्रतिनिधि संविधान सभा में शामिल हो गए। मुस्लिम लीग की जो चाल संविधान सभा को भंग करने की थी, वह कामयाब न हो सकी। नवाब भोपाल ने अपने चांसलर के पद से इस्तीफा दे दिया और उन्होंने यह घोषणा की कि वे स्वतंत्र हो जाएंगे।

अंतरिम मंत्रिमंडल ने २५ जून को पहले के राजनीतिक विभाग के स्थान पर राज्य विभाग को कायम करने का निश्चय लिया। यह विभाग सरदार पटेल के अधीन रखा गया। राज्यों के प्रश्न पर सरदार पटेल ने ५ जुलाई को अपनी नीति स्पष्ट की। उसमें भारत की एकता पर बल दिया गया और बताया गया कि आपसी झगड़ों के कारण ही हमेशा पुराने ज़माने में भारत का पतन होता रहा है। सरदार ने इसलिए लोगों को आगाह किया कि वे अब इस किस्म की गलती न करें और यथाशीघ्र भारत को मज़बूत बनाएं। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि भारत देशी रियासतों का अधिमिलन केवल

तीन विषयों में ही चाहता है, अन्य मामलों में वह रियासतों की पूरी स्वाधीनता स्वीकार करता है। भारतीय, प्रदेशों और रियासतों दोनों में रहते हैं, अतः इन दोनों के लिए साथ-साथ बैठकर अपने देश के लिए कानून बनाना ज्यादा अच्छा होगा।

३१ जुलाई, सन् १९४७ तक राजाओं और भारत सरकार के बीच यथास्थिति करारनामों और अधिमिलन-पत्रों के मसविदे तय हो चुके थे। भारत सरकार के नेता सरदार पटेल की बुद्धिमत्ता और राजनीतिक कौशल के कारण देशी राज्य भारत में सम्मिलित होने लगे थे। जुलाई के अन्त तक ट्रावनकोर, जो स्वतंत्र होने के लिए पहले घोषणा कर चुका था, भारत में सम्मिलित हो गया। १५ अगस्त तक भोपाल और इंदौर भी भारत डोमिनियन में मिल गए। जूनागढ़, हैदराबाद और काश्मीर ही ऐसे राज्य थे जो भारत में सम्मिलित नहीं हुए। अन्य सभी राज्य, जिनकी संख्या लगभग ५६२ थी, अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर कर चुके थे।

जूनागढ़ और हैदराबाद के भारत में सम्मिलित होने की कहानी बड़ी रोचक है। जूनागढ़ पहले तो पाकिस्तान में सम्मिलित हुआ परन्तु जनता के आन्दोलन तथा मतदान के फलस्वरूप उसे फिर भारत में मिलना पड़ा। इसी प्रकार हैदराबाद में रजाकारों के उपद्रव तथा पुलिस कार्यवाही के बाद यह राज्य भी अन्ततोगत्वा भारत में सम्मिलित होने के लिए विवश हुआ।

अब कश्मीर ही ऐसा राज्य रहा था जो भारत या पाकिस्तान किसी में भी सम्मिलित नहीं हुआ। उसकी विस्तृत कहानी, जो इस ग्रंथ का मुख्य विषय है, आगामी पृष्ठों में वर्णित है।

अध्याय ३

काश्मीर पर पाकिस्तानी आक्रमण और उसका भारत में अधिमिलन

काश्मीर यह निश्चित नहीं कर सका था कि वह भारत डोमिनियन में शामिल हो या पाकिस्तान डोमिनियन में या अपने को स्वतंत्र घोषित करे। मुस्लिम लीग जम्मू और काश्मीर के महाराजा से बराबर यह अनुरोध कर रही थी कि वे अपने राज्य को स्वतंत्र घोषित कर दें। जुलाई में लीग के प्रेसीडेण्ट ने पाकिस्तान की ओर से यह ऐलान किया कि कोई भी राज्य पाकिस्तान डोमिनियन में शामिल हो सकता है या उसके साथ संधि कर सकता है या प्रशासकीय सुविधा के लिए उसके साथ यथास्थिति करारनामा कर सकता है। जिन्ना ने जोधपुर, जहां की अधिकतर आबादी हिन्दुओं की थी, के शासक को भी पाकिस्तान में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया और राज्य मंत्रालय के तत्कालीन सचिव श्री वी० पी० मेनन के कथनानुसार, जिन्ना ने एक सादा कागज़ हस्ताक्षर करके महाराजा हनुमन्तसिंह को दे दिया और कहा कि जो भी शर्तें उनको उपयुक्त जान पड़ें वे इसमें लिख लें किन्तु शामिल वे पाकिस्तान में अवश्य हो जाएं। यही नहीं, जिन्ना ने नवाब भोपाल से भी पाकिस्तान में शामिल होने के लिए कहा और उसके एवज़ में उन्हें पाकिस्तान के एक प्रान्त का गवर्नर बनाने के लिए आश्वासन दिया।

काश्मीर, जैसा कि सभी जानते हैं, न केवल भारत और पाकिस्तान का पड़ोसी राज्य है वरन् इसकी सीमाएं रूस, चीन, अफगानिस्तान और तिब्बत से भी मिली हुई हैं। काश्मीर घाटी में ९० प्रतिशत मुसलमान हैं और लद्दाख और जम्मू में अधिकतर गैर-मुसलमान हैं। मुसलमानों के दो संगठन हैं, नेशनल कान्फरेंस और मुस्लिम कान्फरेंस। कुछ मुसलमान एक संस्था के साथ हैं और कुछ दूसरी संस्था के साथ। फलतः महाराजा के लिए जनता की इच्छाओं को जानना कुछ सरल नहीं था। फिर, महाराजा यह समझते थे कि यदि वे भारत डोमिनियन में शामिल हो जाएंगे तो हिन्दुओं के लिए पाकिस्तान की ओर से बहुत बड़ा खतरा पैदा हो जाएगा। इसलिए महाराजा स्वतंत्र ही रहना चाहते थे। स्वतंत्र रहने की उनकी इच्छा का समर्थन मुस्लिम लीग कर रही थी। लेकिन उस समय तक महाराजा स्वतंत्र नहीं रह सकते थे जब तक कि इस दिशा में दोनों डोमिनियनों का समर्थन उनको प्राप्त न हो। महाराजा अधिमिलन की बात तय करने के लिए जम्मू और काश्मीर के प्रतिनिधियों को एक सम्मेलन में बुला

सकते थे और उनसे इस प्रश्न पर विचार-विनिमय कर सकते थे, लेकिन महाराजा ने ऐसा कुछ नहीं किया। उस समय के प्रधान मंत्री रामचन्द्र काक का महाराजा पर बड़ा प्रभाव था। रामचन्द्र काक यह चाहते थे कि काश्मीर स्वतंत्र रहे और भारत डोमिनियन से महाराजा कोई संधि न करें। चूंकि शेख अब्दुल्ला उस समय काश्मीर के भारत में शामिल हो जाने के पक्ष में थे इसलिए उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। यही नहीं, नेहरू के काश्मीर में प्रवेश पर रोक लगा दी गई।

जून, १९४७ में लार्ड माउण्टबैटन काश्मीर गए। उनका उद्देश्य महाराजा से अधिमिलन के बारे में वार्ता करना था। लोगों का कहना है कि माउण्टबैटन महाराजा को भारत डोमिनियन में शामिल होने के लिए बाध्य करने गए थे। यह भी कहा जाता है कि वे काश्मीर के महाराजा को यह परामर्श देने गए थे कि वे पाकिस्तान में शामिल हो जाएं। किन्तु, वास्तविकता यह है कि लार्ड माउण्टबैटन महाराजा को यह बताने गए थे कि वर्तमान स्थिति में उनका स्वतंत्र रहना सम्भव नहीं है। पाकिस्तान के 'डॉन' की २४ अगस्त, १९४७ की यह खबर कि लार्ड माउण्टबैटन काश्मीर के महाराजा पर यह दबाव डालने गए हैं कि वे भारत संघ में शामिल हो जाएं, गलत थी। लार्ड माउण्टबैटन का ध्येय पूरा न हो सका क्योंकि उनके ठहरने के अन्तिम दिन महाराजा ने अपनी बीमारी का बहाना करके उनसे मिलने से इन्कार कर दिया।

काश्मीर के राजनीतिक गतिरोध को दूर करने का गांधी जी ने भी प्रयास किया। उन्होंने यह घोषित किया कि वे स्वयं काश्मीर जाएंगे। नेहरू खुद काश्मीर जाने को तैयार थे। रियासत में साम्प्रदायिक तनाव बढ़ रहा था। ३१ जुलाई को गांधी जी दिल्ली से काश्मीर के लिए रवाना हुए और कहा कि वे काश्मीर जा रहे हैं क्योंकि सन् १९२० के कुम्भ के मेले में उन्होंने महाराजा को काश्मीर आने का वचन दिया था। वे उसी वचन को पूरा करने के लिए जा रहे हैं। कुछ लोगों ने उनका काश्मीर जाने का उद्देश्य राजनीतिक बताया। पहली अगस्त, १९४७ को गांधी जी काश्मीर पहुंचे। नेशनल कान्फरेन्स तथा अन्य संस्थाओं ने उनका बड़ा स्वागत किया। मुस्लिम कान्फरेन्स ने उनके आगमन के विरुद्ध प्रदर्शन किया। गांधी जी रामचन्द्र काक से २-३ अगस्त को मिले। महाराजा से भी गांधी जी मिले। महाराजा, प्रधान मंत्री और गांधी जी में क्या वार्ता हुई, इसके बारे में पूरी जानकारी नहीं है, हां, इतना अवश्य मालूम है कि गांधी जी ने इसपर ज़ोर दिया कि रियासत के भविष्य के सम्बन्ध में काश्मीरियों की राय का आदर किया जाना चाहिए। गांधीजी ने बाद में पंडित नेहरू को लिखा कि "महाराजा और महारानी ने यह स्वीकार किया है कि ब्रिटिश सर्वोच्च सत्ता की समाप्ति पर वास्तविक सर्वोच्च सत्ता जनता को प्राप्त होगी। महाराजा संघ में शामिल होना चाहते हैं, लेकिन उनको करना वही पड़ेगा जो जनता चाहेगी। जनता की इच्छा किस प्रकार मालूम की जाए, इस बारे में कोई बातचीत नहीं हुई।" ११ अगस्त को रामचन्द्र काक ने अपने पद से इस्तीफा दे दिया और जनकसिंह काश्मीर के प्रधान मंत्री नियुक्त किए गए। काक के इस्तीफे से मुस्लिम लीग के नेताओं को बड़ी बैचेनी हुई क्योंकि काक बराबर पाकिस्तान के राजनीतिज्ञों को यही आश्वासन

देते रहे थे कि काश्मीर पाकिस्तान में मिल जाएगा। १२ अगस्त को काश्मीर की सरकार ने एक विज्ञप्ति जारी की जिसमें कहा गया कि काश्मीर सरकार की यह इच्छा है कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान से वह यथास्थिति करारनामा करे। काश्मीर ने एक समान दो तार[1] दोनों देशों को भेजे। करारनामे के प्रालेख में यह व्यवस्था रखी गई कि "जब तक कि नये करारनामे न किए जाएं, मौजूदा करारनामे और प्रशासकीय व्यवस्थाएं चलती रहेंगी, और यदि कोई विवाद उठ खड़ा हो, तो पंच निर्णय द्वारा उसका समाधान किया जाएगा। करारनामे की किसी भी बात से महाराजा की सर्वोच्च सत्ता पर कोई आंच नहीं आएगी।" पाकिस्तान की सरकार ने १४ अगस्त, १९४७ को यथास्थिति करारनामा स्वीकार करने की सूचना दी। भारत सरकार ने तार द्वारा जवाब दिया कि "भारत सरकार प्रसन्न होगी यदि महाराजा या उनकी ओर से प्राधिकृत कोई मंत्री काश्मीर सरकार और भारत की डोमिनियन में यथास्थिति करारनामा करने के लिए दिल्ली आए। मौजूदा करारनामे और प्रशासकीय इन्तज़ाम बनाए रखने के लिए ज़रूरी है कि जल्दी ही इस सम्बन्ध में उपाय किए जाएं।" भारत सरकार का यह रुख था कि काश्मीर की सरकार से भारत सरकार कोई करारनामा उसी समय कर सकती है जब काश्मीर की जनता के प्रतिनिधि उसे स्वीकार करें। वास्तव में, जैसा कि वी० पी० मेनन ने बताया है, भारत सरकार यथास्थिति करारनामे करने के पूर्व इस प्रश्न पर भली भांति विचार कर लेना चाहती थी।

भारत ने काश्मीर पर कोई दबाव नहीं डाला कि वह भारत में शामिल हो जाए। १५ अगस्त, १९४७ को एक प्रकार से काश्मीर स्वतन्त्र राज्य हो गया क्योंकि उस तारीख तक वह किसी डोमिनियन में नहीं शामिल हुआ था। अब उसे यह तय करना शेष रहा कि भारत और पाकिस्तान से वह क्या सम्बन्ध बनाए रखे। पाकिस्तान बराबर काश्मीर पर यही ज़ोर-दबाव डालता रहा कि यह पाकिस्तान में मिल जाए। २९ जुलाई को जब मोहम्मदअली जिन्ना ने यह घोषित किया कि राज्यों को स्वतंत्र रहने का अधिकार है, तो 'डान' अखबार ने अपने अग्रलेख में काश्मीर को पाकिस्तान में शामिल होने के लिए स्पष्ट रूप से 'आदेश' दिया। १५ अगस्त के बाद काश्मीर के कई डाकखानों पर पाकिस्तानी झंडे फहराए गए। काश्मीर को पाकिस्तान में शामिल होने को बाध्य करने की हरचन्द कोशिश की गई। २२ दिसम्बर को मुस्लिम कान्फरेन्स

१ जम्मू और काश्मीर सरकार के प्रधान मंत्री का तार :

"जम्मू और काश्मीर की सरकार भारत संघ से यथास्थिति करारनामा करना चाहती है। यह करारनामा उन विषयों के बारे में होगा जो ब्रिटिश सरकार के भारत से चले जाने के बाद मौजूदा समय में प्रचलित हैं। जब तक कि और नये करारनामे नहीं हो जाते और ब्योरे नहीं तय हो जाते, मौजूदा करारनामे चलते रहें।"

इसी आशय का तार उसी दिन पाकिस्तान की सरकार को भी भेजा गया था। पाकिस्तान की सरकार ने यह जवाब दिया :

"आपका १२ तारीख का तार मिला। पाकिस्तान की सरकार जम्मू और काश्मीर की सरकार से, जब तक कि नये करारनामे निष्पादित नहीं हो जाते और ब्योरे तय नहीं हो जाते, मौजूदा करारनामों के चलते रहने के लिए सहमत है।"

का एक सम्मेलन किया गया और उसमें महाराजा से यह कहा गया कि वे पाकिस्तान में तुरन्त शामिल हो जाएं।

अगस्त के प्रारम्भ में पूंछ में विद्रोह हुआ था। इस डर से कि कहीं विद्रोह साम्प्रदायिकता का रूप न ले ले, महाराजा ने २९ सितम्बर को शेख अब्दुल्ला को मुक्त कर दिया। मुस्लिम कान्फरेन्स के कार्यकर्ता नहीं छोड़े गए थे, इसलिए पाकिस्तान ने यह प्रचार करना शुरू कर दिया कि महाराजा और अब्दुल्ला में सांठ-गांठ हो गई है और अब्दुल्ला काश्मीर को भारत डोमिनियन में मिलाना चाहते हैं। किन्तु शेख अब्दुल्ला ने मुक्त होने के बाद काश्मीर के भारत में अधिमिलन के बारे में कुछ नहीं कहा। वे केवल दो बातों पर जोर देते रहे, एक तो यह कि काश्मीर में सभी जातियां शांतिपूर्वक साथ-साथ रहें और दूसरे यह कि अधिमिलन का प्रश्न उसी समय उठ सकता है जब सत्ता पहले जनता को हस्तान्तरित हो जाए। ३ अक्तूबर को श्रीनगर में अब्दुल्ला ने कहा :

> जम्मू और काश्मीर राज्य के सामने आज एक बड़ी समस्या है और वह यह कि यह राज्य भारत संघ में शामिल हो या पाकिस्तान में, या स्वतन्त्र रहे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मैं ए० आई० एस० पी० कांफरेंस का प्रेसीडेण्ट हूं और इस मामले में उसकी नीति बिल्कुल स्पष्ट है। पंडित जवाहरलाल नेहरू मेरे बहुत प्रिय मित्र हैं और मैं गांधी जी को बड़े आदर की दृष्टि से देखता हूं। यह भी सच है कि कांग्रेस ने हमारे आन्दोलन में बड़ी सहायता की है। इन सब बातों के बावजूद यदि आप लोग कोई स्वतन्त्र निश्चय लेना चाहें कि काश्मीर राज्य किस डोमिनियन में मिले, तो मैं और मेरे विचार आपके निश्चय में बाधक नहीं होंगे।

शेख अब्दुल्ला ने अपने भाषण में यह भी कहा कि,

> भारत संघ या पाकिस्तान में शामिल होने का आधार जम्मू और काश्मीर में रहने वाले ४० लाख लोगों का कल्याण है, लेकिन अगर हम पाकिस्तान में मिल भी जाते हैं, तो भी हम दो राष्ट्र के सिद्धान्त को नहीं स्वीकार करेंगे। इस सिद्धांत ने आज देश में बहुत विषवमन किया है। मैं हिन्दुओं और सिक्खों को आश्वासन देता हूं कि जब तक मैं जीवित रहूंगा, उनका जीवन और उनकी इज़्ज़त बिल्कुल सुरक्षित रहेगी। हम काश्मीर में लोगों का राज्य चाहते हैं। हम ऐसी सरकार स्थापित करना चाहते हैं जो सभी लोगों को एक समान अवसर दे और जिसमें हर जाति और धर्म फले-फूले।

जब पाकिस्तान ने यह देखा कि महाराजा किसी प्रकार पाकिस्तान में शामिल नहीं हो रहे हैं, तो यथास्थिति करारनामा होने के बावजूद पाकिस्तान ने काश्मीर की आर्थिक नाकेबन्दी शुरू कर दी। पाकिस्तानी अधिकारियों ने खाद्य पदार्थ, पेट्रोल और दूसरी ज़रूरी वस्तुओं की सप्लाई को काश्मीर में जाने से रोक दिया और साथ ही काश्मीर की सीमा पर हमले शुरू कर दिए। २ अक्तूबर, १९४७ को पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने यह स्वीकार किया कि काश्मीर में सप्लाई पहुंचाने में बाधा पड़ रही

रहे हैं और पाकिस्तान अपनी सेना इस प्रयोजन के लिए इस्तेमाल नहीं कर सकता। पाकिस्तान ने यह शिकायत की कि सिक्ख रियासत में घुसपैठ कर रहे हैं। काश्मीर सरकार ने न केवल इसका खंडन किया कि सिक्ख रियासत में घुसपैठ कर रहे हैं बल्कि यह कहा कि पाकिस्तान की तरफ से लोग नाजायज़ तरीके पर रियासत में आ रहे हैं। काश्मीर सरकार ने पाकिस्तान को याद दिलाया कि पाकिस्तान ने इस बात की गारंटी दी थी कि सभी सामान बिना रोकटोक के काश्मीर में आता रहेगा। काश्मीर सरकार ने बताया कि चार महीने के चावल का कोटा, दो महीने के गेहूं का कोटा, १८६ गट्ठर कपड़ा और १० वैगन नमक और ३८४ हजार गैलन पेट्रोल काश्मीर में आने से पाकिस्तान ने रोक लिया है। काश्मीर को अब यह भय हो गया कि कहीं पाकिस्तान उस पर हमला न कर दे। जब पाकिस्तान ने काश्मीर के महाराजा को यह सूचित किया कि वह अपने एक संयुक्त सचिव मेजर शाह को बातचीत करने के लिए काश्मीर भेज रहा है तो महाराजा ने तुरन्त यह जवाब दिया कि वे इस समय बहुत व्यस्त हैं और इस लिए मेजर शाह को अभी न भेजा जाए। पाकिस्तान यह प्रचार कर रहा था कि महाराजा की सेना रियासत के मुसलमानों की हत्या कर रही है। इसके विपरीत, काश्मीर का यह कहना था कि जब जिन्ना को यह खबर लगी कि महाराजा पाकिस्तान डोमिनियन में शामिल नहीं होना चाहते तो जम्मू के मुसलमानों को साम्प्रदायिक दंगे करने के लिए भड़काया गया। पाकिस्तान का यह अभियोग कि महाराजा मुसलमानों को मार डालना चाहते थे गलत है क्योंकि रियासत में ७५ प्रतिशत मुसलमान थे और हिन्दू-मुसलमानों का प्रतिशत कुछ मुसलमानों या हिन्दुओं के मार डालने से नहीं बदला जा सकता था।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, काश्मीर स्वतंत्र रहना चाहता था। काश्मीर के उपप्रधान मंत्री आर० बी० बतरा ने १२ अक्तूबर को यह कहा :

> हम हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखना चाहते हैं। भारत या पाकिस्तान में शामिल होने का हमारा कोई इरादा नहीं है। हमारे राजा और उनकी सरकार ने यह तय किया है कि जब तक रियासत में शांति और व्यवस्था स्थापित नहीं हो जाती, इस प्रक.र का कोई निर्णय नहीं लिया जाएगा। महाराजा काश्मीर को पूरब का स्विट्ज़रलैंड बनाना चाहते हैं, ऐसा राज्य जो बिल्कुल तटस्थ हो।
>
> रियासत की जनता पर्यटकों पर निर्भर करती है। इसलिए इसको पर्यटकों का ध्यान रखना है। काश्मीर की सीमा भारत, पाकिस्तान, तिब्बत, रूस, अफगानिस्तान और सिक्यांग से मिली हुई है। इसलिए हमको उन सब देशों का बराबर ध्यान रखना है। हम चाहते हैं कि सभी जगहों के लोग काश्मीर में आएं।

ऐसा मालूम होता है कि काश्मीर सरकार को यह आभास होने लगा था कि उसका स्वतन्त्र रहना नामुमकिन है। १५ अक्तूबर को जम्मू और काश्मीर के प्रधान मंत्री ने पाकिस्तान द्वारा आर्थिक नाकेबंदी की शिकायत ब्रिटिश प्रधान मंत्री से एक

तार में की। उन्होंने यह भी शिकायत की कि पाकिस्तान के अखबार साम्प्रदायिकता फैला रहे हैं और राज्य पर प्रत्येक दबाव डाल रहे हैं कि वह पाकिस्तान में मिल जाए। यह भी शिकायत की गई कि पूंछ में सशस्त्र पाकिस्तानियों की घुसपैठ हो रही है। किन्तु ब्रिटेन के प्रधान मंत्री बिल्कुल खामोश रहे। उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया।

महाराजा ने भारत सरकार से अनुरोध किया कि वह राष्ट्रमंडल का सदस्य होने के नाते पाकिस्तान को इन कार्रवाइयों से रोके। पाकिस्तान का यह जवाब था कि चूंकि काश्मीर में काश्मीर की सेना ने मुसलमानों को मार डाला है, इसलिए पाकिस्तानी फौजों में काश्मीर के खिलाफ बड़ी उत्तेजना फैल गई है क्योंकि ज़्यादातर पाकिस्तानी सैनिक पूंछ से ही भर्ती किए गए हैं। १५ अक्तूबर, सन् १९४७ को जम्मू और काश्मीर की सरकार ने पाकिस्तान को यह स्पष्ट रूप से बता दिया कि यदि वे अपनी घुसपैठ नहीं रोकते और नाकाबन्दी नहीं उठाते तो काश्मीर सरकार के पास सिवाय इसके कि वे दूसरे लोगों से सहायता मांगे और कोई चारा नहीं रहेगा। १८ अक्तूबर को काश्मीर ने पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल और पाकिस्तान के प्रधान मंत्री को सूचित किया कि पाकिस्तान यथास्थिति करारनामे की सभी शर्तों का उल्लंघन कर रहा है और उसकी सीमा पर हमला कर रहा है, और यह कि ऐसा सब पाकिस्तान के स्थानीय अधिकारियों की जानकारी और उनकी साज़िश से किया जा रहा है। काश्मीर सरकार ने यह भी कहा कि काश्मीरी जनता के जीवन और सम्पत्ति को पाकिस्तान से बहुत खतरा पैदा हो रहा है। पाकिस्तान सरकार ने उलटे यह शिकायत की कि काश्मीर से मुसलमानों को भगाया जा रहा है और ऐसा किसी बाहरी देश के इशारे पर किया जा रहा है। उन्होंने यह भी शिकायत की कि काश्मीर भारत डोमिनियन में शामिल होने जा रहा है। इस प्रकार का पत्र-व्यवहार चल ही रहा था कि श्रीनगर में यह खबर पहुंची कि पाकिस्तान ने काश्मीर पर पूरा हमला कर दिया है। जी० एम० सादिक ने इस बारे में प्रकाश डालते हुए १० दिसम्बर, १९४७ को यह बताया कि पाकिस्तान द्वारा काश्मीर पर आक्रमण से पहले नेशनल कान्फरेन्स ने उनसे कहा था कि वे पाकिस्तान सरकार से अधिमिलन के प्रश्न पर बातचीत करें और पाकिस्तान सरकार को यह स्पष्टतया बता दें कि काश्मीर की जनता स्वयं अधिमिलन के प्रश्न पर निर्णय लेगी। पाकिस्तान के प्रधान मंत्री से और अन्य मंत्रियों से भी सादिक मिले लेकिन कोई फल नहीं निकला। बख्शी गुलाम मुहम्मद ने भी बताया कि पाकिस्तानी नेता इस बात के लिए तैयार नहीं थे कि काश्मीर के अधिमिलन का प्रश्न जनमत से निश्चित किया जाए। पाकिस्तानी नेता चाहते थे कि शेख अब्दुल्ला इस प्रकार के आश्वासन और वचन दें कि नेशनल कान्फरेन्स के सभी कार्यकर्ता पाकिस्तान में राज्य के अधिमिलन के पक्ष में अपना वोट दें, तभी जनमत के लिए पाकिस्तान राज़ी हो सकता है। यह सुझाव कान्फरेन्स के नेताओं को बिल्कुल स्वीकार नहीं था।

२२ अक्तूबर, सन् १९४७ को पाकिस्तान के उत्तर-पश्चिम से सशस्त्र कबाइली मोटरगाड़ियों में चढ़कर काश्मीर में घुसने लगे। उनका इरादा श्रीनगर तक पहुंचकर उसपर कब्ज़ा करने का था। इसमें पूंछ के भूतपूर्व सैनिकों ने भी बड़ा

सहयोग दिया। आक्रमण का संचालन पाकिस्तान से ही किया गया। आक्रमणकारियों ने काश्मीर की जनता पर बड़ा अत्याचार किया। कितनी ही महिलाओं के साथ बलात्कार किया गया और बच्चों को मार डाला गया। आगजनी और लूट आक्रमणकारियों का नैतिक कार्य बन गया। इन आक्रमणकारियों ने २२ अक्तूबर, १९४७ को साढ़े चार बजे सुबह आधुनिक शस्त्रों से सुसज्जित होकर पैदल और मोटरगाड़ियों में मुज़फ्फराबाद में प्रवेश किया। आक्रमणकारियों की संख्या २२ अक्तूबर को लगभग दो हज़ार थी। काश्मीर की फौज उनका सामना न कर सकी। आक्रमणकारियों ने सरकारी दफ्तर लूटे, उनको नष्ट किया और सिक्ख गुरुद्वारों को जलाया। २३ अक्तूबर को चिनारी पर कब्ज़ा कर लिया गया और २४ अक्तूबर को उड़ी पर। २५ और २६ अक्तूबर को आक्रमणकारियों ने अन्य नगरों को नष्ट-भ्रष्ट किया। मोहरा बिजली घर को, जो श्रीनगर को बिजली सप्लाई करता है, तोड़ डाला गया। २७ अक्तूबर को १० बजे तक आक्रमणकारी बारामूला पहुंच गए। वहां पर स्थित एक अस्पताल और एक गिरजाघर को नष्ट कर दिया गया। उसके पश्चात् आक्रमणकारी सोपोर, बन्दीपुर, अंडवारा, गुलमर्ग और बरगांव की तरफ बढ़े। श्रीनगर की स्थिति चिन्ताजनक हो गई। बारामूला में १४ हजार मुसलमान थे जिसमें से आक्रमण के बाद कुल तीन हज़ार बचे। ऐसा ही करीब-करीब उन सभी नगरों में हुआ जहां आक्रमणकारी पहुंचे। बारामूला में क्या हुआ, इसका उल्लेख एक पादरी ने इस प्रकार किया है :

> कबाइली पहाड़ से शहर के दोनों तरफ आ गए। एक २० साल की हिन्दुस्तानी नर्स ने एक मुसलमान रोगी को उनके आक्रमण से बचाना चाहा। उस रोगी के उसी समय बच्चा हुआ था। नर्स को गोली मार दी गई और रोगी को बांध दिया गया। मदर सुपीरियर दौड़ी हुई आई, उनपर भी आक्रमण किया गया। सहायक मदर ने जब यह देखा कि एक कबाइली मदर सुपीरियर पर राइफल ताने हुए हैं तो वह फौरन आगे आ गई। राइफल चला दी गई और सहायक मदर के हृदय के आर-पार गोली निकल गई। उसी समय कर्नल डाइक्स दौड़े हुए आए। कर्नल डाइक्स ने यह आश्वासन दिया था कि कबाइली कैथेड्रल गिरजाघर और अस्पतालों पर हमला नहीं करेंगे। कबाइली ने गोली चलाई और मदर सुपीरियर को मार डाला। कर्नल डाइक्स भी गोली के शिकार हो गए। कर्नल डाइक्स की पत्नी दौड़ी हुई आई। वह भी मार डाली गई। गी बोलीटो अपने बाग में मार दिए गए और नौ नन्स गोली से उड़ा देने के लिए एक कतार में खड़ी कर दी गईं लेकिन भाग्यवश एक नवयुवक अधिकारी ने उनकी जान बचा ली।

इन्हीं में से एक नन ने १० साल बाद 'टाइम्स आफ इंडिया' के सम्पादक फ्रेंच मोरैस को बताया कि एक आक्रमणकारी दवा-दारू के लिए उसके पास आया था और उसकी उंगली में १५ अंगूठियां थीं। जब उससे पूछा गया कि उसको ये अंगूठियां कहां से मिलीं तो उसने बड़े फख्र से बताया कि उसने १५ आदमियों को मारा है।

अधिमिलन

अन्ततः महाराजा ने भारत सरकार से २४ अक्तूबर, १९४७ की शाम को सहायतार्थ अपील की। २५ अक्तूबर को लार्ड माउंटबैटन की अध्यक्षता में रक्षा समिति की बैठक हुई और उसमें इस स्थिति पर विचार किया गया। उसी बैठक में जनरल लोकहार्ट ने पाकिस्तानी सेना के मुख्यालय से प्राप्त एक तार को पढ़कर सुनाया। उस तार में कहा गया था कि रिपोर्ट से पता चलता है कि आक्रमणकारी श्रीनगर से ३५ मील से कुछ ही दूर रह गए हैं। रक्षा समिति में इस बात को स्वीकार किया गया कि काश्मीर को सहायता देना आवश्यक है, लेकिन माउंटबैटन ने सलाह दी कि इसमें सावधानी बरती जाए। यह भी कहा गया कि फौजी सहायता उसी समय भेजी जा सकती है जब काश्मीर भारत में सम्मिलित हो जाए। माउंटबैटन ने यह भी सलाह दी कि महाराजा द्वारा अधिमिलन अस्थायी होना चाहिए। उस समिति में यह निश्चय किया गया कि राज्य मंत्रालय के सचिव श्री वी० पी० मेनन को श्रीनगर की स्थिति का अध्ययन करने के लिए भेजा जाए। श्रीनगर में स्थिति खराब थी। काश्मीर के प्रधान मंत्री एम० सी० महाजन के शब्दों में :

> हमने २५ की शाम को भारत जाना निश्चय कर लिया था, यदि हमें हवाई जहाज़ मिल जाता, या आत्मसमर्पण के लिए हम पाकिस्तान चले जाते। कुछ लोगों ने सुझाव दिया कि काबुल से सहायता ली जाए। भाग्यवश इसी बीच मि० मेनन पहुंच गए।

श्रीनगर पहुंचने पर मि० मेनन ने देखा कि घाटी के लोग भयभीत हैं, श्मशान का सन्नाटा पूरी घाटी पर छाया हुआ है, राज्य की पुलिस अपने कार्यस्थल से गायब है और बख्शी गुलाम मुहम्मद के नेतृत्व में नेशनल फ्रंट के स्वयंसेवक शांति और व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास कर रहे हैं। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन के लिए इधर-उधर भाग रहा है और महाराजा और उनके मंत्रिमंडल सब आशा खो बैठे हैं। मेनन सीधे हवाई अड्डे से महाराजा के पास गए। मेनन ने महाराजा को श्रीनगर छोड़ देने की सलाह दी और खुद दिल्ली लौट आए और रक्षा समिति को काश्मीर की सहायता करने के लिए रिपोर्ट दी। रक्षा समिति ने सहमति दी कि भारत सरकार महाराजा के अधिमिलन की प्रार्थना को स्वीकार कर ले। मेनन हवाई जहाज़ से जम्मू लौटे जहां महाराजा थे।[1] वह महाराजा द्वारा हस्ताक्षरित अधिमिलन-पत्र अपने

---

१. महाराजा उस समय सो रहे थे। सोने के लिए जाने से पूर्व महाराजा ने अपने ए० डी० सी० से यह कह दिया था कि यदि मेनन आ जाएं तो महाराजा को न जगाया जाए क्यों कि यह समझ लिया जाएगा कि भारत काश्मीर की सहायता करेगा और यदि मेनन न आएं तो यह समझा जाएगा कि भारत सहायता करने के लिए तैयार नहीं है और उस दशा में ए० डी० सी० महाराजा को गोली मार दें।

इस सम्बन्ध में काश्मीर के प्रधान मंत्री महाजन का विवरण उल्लेखनीय है :

साथ दिल्ली लाए। महाराजा ने लार्ड माउंटबैटन को एक पत्र भी भेजा जिसमें पाकिस्तान द्वारा राज्य पर आक्रमण किए जाने के फलस्वरूप उत्पन्न संकटमय स्थिति की ओर उनका ध्यान आकृष्ट किया गया था और भारत से सहायता की याचना की गई थी। महाराजा ने यह भी कहा कि उनका विचार अंतरिम सरकार बनाने और अब्दुल्ला से यह अनुरोध करने का है कि वे प्रधान मंत्री के साथ शासन की बागडोर संभालें। २७ अक्तूबर की रक्षा समिति की बैठक में अधिमिलन-पत्र स्वीकार करने का निश्चय लिया गया और तदनुसार गवर्नर-जनरल ने महाराजा को सूचित कर दिया। गवर्नर-जनरल ने यह भी लिखा कि भारतीय सैनिक काश्मीर राज्य के सैनिकों की सहायता के लिए भेजे जा रहे हैं और इसपर सन्तोष प्रकट किया कि प्रधान मंत्री के साथ कार्य करने के लिए अब्दुल्ला अंतरिम सरकार बनाएंगे। अधिमिलन-पत्र पर महाराजा हरीसिंह ने २६ अक्तूबर, १९४७ को हस्ताक्षर किया और भारत के गवर्नर-जनरल ने अधिमिलन-पत्र को २७ अक्तूबर को स्वीकार किया। इस प्रकार काश्मीर का भारत में अधिमिलन संवैधानिक दृष्टि से और कानून की दृष्टि से पूर्ण हो गया।

पाकिस्तानी और कबाइली आक्रमणकारियों से राज्य की रक्षा के लिए न केवल महाराजा ने सैनिक सहायता की याचना की थी अपितु शेख अब्दुल्ला ने भी भारत सरकार से इस आशय का अनुरोध किया था। शेख अब्दुल्ला उस समय अपने संगठन की ओर से, जो राज्य की जनता का प्रतिनिधित्व करता था और आक्रमणकारियों के खिलाफ मोर्चाबन्दी करने में व्यस्त था, भारत सरकार से काश्मीर का अधिमिलन स्वीकार करने और सैनिक सहायता भेजने के लिए अनुरोध करने को नई

"मैं भारत के प्रधान मंत्री और उपप्रधान मंत्री से मिला और राज्य की खतरनाक और गम्भीर स्थिति से उनको अवगत किया। मैंने सैनिक सहायता की याचना की और कहा कि सेना को तुरन्त हवाई जहाज से भेजा जाए वरना पूरा श्रीनगर नष्ट हो जाएगा और साथ ही उन सब चीज़ों का जिन्हें हम अमूल्य समझते हैं विनाश हो जाएगा। मुझसे पूछा गया कि किस प्रकार तुरन्त फौज भेजी जा सकती है। मुझे विश्वास दिलाया गया कि यदि श्रीनगर पाकिस्तानी आक्रमणकारियों के कब्ज़े में आ भी जाता है तो बाद में उसे जीत लिया जाएगा। मैं इस दलील से प्रभावित नहीं हुआ और मैंने दृढ़ता से काम लिया। मैंने कहा 'सेना भेजिए, काश्मीर का अधिमिलन स्वीकार कीजिए और लोकप्रिय पार्टी को जो भी अधिकार देना चाहें दे दीजिए, किन्तु आज ही शाम को सेना अवश्य श्रीनगर हवाई जहाज से भेजिए, वरना मैं जिन्ना के पास जाकर उनसे संधि की शर्तें करूंगा क्योंकि श्रीनगर को बचाना आवश्यक है।'

"इसपर प्रधान मंत्री नेहरू गुस्से में आ गए और मुझसे कमरे के बाहर निकल जाने को कहा। जैसे ही मैं कमरे से बाहर निकलने के लिए उठा एक घटना हो गई और उसने मुझे और काश्मीर को पाकिस्तान के हाथ में पड़ने से बचा लिया। शेख अब्दुल्ला ने जो प्रधान मंत्री के घर में ठहरे हुए थे मेरी और नेहरू की उक्त बातचीत सुन ली और स्थिति को गंभीर देखकर एक पर्चा प्रधान मंत्री नेहरू को भेजी। पंडित जी ने उसे पढ़ा और मुझसे कहा कि शेख साहब का भी यही मत है जो आपका है। पंडित जी का रवैया बिल्कुल बदल गया। मैं इस सामयिक सहायता के लिए शेख साहब का हमेशा कृतज्ञ रहा हूं। इस प्रकार काश्मीर पाकिस्तान के हाथ चले जाने से बच गया।"

दिल्ली आए हुए थे।

अधिमिलन की वैधता

भारतीय रियासतों के प्रति ब्रिटिश सरकार की नीति का स्पष्टीकरण कैबिनेट मिशन के ज्ञाप में, जैसा पहले ही बताया जा चुका है, लिया गया था। ज्ञाप में यह कहा गया था कि कोई भी रियासत उत्तरदायी सरकार या सरकारों से संघीय सम्बन्ध स्थापित कर सकती थी। गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट १९३५ में, जैसा कि वह १५ अगस्त, १९४७ को लागू था, यह व्यवस्था थी कि ऐसा सम्बन्ध अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर करके स्थापित किया जा सकता था। इसलिए जब काश्मीर के महाराजा ने अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए और भारत के गवर्नर-जनरल ने उसे स्वीकार कर लिया तो काश्मीर का भारत में अधिमिलन कानून की दृष्टि से वैध हो गया।

प्रायः यह कहा जाता है कि जब काश्मीर ने पाकिस्तान के साथ यथास्थिति करारनामा कर दिया था तो उसका भारत में शामिल होने के लिए अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर करना करारनामा का उल्लंघन था। लेकिन कदाचित् लोग यह भूल जाते हैं कि यथास्थिति करारनामा मुख्यतया यथास्थिति बनाए रखने के लिए और सर्वोच्च सत्ता की समाप्ति पर प्रशासकीय शून्यता को समाप्त करने के लिए केवल अंतरिम व्यवस्था के रूप में किया गया था। किसी रियासत का किसी डोमिनियन से यथास्थिति करारनामा करने के यह अर्थ नहीं होते कि उस डोमिनियन का उस रियासत विशेष पर कोई मालिकाना हक हो गया है। फिर इंडियन इंडिपेंडेंस ऐक्ट में यह व्यवस्था थी कि कोई भी रियासत भारत या पाकिस्तान सरकार या दोनों सरकारों से यथास्थिति करारनामा कर सकती थी। इस प्रकार पाकिस्तान से पहले यथास्थिति करारनामा कर लेने से काश्मीर के महाराजा भारत के पक्ष में अधिमिलन-पत्र निष्पादित करने के अधिकार से वंचित नहीं हो गए थे।

यह भी अक्सर तर्क दिया जाता है कि काश्मीर पर आक्रमण के फलस्वरूप काश्मीर का कुछ भाग आक्रमणकारियों के हाथ में चला गया और उसके स्वामी आक्रमणकारी हो गए, इसलिए काश्मीर के महाराजा को भारत सरकार के पक्ष में अधिमिलन-पत्र निष्पादित करने का अधिकार नहीं रह गया था। इस सम्बन्ध में पहली बात ध्यान देने योग्य यह है कि काश्मीर के उस भाग पर, जो आक्रमणकारियों के कब्ज़े में है, आक्रमणकारियों का स्वत्व स्वीकार नहीं किया जा सकता। केवल इस बात से कि काश्मीर पर आक्रमण हुआ यह तर्क न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता कि काश्मीर के महाराजा का वस्तुतः अधिकार काश्मीर के उस अंश पर जाता रहा जिसपर आक्रमणकारियों ने फिलहाल कब्ज़ा कर लिया था। यदि यह मान भी लिया जाए कि काश्मीर के कुछ भाग पर आक्रमणकारियों का वास्तविक अधिकार हो गया है तो भी अन्तर्राष्ट्रीय कानून की दृष्टि में इस स्थिति का अन्य राष्ट्रों द्वारा स्वीकार किया जाना आवश्यक है, जैसा कि २१ मार्च, १९२१ को ब्रिटेन के विदेश

मंत्री ने हाउस आफ कामन्स में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा था कि अन्तर्राष्ट्रीय कानून की दृष्टि में नये शासन को वैध सरकार की मान्यता उसी समय दी जा सकती है जब रियासत के अधिकांश भाग पर वास्तविक रूप से नये शासन का अधिकार हो और इसकी सम्भावना हो कि ऐसा अधिकार बना रहेगा। यह उल्लेखनीय है कि न तो भारत सरकार ने और न यू० एन० सी० आई० पी० (यूनाइटेड नेशन्स कमीशन फार इंडिया ऐंड पाकिस्तान) ने आक्रमणकारियों द्वारा स्थापित आज़ाद सरकार को वस्तुतः या वास्तविक मान्यता दी है। पाकिस्तान सरकार ने भी उसे कोई मान्यता नहीं दी है।[1]

दूसरे, ओ' कोनेल के अनुसार "उस दशा में जब किसी संविदाकारी राज्य का कुछ प्रदेश अधिमिलन, पृथकीकरण द्वारा निकल जाता है, उस राज्य की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में और उसकी संविद्-क्षमता में कोई अन्तर नहीं आता।"

तीसरे, कोई वैध सरकार या राज्य ही राज्य-उत्तराधिकारी के प्रयोजन के लिए पुराने राज्य का प्रतिनिधित्व कर सकता है। यदि किसी नई सरकार या नये राज्य को विधिक मान्यता मिल जाती है तो भी वह पिछली वैध सरकार के कार्यों को अमान्य नहीं करार कर सकती, जैसा कि Civil Air Transport Incorporated *vs.* Central Air Transport Corporation में निर्णय दिया गया है।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रदेश के अभिग्रहण या अधिमिलन के सम्बन्ध में क्या स्थिति है इस ओर भी ध्यान दिलाना आवश्यक प्रतीत होता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में हवाई टापू के सम्मिलन पर जापानी सरकार ने इस आधार पर आपत्ति की थी कि टापू के लोगों का इस विषय पर मत नहीं लिया गया था। इस दलील को संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार ने अस्वीकृत कर दिया था।

स्पेन के साम्राज्य से मैक्सिको अलग हो गया था। उसके बाद मैक्सिको के

---

१. कमीशन ने अपनी तीसरी अंतरिम रिपोर्ट के पैराग्राफ २०३ में कहा है :

"भारत सरकार आज़ाद संगठन को कोई मान्यता नहीं देगी और उसकी उपस्थिति को, सरकारी तौर पर, आंतरिक सार्वजनिक व्यवस्था की एक समस्या की संज्ञा देती है। दूसरी ओर पाकिस्तानी सरकार ने आज़ाद आंदोलन को महत्त्वपूर्ण सहायता दी है, आज़ाद सेना में पाकिस्तानी सेना के अधिकारी कार्य कर रहे हैं। पाकिस्तानी सेना की टुकड़ियां आज़ाद काश्मीर में मौजूद हैं और उन्होंने स्थानीय सेना की टुकड़ियों को निकटतम सहयोग दिया है। फिर भी, पाकिस्तान ने आज़ाद काश्मीर सरकार को कोई औपचारिक मान्यता नहीं दी है। ६ सितम्बर, १९४८ के पत्र में पाकिस्तान ने कमीशन को सूचित किया कि वह आज़ाद संगठन की ओर से कोई वचन नहीं दे सकता। कमीशन ने आज़ाद संगठन के प्रतिनिधियों से कोई वार्ता नहीं की है क्योंकि संगठन की कोई अंतर्राष्ट्रीय स्थिति नहीं है और न उसका कोई अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व। पाकिस्तान विदेश मंत्री ने यह स्वीकार किया कि 'उनकी सरकार ने खुद आज़ाद सरकार को विधिक मान्यता नहीं दी है।'"

पैराग्राफ १३२, पहली अंतरिम रिपोर्ट

एक 'कांस्टीट्यूएण्ट यूनिट' टेक्साज़ ने मैक्सिको से विद्रोह किया। सन् १८४४ में मैक्सिको के पड़ोसी देश से आक्रमणकारियों ने टेक्साज़ पर आक्रमण किया। टेक्साज़ ने अमेरिका से सहायता की याचना की। टेक्साज़ और अमेरिका में वार्ता के फलस्वरूप सन् १८४५ में संयुक्त राज्य कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित किया और यह घोषित किया गया कि टेक्साज़ अमेरिका में सम्मिलित कर लिया है। मैक्सिको की ओर से बहुत ज़बरदस्त विरोध किया गया और कहा गया कि अमेरिका का यह कदम मैक्सिको की जनता के अधिकारों का उल्लंघन है। अमेरिका के प्रेसीडेंट ने यह मत व्यक्त किया कि अमेरिका में सदैव के लिए टेक्साज़ के अधिमिलन पर मैक्सिको आपत्ति नहीं कर सकता। इस अधिमिलन का प्रश्न काश्मीर के वर्तमान अधिमिलन के प्रश्न से मिलता-जुलता है। ब्रिटिश मत भी अधिमिलन के प्रश्न पर ऐसा ही है।

अन्तर्राष्ट्रीय जूरी के मत में राज्याध्यक्षों को अन्तर्राष्ट्रीय संधियां करने का बराबर अधिकार है।

चूंकि काश्मीर का अधिमिलन इंडियन इंडिपेंडेंस ऐक्ट, १९३५ के अनुसार, जो उस समय लागू था, हुआ है, अतएव यह पूर्ण रूप से विधिवत् है और इसकी वैधता पर अन्य सम्पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न राज्य आपत्ति नहीं कर सकते। वास्तव में ऐसे राज्यों द्वारा आपत्ति की जा सकती है काश्मीर के उस भाग के आधिपत्य पर जो पाकिस्तान के सक्रिय सहयोग और सहायता के फलस्वरूप आज़ाद संगठन के अधीन है।

भारत सरकार ने महाराजा द्वारा निष्पादित अधिमिलन-पत्र स्वीकार करते हुए एक अलग पत्र में यह इच्छा व्यक्त की कि काश्मीर के अधिमिलन के प्रश्न पर, राज्य में शांति और व्यवस्था पुन:स्थापित हो जाने पर, जनता की राय ली जाएगी। यह इच्छा अधिमिलन-पत्र में नहीं व्यक्त थी, एक अलग पत्र में व्यक्त की गई थी। इस इच्छा की अभिव्यक्ति से किसी प्रकार अधिमिलन प्रतिबंधित नहीं होता। इस अभिव्यक्ति का कोई कानूनी पहलू नहीं है। भारत सरकार का अधिमिलन के प्रश्न पर काश्मीर की जनता का मत लेना केवल नैतिक उत्तरदायित्व है। सन् १९५१ में जम्मू और काश्मीर के लिए संविधान सभा बनाने के प्रश्न पर प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर निर्वाचन राज्य में हुए और वहां की जनता को अपना मत अभिव्यक्त करने का अवसर मिला। इस प्रकार नैतिक उत्तरदायित्व तो भारत सरकार की ओर से पूरा हो गया। रही प्रतिबंधित अधिमिलन की बात वह कानून की दृष्टि से असंगत है। इंडियन इंडिपेंडेंस ऐक्ट में प्रतिबंधित अधिमिलन की कोई व्यवस्था नहीं थी। दूसरे, काश्मीर के तत्कालीन प्रधान मंत्री मेहरचन्द महाजन ने जैसा कहा है, भारत सरकार को कोई संवैधानिक अधिकार प्राप्त नहीं है कि वह काश्मीर के भारत में अधिमिलन के प्रश्न को पुनर्निश्चित करने के लिए पाकिस्तान के साथ कोई करारनामा करे।

काश्मीर के भारत में अधिमिलन के बाद भारत सरकार ने काश्मीर में आक्रमणकारियों को आगे बढ़ने से रोकने के लिए फौज भेजने का निश्चय किया। इतनी अल्प सूचना पर इतनी बड़ी सैनिक कार्यवाही करना कोई सरल काम नहीं था।

ठीक क्षण पर हवाई जहाज़ से भारतीय सैनिक भेजे गए। यदि कुछ घड़ी और देर हो जाती तो हवाई अड्डा दुश्मनों के कब्ज़े में आ गया होता। काश्मीर में जो पहली बटालियन उतरी उसके कमाण्डर लेफ्टिनेण्ट कर्नल राय आक्रमणकारियों का प्रतिरोध करने में मारे गए। आक्रमणकारी बड़ी संख्या में थे और युद्ध के आधुनिक तौर-तरीकों में अच्छी तरह प्रशिक्षित थे। इतनी अल्प सूचना पर इतनी शीघ्रता और कुशलता के साथ भारतीय सैनिक हवाई जहाज़ द्वारा काश्मीर में उतारे गए कि मेनन के कथनानुसार लार्ड माउंटबैटन जैसे विशेषज्ञ सैनिक नेता दंग रह गए। उनका कहना था कि उनके पूरे युद्ध-अनुभव में ऐसा साहसी कार्य पहले कभी हाथ में नहीं लिया गया था। काश्मीर विनाश से बचा लिया गया।

काश्मीर की समस्या केवल आक्रमणकारियों को आगे बढ़ने से रोकने और उन्हें वापस खदेड़ देने की समस्या नहीं थी। समस्या का एक रूप और था। इसमें पाकिस्तान की शिरकत थी। पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल एम० ए० जिन्ना, माउंटबैटन के कथनानुसार, एबटाबाद में काश्मीर में विजय-यात्रा करने के लिए प्रतीक्षा कर रहे थे। भारत सरकार की सैनिक कार्यवाही से उन्हें चिन्ता हुई और उनकी पहली प्रतिक्रिया यह हुई कि उन्होंने ब्रिटिश कमाण्डर-इन-चीफ को पाकिस्तानी फौज काश्मीर में भेजने के लिए आदेश दिया। जनरल ग्रैसी ने उत्तर दिया कि सुप्रीम कमाण्डर-जनरल जनरल आकिन लेक की अनुमति के बिना वे जिन्ना के आदेश मानने में असमर्थ हैं। ग्रैसी ने जनरल आकिन लेक से लाहौर जाने की प्रार्थना की। उन्होंने जिन्ना को समझाया कि ऐसी गैर-कानूनी कार्यवाही का अर्थ यह होगा कि पाकिस्तानी फौज से ब्रिटिश अधिकारी हटा लिए जाएंगे। फलतः जिन्ना ने अपना आदेश वापस ले लिया। दोनों पक्ष ब्रिटिश सरकार को बराबर स्थिति से अवगत करते जाते थे। पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल और भारत के प्रधान मंत्री को ब्रिटिश सरकार की ओर से संदेश भेजा गया कि वे लाहौर में काश्मीर प्रश्न पर वार्ता करें।

इसी बीच, २८ अक्तूबर को, यानी काश्मीर में भारतीय सेना के पहुंचने के एक दिन बाद, भारत ने तार द्वारा पाकिस्तान को सूचित किया कि काश्मीर भारत में सम्मिलित हो गया है। अधिमिलन की शर्तें पाकिस्तान को बताई गईं और यह भी बताया गया कि काश्मीर में सैनिक सहायता भेजना क्यों अत्यावश्यक हो गया था। इसके पहले भारत ने ब्रिटिश सरकार को तार द्वारा बता दिया था कि काश्मीर के भारत में मिल जाने से भारत का यह उत्तरदायित्व हो गया है कि वह काश्मीरसे आक्रमणकारियों को खदेड़ दे। इस तार की एक प्रति पाकिस्तान को भी भेज दी गई थी। २८ अक्तूबर के तार में भारत ने यह आशा व्यक्त की थी कि पाकिस्तान आक्रमणकारियों को काश्मीर से हटाने में भारत को सहयोग देगा। पाकिस्तान ने ३० अक्तूबर के अपने जवाब में कहा कि अधिमिलन का आश्रय लेकर भारत ने काश्मीर में जो सेना भेजी है उसी से स्थिति बिगड़ गई है और इसका उत्तरादायित्व भारत पर है। उसने यह भी कहा कि काश्मीर में फौज भेजने की योजना भारत ने पहले से तैयार की थी। इस प्रकार भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद की उत्पत्ति हुई।

भारत के लिए एक ऐसे राज्य का मामला था जो भारत में सम्मिलित हो गया था और भारत का एक भाग हो गया था और जिसपर दूसरे देश के सक्रिय सहयोग और समर्थन से हमलावर आकर आक्रमण कर रहे थे और जनता को मौत के घाट उतार रहे थे। भारत अपना पहला कर्तव्य समझता था राज्य से आक्रमणकारियों को मार भगाना और तत्पश्चात् उस राज्य की जनता से अधिमिलन के सम्बन्ध में उसकी इच्छा का जानना। पाकिस्तान के लिए काश्मीर ऐसे राज्य का मामला था जो उसमें शामिल होने जा रहा था और जहां बाहर से समर्थित दंगे हो रहे थे और जो अब भारत में सम्मिलित हो गया था और जब तक कि कुछ न किया जाएगा अधिमिलन संसार की दृष्टि में मुकम्मल समझा जाएगा। वह समझता था कि आक्रमणकारियों को सहायता न देने का यह अर्थ होगा कि उसने भारत में काश्मीर के अधिमिलन को स्वीकार कर लिया है। वास्तव में काश्मीर-समस्या के विवाद की यही उत्पत्ति है। कांग्रेस और मुस्लिम लीग के दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न थे, पाकिस्तान समझता था कि भारत से दोस्ती करना उसके दो-राष्ट्र सिद्धांत के लिए, जिसके आधार पर वह बना था, घातक होगा; उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा। पाकिस्तान को इसलिए ज़िन्दा रहने के लिए काल्पनिक या वास्तविक विवाद की सख्त ज़रूरत थी और यह ज़रूरत पूरी कर दी काश्मीर-विवाद ने।

भारतीय सैनिकों को काश्मीर में भेजने की पहले से न कोई योजना थी और न कोई विचार ही, जैसा कि आकाश, जल और थल तीनों के सर्वोच्च ब्रिटिश अधिकारियों के निम्न बयान से स्पष्ट होगा :

(१) २४ अक्तूबर, १९४७ को भारतीय सेना के कमाण्डर इन-चीफ-को सूचना मिली कि कबाइलियों ने मुजफ़्फ़राबाद पर कब्ज़ा कर लिया है। आक्रमण के सम्बन्ध में यह पहली सूचना थी।

(२) इस तारीख से पहले, काश्मीर में भारतीय सेना भेजने की न कोई योजना बनाई गई थी और न ऐसा कोई विचार ही किया गया था।

(३) २५ अक्तूबर को सुबह हम लोगों को आदेश दिया गया कि हवाई जहाज़ द्वारा और सड़क से भारतीय सेना काश्मीर में भेजने पर विचार किया जाए और उसके सम्बन्ध में एक योजना तैयार की जाए, यदि कबाइलियों के आक्रमण को रोकने के लिए ऐसा करना आवश्यक हो। इस विषय पर पहली बार यह आदेश प्राप्त हुआ। इसके पहले इस प्रकार की योजना या ऐसी कोई कार्यवाही करने का कोई प्रयास नहीं किया गया था।

(४) २५ अक्तूबर के अपराह्न में हमने भारतीय सेना और रायल इंडियन हवाई बेड़े के एक-एक स्टाफ अफसर को हवाई जहाज से श्रीनगर भेजा। वहां वे काश्मीर राज्य के सेनाधिकारियों से मिले। काश्मीर में भारतीय फौज भेजने के बारे में हमारे मुख्यालय के अधिकारियों और काश्मीर राज्य के सेनाधिकारियों में यह पहला सम्पर्क था।

(५) २५ अक्तूबर के अपराह्न में हमने पैदल सेना की एक टुकड़ी को आदेश

जारी किया कि वह अल्प सूचना पर हवाई जहाज़ द्वारा श्रीनगर जाने के लिए तैयार रहे, यदि भारत सरकार काश्मीर के अधिमिलन को स्वीकार कर लेती है और उसे सहायता भेजने का निश्चय करती है।

(६) २६ अक्तूबर की सुबह स्टाफ अफसर जो काश्मीर भेजे गए थे श्रीनगर से लौटे और उन्होंने काश्मीर राज्य के सेनाधिकारियों से जो वार्ता की थी उसके बारे में रिपोर्ट दी।

(७) २६ अक्तूबर के अपराह्न हमने काश्मीर में सेना भेजने की योजना को अंतिम रूप दिया।

(८) काश्मीर अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद २७ अक्तूबर के प्रातः भारतीय फौज को हवाई जहाज़ से काश्मीर में भेजना शुरू किया गया। २५ अक्तूबर से पहले, यानी कबाइलियों द्वारा आक्रमण के तीन दिन बाद तक, भारतीय सेना को काश्मीर में भेजने की न कोई योजना बनाई गई थी और न किसी योजना पर विचार किया गया था।

भारत-पाकिस्तान-वार्ता

भारत ने काश्मीर-गुत्थी सुलझाने के लिए प्रयास किया। निश्चय यह हुआ कि २६ अक्तूबर को लाहौर में एक बैठक हो और उसमें इस मामले पर विचार किया जाए। पंडित जवाहरलाल नेहरू अचानक बीमार पड़ गए। इसलिए १ नवम्बर को भारत के गवर्नर-जनरल लार्ड माउंटबैटन बैठक में भाग लेने के लिए लाहौर गए। लेकिन बैठक होने से एक दिन पूर्व पाकिस्तान सरकार ने एक बयान जारी किया कि धोखे, कपट और हिंसात्मक ढंग से भारत ने काश्मीर का अधिमिलन करा लिया है और काश्मीर से पाकिस्तान पर आक्रमण किया है और पाकिस्तानी उसी का जवाब दे रहे हैं। बयान में यह भी कहा गया कि पाकिस्तान अधिमिलन को मान्यता नहीं देता। यह बयान मैत्रीपूर्ण वातावरण या बातचीत करने का वातावरण नहीं पैदा करता था।

माउंटबैटन और जिन्ना की उस बैठक में जो बात हुई उससे स्पष्ट हो गया कि काश्मीर के सम्बन्ध में दोनों के दृष्टिकोणों में बड़ा अन्तर है। भारत का कहना था कि सैनिक कार्यवाही करने का निश्चय लेते ही उसने पाकिस्तान को सूचना दे दी थी, पाकिस्तान का कहना था कि पड़ोसी डोमिनियन ने सैनिक कार्यवाही की उसे कोई चेतावनी नहीं दी थी, और कपट तथा हिंसात्मक ढंग से काश्मीर का अधिमिलन सुनिश्चित कर लिया गया है। भारत ने कहा कि यह ठीक है कि हिंसात्मक कार्यवाही के कारण काश्मीर का अधिमिलन हुआ है किन्तु हिंसात्मक कार्यवाही की है पाकिस्तान ने। बातचीत का यही क्रम चलता रहा। जिन्ना अपना गुस्सा न छिपा सके और भड़क उठे। लेकिन उन्हें यह बता दिया गया कि भारतीय सेना श्रीनगर को हर सूरत में बचा लेगी। जिन्ना ने तब यह प्रस्ताव किया कि आक्रमणकारी और भारतीय सेना एक साथ काश्मीर खाली कर दे। जिन्ना से पूछा गया कि वे कैसे यह विश्वास

दिला सकते हैं कि आक्रमणकारी काश्मीर से चले जाएंगे। जिन्ना ने, जैसा कैंपबेल जानसन का कहना है, माउंटबैटन से तुरन्त कहा कि "यदि आप भारतीय सेना हटा लेते हैं तो मैं आक्रमणकारियों को फौरन हटा लूंगा।" इससे इस विश्वास को पुष्टि मिलती है कि काश्मीर पर आक्रमण पाकिस्तान की साजिश से हुआ था।

जहां तक अधिमिलन के सम्बन्ध में काश्मीर की जनता का मत जानने का प्रश्न था, माउंटबैटन का सुझाव था कि संयुक्त राष्ट्र की देख-रेख में जनमत लिया जाए, किन्तु जिन्ना चाहते थे कि यह काम दोनों गवर्नर-जनरलों के नियंत्रणाधीन हो। जिन्ना गवर्नर-जनरल होने के साथ-साथ संविधान सभा के प्रेसीडेंट और मुस्लिम लीग के प्रेसीडेंट भी थे, माउंटबैटन केवल भारत के संवैधानिक अध्यक्ष थे। उनको शर्तें तय करने की स्वतंत्रता नहीं थी। यहां यह उल्लेखनीय है कि भारत सरकार के कुछ मंत्री इससे सहमत नहीं थे कि भारत का अध्यक्ष किसी ऐसी सरकार से जो आक्रमणकारियों को प्रोत्साहित कर रही थी और स्वयं आक्रमण करने की दोषी थी इस प्रश्न पर बात करने जाए। इस पृष्ठभूमि में भारत के गवर्नर-जनरल समस्या को हल करने के लिए स्वयं शर्तें तय नहीं कर सकते थे।

जिन्ना का प्रस्ताव था कि (१) लड़ाई तुरन्त बन्द कर देने के लिए दोनों डोमिनियनों के गवर्नर-जनरलों को इसका पूरा अधिकार दिया जाए कि वे एक ऐलान जारी करके ४८ घंटे के भीतर दोनों दलों को लड़ाई बन्द करने को कहें। जिन्ना ने कहा "यद्यपि काश्मीर की अस्थायी (आज़ाद) सरकार पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है तो भी हम उन्हें चेतावनी दे सकते हैं कि यदि वे लड़ाई बन्द न करेंगे तो दोनों डोमिनियनों के सैनिक उनसे युद्ध करेंगे।" (२) भारत डोमिनियन और कबीले दोनों एक साथ शीघ्रातिशीघ्र जम्मू और काश्मीर राज्य से हट जाएं और (३) दोनों डोमिनियन सरकारों की स्वीकृति से दोनों गवर्नर-जनरलों को शांति पुनःस्थापित करने, जम्मू और काश्मीर राज्य का प्रशासन करने और अपने नियंत्रण तथा देखरेख में अविलम्ब जनमत लेने का पूर्ण अधिकार दिया जाए।

पाकिस्तान की सरकार ने, जैसा पहले कहा जा चुका है, सार्वजनिक रूप से भारत पर गम्भीर आरोप लगाया था। नेहरू ने २ नवम्बर को उसका खंडन किया और लोगों को बताया कि किस प्रकार पाकिस्तान ने काश्मीर पर आक्रमण किया था और महाराजा ने भारत से सहायता की याचना की थी और भारत में काश्मीर के अधिमिलन को स्वीकार करने का अनुरोध किया था। नेहरू ने यह भी बताया कि किन परिस्थितियों में काश्मीर का अधिमिलन स्वीकार किया गया था और यह कि काश्मीर में शांति और व्यवस्था फिर से कायम हो जाने पर राज्य के अधिमिलन पर काश्मीर की जनता का मत लिया जाएगा। दूसरे दिन पं० नेहरू ने तार द्वारा पाकिस्तान के प्रधान मंत्री का ध्यान अपने ब्राडकास्ट की ओर दिलाया और कहा कि राज्यों के अधिमिलन के प्रश्न पर एक अन्तर-डोमिनियन करारनामा कर लिया जाए। उस तार में पंडित जी ने यह आरोप फिर दोहराया कि पाकिस्तान की ओर से घुसपैठ बराबर जारी है। ४ नवम्बर के तार में भी पाकिस्तानी घुसपैठ की शिकायत की गई

थी। पाकिस्तान के प्रधान मंत्री लियाकतअली खां ने लाहौर में ४ नवम्बर, १९४७ को एक भाषण दिया और उसमें यह आरोप लगाया कि काश्मीर में मुसलमानों का सफाया करने का षड्यंत्र किया गया है और उस षड्यन्त्र के खिलाफ काश्मीर की जनता लड़ रही है। चूंकि काश्मीरियों के अनेक सम्बन्धी नार्थ वेस्टर्न फ्रंटियर प्रोविन्स और कबाइली क्षेत्रों में रहते हैं इसलिए उनमें इस षड्यन्त्र के खिलाफ उत्तेजना फैल गई है, और वे अपने काश्मीरी भाइयों की सहायता के लिए मैदान में कूद पड़े हैं। काश्मीर का भारत में अधिमिलन कपटपूर्ण है और पाकिस्तान की सुरक्षा के लिए खतरनाक। पाकिस्तान काश्मीर के मुसलमानों का समर्थन करता है। लियाकतअली खां ने अपने एक ब्राडकास्ट में कहा :

> हमारी सहानुभूति इस नैतिक संघर्ष में अपने भाइयों के साथ है जिनके लिए यह जीवन-मरण का सवाल है। यदि दुश्मनों की योजना सफल हो गई तो ये नेस्तनाबूद हो जाएंगे, जिस प्रकार भारत के अन्य भागों में मुसलमान नेस्तनाबूद हुए हैं। कदाचित् मुसलमानों को इस तरह नेस्तनाबूद करने के बाद भारतीय सरकार का प्रस्ताव जनमत लेने का है। जनमत का क्या लाभ होगा जब मतदाता अपने घरों से निकाल दिए जाएं या उन्हें मार डाला जाए।

७ नवम्बर, १९४७ को पाकिस्तान ने एक तार में भारत के आरोपों का खंडन किया और जिन्ना ने माउंटबैटन से जो प्रस्ताव किया था उसको दोहराया। उसमें कहा कि राज्य की पुलिस और सेना के कारण ही सीमा पर उपद्रव हो रहे हैं। भारत ने ८ नवम्बर को इसका खंडन किया। प्रस्ताव के बारे में भारत ने बताया कि काश्मीर से आक्रमणकारियों के साथ-साथ भारतीय सैनिकों को हटाना सम्भव नहीं है जब तक कि उस राज्य में फिर से शांति और व्यवस्था कायम नहीं हो जाती। भारत ने फिर दोहराया कि जनमत-गणना संयुक्त राष्ट्र की देख-रेख में हो सकती है। भारत के प्रस्ताव थे :

(१) काश्मीर से चले जाने के लिए पाकिस्तान सार्वजनिक रूप से आक्रमणकारियों को बाध्य करे।

(२) भारत सरकार काश्मीर से अपनी फौज शांति और व्यवस्था फिर से कायम हो जाने के बाद यथाशीघ्र हटा लेगी, और

(३) भारत और पाकिस्तान दोनों की सरकारें मिलकर संयुक्त राष्ट्र से अनुरोध करें कि वह काश्मीर में यथाशीघ्र जनमत लेने की व्यवस्था करें।

(भारत का यह भी प्रस्ताव था कि यह सिद्धांत कि जनता का जनमत लिया जाए प्रत्येक राज्य पर जो भी किसी डोमिनियन से मिलना चाहे लागू हो, पाकिस्तान इस सिद्धांत को मानने के लिए तैयार नहीं हुआ था।)

नवम्बर के मध्य में यह स्पष्ट हो गया था कि काश्मीर की गुत्थी सुलझाने में भारत और पाकिस्तान में बातचीत आगे न बढ़ सकेगी क्योंकि इस विषय पर दोनों

के दृष्टिकोणों में बड़ा अन्तर था। यह भी स्पष्ट हो गया था कि आक्रमणकारी असंगठित नहीं किन्तु सुगठित थे और वे एक नियमित सेना के रूप में लड़ रहे थे और उन्हें पाकिस्तान का सहयोग और समर्थन प्राप्त था और यह कि उन्हें हराने और काश्मीर से उन्हें मार भगाने के लिए भारत को बड़ी लड़ाई लड़नी पड़ेगी। भारत ने यह स्पष्ट कर दिया कि जब तक पाकिस्तान आक्रमणारियों को सक्रिय सहयोग देना बन्द न कर देगा, उसे काश्मीर के प्रति अपना उत्तरदायित्व पूरा करने के लिए काफी संख्या में सैनिक भेजने पड़ेंगे। ८ नवम्बर को बारामूला वापस ले लिया गया, किन्तु इससे स्थिति में विशेष अन्तर नहीं पड़ सकता था क्योंकि आक्रमणकारी काश्मीर के विभिन्न भागों पर आक्रमण कर सकते थे। इसलिए भारतीय सेना ने काश्मीर में डिवीज़नल मुख्यालय खोलने का निश्चय किया।

इसी बीच ८ नवम्बर को अन्तर-डोमिनियन कान्फरेंस की बैठक संयुक्त रक्षा परिषद् के तत्त्वावधान में हुई। इस वार लियाकतअली स्वस्थ नहीं थे और जिन्ना कान्फरेंस में आना नहीं चाहते थे। अतएव पाकिस्तान की ओर से मंत्री सरदार निश्तर के नेतृत्व में पाकिस्तान के एक प्रतिनिधि मंडल ने भाग लिया। काश्मीर के बारे में बातचीत की गई किन्तु वह निष्फल रही।

१२ नवम्वर को सरदार पटेल ने राजकोट में अपने भाषण में पाकिस्तान के इस भारत विरोधी रवैये की सख्त आलोचना की और कहा कि पाकिस्तान ने भारत के रास्ते में कांटे बोने का शेवा बना लिया है। इसका जवाब लियाकतअली खां ने १६ नवम्बर को अपने भाषण में दिया और भारत के खिलाफ अपना यह आरोप दोहराया कि काश्मीर में भारत की सैनिक कार्यवाही पूर्वनियोजित थी और यह संवैधानिक दृष्टि से और नैतिक दृष्टि से न्यायोचित नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि अब्दुल्ला 'क्विज़लिंग' है और यह प्रस्ताव किया कि भारत-पाकिस्तान का यह विवाद संयुक्त राष्ट्र को सौंप दिया जाए और उससे प्रार्थना की जाए कि, वह --

> अपने प्रतिनिधियों को जम्मू और काश्मीर राज्य में लड़ाई बन्द कराने, राज्य में मुसलमानों पर अत्याचार और दमन रोकने, बाहरी फौज को राज्य से हटाने का कार्यक्रम तय करने और जब तक राज्य में जनमत-संग्रह न हो राज्य में निष्पक्ष प्रशासन तंत्र स्थापित करने और अधिमिलन के प्रश्न पर राज्य के लोगों की स्वतंत्र राय जानने के लिए अपने नियंत्रण और निर्देश में जनमत लेने के प्रयोजन से नियुक्त करे।

लियाकतअली खां ने यह भी कहा कि वे उपयुक्त आधार पर जूनागढ़ का भी मसला तय करने को तैयार हैं।

भारत की ओर से नेहरू ने २१ नवम्बर को अपने तार में जवाब दिया कि (१) चूंकि संयुक्त राष्ट्र के पास अपनी कोई सेना नहीं है, इसलिए आक्रमणकारियों को मार भगाने के लिए वह भारतीय सैनिकों का स्थान ग्रहण नहीं कर सकता, (२) काश्मीर की सरकार किसी का पक्षपात नहीं कर रही है इसलिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा राज्य में कोई दूसरा प्रशासन स्थापित करने का प्रश्न नहीं उठता और जब तक

आक्रमणकारी राज्य से भगा नहीं दिए जाते काश्मीर में जनमत नहीं लिया जा सकता। तार में यह भी कहा गया कि,

> हम काश्मीर के लोगों को अरक्षित नहीं छोड़ सकते और न इस स्थिति में छोड़ सकते हैं कि हमलावर उनपर आक्रमण कर सके। हमने उनको बचाने का वचन दिया है। यदि आप आक्रमणकारियों को नियंत्रित नहीं कर सकते और हम उन्हें आगे बढ़ने से रोक नहीं सकते और उन्हें मार भगा नहीं सकते तो यह स्पष्ट है कि ऐसी स्थिति आ जाएगी जब कोई सरकार प्रशासन-कार्य नहीं चला सकती और लूटने और मारने वाला स्थिति पर हावी हो जाएगा। इसे न हमारी सरकार और न आपकी सरकार बरदाश्त कर सकती है।

२५ नवम्बर को पाकिस्तान ने इस तार का यह उत्तर दिया कि भारत का दृष्टिकोण विरोधात्मक है और यह खेद का विषय है कि नेहरू अब भी अब्दुल्ला का, जो देशद्रोही है और काश्मीर के मुसलमानों में फूट डालने के लिए वैतनिक एजेण्ट है, समर्थन कर रहे हैं। २५ नवम्बर को नेहरू ने संसद् को पूरी स्थिति से अवगत किया और कहा कि भारत काश्मीर की जनता को लुटेरों की दया पर नहीं छोड़ सकता। ऐसा करना काश्मीर के प्रति विश्वासघात होगा। नेहरू ने अन्त में कहा कि "काश्मीर और भारत कई प्रकार से एक सूत्र में बंधे हैं और उस सूत्र को कोई नहीं तोड़ सकता।"

दिसम्बर के पहले सप्ताह में भारत और पाकिस्तान में दो बार वार्ता हुई। एक बार दिल्ली में और दूसरी बार लाहौर में। दोनों बैठकों में दोनों देशों के प्रधान मंत्री उपस्थित थे। काश्मीर समस्या को सुलझाने के प्रस्तावों पर विचार-विनिमय हुआ। काश्मीर की सरकार की वैधता पर दोनों में मौलिक मतभेद था। लाहौर की ८ दिसम्बर की बैठक में माउंटबैटन ने प्रस्ताव किया कि दोनों सरकारें संयुक्त राष्ट्र से मध्यस्थता के लिए अनुरोध करें। किन्तु कोई निर्णय नहीं लिया गया।

पाकिस्तान सरकार ने इस बीच ब्रिटेन के प्रधान मंत्री को एक तार भेजा जिसमें उसने भारत के विरुद्ध कई आरोप लगाए और यह बताया कि उसकी राय में स्वतंत्र रूप से जनमत लेने की क्या शर्तें होनी चाहिए। उसमें यह भी प्रस्ताव किया गया कि संयुक्त राष्ट्र या राष्ट्रमंडल से फौज की व्यवस्था कराई जानी चाहिए और वही अंतरिम अवधि में काश्मीर का प्रशासन चलाए। इस विषय पर दोनों देशों के प्रधान मंत्रियों के बीच पहले ही की भांति मतभेद बना रहा। भारत के गवर्नर-जनरल लार्ड माउंटबैटन ने ब्रिटेन के प्रधान मंत्री लार्ड एटली से यह प्रार्थना की कि वह स्वयं भारत आकर इस समस्या की मध्यस्थता करें। एटली ने यह कहा कि काश्मीर समस्या पर विचार संयुक्त राष्ट्र ही कर सकता है।

जैसा पहले बताया जा चुका है, नवम्बर-दिसम्बर १९४७ में भारत सरकार ने काश्मीर-समस्या सुलझाने की गरज़ से पाकिस्तान से समझौता करने के कई प्रयास किए। उसने पाकिस्तान सरकार से अनुरोध किया कि वह आक्रमणकारियों को सुविधाएं उपलब्ध न करे किन्तु यह अनुरोध निष्फल रहा। अन्ततः २२ दिसम्बर, १९४७ को भारत के प्रधान मंत्री ने स्वयं पाकिस्तान के प्रधान मंत्री को एक पत्र लिखा जिसमें विस्तृत

रूप से यह उल्लेख था कि आक्रमणकारियों को पाकिस्तान से क्या-क्या सहायता और सुविधाएं मिल रही हैं। उस पत्र में पाकिस्तान सरकार से अनुरोध किया गया था कि वह आक्रमणकारियों को—

(१) काश्मीर के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पाकिस्तान के किसी भू-भाग में न प्रवेश करने दे और न उसका उपयोग करने दे।

(२) सैनिक मदद न दे तथा दूसरी वस्तुएं उपलब्ध न करे।

(३) ऐसी कोई भी सहायता न दे जिससे वर्तमान संघर्ष के बढ़ने की संभावना हो।

पत्र में यह आशा व्यक्त की गई कि पाकिस्तान भारत सरकार के अनुरोध को मान लेगा और आक्रमणकारियों को कोई भी सहायता देना तत्काल बन्द कर देगा। पत्र में यह भी कहा गया कि यदि पाकिस्तान सरकार भारत सरकार की अपील को नहीं मानती और आक्रमणकारियों को पूर्ववत् सहायता देती रहती है तो संयुक्त राष्ट्र चार्टर के उपबन्धों के अनुसार भारत सरकार ऐसी कार्यवाही करने के लिए, जो उसके हितों के संरक्षण एवं काश्मीर की सरकार और जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए आवश्यक प्रतीत हों, बाध्य होगी।

भारत ने उत्तर के लिए पाकिस्तान को २६ दिसम्बर को अनुस्मारक भेजा। पाकिस्तान ने भारत सरकार के अनुरोध को नहीं माना और न कोई उत्तर ही दिया। अलबत्ता, पाकिस्तान सरकार बराबर यही कहती रही कि वह काश्मीर के आक्रमण में कबाइलियों को कोई सहायता नहीं दे रही है और न उन्हें प्रोत्साहित ही कर रही है। भारत सरकार के पास काफी प्रमाण थे कि आक्रमणकारियों को पूरी सहायता पाकिस्तान से मिल रही है। इसलिए भारत सरकार ने काश्मीर राज्य से आक्रमण-कारियों को खदेड़ने के लिए फौजी कार्यवाही की, तो भी वह पाकिस्तान से सीधा संघर्ष नहीं करना चाहती थी। अतएव उसने ३१ दिसम्बर, १९४७ को पाकिस्तान के प्रधान मंत्री को सूचित किया कि उसने काश्मीर की स्थिति को सुरक्षा परिषद् को निर्देश करने का निश्चय कर लिया है।

इस बीच पाकिस्तान से एक उत्तर, दिनांकित ३० दिसम्बर, प्राप्त हुआ। उसमें भारत के खिलाफ वही पुराने अभियोगों को दोहराया गया था, और साथ ही यह कहा गया था कि,

(१) भारत ने कभी भी देश-विभाजन-योजना को हृदय से नहीं स्वीकार किया बल्कि उसके नेता दिखावटी रूप से इस योजना का इसलिए स्वागत करते रहे जिससे अंग्रेज़ भारत छोड़कर चले जाएं।

(२) भारत पाकिस्तान राज्य को समाप्त करना चाहता है क्योंकि उसके नेता पाकिस्तान को बराबर भारत का एक भाग समझते और मानते हैं।

(३) भारत द्वारा विभाजन-योजना के कार्यान्वयन में रोड़े अटकाने, कोयला आदि आवश्यक वस्तुओं को बन्द करने, निधि, शस्त्रास्त्र और उपकरण

में से पाकिस्तान का हिस्सा जानबूझ कर न देने, मुसलमानों को बड़ी संख्या में मार डालने का केवल एक ही अभिप्राय है और वह यह कि पाकिस्तान नेस्तनाबूद हो जाए।

(४) जूनागढ़ और मानवदार और काठियावाड़ की अन्य रियासतों पर जो पाकिस्तान में शामिल हो गई थीं, भारत द्वारा जबरदस्ती कब्जा कर लेने और कपट से जम्मू और काश्मीर का अधिमिलन प्राप्त करने का अर्थ पाकिस्तान के खिलाफ दुश्मनी करना है और भारत का केवल एक ही लक्ष्य है और वह यह कि पाकिस्तान का अस्तित्व खत्म हो जाए।

इस प्रकार काश्मीर में संघर्ष का पहला दौर समाप्त हुआ और काश्मीर-समस्या समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् को सुपुर्द हो गई। काश्मीर-प्रश्न को सुरक्षा परिषद् के सुपुर्द करने से पूर्व भारत की सैनिक स्थिति काश्मीर में काफी दृढ़ हो गई थी। उड़ी ले लिया गया था और काश्मीर घाटी से हमलावर निकाल दिए गए थे।

अध्याय ४

सुरक्षा परिषद् में भारत द्वारा पाकिस्तान के खिलाफ शिकायत

पाकिस्तान के कबाइलियों और राष्ट्रिकों द्वारा जम्मू और काश्मीर राज्य के खिलाफ सैनिक कार्यवाही किए जाने के कारण उत्पन्न स्थिति के बारे में पहली जनवरी, १९४८ को संयुक्त राष्ट्र में स्थित भारतीय प्रतिनिधि ने सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट को भारत सरकार की शिकायत प्रेषित की। यह शिकायत संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के आर्टिकिल ३५ के अन्तर्गत की गई थी। सुरक्षा परिषद् से प्रार्थना की गई थी कि वह पाकिस्तान सरकार से (१) अपने सरकारी कर्मचारियों को, जिनमें सैनिक और असैनिक कर्मचारी शामिल हैं, जम्मू और काश्मीर राज्य पर आक्रमण न करने या उसमें सहायता या योगदान न देने, (२) अपने राष्ट्रिकों की राज्य में हो रही लड़ाई में भाग न लेने, और (३) आक्रमणकारियों को (क) काश्मीर के खिलाफ सैनिक कार्यवाही करने के लिए अपने प्रदेश में प्रवेश न करने या उसका उपयोग न करने, (ख) सैनिक और अन्य वस्तुओं की सप्लाई न करने, और (ग) अन्य प्रकार की सहायता न देने को कहे, जिससे वर्तमान संघर्ष के चलते रहने की आशंका है।

भारत ने इस आशय की प्रार्थना नहीं की थी कि संयुक्त राष्ट्र द्वारा पाकिस्तान के खिलाफ आर्थिक नाकाबन्दी लगाई जाए या उससे सम्बन्ध-विच्छेद किए जाए या भारत के खिलाफ सशस्त्र सेना भेजने के लिए उसे निंदित किया जाए या उसे आक्रमणकारी घोषित किया जाए। उसकी प्रार्थना केवल यह थी कि काश्मीर के सम्बन्ध में पाकिस्तान से उसका जो विवाद था उसके शांतिपूर्वक तय किए जाने के लिए उपयुक्त उपाय किए जाएं।

यह वह समय था जब देश में साम्प्रदायिक शांति बनाए रखने के लिए भारत प्रयत्नशील था। यह वह समय था जब राष्ट्रपिता गांधी पाकिस्तान से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने के लिए आमरण अनशन कर रहे थे। इसलिए भारत ऐसा कोई कदम उठाना नहीं चाहता था जिससे साम्प्रदायिकता को बल मिलता और हिन्दू-मुसलमान के सम्बन्ध बिगड़ते। ऐसे समय काश्मीर पर आक्रमण और पाकिस्तान से उस विषय में उठ खड़े विवाद के कारण भारतीय नेता बहुत चिन्तित थे। यही वजह थी कि भारत ने बहुत नम्र शब्दों में सुरक्षा परिषद् से शिकायत की थी और उसने ऐसी कोई

बात नहीं कही थी जिससे यह स्पष्ट हो कि पाकिस्तान हिन्दू-विरोधी नीति का अनुसरण कर रहा है। जन-वध की या पाकिस्तान के प्रदेश से हिन्दुओं के निकाले जाने की बात भी नहीं कही गई थी। भारत की शिकायत न केवल सामान्य रूप से की गई थी अपितु भारत की ओर से गोपालस्वामी आयंगर द्वारा सुरक्षा परिषद् में मामले की जो प्रस्तुति की गई थी वह बहुत विनम्र थी। उन्होंने ऐसी कोई बात नहीं कही थी जिससे कटुता का आभास होता। भारत का मुख्य अभिप्राय इस उपमहाद्वीप में शांति स्थापित करना, शांतिपूर्वक मामले को तय करना था न कि विवाद के अखाड़े में पाकिस्तान के खिलाफ विजय प्राप्त करना।

भारत के पहली जनवरी के ज्ञाप में और १५ जनवरी के गोपालस्वामी आयंगर के भाषण में संक्षेप में खास-खास बातों की ओर ही ध्यान आकर्षित किया गया था, जैसे काश्मीर पर आक्रमण, भारत में उसका अधिमिलन, अधिमिलन के फलस्वरूप आक्रमणकारियों को काश्मीर से निकाल बाहर करने का भारत का उत्तरदायित्व और उपमहाद्वीप में शांति और व्यवस्था पुनःस्थापित करने की आवश्यकता। उस ज्ञाप में यह बताया गया था कि भारत ने काश्मीर सरकार की सहायता की अपील को निम्न कारणों से स्वीकार करने का निश्चय किया था :

(१) वह एक पड़ोसी और मित्र राज्य को अपने आन्तरिक या बाह्य सम्बन्धों के निर्धारण में बलपूर्वक बाध्य किए जाने की अनुमति नहीं दे सकता था, और

(२) भारत के डोमिनियन में जम्मू और काश्मीर के अधिमिलन से राज्य की सुरक्षा का पूरा उत्तरदायित्व भारत पर आ पड़ा था।

ज्ञाप में यह भी कहा गया था कि भारत सरकार ने, इस विचार से कि कहीं यह न कहा जाए कि भारत ने काश्मीर राज्य के संकट से राजनीतिक लाभ उठाया है, यह स्पष्ट कर दिया है कि राज्य से आक्रमणकारियों के भगा दिए जाने के बाद और राज्य में सामान्य स्थिति पुनःस्थापित हो जाने के बाद राज्य के लोगों को सर्वमान्य प्रजातंत्रात्मक ढंग से जनमत द्वारा अपना भविष्य निश्चित करने की स्वतंत्रता होगी और यह कि पूर्ण निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय तत्त्वावधान में जनमत लिया जा सकता है।

श्री आयंगर ने सुरक्षा परिषद् में अपने भाषण के दौरान कहा कि काश्मीर-प्रश्न को परिषद् के सामने लाने में भारत सरकार को बहुत दुःख है क्योंकि वह इस मसले को समझौते से तय कर लेना चाहती थी लेकिन चूंकि पाकिस्तान इस मसले को तय करने में टाल-मटोल कर रहा है और अपने राष्ट्रिकों को काश्मीर पर आक्रमण करने से नहीं रोक पा रहा है; अतः भारत को यह प्रश्न सुरक्षा परिषद् के सम्मुख प्रस्तुत करना पड़ा है। भारत सुरक्षा परिषद् से सहायता चाहता है कि वह काश्मीर से आक्रमणकारियों को हटाने के लिए पाकिस्तान से कहे। भारत-पाकिस्तान-संघर्ष रोकने के लिए ऐसा करना परमावश्यक है। आयंगर ने अपने भाषण के अन्त में कहा कि गांधी जी भारत-पाकिस्तान-सम्बन्ध में सुधार के लिए अनशन कर रहे हैं। हम यह चाहते हैं कि हम

महात्मा जी को बता सकें कि दोनों डोमिनियनों में समझौता हो गया है और काश्मीर में लड़ाई बन्द हो गई है जिससे उनका अमूल्य जीवन बच सके।

इसके विपरीत, पाकिस्तान की ओर से परिषद् में जो भाषण दिए गए और लेख्य प्रस्तुत किए गए वे वैमनस्यपूर्ण थे और उनमें यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया था कि काश्मीर-विवाद की जड़ में हिन्दू-मुसलमान-भावना है। जब कि भारत के प्रतिनिधि केवल आक्रमणकारियों को भगाने की आवश्यकता पर जोर दे रहे थे और ऐसा कोई संकेत नहीं कर रहे थे कि पाकिस्तान भारत-विरोधी है, । पाकिस्तान के प्रतिनिधि भारत-पाकिस्तान-समस्याओं के लिए हिन्दू-मुसलमान के साम्प्रदायिक तनाव, और उनके अन्तरों को उत्तरदायी ठहरा रहे थे और अपने दुर्बल राष्ट्र के प्रति भारत की तथाकथित आक्रमणकारी और शत्रुतापूर्ण नीति पर बल देकर संसार के राष्ट्रों की सहानुभूति की अपेक्षा कर रहे थे।

परिषद् की बैठक ६ जनवरी को भारत की शिकायत पर विचार करने के लिए बुलाई गई किन्तु पाकिस्तान ने इस आधार पर कि भारत द्वारा की गई शिकायत की उसे पहले से कोई जानकारी नहीं थी क्योंकि भारतीय शिकायत की प्रति जो पाकिस्तान को भेजी गई थी ठीक तरह से पढ़ी नहीं जा सकी थी, और पाकिस्तान के विदेश मंत्री जल्दी से जल्दी १४-१५ जनवरी को न्यूयार्क पहुंच सकते थे, परिषद् की बैठक के स्थगन की मांग की और यद्यपि भारत मामले की आवश्यकता को देखते हुए केवल एक सप्ताह के स्थगन के पक्ष में था, परिषद् ने यह निश्चय किया कि उसकी बैठक १५ जनवरी तक होगी।

१५ जनवरी को पाकिस्तान ने अपने मामले के समर्थन में तीन लेख्य परिषद् के सम्मुख प्रस्तुत किए। पहले लेख्य में भारतीय शिकायत की विवेचना की गई थी, दूसरे में उल्टे भारत के खिलाफ शिकायत की गई थी और तीसरे में मामले का पूरा विवरण दिया गया था। पहले लेख्य में कहा गया था कि भारत ने जो अभियोग पाकिस्तान के खिलाफ लगाए हैं वे सब गलत हैं, पाकिस्तान कबाइलियों को हर प्रकार से निरुत्साहित कर रहा था, सैनिक कार्यवाही के लिए कबाइलियों द्वारा पाकिस्तान की भूमि इस्तेमाल नहीं की जा रही थी, पाकिस्तान आक्रमणकारियों को कोई सैनिक सामग्री नहीं दे रहा था, और न उसके अधिकारी आक्रमणकारियों को सैनिक शिक्षा दे रहे थे, न उनको ट्रेंड कर रहे थे और न उनका नेतृत्व कर रहे थे। दूसरे लेख्य में, जिसका शीर्षक था 'भारत के खिलाफ पाकिस्तान की शिकायत', भारत के खिलाफ यह अभियोग लगाया गया था कि मुसलमानों को हर तरह से परेशान करने और उनका जन-वध करने की भारत की एक सुगठित योजना है, जूनागढ़ और मानवदार पर कब्जा करके भारत ने पाकिस्तान के खिलाफ आक्रमण किया है, षड्यन्त्र द्वारा भारत ने काश्मीर राज्य को हथिया लिया है, और विभाजन-करारनामों के कार्यान्वयन में भारत ने पाकिस्तान के खिलाफ अपनी शत्रुतापूर्ण प्रवृत्ति का प्रदर्शन किया है। अभियोग इस प्रकार थे :

(१) भारत ने हृदय से विभाजन-योजना को कभी नहीं स्वीकार किया है,

और जून १९४७ से उसको भंग करने की वह बराबर कोशिश करता रहा है।

(२) कुछ क्षेत्रों में, जो अब भारत संघ के अन्तर्गत हैं, विशेषकर पूर्वी पंजाब, दिल्ली, अजमेर में और कपूरथला, फरीदकोट, जीन्द, नाभा, पटियाला, भरतपुर, अलवर और ग्वालियर इत्यादि राज्यों में, जो भारत में सम्मिलित हो गए हैं, सम्बन्धित राज्यों के गैर-मुसलमान शासकों, और उन राज्यों एवं भारत संघ के लोगों, अधिकारियों, पुलिस और सशस्त्र फौजों द्वारा मुसलमानों के खिलाफ 'जन-वध' की पूर्व नियोजित योजना कार्यान्वित की गई है और की जा रही है।

(३) भारत के मुसलमानों की सुरक्षा, स्वतंत्रता, कल्याण, धर्म, संस्कृति और भाषा बड़े खतरे में हैं।

(४) भारत संघ की सशस्त्र फौजों ने जूनागढ़, मानवदार और काठियावाड़ व कुछ अन्य राज्यों पर, जो विधिवत् पाकिस्तान में सम्मिलित हो गए हैं और पाकिस्तान प्रदेश के अंग हैं, जबरदस्ती और गैर-कानूनी ढंग से कब्ज़ा कर लिया है और भारत संघ की सशस्त्र फौजों, उसके अधिकारियों और गैरमुसलमान निवासियों द्वारा इन राज्यों के मुसलमान निवासियों की जान और माल को बड़ा नुकसान पहुंचाया गया है।

(५) भारत ने कपटपूर्ण और हिंसात्मक ढंग से जम्मू और काश्मीर राज्य को अपने प्रदेश में शामिल कर लिया है और जम्मू और काश्मीर के महाराजा एवं भारत संघ की सशस्त्र फौजों और महाराजा एवं संघ की गैर-मुसलमान जनता ने जम्मू और काश्मीर के मुसलमानों पर बड़ा अत्याचार किया है, बड़े पैमाने पर उन्हें लूटा है और उनकी हत्या की है।

(६) पाकिस्तान प्रदेश पर रायल इंडियन एयर फोर्स और भारत संघ एवं जम्मू और काश्मीर राज्य के सशस्त्र लोगों ने अनेक बार आक्रमण किया है।

(७) विभाजन के फलस्वरूप भारत और पाकिस्तान के बीच जो करारनामे हुए थे उनके कार्यान्वयन में भारत ने बाधा डाली है और अधिकृत नकदी और सैनिक सामान में पाकिस्तान का जो हिस्सा था, उसको रोक लिया है।

(८) भारत सरकार द्वारा प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से दबाव डालने के कारण, रिज़र्व बैंक आफ इंडिया पाकिस्तान के बैंकर और करेंसी अथारिटी के रूप में अपना पूर्ण दायित्व निभाने को अस्वीकार कर रहा है। इस दबाव का उद्देश्य पाकिस्तान के मुद्रा सम्बन्धी ढांचे को नष्ट करना है।

(९) भारत अब पाकिस्तान पर सीधे सैनिक आक्रमण करने की धमकी दे रहा है, और

(१०) भारत द्वारा पाकिस्तान के खिलाफ आक्रमणकारी नीति अपनाने का उद्देश्य पाकिस्तान राज्य को नष्ट करना है।

तीसरे लेख्य में पाकिस्तान ने अपने मामले की प्रस्तुति की थी कि किस प्रकार भारतीय मुसलमान आत्म-निर्णय के लिए संघर्ष करते रहे हैं और हिन्दू और सिख इसकी खिलाफत करते रहे हैं और जब विभाजन अनिवार्य हो गया तो किस प्रकार जन-वध की योजना बनाई गई और उसीको कार्यान्वित किया जा रहा है। उस लेख्य में यह भी कहा गया था कि अब ध्येय केवल पाकिस्तानी अस्तित्व की समाप्ति है और जूनागढ़ और मानवदार पर इसी ध्येय की पूर्ति के लिए कब्ज़ा किया गया है। काश्मीर के कपट-पूर्ण अधिमिलन का भी उद्देश्य यही बताया गया था। लेख्य में यह बताया गया था कि पाकिस्तान समस्या को शांतिपूर्ण ढंग से हल करना चाहता है लेकिन भारत इन राज्यों पर अपने अवैध आधिपत्य को स्थायी बनाने के लिए सैनिक कार्यवाही करना चाहता है। वास्तविकता तो यह है कि उसने पाकिस्तान पर आक्रमण शुरू कर दिया है। सैनिक सामान और अधिकृत नकदी में पाकिस्तान को उसका हिस्सा भारत द्वारा न दिए जाने की बात भी कही गई थी और भारत पर अभियोग लगाया गया था कि पाकिस्तान की सुरक्षा को वह खतरे में डालना चाहता है और उसके आर्थिक ढांचे को अंग-भंग करना चाहता है।

सर ज़फरुल्ला ने कुशल राजनीतिज्ञ और अभिवक्ता की तरह अपना मामला परिषद् के सम्मुख रखा और काश्मीर समस्या की पृष्ठभूमि पर पूर्ण प्रकाश डाला। मुसलमानों की तथाकथित हत्या और जन-वध पर अत्यधिक ज़ोर दिया और यह सिद्ध किया कि वास्तव में भारत दोषी है, पाकिस्तान-विरोधी है, मुसलमान-विरोधी है और उसने अवैध तरीके से काश्मीर राज्य को हथिया लिया है। उन्होंने कहा कि अकेले काश्मीर भारत-पाकिस्तान की समस्या नहीं है। भारत का बंटवारा धर्म के आधार पर किया गया था। जफरुल्ला ने अहमदाबाद, बम्बई, कलकत्ता, बिहार, गढ़मुक्तेश्वर, नोआखाली में हुए साम्प्रदायिक दंगों की ओर परिषद् के सदस्यों का ध्यान आकृष्ट किया और बताया कि पंजाब में मुसलमानों का सफाया करने के लिए एक सिख योजना निश्चित की गई थी। उन्होंने यह भी कहा कि दिल्ली, अलवर, भरतपुर, पटियाला, नाभा, जीन्द में मुसलमानों को या तो मार भगाया गया है या उनका खात्मा कर दिया गया है और कपूरथला में २,३५,००० मुसलमान मार डाले गए हैं जब कि मलेरकोटला में, जहां मुसलमान शासक था, एक भी साम्प्रदायिक घटना नहीं हुई। पश्चिम पंजाब में गैरमुसलमानों की हत्या का उन्होंने निम्नलिखित कारण बताया और उसका उत्तरदायी भारत को बताया :

> जब पूर्व में ये अत्याचार किए गए और वहां के मुसलमान शरणार्थी पश्चिम पंजाब में आए और अपनी दर्दनाक कहानी बताई तो पश्चिम पंजाब में मुसलमान गैरमुसलमानों के विरुद्ध भड़क उठे और फिर कत्ल हुए,

लूटमार हुई और आगजनी के मामले हुए।

काश्मीर-विवाद का इतिहास बताते हुए सर ज़फरुल्ला ने कहा कि जम्मू में मुसलमानों का कत्ल किया गया, गांव जलाए गए और जम्मू-काश्मीर राज्य के कर्मचारियों ने हिंसात्मक कार्यों में भाग लिया। यह सब हो ही रहा था कि काश्मीर की सरकार ने पाकिस्तान से शिकायत करना शुरू कर दिया और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों से मिलने और विभिन्न अभियोगों की निष्पक्ष जांच करने की पाकिस्तानी मांग को अस्वीकार कर दिया। काश्मीर का पूर्वनियोजित अधिमिलन २६ अक्तूबर को हुआ और २७ अक्तूबर को भारतीय फौज काश्मीर में उतरी। भारत सरकार ने जब तक उसकी फौजें काश्मीर में नहीं उतर गईं पाकिस्तान से न कोई सलाह ली और न उसको कोई सूचना दी। २८ अक्तूबर को भारत ने पहला तार पाकिस्तान को भेजा। पाकिस्तान ने तुरन्त एक त्रिदलीय कान्फरेन्स करने को कहा। भारत इससे सहमत हो गया किन्तु भारत के प्रधान मंत्री की अस्वस्थता के कारण बैठक नहीं हो सकी। पहली नवम्बर को गवर्नर-जनरल की बैठक हुई। उसमें पाकिस्तान ने समस्या के समाधान के लिए एक सुझाव रखा। भारत के गवर्नर-जनरल ने उस सुझाव को अपनी सरकार के सम्मुख रखने को कहा। न सिर्फ उस सुझाव पर भारत का कोई जवाब नहीं आया, बल्कि भारत के प्रधान मंत्री ने २ नवम्बर को एक उत्तेजनात्मक भाषण दिया और कुछ दूसरे प्रस्ताव रखे जो पाकिस्तान की राय में शांति नहीं स्थापित कर सकते थे। काश्मीर-समस्या को हल करने के लिए पाकिस्तान ने कम से कम सात प्रयास किए किन्तु भारत ने पाकिस्तान के एक भी प्रस्ताव को नहीं माना।

सर ज़फरुल्ला ने भारत द्वारा लगाए गए एक-एक अभियोग का खंडन किया। उन्होंने कहा कि काश्मीर को सप्लाई नहीं बन्द की गई, यद्यपि रेलवे के लिए कोयले की कमी थी, और काश्मीर में साम्प्रदायिक दंगे हो रहे थे जिसके कारण हो सकता है सप्लाई नियमित रूप से पहुंचने में विघ्न पड़ गया हो। उन्होंने कहा कि काश्मीर के भारत में मिल जाने से काश्मीर में मुसलमान अल्पसंख्यक रह जाएंगे यदि इस बीच वहां से सब मुसलमानों का खात्मा नहीं हो जाता।

सर जफरुल्ला का भाषण ५ घंटा २५ मिनट तक चला। उन्होंने अन्त में कहा :

> चाहे जिस प्रकार हो, दोनों गवर्नर-जनरलों के प्रशासन द्वारा, मुसलमानी क्षेत्रों पर भारतीय फौजों के संयुक्त आधिपत्य द्वारा, राष्ट्रीय मंडल की फौजों द्वारा या संयुक्त राष्ट्र द्वारा काश्मीर से बाहरी आदमा निकाल दिए जाएं···काश्मीर की जनता पर कोई दबाव न डाला जाए।

वास्तविक प्रश्न यह नहीं था कि काश्मीर पर आक्रमण हुआ, बल्कि यह था कि आक्रमण क्यों हुआ। मुख्य प्रश्न यह है कि काश्मीर के मुसलमानों को अपना राजनीतिक भविष्य चुनने का अधिकार होना चाहिए।

जहां ज़फरुल्ला ने इतना सब कुछ कहा, भारत के प्रतिनिधि आयंगर काश्मीर के इतिहास और आक्रमण से पूर्व की स्थिति के बारे में चुप रहे और सिर्फ यह कहा कि

हो सकता है कि काश्मीर के महाराजा ने यह सोचा हो कि कुछ मुसलमानों के मार डालने से, कुछ नेताओं को जेल में बन्द कर देने से या दस-बीस लाख मुसलमानों को राज्य से निष्कासित कर देने से बाकी लोग शांत हो जाएं। स्पष्ट है कि उनके शालीन और विनम्र भाषण ने उतना प्रभाव नहीं डाला जितना कि ज़फरुल्ला के जोशीले, उत्तेजक भाषण ने।

भारत का एक दृष्टिकोण था और वह यह कि काश्मीर से आक्रमणकारी हटाए जाएं और तब सामान्य स्थिति पुनःस्थापित हो जाने पर जनमत लिया जा सकता था। पाकिस्तान का यह दृष्टिकोण था कि काश्मीर में अधिमिलन के पूर्व की स्थिति लाई जाए और कोई अन्तर्राष्ट्रीय प्राधिकारी—संयुक्त राष्ट्र या राष्ट्रमंडल—जनमत ले। पाकिस्तान ने परिषद् से प्रार्थना की कि वह भारत से पाकिस्तान के खिलाफ आक्रमण न करने और दोनों डोमिनियनों के बीच निष्पादित करारनामों को कार्यान्वित करने को कहे। पाकिस्तान ने यह भी प्रार्थना की कि जन-वध अभियोग की जांच किसी आयोग द्वारा की जाए, जूनागढ़ और मानवदार को भारतीय फौजों से खाली कराया जाए, काश्मीर में लड़ाई बन्द कराई जाए, काश्मीर से 'बाहरी व्यक्तियों' को हटाया जाए, काश्मीर से जो मुसलमान बाहर भाग गए हैं उन्हें वहां फिर बुलाया जाए, राज्य में एक निष्पक्ष शासन स्थापित किया जाए और यह जानने के लिए कि काश्मीर की जनता भारत में या पाकिस्तान में मिलना चाहती है वहां जनमत लिया जाए। भारत की परिषद् से यह प्रार्थना थी कि वह पाकिस्तान से कहे कि पाकिस्तान अपने कर्मचारियों को काश्मीर के आक्रमण में भाग लेने से मना करे, अन्य राष्ट्रों से कहे कि वे इस आक्रमण में कोई भाग न लें, और पाकिस्तान आक्रमणकारियों को काश्मीर के खिलाफ आक्रमण करने में अपनी ज़मीन इस्तेमाल न करने दे, कोई सैनिक सामान या किसी प्रकार की सप्लाई न करे जिससे वर्तमान संघर्ष के जारी रहने की आशंका हो। भारत के लिए पाकिस्तान आक्रमणकारी था, उसने भारत के प्रदेश पर हमला किया था, पाकिस्तान के लिए भारत सदा से पाकिस्तान-विरोधी था और पाकिस्तान के अस्तित्व को मिटाने पर तुला था।

इस प्रकार सुरक्षा परिषद् के सामने भारत और पाकिस्तान दोनों ने एक दूसरे के खिलाफ अपनी-अपनी शिकायतें पेश कीं।

अध्याय ५

तर्क-वितर्क

जैसा हम पिछले अध्यायों में कह चुके हैं, २२ अक्तूबर, १९४७ को पश्चिमी पाकिस्तान के नार्थ वेस्ट फ्रंटियर प्रदेश से सहस्रों की संख्या में कबाइली रावलपिंडी-श्रीनगर मार्ग से होते हुए जम्मू काश्मीर राज्य में घुस आए थे। रास्ते में इन आक्रमणकारियों ने गांवों को जलाया था, घरों को लूटा था और स्त्रियों का अपहरण किया था। ये सशस्त्र आक्रमणकारी काश्मीर की ग्रीष्म-राजधानी श्रीनगर की ओर बढ़ रहे थे। राज्य को इन आक्रमणकारियों से बचाने के लिए काश्मीर के शासक और राज्य में मुसलमानों की सबसे बड़ी राजनीतिक संस्था नेशनल कान्फरेंस के नेताओं ने भारत से सहायता की याचना की थी। काश्मीर के भारत में अधिमिलन के पश्चात् भारत सरकार ने काश्मीर की जनता की मदद के लिए और राज्य से आक्रमणकारियों को मार भगाने के लिए सेना भेजी थी। इस सामयिक सहायता से श्रीनगर तबाही से बच गया था और आक्रमणकारी बारामूला से उड़ी तक खदेड़ दिए गए थे।

इन आक्रमणकारियों को सैनिक शिक्षा पाकिस्तानी अधिकारियों द्वारा दी गई थी। इन लोगों की देख-रेख पाकिस्तानी प्रदेश में की जाती थी, वहां उन्हें शस्त्र-अस्त्र दिए जाते थे और आने-जाने के लिए मोटर गाड़ियां और पेट्रोल दिया जाता था। ये आक्रमणकारी नियमित सैनिकों की भांति पोशाक पहनते थे और रणव्यूह बनाकर लड़ते थे। इनके पास वायरलेस सेट और अन्य आधुनिक सैनिक सामग्री थी। भारतीय सेना ने इनके पास से जो सामान बरामद किया था उसमें .३०३ राइफल, ब्रेनगन और स्टेनगन, दो-तीन इंची मारटर, ३.७ हाविट्ज़र और टैंकमारक राइफलें थीं। बरामद गाड़ियों पर पाकिस्तानी नम्बर प्लेटें लगी थीं। आक्रमणकारियों की गाड़ियों में पेट्रोल पाकिस्तान से भरा जाता था और उनकी मरम्मत पाकिस्तान के कारखानों में की जाती थी।

जम्मू-काश्मीर राज्य पर कबाइलियों के इस आक्रमण में पाकिस्तान बड़ी दिलचस्पी दिखा रहा था, आक्रमणारियों को प्रत्येक सम्भव सहायता दे रहा था। पाकिस्तान के प्रधान मंत्री ने स्वयं कहा था, "इस संघर्ष में हमारी सारी सहानुभूति काश्मीर में अपने भाइयों की ओर है जिनको स्वतंत्रता या मृत्यु में से एक का वरण करना है।" शिक्षा मंत्री इलाहीबख्श ने खुलेआम सभी प्रशिक्षित और लामयुक्त सैनिकों से काश्मीर

मोर्चे पर स्वयंसेवक के रूप में जाने के लिए अनुरोध किया था ।

हम बता चुके हैं कि किस प्रकार काश्मीर-गुत्थी को सुलझाने के लिए भारत सरकार ने अनेक बार प्रयास किया था और पाकिस्तान से आक्रमणकारियों को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सहायता व सहयोग न देने का अनुरोध किया था, लेकिन उसका कोई फल नहीं निकला था । हम यह भी बता चुके हैं कि भारत के प्रधान मंत्री ने स्वयं २२ दिसम्बर, १९४७ को दिल्ली में एक पत्र पाकिस्तान के प्रधान मंत्री को दिया था जिसमें यह बताया गया था कि पाकिस्तान क्या-क्या सुविधाएं आक्रमणकारियों को दे रहा था और यह अनुरोध किया गया था कि वह आक्रमणकारियों को काश्मीर पर आक्रमण करने के लिए अपने प्रदेश के किसी भाग का इस्तेमाल न करने दे और न उन्हें कोई सहायता दे , न सैनिक सामग्री उपलब्ध करे । पाकिस्तान ने इस पत्र का कोई उत्तर नहीं दिया था। इसलिए जितने भी सुझाव या प्रस्ताव भारत ने पहले काश्मीर के सम्बन्ध में किए थे, वे व्यपगत हो गए। जो भी प्रस्ताव किए जाते हैं वे स्थिति विशेष में किए जाते हैं। यदि उन्हें उस समय स्वीकार नहीं किया जाता तो वे अपने आप व्यपगत हो जाते हैं। कोई भी प्रस्ताव सदा के लिए नहीं किया जाता। यदि वह प्रस्ताव उस समय स्वीकार नहीं किया जाता तो वह अपने आप रद्द हो जाता है । ऐसी स्थिति में पाकिस्तान का बारम्बार यह कहना कि भारत ने पहले जो मतसंग्रह का प्रस्ताव १९४८ में किया था वह १९६८ में अब भी लागू है और भारत उससे बाध्य है, वास्तविकता से मुख मोड़ना है। वह स्थिति बदल गई, वे परिस्थितियां बदल गईं, वह माहौल बदल गया, जब ऐसे प्रस्ताव जम्मू-काश्मीर राज्य में शांति स्थापित करने के लिए किए गए थे ।

आक्रमणकारियों को सहायता न देने की भारत की अपील को जब पाकिस्तान ने ठुकरा दिया तो बाध्य होकर भारत सरकार को संयुक्त राष्ट्र चार्टर के आर्टिकल ३५ के अधीन सुरक्षा परिषद् में पाकिस्तान के खिलाफ शिकायत करनी पड़ी। इस आर्टिकल के अधीन संयुक्त राष्ट्र का कोई भी सदस्य ऐसी किसी स्थिति की ओर सुरक्षा परिषद् का ध्यान आकृष्ट कर सकता है जिसके बने रहने से अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के लिए खतरा हो।

भारत की शिकायत का जवाब देने में पाकिस्तान ने १५ दिन का समय लिया। हम पिछले अध्याय में बता चुके हैं कि किस प्रकार पाकिस्तान के वैदेशिक मंत्री सर मुहम्मद ज़फरुल्ला खां ने भारत के अभियोगों को अस्वीकार किया और कहा कि पाकिस्तान ज़ोरदार शब्दों में इस अभियोग का खंडन करता है कि वह तथाकथित आक्रमणकारियों को किसी प्रकार की सहायता दे रहा है या यह कि वह भारत के खिलाफ कोई भी आक्रमणकारी कार्यवाही कर रहा है या उसने की है । सर ज़फरुल्ला ने कहा कि वास्तविकता यह है कि भारत से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखने के लिए पाकिस्तान कबाइलियों के आन्दोलन को प्रत्येक सम्भव उपाय द्वारा निरुत्साहित करता रहा है । उन्होंने इस अभियोग का भी खंडन किया कि काश्मीर पर आक्रमण करने के लिए पाकिस्तान के किसी भाग का उपयोग किया जा रहा है । उन्होंने यह भी इनकार किया कि हमलावरों को पाकिस्तान

किसी प्रकार की सैनिक सामग्री दे रहा है या यह कि उसके अधिकारी आक्रमणकारियों को प्रशिक्षित कर रहे हैं, उनकी सहायता कर रहे हैं या उनका मार्गदर्शन कर रहे हैं।

१५ जनवरी, सन् १९४७ को गोपाल स्वामी आयंगर ने अपने भाषण में काश्मीर के सम्बन्ध में केवल खास-खास बातों की ओर ही ध्यान आकृष्ट किया था और बताया था कि काश्मीर के भारत में अधिमिलन के फलस्वरूप भारत का यह नैतिक उत्तरदायित्व हो गया था कि वह प्रदेश से आक्रमणकारियों को खदेड़ दे और चूंकि आक्रमणकारियों को पाकिस्तान द्वारा मदद मिल रही थी इसलिए भारत सुरक्षा परिषद् से यह अनुरोध कर रहा है कि वह पाकिस्तान से आक्रमणकारियों को कोई भी सहायता न देने को कहे। सोलह जनवरी को ज़फरुल्ला ने आयंगर को उत्तर दिया। उत्तर में उन्होंने तीन लेख्य परिषद् में प्रस्तुत किए जिनका ज़िक्र पिछले अध्याय में किया जा चुका है। ज़फरुल्ला ने ५ घंटे २५ मिनट के अपने भाषण में अनेक असंगत बातों पर बड़ा बल दिया, मुसलमान-विरोधी भारत की तथाकथित नीति, मुसलमानों के जन-वध की भारत की तथाकथित योजना, पाकिस्तान के अस्तित्व को मिटाने की भारत की कोशिश का उल्लेख किया। आश्चर्य केवल यह था कि पाकिस्तान ने इसके पूर्व इन बातों की शिकायत सुरक्षा परिषद् से क्यों नहीं की जब कि वह समझता था कि भारत उसके अस्तित्व को ही खत्म करने पर तुला है और देश-विभाजन उसे मान्य नहीं है। इन बातों की ओर अब प्रत्युत्तर में ही क्यों परिषद् का ध्यान आकृष्ट किया जा रहा था। भारत के अभियोग का उत्तर देने के लिए और भारत के विरुद्ध प्रत्यभियोग लगाने के लिए ज़फरुल्ला को लगातार तीन बैठकों में भाषण देना पड़ा। पाकिस्तान के विरुद्ध भारत द्वारा लगाए गए अभियोगों के खंडन में जो कुछ उन्होंने कहा, उसको यहां उल्लिखित करना आवश्यक है :

(१) भारत द्वारा पकड़ी गई गाड़ियों पर पाकिस्तानी नम्बर-प्लेट हैं, इससे क्या हुआ। हो सकता है ये गाड़ियाँ पहले ही से वैध कारणों से काश्मीर में हों और संघर्ष छिड़ जाने के कारण वापस न आ सकी हों।

—ठीक है, किन्तु ज़फरुल्ला यह बताना भूल गए कि उस समय इतनी भारी संख्या में पाकिस्तानी गाड़ियों का काश्मीर में होना क्यों आवश्यक था और यदि वे गाड़ियां नियमित काम से काश्मीर में आई थीं तो पाकिस्तान ने उनके पकड़े जाने पर आपत्ति क्यों नहीं की ?

(२) कहा जाता है कि आक्रमणकारियों की गाड़ियों को पेट्रोल पाकिस्तान से मिलता है। यह गलत है। पाकिस्तान सरकार के कोई अपने पेट्रोल पम्प नहीं हैं, पेट्रोल तेल कम्पनियां वितरित करती हैं, यदि कम्पनियां या पेट्रोल पम्प के मैनेजर बिना कूपन के पेट्रोल वितरित कर रहे हैं तो वे नाजायज तौर पर चोर-बाजारी कर रहे हैं, पाकिस्तान सरकार की इसमें कोई साज़िश नहीं है।

—ज़फरुल्ला साहब को यह भी बताना चाहिए था कि जब उनकी सरकार को मालूम हुआ कि पेट्रोल में चोर-बाज़ारी हो रही है तो

उसने क्या कार्यवाही की। ज़फरुल्ला खां की बात मान लेने का यह अर्थ हुआ कि पेट्रोल की चोर-बाजारी बहुत बड़े पैमाने पर हो रही थी क्योंकि आक्रमणकारियों को लाने-ले जाने में हज़ारों गाड़ियां इस्तेमाल की जा रही थीं और उन सबको पेट्रोल दिया जाता था, फिर पेट्रोल खरीदने के लिए विदेशी विनिमय मुद्रा की आवश्यकता होती थी और उसका इन्तज़ाम पेट्रोल पम्प मैनेजर पाकिस्तान सरकार की जानकारी के बिना किस प्रकार करते थे इसपर ज़फरुल्ला साहब ने कोई प्रकाश नहीं डाला।

(३) आक्रमणकारियों के पास शस्त्रास्त्र का जहां तक सम्बन्ध है, वे कबाइलियों द्वारा खुद बनाए जाते हैं। इसके अलावा महायुद्ध के बाद बहुत-सी सैनिक सामग्री, हथियार, गोला-बारूद संसार के हर कोने में फालतू पड़ा था, वहाँ से कबाइलियों को वह सामान मिल गया होगा।

—ठीक है, किन्तु ज़फरुल्लाखां को यह भी बताना चाहिए था कि क्या संसार के दूरस्थ कोने से सैनिक सामग्री इतनी बड़ी मात्रा में हासिल कर ली गई थी कि कबाइलियों की पूरी फौज उससे लैस हो गई और वह भी पाकिस्तान सरकार की जानकारी के बिना और विदेशी विनिमय मुद्रा के बगैर। हथियार खरीदने के लिए कबीलों के पास विदेशी मुद्रा कहां से आई अगर पाकिस्तान सरकार ने उनकी इस दिशा में मदद नहीं की ?

(४) कबीलों और आक्रमणकारियों के पास पोशाक थी। ज़फरुल्लाखां ने कहा कि इससे कुछ नहीं सिद्ध होता। लाममुक्ति पर सैनिकों को अपने पास पोशाक और बैज रखने की इजाज़त थी, फिर इस प्रकार के कपड़े भारत सरकार के निस्तारण विभाग द्वारा बेचे गए थे। हो सकता है, आक्रमणकारियों ने जायज़ या नाजायज़ तौर पर पोशाकों को हस्तगत कर लिया हो।

—लेकिन खां साहब यह बताना भूल गए कि कबीले नियमित रूप से पहले कभी किसी सेना में सैनिक नहीं थे, उनके लाममुक्त होने का सवाल ही कहां उठता था।

(५) सैनिक प्रशिक्षण की कबीलों को कोई ज़रूरत ही नहीं थी, सर ज़फरुल्ला ने कहा।

—लेकिन उन्होंने परिषद् के सदस्यों को यह नहीं बताया कि वे क्योंकर रणव्यूह बनाकर लड़ते थे और आधुनिक तर्ज-तौर पर लड़ाई का संचालन करते थे। ज़फरुल्ला को यह भी बताना चाहिए था कि उनके पास चिह्नित सुरंगें, ३.७ हाविट्ज़र, टैंकमारक बंदूकें, पहाड़ी बन्दूकें और दूसरे भारी शस्त्र कहां से आए थे।

(६) पाकिस्तान आक्रमणकारियों को प्रोत्साहित कर रहा है···इसके उत्तर में ज़फरुल्ला ने कहा कि काश्मीर का शासक अपनी ३० लाख मुसल-

मान प्रजा को कत्ल कर देना चाहता था जिससे उसके राज्य का विलयन भारत में सुगमता से हो सके।

—ज़फरुल्ला साहब शायद यह भूल गए कि काश्मीर के महाराजा मुसलमानों की हत्या कराए बिना ही १५ अगस्त के पूर्व, यदि वह चाहते, तो अपने राज्य का विलय भारत संघ में कर सकते थे। इस अधिकार से उन्हें कोई वंचित नहीं कर सकता था।

(७) जब पाकिस्तान सरकार काश्मीर के आक्रमण के लिए उत्तरदायी नहीं थी और वह कबीलों को कोई सहायता नहीं दे रही थी तो सशस्त्र कबीलों के दलों को काश्मीर में आने से क्यों नहीं रोकती थी। इसके उत्तर में ज़फरुल्ला ने कहा कि पाकिस्तान सरकार का ऐसा करना स्वतंत्रता संघर्ष का गला घोंटना होता। फिर इससे संघर्ष बन्द भी न होता।

—यद्यपि ज़फरुल्ला खां ने यह दावा नहीं किया कि काश्मीर पाकिस्तान में विलय हो गया है इस और बात का खंडन किया कि वह आक्रमणकारियों की सहायता कर रहा है तथापि उन्होंने वकालत की कबाइलियों की, आक्रमणकारियों की, अपने उन राष्ट्रिकों की, जो राज्य में लड़ रहे थे और आज़ाद काश्मीर सरकार की, जो नाजायज़ तौर पर स्थापित हुई थी।

जफरुल्ला खां ने जो कुछ अपने भाषण में कहा और जो लेख्य परिषद् में प्रस्तुत किए उनका केवल एक उद्देश्य था और वह यह कि काश्मीर से भारत की सेनाएं हटा ली जाएं और उस राज्य में कानूनी सरकार के स्थान पर एक तटस्थ सरकार कायम कर दी जाए जिससे काश्मीर का भारत में अधिमिलन निष्फल हो जाए।

भारत के प्रतिनिधि आयंगर ज़फरुल्ला के मिथ्यापूर्ण भाषण से स्तब्ध रह गए। उन्होंने परिषद् से बार-बार यही अनुरोध किया कि आक्रमणकारियों को जो सहायता दी जा रही है वह तुरन्त बन्द कर दी जाए, लेकिन उनका अनुरोध निष्फल रहा। सुरक्षा परिषद् ने इस आशय की कोई कार्यवाही नहीं की।

काश्मीर के सम्बन्ध में सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट का संकल्प पारित हो जाने के बाद, जिसका उल्लेख अगले अध्याय में किया जाएगा, भारत के प्रतिनिधि एम० सी० सीतलवाड ने २३ जनवरी को सर ज़फरुल्ला के उपर्युक्त भाषण की तफसील के साथ विवेचना की। उन्होंने कहा कि यदि ज़फरुल्ला के भाषण से कोई बात सिद्ध हुई है तो वह यह कि उन्होंने भारत के खिलाफ बहुत विषवमन किया है, विवादाधीन विषय से असंगत, अनर्गल बहुत-सी बातें कही हैं, सारयुक्त और विषय से सम्बन्धित बातों का उल्लेख नहीं किया है और तथ्यों को तोड़ा-मरोड़ा है। भारत के खिलाफ मिथ्याभियोग इसलिए लगाए हैं कि उन प्रश्नों पर, जिनका कोई जवाब पाकिस्तान के पास नहीं है, परदा पड़ जाए। सीतलवाड ने बताया कि भारत में जो कत्ल हुए उनका मूल कारण यह था कि मुस्लिम लीगी नेता निरन्तर घृणा और हिंसा के पाठ जनता

को पढ़ा रहे थे। किन्तु इसका यहां उल्लेख काश्मीर की चर्चा करते समय बिल्कुल अप्रासंगिक है क्योंकि परिषद् के सामने एक ही प्रश्न है और वह है काश्मीर में आक्रमण-कारियों की सैनिक कार्यवाही की रोक-थाम। उन्होंने बताया कि अगस्त १९४७ में ही धार्मिक नेता काश्मीर में मुसलमानों की भावनाओं को भड़काने और मुसलमानों में उत्तेजना फैलाने के लिए भेजे गए थे। पश्चिम पंजाब से जम्मू में हमले किए गए थे और पूंछ में बाहरी व्यक्तियों द्वारा विद्रोह कराया गया था। न केवल यह सब साथ ही साथ किया गया था बल्कि काश्मीर पर आर्थिक राजनीतिक दबाव भी डाला गया था। तत्पश्चात् बड़े पैमाने पर काश्मीर पर आक्रमण किया गया। फलस्वरूप काश्मीर भारत में विलय हुआ। इस विलय के पीछे न कोई साज़िश थी, न कोई षड्यन्त्र और न कोई पूर्वकल्पित योजना। भारत ने काश्मीर की सहायता के लिए सेना की टुकड़ी भेजी किन्तु वहां पहले से ही पाकिस्तानी सेना मौजूद थी। पाकिस्तानी सेना की उपस्थिति से काश्मीर में क्या सैनिक स्थिति उत्पन्न होगी और संघर्ष-क्षेत्र कितना बढ़ जाएगा इस सम्बन्ध में अनुमान नहीं लगाया जा सकता था और इसी कारण से भारत ने स्थिति को तत्काल सुधारने की याचना परिषद् से की थी।

दूसरे दिन, ज़फरुल्ला खां ने अपने उत्तर में सीतलवाड की दलीलों का खंडन किया और कहा कि किसी निष्पक्ष, तटस्थ प्रशासन या संयुक्त राष्ट्र के तत्त्वावधान में यह मालूम करने के लिए जनमत लिया जाना चाहिए कि काश्मीर भारत में विलय होगा या पाकिस्तान में। काश्मीर में उसी समय लड़ाई बन्द हो सकेगी जब इस आशय का आश्वासन प्राप्त हो जाए।

ज़फरुल्ला के भाषण का जवाब शेख अब्दुला ने भी परिषद् में ५ फरवरी, १९४८ को दिया। शेख ने कहा :

> यदि पाकिस्तान के प्रतिनिधि परिषद् से यह कहते कि वे कबाइलियों का समर्थन कर रहे हैं क्योंकि वे समझते हैं कि काश्मीर पाकिस्तान का है न कि भारत का और यह कि काश्मीर का अधिमिलन कपटपूर्ण ढंग से सुनिश्चित किया गया है, तो मैं समझ सकता था। उस समय हम काश्मीर के अधिमिलन की वैधता पर चर्चा कर सकते थे। लेकिन पाकिस्तान के प्रतिनिधि ने ऐसा कोई रुख अख्तियार नहीं किया। हमारी यही कठिनाई है।

शेख ने कहा कि ज़फरुल्ला खां इस बात से कतई इनकार करते हैं कि पाकिस्तान की सरकार ने कबाइलियों को कोई सहायता दी है। मैं हैरान हूं कि सुरक्षा परिषद् को किस प्रकार समझाया जाए कि यह बिल्कुल गलत है। आक्रमणकारियों को ज़फरुल्ला खां ने 'तथाकथित' की संज्ञा दी है, जिसके यह अर्थ हुए कि ज़फरुल्ला खां ने इसे स्वीकार किया है कि काश्मीर में 'कबाइलियों का आन्दोलन' चल रहा था।

सुरक्षा परिषद् में एक दूसरे भाषण में शेख ने ज़फरुल्ला के इस तर्क का कि काश्मीर की वैध सरकार के स्थान पर एक निष्पक्ष तटस्थ प्रशासन की स्थापना की जाए, इस प्रकार उत्तर दिया :

> मैं परिषद् को बता रहा था कि यह विवाद किस प्रकार उत्पन्न हुआ···

किस प्रकार पाकिस्तान हमको दासता की जंजीर में बांधना चाहता था। हमारी आज़ादी में पाकिस्तान को कोई दिलचस्पी नहीं थी अन्यथा वह तानाशाह शासक के खिलाफ हमारे स्वतंत्रता आंदोलन का विरोध न करता। पाकिस्तान उस समय, जब हमारे सहस्रों देशवासी जेल में बन्द थे और सैकड़ों मार डाले गए थे, हमारा समर्थन करता। लेकिन इसके, विपरीत पाकिस्तान के नेता और पाकिस्तानी समाचारपत्र उस समय काश्मीर की पीड़ित जनता पर गोलियों की बौछार कर रहे थे।

और अब, अचानक पाकिस्तान जम्मू और काश्मीरके लोगों की स्वतंत्रता का समर्थक बन गया है। जब हमने पाकिस्तान की ज़बरदस्ती का मुकाबला किया, उसका विरोध किया तो उसने धावा बोल दिया और कबाइलियों को हमारे विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करने के लिए प्रोत्साहित किया। पाकिस्तान की सहायता और सहयोग के बिना कबाइलियों के लिए हमारे प्रदेश में घुस आना बिल्कुल असम्भव था क्योंकि जम्मू और काश्मीर पहुंचने के लिए उन्हें पाकिस्तानी प्रदेश से गुज़रना होता है। पाकिस्तान के इस तर्क में कि काश्मीर की स्थिति पर काबू पाने के लिए उस प्रदेश में पाकिस्तान और भारत की सेनाएं हों और प्रदेश पर दोनों डोमिनियनों का संयुक्त नियंत्रण हो, कोई सार नहीं है। सामान्य उपायों द्वारा पाकिस्तान जिस उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर सका है वह इस ज़रिये से करना चाहता है। उसका वास्तविक उद्देश्य है राज्य में अपनी फौजें लाना और तदुपरांत युद्ध करना।

प्रश्न यह है कि क्या कबाइलियों के आंदोलन की, उनके घुसपैठ की, उनके आक्रमण की जानकारी पाकिस्तान को नहीं थी और क्या पाकिस्तान आक्रमणकारियों को सहायता नहीं कर रहा था? निम्नांकित तथ्यों से इसकी पुष्टि हो जाती है कि पाकिस्तान को कबाइलियों के आन्दोलन की जानकारी थी और वह आक्रमणकारियों को सक्रिय सहायता दे रहा था:

(१) भारतीय सेना को लड़ाई के मैदान में आक्रमणकारियों के जो हथियार मिले उनमें .३०३ राइफलें, ब्रेन और स्टेन बन्दूकें थीं, दो-तीन इंची मारटर, ३·७ हाविट्जर और टैंक मारक राइफलें शामिल थीं।

(२) आक्रमणकारियों की जो गाड़ियां भारतीय सेना के कब्ज़े में आई उन पर पाकिस्तानी नम्बर प्लेटें लगी थीं, उनमें पेट्रोल पाकिस्तान में भरा जाता था, और उनकी मरम्मत पाकिस्तान के कारखानों में होती थी।

(३) पाकिस्तान के प्रधान मंत्री ने यह बयान दिया था कि उनकी सारी सहानुभूति इस संघर्ष में लगे हुए काश्मीर में उनके भाइयों की ओर है जो जीवन और मरण की लड़ाई लड़ रहे हैं।

(४) सिंध के शिक्षा मंत्री पीर इलाहीबख्श ने लाममुक्त सैनिकों से यह अपील की कि वे काश्मीर के मोर्चे पर स्वयंसेवक के रूप में जाएं।

(५) पाकिस्तान ने ३ जनवरी, १९४८ को इस आशय की विज्ञप्ति निकाली

कि भारतीय सेना से सहस्रों की संख्या में सैनिक लाममुक्त हुए हैं और उनमें से बहुत-से जम्मू और काश्मीर के निवासी हैं। इन सैनिकों को मुक्त होने पर सैनिक पोशाक और रेजीमेंट का बिल्ला दिया गया था। यदि ऐसे कोई व्यक्ति काश्मीर में देखे गए हैं, या पकड़े गए हैं या मार डाले गए हैं तो यह नहीं कहा जा सकता कि वे पाकिस्तानी सैनिक हैं। केवल उन्हीं पाकिस्तानी सैनिकों को काश्मीर में जाने की इजाज़त है जो सेना में अभी भी हैं और अपनी सालाना छुट्टी पर हैं। इन सैनिकों को छुट्टी पर जाते समय अस्त्र-शस्त्र ले जाने की इजाज़त नहीं है। कराची के 'डान' अखबार ने २६ नवम्बर, १९४७ को लिखा था कि बहुत-से पाकिस्तानी अफ़सर गैर-सरकारी तौर से छुट्टी पर हैं।

(६) नार्थ वेस्ट फ्रंटियर प्रदेश के मुख्य मंत्री ने सार्वजनिक रूप से यह ऐलान किया था कि अग्न्यस्त्र पाकिस्तान के दुश्मनों को छोड़कर सभी को उदारतापूर्वक बांटे जाएंगे।

(७) 'लन्दन न्यूज़ क्रानिकल' में १३ अक्तूबर, १९४७ को नारमन क्लिफ़ द्वारा काश्मीर से भेजी गई यह खबर प्रकाशित हुई थी कि पाकिस्तान ने काश्मीर को पेट्रोल, शक्कर, नमक, मिट्टी का तेल आदि की सप्लाई यथास्थिति करारनामे के बावजूद बन्द कर दी है।

(८) नार्थ वेस्ट फ्रंटियर प्रदेश की विधानसभा में ७ मार्च, १९४९ को बजट पेश करते समय मुख्य मंत्री अब्दुलकयूम खां ने कहा था, "सदन को याद होगा कि हमारे सबसे बड़े खतरे के समय मसूद (कबाइलियों की एक जाति) हमारी अपील को मानकर जम्मू और काश्मीर में हमारे पीड़ित मुसलमान भाइयों की मदद के लिए काश्मीर पर चढ़ गए थे।"

(९) नवम्बर १९४७, में जब भारत के गवर्नर-जनरल लार्ड माउण्टबैटन पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल मोहम्मद अली जिन्ना से मिले थे तो जिन्ना ने यह प्रस्ताव रखा था कि भारत के सैनिक और कबाइली काश्मीर से हटा लिए जाएं। जब लार्ड माउण्टबैटन ने पूछा कि कबाइलियों को हटाने की जिम्मेदारी जिन्ना किस प्रकार ले सकते हैं, जब उनके कथनानुसार कबाइलियों पर उनका कोई नियंत्रण नहीं है, तो जिन्ना ने तुरन्त कहा कि अगर आप अपने सैनिक हटा लेते हैं तो मैं यह पूरा मामला ही खत्म कर दूंगा।

(१०) पश्चिम पाकिस्तान के नार्थ वेस्ट प्रदेश के गवर्नर सर जार्ज कनिंघम ने काश्मीर में कबाइलियों द्वारा घुसपैठ की सूचना एक पत्र में भारत के कमाण्डर-इन-चीफ जनरल लोकहार्ट को दी थी और यह बताया था कि उनके प्रदेश के मंत्रिगण इस कार्य में कबाइलियों को सक्रिय सहायता कर रहे हैं।

(११) २५ अक्तूबर, १९४८ को दिल्ली में लार्ड माउण्टबैटन की अध्यक्षता

में सुरक्षा समिति की बैठक हो रही थी। उसमें भारत के कमाण्डर-इन-चीफ जनरल लोकहार्ट ने पाकिस्तानी सेना के मुख्यालय से प्राप्त एक तार को पढ़कर सुनाया जिसमें यह कहा गया था कि ५००० कबाइलियों ने काश्मीर पर आक्रमण करके मुज़फ्फराबाद और डोमल पर कब्ज़ा कर लिया है और कबाइलियों की और कुमुक आ रही है।

(१२) काश्मीर सहायता निधि का हिसाब देने के लिए जब पाकिस्तान सरकार के मिलटरी एकाउण्ट्स कण्ट्रोलर ने पंजाब के भूतपूर्व मंत्री ममदोत के खान से कहा तो नवाब ने दिसम्बर, १९४९ में अदालत में अपनी सफाई देते हुए कहा :

> काश्मीर के प्रयोजनों के लिए मैंने अपनी जेब से ६४,००० रु० खर्च किए। मुझे उस प्रयोजन के लिए केवल २०,००० रु० मिले थे। मैं नहीं बता सकता कि इतनी रकम का मैंने किसे और क्यों भुगतान किया क्योंकि मेरे बता देने से पाकिस्तान की नीति पर प्रकाश पड़ेगा और कुछ लोगों के, जो अन्यत्र रह रहे हैं, जीवन खतरे में पड़ जाएंगे।...मैं इतना ही कहूंगा कि यह धनराशि खुफिया काम के लिए एकत्र की गई थी और मुझे इसलिए दी गई थी कि मैं उसे विवेक से जिस प्रकार चाहूं खर्च करूं। मुझे बताया गया था कि खर्चा गोपनीय होगा।

(१३) मुस्लिम लीग के एक सदस्य अब्दुल रज्जाक खान ने मुस्लिम लीग के प्रेसीडेंट सरदार अब्दुररब निश्तर से १०,४८० रु० की मांग की जो मुस्लिम लीग के आदेशों के अनुसार पेशावर से काश्मीर में आक्रमण-कारियों को ले जाने में उसे खर्च करना पड़ा था।

(१४) लार्ड बर्डउड के अनुसार जनरल रसेल का, जो भारतीय सेना के कमाण्डर-इन-चीफ थे, यह पक्का विश्वास था कि जनवरी, १९४८ में पाकिस्तानी सैनिक काश्मीर में लड़ रहे थे। जनरल करियप्पा का, जिन्होंने २० जनवरी, १९४८ को कमांडर-इन-चीफ का कार्यभार लिया था, यह दृढ़ विश्वास था कि काश्मीर में पाकिस्तान अपनी नियमित सेना को इस्तेमाल कर रहा था।

(१५) कमीशन ने अपनी पहली अंतरिम रिपोर्ट में यह कहा कि यह निश्चित है कि पाकिस्तान गैर-सरकारी तौर पर आक्रमणकारियों की सहायता कर रहा है। इसका प्रमाण है कि शस्त्र-अस्त्र, गोला-बारूद और सैनिक सामग्री की सप्लाई आज़ाद काश्मीर की सेनाओं को की जा रही है। कुछ पाकिस्तानी अफसर सैन्य-संचालन कर रहे हैं। पाकि-स्तान सरकार भले ही यह कहे कि वह कोई मदद आक्रमणकारियों को नहीं दे रही है, लेकिन इसके प्रमाण हैं कि उन्हें पाकिस्तान का नैतिक और भौतिक समर्थन प्राप्त है।

(१६) पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट मोहम्मद अयूब ने दिसम्बर, १९६० को जकार्ता में आयोजित एक सार्वजनिक सभा में यह ऐलान किया कि जम्मू और काश्मीर में मुसलमानों की सहायता करने के लिए पाकिस्तान मैदान में कूदा था, और तभी से काश्मीर-समस्या उठ खड़ी हुई। मुसलमान अपनी आज़ादी के लिए लड़ रहे थे और हम पाकिस्तानी उनकी मदद के लिए दौड़ पड़े।

उपर्युक्त अनेक प्रमाणों के होते हुए भी सुरक्षा परिषद् ने इस प्रश्न पर विचार नहीं किया कि पाकिस्तान आक्रमणकारी है और न उसने भारत की इस प्रार्थना पर ही विचार किया कि पाकिस्तान से आक्रमणकारियों को कोई सहायता अथवा सहयोग न देने को कहा जाए।

अध्याय ६

सुरक्षा परिषद् के प्रस्ताव और आयोग की नियुक्ति

भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र चार्टर के आर्टिकल ३५ के अधीन सुरक्षा परिषद् से पाकिस्तान के खिलाफ १ जनवरी, सन् १९४८ को शिकायत की थी। उस समय सुरक्षा परिषद् के सदस्य थे चीन, फ्रांस, ब्रिटेन, संयुक्तराज्य अमेरिका, रूस, यूक्रेन, कोलम्बिया, अर्जेण्टाइना, बेल्जियम और कनाडा। संयुक्त राष्ट्र ने सर्वप्रथम भारत और पाकिस्तान को ६ जनवरी को एक तार भेजा। उसमें इन दोनों देशों से जो काश्मीर-प्रश्न से निकटतम रूप से सम्बन्धित थे, यह अनुरोध किया गया था कि वे चार्टर के उपबन्धों के प्रतिकूल कोई ऐसा कदम न उठाएं जिससे काश्मीर में स्थिति और बिगड़ जाने की सम्भावना हो और जिससे बाद में सुरक्षा परिषद् के लिए कोई कार्यवाही करना कठिन हो जाए।

पाकिस्तान ने ८ जनवरी को उस तार के उत्तर में यह आश्वासन दिया कि वह ऐसा कोई कदम नहीं उठाएगा जो चार्टर के प्रतिकूल हो और जिससे स्थिति के और गम्भीर हो जाने की सम्भावना हो। भारत ने ९ जनवरी को उत्तर दिया और बताया कि वह काश्मीर के प्रश्न पर पहले ही से बड़े धैर्य से काम ले रहा है और उस क्षेत्र में शांति बनाए रखने के लिए वह उत्तेजना के बावजूद खामोश है, इससे और अधिक, उसने कहा, वह क्या आश्वासन दे सकता है।

संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट ने १७ जनवरी, सन् १९४८ को परिषद् में एक प्रस्ताव रखा और उसमें दोनों सरकारों से अनुरोध किया कि वे तत्काल ऐसे उपाय करें जिनसे काश्मीर-स्थिति में सुधार हो और ऐसी कोई कार्यवाही न करें जिससे स्थिति बिगड़ जाए। दोनों सरकारों से यह भी अनुरोध किया गया कि यदि उस दौरान जब मामला परिषद् के विचाराधीन है स्थिति में कोई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो जाता है तो परिषद्‌को तुरन्त उससे अवगत कराया जाए। भारत और पाकिस्तान ने २२ जनवरी को पत्र द्वारा परिषद् को बताया कि वे तत्काल परिषद् को सूचित करेंगे यदि स्थिति में कोई सारवान् परिवर्तन होता है। पाकिस्तान ने परिषद् को उस समय यह नहीं बताया कि उसके सैनिक काश्मीर में लड़ रहे हैं। इसकी सूचना उसने मई, सन् १९४८ में दी।

प्रस्ताव में कोलम्बिया ने कुछ संशोधन किया। यूक्रेन और रूस ने मतदान

नहीं किया। अर्जेण्टाइना और ब्रिटेन ने प्रस्ताव का समर्थन किया। ब्रिटेन और अमेरिका ने यह सुझाव दिया कि भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधिमंडल परिषद् के प्रेसीडेंट की अध्यक्षता में आपस में मिलें और स्थिति के समाधान के लिए बात करें। भारत ने प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया। भारत इस मसले को शीघ्र ही निपटाना चाहता था और पाकिस्तान से अच्छे सम्बन्ध बनाए रखना चाहता था। भारत में गांधी जी उस समय अनशन कर रहे थे। पाकिस्तान ने स्वीकृतिस्वरूप केवल एक वाक्य में अपनी सहमति दी। प्रस्ताव इस प्रकार था :

> सुरक्षा परिषद्
>
> काश्मीर में स्थिति के बारे में भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार के प्रतिनिधियों के बयानों को सुनने के बाद,
>
> स्थिति की गम्भीरता को ध्यान में रखते हुए,
>
> प्रेसीडेण्ट द्वारा ६ जनवरी को दोनों पक्षों को भेजे गए तारों और उनके उत्तरों को देखते हुए, जिनमें दोनों पक्षों ने अपने इस अभिप्राय की पुष्टि की थी कि वे चार्टर के अनुकूल कार्य करेंगे,
>
> भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार से यह अनुरोध करती है कि वे यथासामर्थ्य, यथाशक्ति (जिसमें जनता को सम्बोधित सार्वजनिक अपील सम्मिलित है) सभी उपाय करेंगे जिससे स्थिति में सुधार हो और ऐसा कोई बयान न देंगे और न ऐसा कोई कार्य करेंगे जिससे स्थिति और बिगड़ जाए,
>
> और उन सरकारों से यह प्रार्थना करती है कि वे तत्काल परिषद् को सूचित करें यदि स्थिति में कोई महत्त्वपूर्ण या सारवान् परिवर्तन हो जाता है या होने वाला हो जब कि मामला परिषद् के विचाराधीन है, और उस सम्बन्ध में परिषद् से परामर्श करें।

सबसे आश्चर्य की बात तो यह थी कि इस प्रस्ताव का मसविदा, जैसा रूस के प्रतिनिधि ग्रोमिको ने बताया, भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों द्वारा बयान दिए जाने के पहले ही तैयार कर लिया गया था। प्रस्ताव के सम्बन्ध में ग्रोमिको ने कहा :

> कहा जाता है कि इस प्रस्ताव का उद्देश्य भारत और पाकिस्तान सरकारों से अनुरोध करना है कि वे काश्मीर में स्थिति को और अधिक न बिगड़ने देने के लिए उपाय करें। ऐसा अनुरोध सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट द्वारा पहले ही ६ जनवरी को किया जा चुका है और उन सरकारों से जवाब भी आ चुका है। रूसी प्रतिनिधि मंडल का इसलिए मत है कि इस दृष्टिकोण से सुरक्षा परिषद् का यह प्रस्ताव लाभप्रद नहीं है। हमारा मत है कि इस प्रश्न का और अधिक अध्ययन किया जाना चाहिए और यथाशीघ्र प्रश्न पर ही प्रस्ताव पारित किया जाना चाहिए जिससे कि काश्मीर में जो इस समय स्थिति है वह दुरुस्त हो सके और उसमें सुधार किया जा सके और भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध ठीक हो सकें।

किन्तु रूस के इस सुझाव की उपेक्षा की गई और फलतः रूस और यूक्रेन ने, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, मतदान नहीं किया। १७ जनवरी के इस प्रस्ताव की कुछ विशिष्ट बातें थीं। वह प्रस्ताव तथ्यों के आधार पर नहीं तैयार किया गया था। इसका मसविदा भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों के बयानों को सुनने से पूर्व ही तैयार कर लिया गया था। पाकिस्तान ने उस समय तक भारत की शिकायत का जवाब नहीं दिया था। इसलिए इसका ख्याल होना स्वाभाविक है कि परिषद् को तथ्यों से सरोकार नहीं था। परिषद् के प्रेसीडेण्ट के पद पर उस समय बेल्जियम के प्रतिनिधि आसीन थे। उन्होंने प्रस्ताव में भारत और पाकिस्तान के प्रति, आक्रांत और आक्रामक के प्रति, व्यवहार-समता दिखाई। प्रश्न यह उठता है कि क्या परिषद् के सदस्य जानते थे कि पाकिस्तान ने चार्टर के उपबन्धों का उल्लंघन किया है ? यदि वे जानते थे तो स्पष्टतः उन्होंने इस तथ्य को छिपाने की कोशिश की और यदि वे यह नहीं जानते थे तो समझ में नहीं आता कि उन्होंने पाकिस्तान को विवाद का एक पक्ष क्यों स्वीकार किया ? जम्मू और काश्मीर भारत का एक भाग था, किसी बाह्य आक्रमण से उसकी रक्षा करने का भारत को पूरा अधिकार था। पाकिस्तान का काश्मीर के मामले में कोई हक नहीं था। प्रस्ताव में अन्तर्राष्ट्रीय कानून को उल्लंघन करने के लिए पाकिस्तान को निन्दित नहीं किया गया था, बल्कि प्रस्ताव द्वारा पाकिस्तान को यह अधिकार दे दिया गया था कि वह काश्मीर की स्थिति में किसी ऐसे परिवर्तन की, जिसे वह सारवान् या महत्त्वपूर्ण समझे, परिषद् को सूचना दे। आक्रमणकारी को इस प्रकार का अधिकार देना न तो न्यायसंगत था और न उचित ही। प्रस्ताव में काश्मीर में हो रही लड़ाई का कोई ज़िक्र नहीं था, और न उसकी समाप्ति के लिए कोई कदम उठाने का ही ज़िक्र किया गया था। ऐसा प्रतीत होता था कि सदस्य आक्रमणकारी कबाइलियों को ही सन्तुष्ट करने के लिए काश्मीर-समस्या पर विचार करने बैठे थे।

इसके बाद परिषद् की बैठक २० जनवरी को हुई। इस बीच भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधि आपस में बात करके एकसम्मत प्रस्ताव पर राज़ी हो गए। प्रस्ताव में परिषद् का एक आयोग स्थापित करने की बात थी। कहा गया था कि आयोग में संयुक्त राष्ट्र के तीन सदस्य होंगे,...भारत और पाकिस्तान एक-एक सदस्य चुनेगा और तीसरा सदस्य उन दोनों सदस्यों द्वारा चुना जाएगा। आयोग परिषद् के प्राधिकार से मौके पर जाएगा और उसके निदेशों के अनुसार कार्य करेगा। प्रस्ताव के दो महत्त्वपूर्ण खंड इस प्रकार थे :

(ग) आयोग को दो काम सौंपे गए हैं : (१) चार्टर के आर्टिकल ३४ के अनुसार तथ्यों की जांच करना, और (२) सुरक्षा परिषद् के कार्य में विघ्न डाले बिना मध्यस्थता द्वारा कठिनाइयों को दूर करने के उपाय करना, जिससे सुरक्षा परिषद् द्वारा दिए गए निदेशों का वह पालन कर सके, और यह रिपोर्ट देना कि सुरक्षा परिषद् द्वारा दिए गए निदेशों और परामर्श का किस सीमा तक पालन किया जा सका है।

(घ) आयोग खंड 'ग' में उल्लिखित कार्यों को (१) जहां तक उसका सम्बन्ध भारत के प्रतिनिधि द्वारा सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट को सम्बोधित १ जनवरी, सन् १९४८ के पत्र में और पाकिस्तान के विदेश मंत्री द्वारा सेक्रेटरी जनरल को सम्बोधित १५ जनवरी, सन् १९४८ के पत्र में जम्मू और काश्मीर राज्य के बारे में बताई हुई स्थिति से है, सुरक्षा परिषद् के निदेशानुसार निष्पादित करेगा ।

भारत चाहता था कि आयोग मुख्यतया जम्मू और काश्मीर प्रश्न के लिए नियुक्त किया जाए, किन्तु बाद में वह इसपर राज़ी हो गया कि यदि सुरक्षा परिषद् के एजेण्डा में बाद में पाकिस्तान की जवाबी शिकायत शामिल कर ली जाती है और बहस के बाद यह निश्चय लिया जाता है कि पाकिस्तान की शिकायत की किसी बात की जांच करना आवश्यक है तो उस आयोग को वे प्रश्न भी विचारार्थ भेजे जा सकते हैं । पाकिस्तान का कहना था कि इस आयोग द्वारा भारत-पाकिस्तान सम्बन्धी सभी समस्याओं पर विचार किया जाना चाहिए । समझौते की दृष्टि से ही भारत ने ऐसे प्रस्ताव पर अपनी रज़ामंदी दी थी । 'न्यूयार्क टाइम्स' ने २० जनवरी को विशेष रूप से यह लिखा कि भारत के प्रतिनिधि मंडल ने पाकिस्तान के प्रति रियायत की है ।

आयोग के क्या कार्यक्षेत्र हों इसपर भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों में बड़ा मतभेद था । पाकिस्तान चाहता था कि,

> आयोग को विस्तृत अधिकार प्राप्त हों । उसे युद्ध-विराम (लड़ाई-बन्दी) के आदेश देने और यह सुनिश्चित करने का, कि उसका पालन दोनों पक्ष करते हैं, अधिकार हो; उसे समान शर्तों पर सभी सम्बन्धित पक्षों से, जिसमें स्वतंत्र काश्मीर आन्दोलन के प्रतिनिधि भी शामिल हैं, परामर्श करने की स्वतंत्रता हो और तटस्थ प्रशासन के रूप में, जो पूरे प्रदेश में जनमत लेगा और उसकी देख-रेख करेगा, कार्य करने का पूर्ण अधिकार हो ।

भारत यह चाहता था कि,

> प्रस्तावित आयोग का कार्यक्षेत्र सीमित हो । वह लड़ाई बन्द कराए और यह सुनिश्चित करे कि दोनों पक्ष शांति बनाए रखते हैं और वर्तमान काश्मीर प्रशासन द्वारा जनमत-संग्रह लिए जाने के समय वह प्रेक्षक के रूप में काम करे ।

दोनों देशों के प्रतिनिधियों के दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न थे । उनके मतभेद मौलिक थे । काश्मीर समस्या के शीघ्र समाधान के लिए सर्वप्रथम काश्मीर-प्रश्न पर विचार करना आवश्यक था । इसलिए पाकिस्तान ने जो यह अनुरोध किया था कि भारत-पाकिस्तान सम्बन्धी सभी विषयों पर आयोग द्वारा विचार किया जाना चाहिए मुख्य समस्या को केवल टालने के लिए ही किया था । इससे भारत-पाकिस्तान-संघर्ष के बढ़ने की न कि घटने की सम्भावना थी, क्योंकि काश्मीर को छोड़कर अन्य सभी मसले प्रायः तय हो चुके थे और उनसे किसी प्रकार शांति-भंग होने की आशंका

नहीं थी। तयशुदा मसलों पर विचार करने का अर्थ भारत-पाकिस्तान-संघर्ष के क्षेत्र को बढ़ाना था। फिर आयोग को विचारार्थ सभी मसलों को सिपुर्द करने से संयुक्त राष्ट्र द्वारा राज्य के मामलों में हस्तक्षेप करने की बड़ी गुंजाइश थी। इसके यह भी अर्थ निकलते थे कि भारत और पाकिस्तान में अपने किसी भी मामले को तय करने की क्षमता नहीं थी। ऐसे समय अन्य राष्ट्रों का यह विचार करना स्वाभाविक था कि भारत और पाकिस्तान स्वतंत्रता पाने के योग्य नहीं थे। २८ अक्तूबर, सन् १६४८ को चर्चिल ने हाउस आफ कामन्स में कहा कि "अब जब कि ब्रिटेन का नियंत्रण एकबारगी भारत से हट गया है, ४० करोड़ जनता का भाग्य और भारत देश का भाग्य अनिश्चित है। एक बड़ी ज़बरदस्त घटना हो चुकी है, ऐसी विपत्ति निःसहाय भारतीयों पर अंग्रेजों के शासन-काल में कभी नहीं पड़ी। वे तब ब्रिटिश राज में शांति से रहते थे।" ज़ाहिर है भारत इस स्थिति से सन्तुष्ट नहीं था। पाकिस्तान समझता था कि आयोग द्वारा सभी मसलों पर विचार करने से पाकिस्तान प्रतिवादी के रूप में न रहेगा, उसे भारत के बराबर दर्जा मिल जाएगा और संयुक्त राष्ट्र भारत-पाकिस्तान के सभी मामलों में मध्यस्थ हो जाएगा। पाकिस्तान यह भी समझता था कि इस स्थिति में वह पहले के तयशुदा मामलों को फिर परिषद् में विचारार्थ उठा सकता है।

प्रेसीडेण्ट का प्रस्ताव २० जनवरी को पारित हो गया। ६ मत पक्ष में पड़े, रूस और यूक्रेन ने इस कारण से मतदान नहीं किया कि उनके विचार में सुरक्षा परिषद् के सदस्यों का आयोग बनना चाहिए था न कि सुरक्षा परिषद् द्वारा आयोग स्थापित किया जाना चाहिए, जिसपर उनका नियंत्रण न हो।

प्रस्ताव पारित होने के तुरन्त बाद सर ज़फरुल्ला ने परिषद् के प्रेसीडेण्ट को एक पत्र लिखा और यह धमकी दी कि जूनागढ़ के मसले पर वह भारत के खिलाफ सैनिक कार्यवाही करेगा। ज़फरुल्ला खां ने प्रेसीडेण्ट से काश्मीर के अलावा अन्य विषयों पर विचार करने के लिए परिषद् की एक बैठक जल्द बुलाए जाने की प्रार्थना की। फलतः पहली बार २२ जनवरी को एजेण्डा में परिवर्तन किया गया और 'काश्मीर-प्रश्न' के स्थान पर उसमें 'भारत-पाकिस्तान-प्रश्न' रखा गया। भारत के प्रतिनिधि आयंगर ने इस परिवर्तन का कड़ा विरोध किया। उन्होंने कहा कि विचाराधीन प्रश्न 'जम्मू और काश्मीर' है। अभी भारत की ओर से पाकिस्तान के प्रतिनिधि के भाषण का उत्तर नहीं दिया गया है और केवल पाकिस्तान के विदेश मंत्री की प्रार्थना पर एजेण्डा में परिवर्तन कर दिया गया है, भारत से कोई परामर्श नहीं किया गया। उन्होंने कहा कि जब हम सर ज़फरुल्ला का जवाब दाखिल कर दें और उसके प्रत्युत्तर में ज़फरुल्ला अपना बयान दे दें और हम फिर उसका उत्तर दें तभी सुरक्षा परिषद् जिस प्रकार चाहे बहस कर सकती है।

यदि जम्मू और काश्मीर के सम्बन्ध में परिषद् ऐसे निर्णय लेने में समर्थ हो जाती है जो भारत और पाकिस्तान को स्वीकार्य हों तो अन्य मसले स्वतः समाप्त हो जाएंगे। इसलिए भारतीय प्रतिनिधि ने कहा कि परिषद् को सर्वप्रथम काश्मीर-समस्या को सुलझाने का प्रयास करना चाहिए। इसपर ब्रिटिश प्रतिनिधि नोयल बेकर ने

आयंगर का समर्थन किया और कहा कि यदि वे प्रेसीडेण्ट होते तो काश्मीर-प्रश्न को अन्य प्रश्नों से अलग कर देते। ब्रिटिश प्रतिनिधि इस मसले पर एक प्रस्ताव लाना चाहते थे। किन्तु सीरिया, अर्जेण्टाइना और कोलम्बिया ने इस मत का विरोध किया और यद्यपि रूसी प्रतिनिधि ने नोयल बेकर का समर्थन किया, किन्तु चूंकि ऐसे किसी प्रस्ताव के पारित हो जाने की आशा नहीं थी, इसलिए नोयल बेकर ने अपना प्रस्ताव परिषद् के सामने नहीं रखा। अमेरिका के प्रतिनिधि ने अपने भाषण में इसपर बल दिया कि एजेण्डा में विषय-परिवर्तन से कोई अन्तर नहीं पड़ता। अन्त में आयंगर ने अपनी सहमति दे दी। प्रेसीडेण्ट ने कहा :

> भारत के प्रतिनिधि का यह प्रस्ताव है कि बहस का क्रम वही रहे जो पहले था यानी पहले जम्मू और काश्मीर-प्रश्न पर विचार हो तत्पश्चात् अन्य प्रश्नों पर विचार हो। पाकिस्तान के प्रतिनिधि को इस प्रस्ताव पर कोई आपत्ति नहीं है, इसलिए परिषद् तदनुसार विचार करेगी।

इससे यह स्पष्ट हो गया कि भारत-पाकिस्तान के मसले संयुक्त राष्ट्र के एजेण्डा पर बराबर बने रहेंगे, और काश्मीर-स्थिति वैसी ही संकटपूर्ण बनी रहेगी। परिषद् के रवैये से भारत को बड़ी निराशा हुई।

प्रेसीडेण्ट ने परिषद् के सदस्यों को बताया कि १७ और २० जनवरी के प्रस्ताव पारित हो चुके हैं, इस बात पर भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों में सहमति हो गई है कि वे आपस में काश्मीर-मसले पर बराबर परामर्श करते रहेंगे, और यह सिद्धांत मान लिया गया है कि जम्मू और काश्मीर का भविष्य जनमत द्वारा निश्चित किया जाएगा। अलबत्ता मुख्य समस्या पर कोई समझौता नहीं हो सका है, मुख्य समस्या है काश्मीर में लड़ाई का होना और आक्रमणकारियों को पाकिस्तान द्वारा सहायता का दिया जाना।

जैसा पिछले अध्याय में बताया जा चुका है, ज़फरुल्ला खां के १६ जनवरी के पहले भाषण का भारत के प्रतिनिधि एम० सी० सीतलवाड ने २३ जनवरी को बड़ा प्रभावयुक्त उत्तर दिया और सदस्यों को बताया कि किस प्रकार काश्मीर के मुसलमानों में उत्तेजना फैलाने और उन्हें भड़काने के लिए वहां धार्मिक नेता भेजे गए और पुंछ में विद्रोह कराया गया और किस प्रकार पाकिस्तान में काश्मीर के अधिमिलन के लिए काश्मीर के महाराजा पर राजनीतिक दबाव डाला गया और जब उसमें सफलता नहीं मिली तो किस प्रकार बर्बरतापूर्वक काश्मीर पर आक्रमण किया गया और जनता पर अत्याचार किए गए। काश्मीर भारत में मिल चुका था इसलिए, उन्होंने बताया, काश्मीर की सुरक्षा का उत्तरदायित्व भारत पर था और भारत की सेना काश्मीर में सहायतार्थ गई। किन्तु वहां पाकिस्तानी सेना पहले से मौजूद थी। इसलिए संघर्ष को और अधिक न बढ़ने देने के लिए और पाकिस्तान से सीधा मोर्चा लेने से बचने के लिए भारत ने सुरक्षा परिषद् से पाकिस्तान के खिलाफ शिकायत की थी और यह प्रार्थना की थी कि परिषद् पाकिस्तान से आक्रमणकारियों को कोई भी मदद न देने के लिए और काश्मीर पर आक्रमण करने के उद्देश्य से अपने प्रदेश का

कोई भी भाग न इस्तेमाल होने देने के लिए कहे। ज़फरुल्ला खां ने अपने उत्तर में इसपर ज़ोर दिया कि यह निश्चित करने के लिए कि काश्मीर भारत में मिलेगा या पाकिस्तान में एक निष्पक्ष प्रशासन या संयुक्त राष्ट्र के अन्तर्गत जनमत लिया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि इस आशय के आश्वासन से ही काश्मीर में लड़ाई बन्द हो सकती है अन्यथा नहीं।

ब्रिटेन के प्रतिनिधि नोयल बेकर का भाषरा बड़ा संयत था, उन्होंने पाकिस्तान द्वारा लगाए गए जनवध के आरोप को कोई महत्त्व नहीं दिया। उन्होंने कहा कि काश्मीर की समस्या दोनों सरकारें पारस्परिक विचार-विमर्श से तय कर सकती हैं। यह बड़ा दुःख का विषय है कि इस प्रश्न पर दोनों देश लड़ाई के मैदान में उतर आए हैं। यदि युद्ध से दोनों देश बचना चाहते हैं तो उन्हें समझौता द्वारा ही इस प्रश्न को निपटाना होगा। अमेरिका के प्रतिनिधि बैरन आस्टिन का भाषरा असंयत था। उन्होंने कहा कि उनके विचार में काश्मीर के अधिमिलन को भारत ने कुछ शर्त के साथ स्वीकार किया है और वह शर्त है कि जनता की राय जानने के लिए काश्मीर में जनमत लिया जाए। फ्रांस के प्रतिनिधि ने बताया कि आयोग को क्या करना चाहिए, उनका सुझाव पाकिस्तान के सुझाव के अनुरूप था, कनाडा के प्रतिनिधि ने ब्रिटेन के प्रतिनिधि का समर्थन किया, सीरिया के प्रतिनिधि ने फ्रांस के प्रतिनिधि का समर्थन किया और कहा कि न केवल विदेशी फौजें काश्मीर से हटाई जाएं अपितु आक्रमराकारी और कबाइली भी वहां से हटा दिए जाने चाहिए। परिषद् में सर्वमान्य मत यही था कि दोनों पक्ष काश्मीर की गुत्थी को सुलझाने के लिए आपस में बात करें।

परिषद् की अगली बैठक २८ जनवरी को हुई। भारत और पाकिस्तान ने काश्मीर-समस्या के समाधान के लिए अपने-अपने प्रस्ताव रखे। ये प्रस्ताव बिलकुल भिन्न थे और यह दोबारा स्पष्ट हो गया कि काश्मीर के सम्बन्ध में दोनों देशों के दृष्टि-कोरा विभिन्न हैं, उनमें बड़ा मतभेद है। उनके बीच की खाई अभी नहीं पटी है।

भारत का प्रस्ताव था कि सर्वप्रथम यह लक्ष्य होना चाहिए कि काश्मीर में लड़ाई बन्द हो और वहां सामान्य स्थिति पुनः स्थापित हो। इस गरज से पाकिस्तान को चाहिए कि वह कबाइलियों और अन्य आक्रमराकारियों से कहे कि वे काश्मीर से चले जाएं। जम्मू और काश्मीर में जाने के लिए और काश्मीर पर आक्रमरा करने के लिए पाकिस्तान आक्रमराकारियों को अपने किसी भू-भाग का इस्तेमाल न होने दे और आक्रमराकारियों को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से वह कोई सामान या मदद न दे।

काश्मीर में लड़ाई की समाप्ति पर और वहां बाहरी आक्रमणकारियों के चले जाने पर, दूसरा लक्ष्य यह होना चाहिए कि काश्मीर में शांति पुनः स्थापित हो और सामान्य स्थिति कायम हो। इस प्रयोजन से राज्य के सभी नागरिकों को वापस बुलाया जाए, सभी राजनीतिक बंदियों को मुक्त किया जाए, लोगों को परेशान न किया जाए, उनपर अत्याचार न किया जाए और वैध राजनीतिक क्रिया-कलापों पर कोई प्रतिबन्ध न लगाए जाएं।

विधि और व्यवस्था बनाए रखने लिए काफी इन्तज़ाम किए जाने चाहिए।

यद्यपि लड़ाई बन्द हो जाने पर राज्य में भारतीय सैनिकों की संख्या उत्तरोत्तर कम की जाएगी, तथापि संभाव्य बाहरी आक्रमण से राज्य की सुरक्षा करने के लिए एवं विधि और व्यवस्था बनाए रखने के उद्देश्य से असैनिक अधिकारियों को आवश्यकता पड़ने पर मदद देने के लिए काफी संख्या में भारतीय सैनिक रखने पड़ेंगे।

अब्दुल्ला का संकटकालीन प्रशासन तुरन्त उत्तरदायी मंत्रिमंडल में परिवर्तित कर दिया जाएगा।

जैसा परिषद् के २० जनवरी के प्रस्ताव द्वारा निश्चित हुआ है, आयोग को तुरन्त भारत में वह लड़ाई बन्द करने और सैनिक कार्यवाही खत्म करने के लिए आवश्यक संमत उपायों को परामर्श अथवा मध्यस्थता द्वारा प्रभावपूर्ण ढंग से अविलम्ब कार्यान्वित करने और सुरक्षा परिषद् को सूचित करने के लिए जाना चाहिए।

भारतीय प्रस्ताव का दूसरा खंड राज्य की जनता की इच्छा जानने से सम्बन्धित था। यह सिद्धांत स्वीकार कर लिया गया था कि राज्य का संविधान बनाने और राज्य के अधिमिलन का प्रश्न काश्मीर की जनता के लिए निर्णय करने का था। प्रस्ताव में कहा गया था कि काश्मीर सरकार इसे इस प्रकार सुनिश्चित कर सकती है :

(१) प्रौढ़ मताधिकार और विभिन्न क्षेत्रों के आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर सामान्य स्थिति के पुनःस्थापित होने के यथाशीघ्र बाद नेशनल असेम्बली बुलाई जाए,

(२) इस नेशनल असेम्बली के आधार पर राष्ट्रीय सरकार स्थापित की जाए,

(३) इस सरकार के माध्यम से और संयुक्त राष्ट्र द्वारा नियुक्त प्रेक्षकों की सलाह से अधिमिलन के प्रश्न पर जनमत लिया जाए, और

(४) नेशनल असेम्बली को राज्य के लिए एक नया संविधान बनाने दिया जाए।

पाकिस्तान ने इसके विपरीत अपने प्रस्ताव की भूमिका में यह कहा कि भारत और पाकिस्तान इससे सहमत हैं कि भारत या पाकिस्तान में काश्मीर के अधिमिलन का प्रश्न अन्तर्राष्ट्रीय प्राधिकार और नियंत्रण के अधीन प्रजातांत्रिक ढंग से आयोजित जनमत द्वारा निर्णीत होना चाहिए। जनमत के लिए स्थिति अनुकूल बनाने के वास्ते पाकिस्तान का आयोग से यह अनुरोध था कि,

(१) राज्य में निष्पक्ष अन्तरिम प्रशासन स्थापित किया जाए,

(२) भारतीय सशस्त्र फौजों और कबाइलियों को और भारतीय और पाकिस्तानी अतिचारियों को हटाया जाए,

(३) उपद्रव के बाद जितने लोग बाहर चले गए हैं उन्हें बुलाया जाए, और

(४) जनमत संग्रह लिया जाए।

भारत और पाकिस्तान के प्रस्ताव एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न थे। उनके अभिप्राय मुख्तलिफ थे। पाकिस्तान की दृष्टि में अधिमिलन का प्रश्न अनिर्णीत था

और इस सम्बन्ध में भारत और पाकिस्तान की स्थिति समान थी। भारत की दृष्टि में काश्मीर के अधिमिलन का प्रश्न भारत और काश्मीर की जनता के बीच था, पाकिस्तान का उससे कोई मतलब नहीं था। पाकिस्तान एकमात्र संयुक्त राष्ट्र को काश्मीर में जनमत लेने के लिए प्राधिकृत करना चाहता था। भारत का कहना था कि जनमत प्रजातांत्रिक रूप से गठित काश्मीर की वर्तमान सरकार ही ले सकती है, अलबत्ता संयुक्त राष्ट्र द्वारा नियुक्त प्रेक्षकों की जनमत-संग्रह में सलाह ली जा सकती है। पाकिस्तान का कहना था कि जनमत लेने के पश्चात् काश्मीर में लड़ाई बन्द हो जाएगी, भारत का कहना था कि सर्वप्रथम काश्मीर में लड़ाई बन्द की जाए और सामान्य स्थिति फिर से स्थापित की जाए। पाकिस्तान चाहता था कि सभी भारतीय सैनिक कबाइलियों के साथ ही साथ राज्य से बाहर जाएं, भारत का कहना था कि राज्य की सुरक्षा और वहां विधि और व्यवस्था स्थापित करने की ज़िम्मेदारी उसकी है और इसलिए राज्य में काफी संख्या में भारतीय सैनिकों का रखना आवश्यक है। पाकिस्तान चाहता था कि संयुक्त राष्ट्र द्वारा एक निष्पक्ष प्रशासन की व्यवस्था राज्य में की जाए, भारत का कहना था कि वह अब्दुल्ला के अधीन वर्तमान संकटकालीन प्रशासन को राज्य के मंत्रिमंडल में परिवर्तित करने के पक्ष में है।

भारत ने संयुक्त राष्ट्र से पड़ोसी राज्य की शिकायत की थी कि उसने भारत के प्रति जो ज़्यादती की है उसे दूर किया जाए। भारत ने अपनी शिकायत इसलिए नहीं की थी कि संयुक्त राष्ट्र भारत के अन्दरूनी मामलों में हस्तक्षेप करे। पाकिस्तान का कहना था कि उसने प्रतिवादी के रूप में नहीं अपितु पीड़ित पक्ष के रूप में संयुक्त राष्ट्र से सहायता की अपील की है, वह भारत को काश्मीर में अतिक्रमी समझता है और इसलिए सुरक्षा परिषद् से भारत-पाकिस्तान सम्बन्धी सभी समस्याओं और प्रश्नों पर विचार करने की याचना करता है। भारत, जैसा पहले कहा जा चुका है, इस मत का था कि भारत में काश्मीर के अधिमिलन से काश्मीर भारत का एक भाग हो गया है और सुरक्षा परिषद् को चाहिए कि वह पाकिस्तान पर ज़ोर-दबाव डाले कि वह आक्रमणकारियों को सहायता देना बन्द कर दे। पाकिस्तान संयुक्त राष्ट्र से अपेक्षा करता था कि वह काश्मीर से भारतीय फौजों को हटा दे और उसको अपने आधिपत्य में ले ले।

परिषद् के प्रेसीडेण्ट ने भारत और पाकिस्तान के प्रस्तावों को पढ़कर सदस्यों को सुनाया और कहा कि दोनों देशों के प्रस्तावों में कुछ बातों के बारे में सहमति है, जैसे (१) लड़ाई बन्द की जाए, (२) इस उद्देश्य के लिए दोनों देश आपस में सहयोग करें, और (३) लोगों को अपना मत देने में स्वतंत्रता हो। प्रेसीडेण्ट ने तत्पश्चात् अपना प्रस्ताव रखा जिसमें कहा गया कि दोनों देश इससे सहमत हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय तत्त्वावधान में प्रजातांत्रिक ढंग से जनमत लिया जाए और यह जनमत सुरक्षा परिषद् के प्राधिकार के अन्तर्गत और उसकी देख-रेख में लिया जाए, और इसकी सारी व्यवस्था परिषद् के अन्तर्गत की जाए। आयोग का कर्त्तव्य लड़ाई और हिंसात्मक कार्यवाहियों को समाप्त करना होगा और इसके लिए भारत और पाकिस्तान की फौजों में सहयोग की अपेक्षा होगी। प्रेसीडेण्ट का यह प्रस्ताव पाकिस्तान की मांग की बहुत कुछ

पूर्ति करता था।

भारत के प्रतिनिधि ने इस प्रस्ताव के प्रति अपनी निराशा प्रकट की। पाकिस्तान के प्रतिनिधि ने जनमत को लिए जाने पर फिर ज़ोर दिया। परिषद् में इस प्रस्ताव पर जो विचार अन्य राष्ट्रों के प्रतिनिधियों द्वारा व्यक्त किए गए उनसे स्पष्ट हो गया कि अधिकतर प्रतिनिधि पाकिस्तान का पक्ष ले रहे थे।

परिषद् की आगामी बैठक में बेल्जियम के प्रतिनिधि प्रेसीडेण्ट ने अपना प्रस्ताव दो खंडों में रखा, पहले खंड में कहा गया कि परिषद्-प्राधिकारान्तर्गत जनमत लिया जाएगा और दूसरे खंड में बताया गया कि लड़ाई को बन्द कराने के लिए कमीशन को क्या-क्या करना होगा। अमेरिका, कनाडा, चीन, फ्रांस, सीरिया और ब्रिटेन ने प्रस्ताव के दोनों खंडों का समर्थन किया क्योंकि अधिकांश का मत यही था कि जनमत द्वारा ही लड़ाई बन्द हो सकती थी और ऐसा जनमत पूर्णरूप से निष्पक्ष होना चाहिए। महात्मा गांधी की हत्या के कारण ३० जनवरी को यह बैठक स्थगित हो गई और परिषद् की आगामी बैठक ३ फरवरी, सन् १९४८ को हुई। भारत के प्रतिनिधि ने फिर ज़ोर दिया कि सुरक्षा परिषद् को वास्तव में पाकिस्तान से यह कहना चाहिए कि वह आक्रमणकारियों को कोई सहायता न दे, अपना भू-भाग काश्मीर पर आक्रमण करने के लिए इस्तेमाल न करने दे। उन्होंने यह भी कहा कि संयुक्त राष्ट्र काश्मीर की वर्तमान सरकार का स्थान नहीं ले सकता और जनमत की व्यवस्था राज्य की सरकार ही कर सकती है अलबत्ता परिषद् द्वारा नियुक्त व्यक्तियों से इस सम्बन्ध में सलाह ली जा सकती है जिससे कि जनमत की निष्पक्षता में कोई सन्देह किसी को न हो। इससे अधिक भारत रियायत नहीं दे सकता। पाकिस्तान के प्रतिनिधि ने कहा कि काश्मीर से कबाइलियों के हट जाने से या काश्मीर में उनके प्रवेश को रोकने से राज्य में लड़ाई बन्द नहीं होगी। पाकिस्तानी प्रतिनिधि के भाषण के बाद अर्जेण्टाइना ने अपने भाषण में इसपर ज़ोर दिया कि काश्मीर की स्वतंत्रता के लिए जो लड़ रहे हैं उनका प्रतिनिधित्व परिषद् में नहीं है और जनमत के ले लिए जाने पर कबाइली खुद ही हट जाएंगे। अमेरिका के प्रतिनिधि ने फिर इसपर ज़ोर दिया कि भारत और पाकिस्तान में काश्मीर के मसले पर समझौता हो जाना चाहिए। उन्होंने यह भी मत व्यक्त किया कि भारत में काश्मीर के अधिमिलन के सम्बन्ध में लार्ड माउण्टबैटन का पत्र अधिमिलन की शर्तों का एक अभिन्न अंग है। अमेरिका की इस गलत राय का कोई इलाज नहीं था।

भारत को यह स्पष्ट हो गया था कि परिषद् के अधिकांश सदस्य पाकिस्तान का बुरी तरह पक्ष ले रहे थे जहां तक निम्न विषयों का सम्बन्ध था :

(१) भारत-पाकिस्तान की पूरी समस्या का समाधान किए बिना लड़ाई नहीं बन्द हो सकती थी;

(२) एक निष्पक्ष अंतरिम प्रशासन आवश्यक था, और

(३) सुरक्षा परिषद् का रुख जनमत-संग्रह में केवल प्रेक्षक का न होगा अपितु वह अपनी देख-रेख में जनमत लेगी।

उपर्युक्त विषय पर भारत का जो मत था उसका चीन और कोलम्बिया ने

बहुत कुछ समर्थन किया। चीन ने यह मत व्यक्त किया कि स्वतंत्र जनमत के लिए काश्मीर में एक बिलकुल नई सरकार की आवश्यकता नहीं है और यह कि लड़ाई बन्द किए जाने के लिए सुरक्षा परिषद् द्वारा पाकिस्तान को विशिष्ट अनुदेश दिया जाना चाहिए। कोलम्बिया के प्रतिनिधि ने भी यही ख्याल ज़ाहिर किया कि लड़ाई का बन्द होना ज़्यादा ज़रूरी था। उन्होंने इस विषय पर एक विस्तृत ज्ञाप रखा जो भारत की दृष्टि में बेल्जियम के प्रस्ताव से अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त था। उन्होंने ज्ञाप में कहा कि राज्य में लड़ाई का जल्द बन्द होना विशेष रूप से आवश्यक है, और जनमत द्वारा भविष्य का निश्चय किया जाएगा। राज्य में ऐसा अन्तरिम प्रशासन स्थापित होना आवश्यक है जिसे जम्मू और काश्मीर की जनता का पूरा विश्वास प्राप्त हो। ज्ञाप में यह भी कहा गया कि आयोग में ५ सदस्य होंगे, एक भारत द्वारा नामित होगा, दूसरा पाकिस्तान द्वारा और तीन सुरक्षा परिषद् द्वारा नामित होंगे। पाकिस्तान से कहा जाए कि वह इसका प्रयास करे कि कबाइली और अन्य आक्रमणकारी राज्य से चले जाएं और यह कि लड़ाई बन्द करने में आयोग दोनों देशों की सेना का सहयोग प्राप्त करेगा। यह भी कहा गया था कि संकटकालीन प्रशासन का मुसलमानों और गैर-मुसलमानों के आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर पुनः संगठन किया जाएगा और लड़ाई बन्द हो जाने के बाद सुरक्षा परिषद् के आयोग की सलाह से और उसकी देख-रेख में जनमत लिया जाएगा।

शेख अब्दुल्ला ने तुरन्त उत्तर दिया कि वर्तमान स्थिति में राज्य की मौजूदा सरकार का बदला जाना उन्हें स्वीकार्य नहीं है, काश्मीर के लोगों को प्रशासन से अलग नहीं किया जा सकता। काश्मीर के प्रशासन से काश्मीर की जनता सम्बन्धित है न कि पाकिस्तान, जिसका इस मसले में कोई अस्तित्व नहीं है। दूसरे दिन, आयंगर ने परिषद् को फिर से बताया कि काश्मीर का अधिमिलन पूर्ण था, न कि सप्रतिबन्ध। भारत वचनबद्ध है कि यदि जनमत में काश्मीर की जनता भारत के पक्ष में अपना मत नहीं देती, अधिमिलन की शर्तों से काश्मीर मुक्त हो जाएगा। श्री आयंगर ने यह भी कहा कि बाह्य और आन्तरिक उपद्रव से काश्मीर की रक्षा करने का उत्तरदायित्व भारत की सेना पर है और वह उस समय तक काश्मीर में बनी रहेगी जब तक कि जनमत के परिणामस्वरूप काश्मीर भारत से अलग नहीं हो जाता। काश्मीर में किस प्रकार की सरकार हो इसका निश्चय काश्मीर की जनता कर सकती है और उसपर कोई प्रशासन ज़बरदस्ती नहीं थोपा जा सकता। भारत के प्रतिनिधि ने कोलम्बिया के प्रस्ताव का ज़िक्र करते हुए कहा कि राज्य के प्रशासन में साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व का सिद्धांत उसे पसन्द नहीं और वह उसे नहीं स्वीकार करेगा। वह यह भी नहीं स्वीकार कर सकता कि जनमत लेने के लिए आयोग को कोई कार्यकारी प्राधिकार दिया जाए। पाकिस्तान के प्रतिनिधि ने प्रत्युत्तर में कहा कि काश्मीर के प्राधिकारियों की देख-रेख में जनमत का लिया जाना निष्पक्ष और न्यायसंगत न होगा, लड़ाई की समाप्ति पर पूरी भारतीय सेना काश्मीर से चली जाए और पाकिस्तान को संतुष्टि हो जाए कि

जनमत-संग्रह स्वतंत्र और निष्पक्ष होगा। ऐसी व्यवस्था हो जाने के बाद पाकिस्तान आक्रमणकारियों से राज्य से बाहर चले जाने के लिए कहेगा और यदि आवश्यक हुआ तो इस उद्देश्य की पूर्ति में बल का भी प्रयोग करेगा।

भारत और पाकिस्तान के मतों में विभिन्नता होने के कारण परिषद् ने यह निश्चय किया कि दोनों पक्ष प्रेसीडेंट की अध्यक्षता में वार्ता करें। कनाडा के प्रतिनिधि उस समय परिषद् के प्रेसीडेंट थे। ६ फरवरी को वाद-विवाद के दौरान भारत के प्रतिनिधि ने परिषद् को बताया कि चूंकि प्रेसीडेण्ट के प्रस्तावों में भारत के दृष्टिकोण का ध्यान नहीं रखा गया था, इसलिए भारत के प्रतिनिधि मंडल का भारत सरकार से इस विषय पर नई दिल्ली में परामर्श करना आवश्यक था। आयंगर ने एक पत्र में प्रेसीडेण्ट से बैठक के स्थगन की प्रार्थना की।

परिषद् की बैठक १० फरवरी को हुई। उसमें प्रेसीडेण्ट के प्रस्ताव विचारार्थ रखे गए थे। ये प्रस्ताव पहले के प्रस्तावों के अनुरूप थे। इनमें भी कहा गया था कि लड़ाई बन्द करने के लिए, राज्य से आक्रमणकारियों को हटाने के लिए और विधि एवं व्यवस्था कायम करने के लिए दोनों पक्षों का सहयोग प्राप्त किया जाए, विधि और व्यवस्था स्थापित हो जाने के बाद सभी नियमित सेना वापस कर ली जाए, नई अन्तरिम सरकार बनाई जाए और परिषद् के प्राधिकार के अन्तर्गत जनमत लिया जाए। कोलम्बिया ने भी अपना प्रस्ताव दूसरे दिन संकल्प के रूप में रखा। बैठक में भारत की स्थगन-प्रार्थना पर विचार किया गया और इसके लिए भारत की बड़ी कटु आलोचना की गई। सीरिया के प्रतिनिधि ने यह जानना चाहा कि क्या काश्मीर की संकटकालीन स्थिति एकबारगी समाप्त हो गई है जो भारत परिषद् के स्थगन की मांग कर रहा है ? अमेरिका के प्रतिनिधि ने कहा कि भारत की प्रार्थना विचित्र है, कोलम्बिया के प्रतिनिधि ने कहा कि भारत की परिषद्-स्थगन की मांग सुरक्षा परिषद् के प्राधिकार और अस्तित्व के लिए खतरनाक है। ब्रिटिश प्रतिनिधि ने यह मत व्यक्त किया कि भारत को उस समय तक ऐसी कोई मांग नहीं करनी चाहिए थी जब तक कि काश्मीर की समस्या का समाधान न हो जाए। अर्जेण्टाइना के प्रतिनिधि ने बहुत घातक बयान दिया। उसने कहा कि काश्मीर भारत का भाग नहीं है, काश्मीर में जो युद्ध हो रहा है वह काश्मीर के शासक के खिलाफ काश्मीर की जनता के विद्रोह के फलस्वरूप है, सर्वप्रथम जनमत का प्रश्न तय किया जाना चाहिए और केवल काश्मीर का प्रश्न ही नहीं सभी भारत-पाकिस्तान की समस्याओं को तय किए जाने की आवश्यकता है। केवल चीन के प्रतिनिधि ने भारतीय प्रतिनिधि की प्रार्थना के पक्ष में अपना मत व्यक्त किया और इस आशय का एक प्रस्ताव रखा। भारत ने चीन के प्रस्ताव पर मतदान की मांग की और कहा कि जो भी निर्णय होगा वह उसका पालन करेगा।

अगले दिन परिषद् की ओर से प्रेसीडेण्ट ने यह घोषित किया कि भारतीय प्रतिनिधि मंडल इस मामले में भारत सरकार से परामर्श करने के लिए दिल्ली जाएगा और परिषद् इस बीच जम्मू और काश्मीर के प्रश्न के अतिरिक्त अन्य विषयों पर विचार करेगा। चीन ने अपना प्रस्ताव वापस ले लिया।

परिषद् के इस पक्षपातपूर्ण रवैये पर भारत में बड़ा विरोध प्रकट किया गया। नेहरू ने स्वयं १५ फरवरी को जम्मू में कहा कि हमने परिषद् को जो महत्त्वपूर्ण प्रश्न सुपुर्द किया था उसपर विचार करने के बजाय विश्व के राष्ट्र शक्ति-राजनीति में फंस गए। नेहरू ने ५ मार्च, सन् १९४८ को संविधान सभा में भाषण देते हुए इस मसले पर बड़ी निराशा प्रकट की और कहा कि बड़े आश्चर्य की बात है कि हमारे मूल प्रश्न की अपेक्षा अन्य विषयों को तरजीह दी गई। परिषद् की २५०वीं, २५७वीं और २६४वीं बैठक में तो जूनागढ़ के प्रश्न पर विचार किया गया था और काश्मीर के प्रश्न पर विचार परिषद् की २६६वीं बैठक में किया गया।

काश्मीर के अलावा अन्य विषयों पर विचार-विमर्श करने के बाद सुरक्षा परिषद् ने फिर १० मार्च, सन् १९४८ को काश्मीर के प्रश्न पर विचार किया जब भारत के प्रतिनिधि आयंगर ने दिल्ली से लौटने पर परिषद् को बताया कि भारत सरकार से उनकी वार्ता काश्मीर के प्रश्न पर हो चुकी है। आयंगर ने फिर अनुरोध किया कि काश्मीर में लड़ाई बन्द करने के उपाय किए जाएं। उन्होंने कहा कि जहां तक भारतीय सैनिकों के काश्मीर में रखे जाने का सवाल है यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि वे स्वतंत्र रूप से मतदान में कोई विघ्न नहीं डालते। वे काश्मीर से हटाए नहीं जा सकते क्योंकि उनका उस राज्य में रहना परमावश्यक है। जनमत निष्पक्ष हो इससे, उन्होंने कहा, भारत सहमत है लेकिन इस मामले में राज्य की सर्वोच्च सत्ता की उपेक्षा नहीं की जा सकती। सर ज़फरुल्ला ने प्रत्युत्तर में कहा कि राज्य में भारतीय सैनिकों की उपस्थिति में जनमत-संग्रह स्वतंत्र रूप से नहीं किया जा सकता। निष्पक्ष जनमत के लिए यह आवश्यक है कि राज्य में कोई निष्पक्ष प्रशासन हो। दोनों प्रतिनिधियों के भाषण सुनने के बाद परिषद् के प्रेसीडेण्ट ने कहा कि वे बेल्जियम और कनाडा के प्रतिनिधियों की सहायता से दोनों देशों के प्रतिनिधियों से इस प्रश्न पर बात करेंगे और काश्मीर-प्रश्न पर विचार-विमर्श अगली बैठक में किया जाएगा।

परिषद् की आगामी बैठक १८ मार्च को हुई। चीन के प्रतिनिधि ने, जो परिषद् के उस समय प्रेसीडेण्ट थे, इस बैठक में एक प्रस्ताव रखा। इसके तीन खंड थे। पहले खंड में समझौते की बात कही गई थी और इसपर ज़ोर दिया गया था कि राज्य में शांति और व्यवस्था का फिर से स्थापित होना आवश्यक है। इसके पूर्व किसी भी प्रस्ताव में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं रखी गई थी। इसके द्वारा पाकिस्तान पर यह उत्तरदायित्व डाला गया था कि वह काश्मीर से अतिचारी कबाइलियों और पाकिस्तान राष्ट्रिकों को हटाएगा। दूसरे खंड में जनमत की चर्चा की गई थी। कहा गया था कि भारत राज्य में एक जनमत प्रशासन कायम करेगा और अपने प्राधिकार से जनमत लेने की व्यवस्था करेगा। प्रशासन-निदेशक और प्रादेशिक निदेशक सेक्रेटरी-जनरल द्वारा नामित किये जाएंगे। ये व्यक्ति राज्य सरकार के अधीन अधिकारी होंगे और जनमत को नियमित करेंगे। भारत यह आश्वासन देगा कि वह मतदाताओं पर कोई ज़ोर-दबाव नहीं डालेगा और जम्मू-काश्मीर में ऐसा सुनिश्चित करना सभी सम्बन्धित व्यक्तियों का अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व होगा। भारत अपने ऐसे राष्ट्रिकों को राज्य

से हटा लेगा जो अवैध प्रयोजनों से राज्य में घुस आए थे, सभी शरणार्थियों को काश्मीर में आने देगा, सभी राजनीतिक बंदियों को मुक्त कर देगा और किसी को परेशान नहीं करेगा और अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए पर्याप्त उपाय करेगा। तीसरे खंड में कहा गया था कि सभी प्रमुख राजनीतिक दलों के प्रतिनिधित्व के आधार पर राज्य में अंतरिम सरकार स्थापित की जाएगी और एक उच्च भारतीय अधिकारी यह सुनिश्चित करेगा कि राज्य सरकार द्वारा सभी अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व पूरे किए जाते हैं।

चीन के प्रतिनिधि के भाषण के बाद सर ज़फरुल्ला ने उनके प्रस्ताव पर अपनी असहमति प्रकट की। उन्होंने कहा कि काश्मीर में भारतीय सैनिकों की उपस्थिति से जनमत की निष्पक्षता पर प्रभाव पड़ेगा। फिर भारत कभी कोई निष्पक्ष प्रशासन राज्य में नहीं स्थापित करेगा। उन्होंने अन्त में कहा कि ऐसी सरकार के अधीन जिसके अध्यक्ष शेख अब्दुल्ला जैसे व्यक्ति हों और जहां भारतीय सैनिक तैनात हों जो जनमत लिया जाएगा वह निष्पक्ष नहीं हो सकता। भारत ने चीन के प्रस्ताव में कोई परिवर्तन या संशोधन नहीं किया। फ्रांस के प्रतिनिधि ने यह मत व्यक्त किया कि काश्मीर में भारतीय सैनिकों का रहना आवश्यक है और जनमत लेने के लिए काश्मीर राज्य प्रशासन-शून्य नहीं रखा ज़ा सकता। वर्तमान स्थिति में ही राज्य में जनमत लिया जा सकता है। किन्तु सीरिया के प्रतिनिधि ने प्रस्ताव का विरोध किया।

एक महीने बाद परिषद् की बैठक हुई। उसमें बेल्जियम, कनाडा, चीन, कोलम्बिया, ब्रिटेन और अमेरिका ने एक संयुक्त प्रस्ताव विचारार्थ रखा। इसमें प्रस्तावकों के अनुसार दोनों देशों के विभिन्न दृष्टिकोणों का समावेश किया गया था। प्रस्ताव में कहा गया था कि आयोग के सदस्यों की संख्या पांच होगी। एक सदस्य पाकिस्तान द्वारा और दूसरा भारत द्वारा नामित किया जाएगा, तीसरा सदस्य इन दोनों नामित व्यक्तियों द्वारा और शेष दो सदस्य परिषद् द्वारा नामित किए जाएंगे। यदि तीसरे सदस्य पर भारत और पाकिस्तान सहमत नहीं होते तो परिषद् बाकी तीनों सदस्यों को नामित करेगा। यह आयोग तुरन्त उपमहाद्वीप जाएगा और दोनों देशों की सरकारों को अपनी सेवाएं उपलब्ध करेगा जिससे शांति और व्यवस्था पुनः स्थापित करने और दोनों सरकारों द्वारा पारस्परिक सहयोग और आयोग के सहयोग से जनमत लिए जाने के आवश्यक उपाय किये जा सकें। प्रस्ताव में समस्या के समाधान के लिए भारत और पाकिस्तान से संस्तुतियां की गई थीं। संस्तुतियां थीं कि पाकिस्तान (१) कबाइलियों और अपने राष्ट्रिकों को काश्मीर से हटा लेगा। उनको अतिक्रमण करने से रोकेगा और उन्हें किसी प्रकार की सहायता न देगा, (२) सभी सम्बन्धित व्यक्तियों को यह बता देगा कि प्रस्ताव न्यायसंगत है, इससे काश्मीर-समस्या का यथोचित समाधान हो जाएगा और इसलिए सभी को विधि और व्यवस्था के पुनःस्थापन में सहयोग देना चाहिए। भारत से कहा गया था कि (१) जब आयोग इससे संतुष्ट हो जाएगा कि कबाइली हट रहे हैं और लड़ाई-बन्दी हो गई है तो वह आयोग के परामर्श से उत्तरोत्तर अपने सैनिकों को हटाने की एक योजना कार्यान्वित करेगा और राज्य में विधि और व्यवस्था बनाए रखने के निमित्त असैनिक अधिकारियों के सहायतार्थ कम

से कम सैनिक काश्मीर में रखेगा, (२) वह यह प्रचारित और प्रसारित करेगा कि भारतीय सैनिक उत्तरोत्तर काश्मीर से हट रहे हैं, (३) वह आयोग के परामर्श से शेष सैनिकों को काश्मीर में इस प्रकार रखेगा कि किसी नागरिक को यह डर न रहे कि वे उसे डराने या किसी प्रकार की धमकी देने के लिए तैनात हैं, अग्रक्षेत्रों में कम से कम सैनिक रहेंगे, आरक्षित सैनिक अड्डा क्षेत्र में रहेंगे, जनमत प्रशासक से जैसा भी तय हो, भारत अपने सैनिकों और राज्य के सैनिकों को तैनात करेगा, जहां तक सम्भव हो विधि और व्यवस्था के उत्तरदायी स्थानीय व्यक्ति होंगे, और यदि स्थानीय फौजें नाकाफी हों तो प्रशासक, दोनों सरकारों की सहमति से, उनकी फौजों का शांति की स्थापना के लिए इस्तेमाल कर सकेगा।

प्रस्ताव के दूसरे खंड में जनमत के सम्बन्ध में कहा गया था। भारत से अपेक्षा की गई थी कि वह (१) यह सुनिश्चित करेगा कि जनमत की तैयारी में और उसके दौरान राज्य सरकार विभिन्न प्रमुख राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों को मंत्रिमंडल में राज्य के प्रशासन के लिए आमंत्रित करती है। (२) राज्य में एक जनमत प्रशासन की व्यवस्था की जाती है। (३) ऐसे अधिकार, जो प्रशासक जनमत-संग्रह के लिए आवश्यक समझे संक्रमित कर दिए जाते हैं, राज्य की फौजों और पुलिस को निर्देश देने और उनके काम की देख-रेख करने का भी अधिकार संक्रमित अधिकारों में होगा। (४) सेक्रेटरी-जनरल द्वारा नामांकित व्यक्ति प्रशासक नियुक्त किया जाएगा। वह जम्मू और काश्मीर सरकार के अधिकारी के रूप में कार्य करेगा और उसे अपने अधीनस्थ कर्मचारियों को नियुक्त करने, जनमत के लिए विनियमों के बनाने और जनमत से सम्बन्धित मामलों की सुनवाई के लिए स्पेशल मजिस्ट्रेट नामित करने का अधिकार होगा। प्रशासक की नौकरी की शर्तें भारत और सेक्रेटरी-जनरल के बीच तय की जाएंगी। (५) उसे संयुक्त राष्ट्र आयोग और उसके द्वारा सुरक्षा परिषद् से और भारत तथा पाकिस्तान से सीधे पत्र-व्यवहार करने का और उनकी सूचना में ऐसी बातें लाने का, जो उसके विचार में जनमत के लिए हानिकर हों, अधिकार होगा। भारत इस सम्बन्ध में रिश्वत, भ्रष्टाचार और परित्रास को रोकेगा और प्रशासक को इस दिशा में पूरी सहायता देगा। भारत यह ऐलान करेगा कि मतदान में लोगों को पूरी स्वतंत्रता होगी। वह राज्य से ऐसे लोगों को वापस बुला लेगा जो सामान्यत: उस राज्य के निवासी न हों। वह सभी राजनीतिक बन्दियों को मुक्त कर देगा और जो लोग राज्य से भाग गए हैं उन्हें राज्य में वापस बुलाएगा। वह यह भी सुनिश्चित करेगा कि लोगों पर अत्याचार नहीं किया जाता, उन्हें परेशान नहीं किया जाता और अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के पर्याप्त उपाय किए जाते हैं। (६) जनमत-संग्रह के अन्त में आयोग यह प्रमाणित करेगा कि जनमत वास्तव में निष्पक्ष और स्वतंत्र रूप से लिया गया है।

प्रस्ताव के तीसरे खंड में यह व्यवस्था की गई कि (१) आयोग से भारत और पाकिस्तान का एक-एक प्रतिनिधि सम्बद्ध रहेगा, (२) आयोग राज्य में अपेक्षानुसार प्रेक्षक नियुक्त करेगा।

यह प्रस्ताव १७ अप्रैल को परिषद् की २८४वीं बैठक में रखा गया था।

प्रेसीडेण्ट ने बताया कि चूंकि दोनों पक्ष आपस में समझौते की शर्तों के विषय में सहमत नहीं हो सके हैं इसलिए उक्त प्रस्ताव स्वीकृति के लिए रखा गया है। परिषद् के ११ सदस्यों में से ६ सदस्यों ने तो इस प्रस्ताव को रखा ही था, शेष ५ सदस्यों ने इसका कोई विरोध नहीं किया।

कुछ संशोधन प्रस्तावित किए गए किन्तु वे बाद में वापस ले लिए गए। अर्जेण्टाइना चाहता था कि अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए पाकिस्तान अपनी सेना का प्रयोग करे किन्तु प्रेसीडेण्ट के यह बताने पर कि आयोग भारत की सहमति से पाकिस्तान के सैनिकों को इस्तेमाल कर सकता है, अर्जेण्टाइना ने अपना संशोधन वापस ले लिया। बाद में अर्जेण्टाइना और सीरिया ने यह संशोधन रखा कि आयोग को अपने काम में सहायता लेने के लिए दोनों सरकारों की फौजों को, उनकी सहमति लिए बिना ही, इस्तेमाल करने का अधिकार होना चाहिए। यह संशोधन गिर गया। पाकिस्तानी प्रतिनिधि ने यह संशोधन रखा कि जनमत प्रशासक अपने कार्य के लिए आयोग से सैनिकों की अपेक्षा करे न कि भारत से। परिषद् का कोई भी सदस्य औपचारिक रूप से इस संशोधन को रखने के लिए तैयार नहीं हुआ। मूल प्रस्ताव के प्रत्येक पैराग्राफ पर मत लिया गया, रूस और यूक्रेन ने लगातार किसी पैराग्राफ पर अपना मत नहीं दिया। सीरिया ने कई, अर्जेण्टाइना ने २ और फ्रांस ने एक पैराग्राफ पर मतदान नहीं किया। इस प्रकार परिषद् ने काश्मीर की समस्या पर पहला प्रस्ताव २१ अप्रैल, सन् १९४८ को पारित किया।

किन्तु इस प्रस्ताव को न तो भारत ने और न पाकिस्तान ने मंजूर किया। भारत की आपत्तियां अनेक थीं। प्रस्ताव में भारत की मूल शिकायत का कोई ध्यान नहीं रखा गया था, प्रस्ताव से यह आभास होता था कि भारत एक सह-अभियुक्त है, प्रस्ताव में पाकिस्तान के दायित्वों के बारे में बहुत कम कहा गया था, उसमें इस बात का भी ध्यान नहीं रखा गया था कि काश्मीर भारत में मिल चुका है और यह कि राज्य में सम्मिलित सरकार की स्थापना से राज्य का प्रशासन पंगु हो जायगा। प्रस्ताव में इसका भी विचार नहीं रखा गया था कि बाह्य आक्रमण से राज्य को बचाने की ज़िम्मेदारी भारत की है। अन्ततः प्रस्ताव द्वारा जनमत प्रशासक को बहुत व्यापक अधिकार दे दिए गए थे, जैसे, पाकिस्तान से सीधे बात करने का अधिकार। भारत की दृष्टि में इस प्रकार के अधिकार से भारत और पाकिस्तान को एक स्तर पर ले आया गया था।

आयंगर ने १९ अप्रैल को परिषद् की २८५वीं बैठक में स्पष्ट किया कि इस प्रस्ताव से भारत सन्तुष्ट नहीं है। उन्होंने बताया कि काश्मीर का अधिमिलन वैध है और जब तक जनमत पाकिस्तान के पक्ष में नहीं जाता काश्मीर भारत का अंग बना रहेगा। इसलिए पाकिस्तान को जनमत में भाग लेने का कोई अधिकार नहीं है।

पाकिस्तान ने भी प्रस्ताव का विरोध किया। सर ज़फरुल्ला ने कहा कि कुछ बातें, जैसे राज्य में निष्पक्ष प्रशासन हो, जनमत स्वतंत्र हो, सभी नियमित और अनियमित सैनिक राज्य से हटा लिए जाएं और इसमें दोनों देशों का सहयोग लिया जाए,

पहले ही तय हो चुकी हैं लेकिन उनको प्रस्ताव में समाविष्ट नहीं किया गया है। प्रस्ताव एकपक्षीय है। पाकिस्तान को अपना दायित्व निभाने के लिए अपनी फौजें राज्य में भेजनी पड़ेंगी और युद्धबन्दी के लिए यह आवश्यक है कि भारत की फौजें सम्मत रेखा से आगे न बढ़ें। विधि और व्यवस्था की स्थापना केवल भारत की फौजों का ही उत्तरदायित्व नहीं होना चाहिए। ज़फ़रुल्ला ने अंतरिम सरकार में नेशनल कान्फरेन्स, मुस्लिम कान्फरेन्स और आज़ाद काश्मीर के प्रतिनिधियों को भी शामिल करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। उन्होंने यह भी कहा कि जनमत के दौरान केवल भारतीय फौजों के इस्तेमाल से वे लोग भयभीत हो जाएंगे जो पाकिस्तान के पक्ष में अपना मत देना चाहते हैं।

पाकिस्तान ने प्रस्ताव में संशोधन का सुझाव दिया जिसका मुख्य अभिप्राय यह था कि मुस्लिम बहुसंख्यक क्षेत्रों में पाकस्तानी फौज और गैरमुस्लिम क्षेत्रों में भारतीय फौज रखी जाए और भारतीय फौज को आगे न बढ़ने दिया जाए। इस आशय के भी संशोधन का प्रस्ताव किया गया कि आयोग की बैठकों में दोनों सरकारों के प्रतिनिधि भाग लें।

परिषद् में जो विभिन्न स्पष्टीकरण दिए गए उनमें आज़ाद काश्मीर के अधीन क्षेत्र में पाकिस्तानी फौज के इस्तेमाल किए जाने का अधिकार स्वीकृत कर लिया गया। भारत सरकार ने इस प्रस्ताव के बारे में अपनी अस्वीकृति ७ मई, सन् १९४८ को अपने प्रतिनिधि के माध्यम से परिषद् के प्रेसीडेण्ट के पास भेज दी। भारत सरकार ने प्रस्ताव के विभिन्न पैराग्राफों को कार्यान्वित करने में अपनी असमर्थता प्रकट की, किन्तु यह कहा कि यदि परिषद् आयोग को भारत भेजती है तो भारत सरकार को उससे बात करने में आपत्ति न होगी।

पाकिस्तान ने ३० अप्रैल, सन् १९४८ को इस आशय की एक टिप्पणी प्रेसीडेण्ट को भेजी कि पाकिस्तान की दृष्टि में प्रस्ताव नाकाफी है और इसलिए अस्वीकार्य है। पाकिस्तान ने विरोध करते हुए आयोग में अर्जेण्टाइना को सदस्य के रूप में नामित किया, भारत द्वारा चेकोस्लोवाकिया नामित किया गया था। पाकिस्तान ने यह आशा व्यक्त की कि अन्य सदस्य शीघ्र ही नामित हो जाएंगे।

भारत तथा पाकिस्तान द्वारा प्रस्ताव के अस्वीकृत किए जाने पर परिषद् के कुछ सदस्य विशेषकर अमेरिका के बारेन आस्टिन बहुत बिगड़े। आस्टिन ने कहा कि ये दोनों देश अपने उत्तरदायित्व को नहीं समझते हैं और परिषद् का अमूल्य समय नष्ट करते हैं। ऐसा प्रतीत होता था कि परिषद् के अधिकांश सदस्य भारत और पाकिस्तान को भार-स्वरूप समझते थे। परिषद् के प्रति भारत की उदासीनता और बढ़ गई जब ३ जून, सन् १९४८ को परिषद् ने सीरिया का यह प्रस्ताव मान लिया कि "आयोग पाकिस्तानी विदेश मंत्री के १५ जनवरी, सन् १९४८ के पत्र में उल्लिखित विषयों का और अध्ययन करेगा और उन पर सुरक्षा परिषद् को रिपोर्ट देगा।" ५ जून को पं० नेहरू ने परिषद् के प्रेसीडेण्ट को इसके विरोध में पत्र लिखा और कहा कि आयोग का विचार-क्षेत्र बढ़ाने पर भारत सरकार क्षोभ प्रकट करती है और काश्मीर से

सम्बन्धित प्रस्ताव के आयोग द्वारा कार्यान्वियन का कोई प्रश्न उस समय तक नहीं उठता जब तक कि भारत द्वारा की गई आपत्तियां दूर नहीं की जातीं। यदि आयोग भारत आना चाहता है तो भारत सरकार यह जानना चाहेगी कि वह किन विषयों पर बात करेगा। पाकिस्तान ने सदा की तरह भारत के इस पत्र का विरोध किया और ८ जून, सन् १९४८ को एक बयान जारी किया जिसमें कहा गया कि यह आश्चर्य की बात है कि आयोग को सभी महत्त्वपूर्ण विषयों की जांच कराने का प्राधिकार क्यों नहीं दिया गया।

परिषद् के प्रेसीडेण्ट ने यह स्पष्ट किया कि २९ जनवरी, सन् १९४८ और २१ अप्रैल, सन् १९४८ के प्रस्तावों के अनुसार काश्मीर के प्रश्न को प्राथमिकता दी जाएगी।

इस प्रकार भारत और पाकिस्तान की आपत्तियों के बावजूद आयोग स्थापना से सम्बन्धित प्रस्ताव पारित हो गया।

अध्याय ७

आयोग का कार्य

आयोग में पांच सदस्य थे—चेकोस्लोवाकिया, अर्जेण्टाइना, बेल्जियम, कोलम्बिया और संयुक्त राज्य अमेरिका। चेकोस्लोवाकिया भारत द्वारा और अर्जेण्टाइना पाकिस्तान द्वारा नामित किए गए थे। शेष तीन सदस्य परिषद् द्वारा नामित किए गए थे।

आयोग ७ जुलाई, सन् १९४८ को कराची पहुंचा। आयोग के विचार-विषय २० जनवरी, २१ अप्रैल और ३ जून, सन् १९४८ के संकल्पों में निर्धारित किए गए थे। जनवरी के संकल्प द्वारा आयोग से कहा गया था कि वह चार्टर के आर्टिकल ३४ के अनुसार तथ्यों की जांच करे, मध्यस्थता द्वारा ऐसे उपाय करे जिससे कठिनाइयां दूर हों, परिषद् के निदेशों को कार्यान्वित करे और उनके कार्यान्वयन के सम्बन्ध में परिषद् को सूचना दे। अप्रैल के संकल्प द्वारा आयोग से अपेक्षा की गई थी कि वह तुरन्त उपमहाद्वीप जाएगा, काश्मीर में शांति और व्यवस्था पुनःस्थापित किए जाने के लिए और दोनों सरकारों द्वारा एक दूसरे के सहयोग से और आयोग के सहयोग से जनमत लिए जाने के वास्ते अपनी सेवाएं दोनों डोमिनियनों की सरकारों को उपलब्ध करेगा और जनमत-संग्रह के अन्त में यह प्रमाणित करेगा कि जनमत निष्पक्ष रूप से लिया गया है या नहीं। जून के संकल्प द्वारा आयोग को निदेश दिया गया था कि वह पहले के संकल्पों द्वारा निर्दिष्ट कार्यों को निष्पादित करने के लिए तत्काल विवादास्पद क्षेत्र में जाएगा और उपयुक्त समय पर १५ जनवरी की पाकिस्तान की जवाबी शिकायत में उल्लिखित बातों पर विचार करेगा।

आयोग पाकिस्तान के विदेश मंत्री से मिला और पहली ही बैठक में ज़फ़रुल्ला खां ने आयोग को सूचित किया कि मई सन् १९४८ में काश्मीर में नियमित पाकिस्तानी फौज की तीन ब्रिगेड मौजूद हैं। ज़फ़रुल्ला खां का कहना था कि ये ब्रिगेड आत्म-रक्षार्थ, नहर-पानी को बचाने और पाकिस्तान की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए भेजी गई थीं। उन्होंने बताया कि सैनिक और राजनीतिक दृष्टि से आज़ाद काश्मीर की फौजों की रक्षा-रेखा को सुदृढ़ करने के लिए उन ब्रिगेडों का भेजा जाना आवश्यक था। वास्तव में फौजों को काश्मीर में भेजने के तीन कारण बताए गए :

(१) पाकिस्तान के प्रदेश को भारतीय सेना द्वारा संभाव्य आक्रमण से

बचाना।

(२) काश्मीर में भारत द्वारा सम्पन्न कार्य की आशंका, और

(३) पाकिस्तान में शरणार्थियों की बाढ़ को रोकना।

बातचीत के दौरान काश्मीर में ब्रिगेड भेजने के दो और कारण बताए गए—यह कि कहीं पठानिस्तान-आंदोलन से भारत सम्पर्क स्थापित न कर ले और भारत तथा अफगानिस्तान मिलकर पाकिस्तान के खिलाफ कोई पिन्सर अभियान न प्रारम्भ कर दें।

काश्मीर में नियमित पाकिस्तानी फौज भेजने के जो कारण पाकिस्तान ने आयोग को बताए उनमें से कोई भी न्यायोचित कारण नहीं कहा जा सकता। जहां तक पाकिस्तान के प्रदेश को भारतीय सेना द्वारा सम्भाव्य आक्रमण से बचाने का प्रश्न है, यह अधिकार उसी समय प्रयोग में लाया जा सकता है जब आत्मरक्षा का प्रश्न निहित हो। सशस्त्र बल का प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ में अवैध है जब तक कि ऐसा करने का कोई विशेष कारण न हो। निवारक उपाय उसी समय किए जा सकते हैं जब आक्रमण का भय स्पष्ट हो या आक्रमण आसन्न हो और यदि यह आशंका हो कि आक्रमण हो सकता है तो दूसरे राज्य में अपनी फौजों को भेजना वास्तव में उस राज्य के प्रति आक्रमणकारी कार्यवाही करना होगा। चार्टर के आर्टिकल ५१ के अधीन आत्मरक्षा के अधिकार की मान्यता दी गई है किन्तु चार्टर के अधीन यह अधिकार उसी समय इस्तेमाल किया जा सकता है जब कोई सशस्त्र आक्रमण किया जाए। चार्टर का आर्टिकल निम्न प्रकार है:

> वर्तमान चार्टर में किसी भी बात से किसी व्यक्ति या समूह के आत्मरक्षा के अधिकार पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा यदि संयुक्त राष्ट्र के किसी सदस्य के खिलाफ कोई सशस्त्र आक्रमण होता है, जब तक कि सुरक्षा परिषद् अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए आवश्यक उपाय नहीं कर लेती, यदि सदस्य आत्मरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हैं तो उसकी उन्हें सुरक्षा परिषद् को तुरन्त सूचना देनी चाहिए।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि किसी आसन्न आक्रमण के खिलाफ निवारक कार्यवाही करने का अधिकार सीमित है। केवल यह अधिकार उस समय प्रयोग किया जा सकता है जब सशस्त्र आक्रमण हो। ऐसा अधिकार उस समय समाप्त हो जाता है जब सुरक्षा परिषद् अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए आवश्यक उपाय कर लेती है।

चूंकि सुरक्षा परिषद् के सामने काश्मीर का मामला विचाराधीन था और उस पर सुरक्षा परिषद् उचित कार्य कर रही थी, इसलिए पाकिस्तान द्वारा कोई फौज काश्मीर में भेजना अन्तर्राष्ट्रीय नियमों के विरुद्ध था, और भारत के विरुद्ध, जिसका काश्मीर एक अंग था, आक्रमण था। यह बिलकुल स्पष्टहै कि भारत सरकार पाकिस्तान पर आक्रमण नहीं कर रही थी और न आक्रमण करने का उसका कोई विचार ही था, बल्कि काश्मीर पर आक्रमण किए जाने के बाद भी काश्मीर-समस्या को हल करने के

लिए भारत सरकार ने अनेक प्रयास किए। उसने पाकिस्तान सरकार से कितनी बार अपील की कि वह आक्रमणकारियों को कोई सहायता न दे, किन्तु पाकिस्तान ने उसकी किसी भी अपील पर कोई ध्यान नहीं दिया। बाध्य होकर भारत सरकार को पाकिस्तान के खिलाफ सुरक्षा परिषद् में शिकायत करनी पड़ी। फिर पाकिस्तान का यह कर्त्तव्य हो जाता था कि अपनी फौजें काश्मीर में भेजने के तुरन्त बाद सुरक्षा परिषद् को सूचना देता किन्तु उसने कोई ऐसी बात नहीं की।

पाकिस्तान की दूसरी दलील, कि चूंकि काश्मीर में भारत द्वारा सम्पन्न कार्य की आशंका थी उसने अपनी फौजें काश्मीर में भेजीं, न्यायोचित नहीं है। काश्मीर के शासक ने अधिमिलन-लेख पर हस्ताक्षर कर दिया था। भारत के गवर्नर-जनरल ने भारत में काश्मीर के अधिमिलन को स्वीकार कर लिया था। यह स्वयंसम्पन्न कार्य हो गया था, जहां तक काश्मीर का सवाल था। काश्मीर अधिमिलन-लेख के स्वीकार किए जाने के फलस्वरूप भारत का एक अभिन्न अंग बन गया था। भारत के उस अधीन अंग पर आक्रमण हुआ था और पाकिस्तान द्वारा आक्रमणकारी को मदद न दिए जाने की भारत की अपील को ठुकरा दिया गया था। फलस्वरूप भारत को सुरक्षा परिषद् में अपनी शिकायत लेकर जाना पड़ा था। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि जहां तक काश्मीर का सम्बन्ध है यह सम्पन्न कार्य था। अतएव इस सम्पन्न कार्य को बचाने के लिए पाकिस्तान की फौजों का काश्मीर में जाना अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि में न्यायोचित नहीं कहा जा सकता। कदाचित् पाकिस्तान ने अपनी फौजें काश्मीर में इसलिए भेजी थीं कि भारत सरकार काश्मीर से कबाइलियों को, पाकिस्तानी राष्ट्रिकों को और अनियमित सैनिकों को, जो लड़ने की गरज से काश्मीर में घुसे थे काश्मीर राज्य से न निकाल सके। यदि ऐसा था तो पाकिस्तान की कार्यवाही काश्मीर के प्रति आक्रमणपूर्ण थी। और पाकिस्तान चाहता था कि काश्मीर में कबाइली आदि बराबर लड़ते रहें। अन्तर्राष्ट्रीय कानून या चार्टर के अधीन पाकिस्तान को ऐसा कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। फिर जब सुरक्षा परिषद् में यह मामला विचाराधीन था और भारत की शिकायतों की जांच करने के लिए आयोग का गठन हो गया था और वह उपमहाद्वीप जा रहा था तो सुरक्षा परिषद् की स्वीकृति के बिना किसी विदेशी राज्य में फौजें भेजने का अधिकार पाकिस्तान को प्राप्त नहीं था।

इसी प्रकार पाकिस्तान का यह भी तर्क निस्सार है कि उसने पाकिस्तान में शरणार्थियों की बाढ़ को रोकने के लिए काश्मीर में अपनी फौजें भेजीं। यदि यह मान लिया जाए कि पाकिस्तान को ऐसा कोई हक था तो उसका यह अर्थ हुआ कि पूर्वी पाकिस्तान से शरणार्थियों को भारत में आने से रोकने के लिए भारत को पूर्वी पाकिस्तान में अपनी फौजों को भेजने का अधिकार प्राप्त था। इसी प्रकार तिब्बत से तिब्बती शरणार्थियों को आने से रोकने के लिए भारत अपनी फौजें तिब्बत भेज सकता था। अमेरिका और दूसरे पश्चिमी राष्ट्र अपनी फौजें हंगरी से शरणार्थियों को अपने प्रदेशों में आने से रोकने के लिए अपनी फौजें भेज सकती थीं। भारत के विभाजन के बाद पाकिस्तान से ७०-८० लाख शरणार्थी भारत में आए और भारत से पाकिस्तान में गए

लेकिन किसीने शरणार्थियों को रोकने के लिए अपनी फौजें दूसरे देश में नहीं भेजीं। इसलिए शरणार्थियों को रोकने के लिए पाकिस्तान द्वारा काश्मीर में अपनी फौजें भेजना वस्तुतः अन्तर्राष्ट्रीय नियम के विरुद्ध था।

इस प्रश्न पर कि पाकिस्तान ने काश्मीर में अपनी फौजें भेजने की सूचना इतनी देर से क्यों दी पाकिस्तान का कहना है कि चूंकि संयुक्त राष्ट्र आयोग कराची आने ही वाला था इसलिए उसने यह सोचा कि वह मौके पर यह सूचना देगा। यह बिलकुल निरर्थक है। अगर पाकिस्तान का यह कहना मान लिया जाए कि मई, सन् १९४८ में उसने अपनी फौजें काश्मीर में भेजी थीं, तो भी उसे इसकी सूचना परिषद् को देनी चाहिए थी क्योंकि आयोग का कार्य-क्षेत्र क्या होगा इस सम्बन्ध में परिषद् में ३ जून को भी बहस हो रही थी। यदि आयोग इस बात को स्पष्ट रूप से कह देता और सुरक्षा परिषद् पाकिस्तान की इसके लिए निन्दा करती तो सम्भव है स्थिति में कुछ सुधार आ जाता। जब आयोग दिल्ली में आया तो भारत सरकार के विदेश मंत्रालय के सेक्रेटरी-जनरल सर गिरिजाशंकर वाजपेयी ने आयोग को बताया कि उसका यह घोषित करना कि पाकिस्तान इस मामले में दोषी है बहुत ज़रूरी है। उन्होंने कहा यदि पाकिस्तान ने भारत के खिलाफ अघोषित युद्ध किया है तो संयुक्त राष्ट्र का यह कर्तव्य है कि वह लड़ाई-बन्दी की मांग करे और पाकिस्तान से स्पष्ट रूप से कहे कि वह अपनी फौजें और अनियमित सैनिकों को काश्मीर से हटा ले, आक्रमणकारियों को मदद देना बन्द कर दे। वाजपेयी ने आयोग से यह भी कहा कि यदि हिंसात्मक उपायों द्वारा जम्मू और काश्मीर में भविष्य का निर्धारण करने के लिए पाकिस्तान इच्छुक है तो हम यह बता देना चाहते हैं कि भारत ने जनमत लेने के लिए जो अपनी सहमति दी थी उसे वह वापस ले लेगी; यदि पाकिस्तान बलपूर्वक इस सम्बन्ध में निर्णय लेना चाहता है और निर्णय पाकिस्तान के खिलाफ जाता है तो वह अपने पक्ष में निर्णय के लिए संयुक्त राष्ट्र की सहायता नहीं ले सकता। लड़ाई-बन्दी के बाद और शांति स्थापित होने के बाद ही काश्मीर के लोगों को स्वतंत्रता होगी कि वे अपनी आंतरिक सरकार के स्वरूप के बारे में निर्णय लें और यह निर्णय लें कि भारत से उनके क्या सम्बन्ध होंगे। इस निर्णय लेने की प्रक्रिया में पाकिस्तान कोई भाग नहीं ले सकता।

पाकिस्तान और भारत से बातचीत करने पर आयोग को यह स्पष्ट हो गया कि दोनों देशों के दृष्टिकोण बहुत ही मुख्तलिफ हैं। पाकिस्तान के विदेश मंत्री नहीं चाहते थे कि बिना शर्त लड़ाई-बन्दी हो। वे चाहते थे कि भारतीय फौजें भी काश्मीर से हटा ली जाएं, काश्मीर में मुसलमान जनता को पर्याप्त संरक्षण दिया जाए और आज़ाद काश्मीर की सरकार का भी मत लिया जाए। भारत का कहना था कि लड़ाई-बन्दी के लिए यह ज़रूरी है कि पाकिस्तानी फौज पूरी हटा ली जाए।

आयोग ने यह अनुभव किया कि कदाचित् जनमत काश्मीर समस्या का समाधान नहीं कर सकता इसलिए आयोग ने काश्मीर के विभाजन पर भी विचार करना चाहा। पाकिस्तान के वित्त मंत्री गुलाम मुहम्मद ने आयोग को बताया कि यदि विभाजन किया जाता है तो पाकिस्तान पूर्वी जम्मू के हिस्से के अलावा भारत को कुछ भी

देने को तैयार नहीं होगा। पंडित नेहरू ने यह मत व्यक्त किया कि यदि जम्मू-काश्मीर राज्य भारत और पाकिस्तान में बांट दिया जाता है तो वे आपत्ति नहीं करेंगे। किन्तु ज़फ़रुल्ला खां ने कहा कि किसी भी तरीके से काश्मीर के विभाजन के लिए उनकी सरकार राजी नहीं होगी। इसलिए काश्मीर-विभाजन का विचार आयोग को छोड़ देना पड़ा। आयोग ने काश्मीर-समस्या पर अपना पहला प्रस्ताव रखा। यह प्रस्ताव १३ अगस्त, सन् १९४८ के प्रस्ताव के नाम से विख्यात है। यह प्रस्ताव ३ भागों में विभाजित था। पहले भाग में लड़ाई-बन्दी के बारे में कहा गया था और दोनों देशों से अपेक्षा की गई थी कि वे (क) अलग-अलग और एक साथ यथाशीघ्र लड़ाई-बन्दी के आदेश जारी करें। (ख) अपने नियंत्रण के अधीन सैनिक ताकत बढ़ाने के लिए फौजों में कोई वृद्धि न करें। (ग) फौजों की तैनाती में परिवर्तन करने के सिलसिले में आपस में बातचीत करें। यह भी कहा गया था कि आयोग सैनिक प्रेक्षक नियुक्त करेगा जो लड़ाई-बन्दी की देख-रेख करेंगे। इस भाग में यह भी व्यवस्था की गई थी कि दोनों सरकारें अपने लोगों से अनुरोध करेंगी कि वे लोग मैत्रीपूर्ण वातावरण बनाए रखने के लिए सहायता दें। भाग २ में संधि-करार-नामों के सिद्धांतों का उल्लेख किया गया था। आयोग ने काश्मीर में पाकिस्तान द्वारा फौजें भेजे जाने के सम्बन्ध में पहली बार अपनी राय जाहिर की। उसने कहा :

> जम्मू और काश्मीर राज्य में पाकिस्तानी फौजों की उपस्थिति से स्थिति में सारवान् परिवर्तन हो गया है जो पाकिस्तान ने पहले सुरक्षा परिषद् के सामने रखी थी, इसलिए पाकिस्तान सरकार राज्य से अपनी फौजें हटाने के लिए सहमत है।

इस भाग में यह भी कहा गया कि कबाइलियों और पाकिस्तानी राष्ट्रिकों को काश्मीर से हटाने के लिए पाकिस्तान सरकार भरसक प्रयत्न करेगी और काश्मीर में खाली किए हुए भागों का प्रशासन आयोग की देख-रेख में स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा किया जाएगा। इसी भाग के अंश (ख) में भारत सरकार से अपेक्षा की गई थी कि,

(१) आयोग द्वारा यह सूचित किए जाने पर कि कबाइली और पाकिस्तानी राष्ट्रिक काश्मीर राज्य से हट गए हैं और फलतः वह स्थिति जिसकी भारत सरकार ने संयुक्त राष्ट्र से शिकायत की थी समाप्त हो गई है, जिसके कारण जम्मू और काश्मीर राज्य में भारतीय फौजों को रखना पड़ा है, और जम्मू और काश्मीर राज्य से पाकिस्तानी फौजें हटाई जा रही हैं, अपनी रजामंदी जाहिर करती कि वह ऐसे प्रक्रमों में जो कमीशन द्वारा तय हो अपनी अधिकांश फौजें हटा लेगी।

(२) जब तक जम्मू और काश्मीर राज्य की समस्या का अन्तिम समाधान नहीं हो जाता और शर्तें स्वीकृत नहीं हो जातीं, वह लड़ाई-बन्दी रेखा के अन्दर कम से कम संख्या में अपनी फौजें रखेगी, जो शांति और व्यवस्था बनाए रखने के लिए स्थानीय प्राधिकारियों को सहायतार्थ देना आयोग की सहमति से आवश्यक हो। आयोग जहां कहीं भी आवश्यक समझेगा अपने प्रेक्षक नियुक्त करेगा।

(३) वह यह सुनिश्चित करेगी कि जम्मू और काश्मीर राज्य की सरकार यह सार्वजनिक रूप से प्रख्यापित करती है कि शांति, विधि और व्यवस्था राज्य में कायम रखी जाएगी, और सभी राजनीतिक अधिकार सुरक्षित रखे जाएंगे।

भाग ३ में जनमत के सम्बन्ध में कहा गया था और दोनों सरकारों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे इसका प्रतिज्ञान करेंगे कि राज्य का भविष्य राज्य के लोगों की इच्छा के अनुसार तय किया जाएगा और इस प्रस्ताव के स्वीकृत किए जाने पर दोनों सरकारें न्याययुक्त और न्यायोचित जनमत लिए जाने के लिए आयोग से परामर्श करेंगी।

इस प्रस्ताव में इस बात पर विशेष ज़ोर दिया गया था कि लड़ाई-बन्दी की जाए; जब तक संधि नहीं हो जाती जनमत नहीं लिया जा सकता, पाकिस्तान को पहले अपनी फौजें और कबाइली हटाने पड़ेंगे और जब आयोग द्वारा यह सूचना प्राप्त हो जाए कि पाकिस्तानी फौजें हटा ली गई हैं तो भारत अपनी अधिकांश फौजों को हटाना शुरू करेगा। इस प्रस्ताव में जम्मू और काश्मीर राज्य के प्रभुत्वसम्पन्न अधिकारों को स्वीकार किया गया था और सबसे बड़ी बात यह थी कि इस संकल्प द्वारा भारत और पाकिस्तान को एक स्तर पर नहीं रखा गया था, बल्कि आयोग द्वारा यह स्वीकार कर लिया गया था कि काश्मीर राज्य में पाकिस्तानी फौजों की उपस्थिति से स्थिति में परिवर्तन हो गया है।

भारत सरकार ने इस संकल्प को २० अगस्त, सन् १९४८ को स्वीकार कर लिया और पाकिस्तान ने इसे अस्वीकृत कर दिया। स्वीकार करने से पहले भारत सरकार ने आयोग से कुछ स्पष्टीकरण और आश्वासन की अपेक्षा की। यह स्पष्टीकरण और आश्वासन बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि उन्हीं स्पष्टीकरण और आश्वासन के आधार पर भारत सरकार ने १३ अगस्त, सन् १९४८ के संकल्प को स्वीकार किया था। यदि इस संकल्प से स्पष्टीकरण और आश्वासन हटा लिए जाते हैं तो इस संकल्प की कोई वैधता नहीं रह जाती। भारत ने जिन आश्वासनों की अपेक्षा की थी और आयोग ने जिन आश्वासनों को दिया था वे इस प्रकार हैं:

(१) जम्मू और काश्मीर सरकार की सर्वोच्च सत्ता पर कोई आक्षेप नहीं किया जा सकता।

(२) आज़ाद काश्मीर सरकार को कोई मान्यता नहीं दी जा सकती।

(३) पाकिस्तान के कब्ज़े में जो प्रदेश है वह राज्य के अहित में एकीकृत नहीं किया जा सकता।

(४) जम्मू और काश्मीर राज्य की सुरक्षा का उत्तरदायित्व भारत सरकार पर है।

(५) प्रस्तावित जनमत के संचालन में पाकिस्तान का कोई हिस्सा न होगा।

(६) उत्तरी काश्मीर के जिन क्षेत्रों से पाकिस्तानी फौजें और कबाइली इत्यादि हटा लिए जाते हैं उनका प्रशासन जम्मू और काश्मीर राज्य

की सरकार द्वारा किया जाएगा और उनकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व भारत सरकार पर होगा। यदि आवश्यक हुआ तो कबाइलियों द्वारा घुसपैठ को रोकने के लिए और भारत को जाने वाले मुख्य व्यापार-मार्ग की रक्षा के लिए भारत गैरिजन रखेगा।

पाकिस्तान ने १९ अगस्त को एक ज्ञापन आयोग को दिया और उसमें बहुत-से प्रश्न उठाए। पाकिस्तान की आपत्तियां इस प्रकार थीं :

(१) आज़ाद काश्मीर सरकार की सहमति प्राप्त करना आवश्यक है क्योंकि अपनी फौजों को लड़ाई-बन्दी का आदेश वही सरकार दे सकती है। दूसरे शब्दों में, आज़ाद काश्मीर को मान्यता दी जानी चाहिए।

(२) २१ अप्रैल और १३ अगस्त के संकल्पों की प्रस्तावना में परिवर्तन था। २१ अप्रैल के संकल्प की प्रस्तावना में शब्द 'विवाद' का प्रयोग किया गया था, जहां तक भारत और पाकिस्तान में राज्य के अधि-मिलन का प्रश्न है, किन्तु १३ अगस्त के संकल्प की प्रस्तावना में वाक्य 'स्थिति के अन्तिम निस्तारण' का ज़िक्र किया गया है।

(३) सैनिक प्रेक्षकों की तैनाती के सम्बन्ध में जो कहा गया है वह अस्पष्ट है।

(४) संकल्प में भारत की सैनिक शक्ति और राज्य में उसकी आक्रमणकारी कार्यवाहियों का कोई ज़िक्र नहीं है।

(५) पाकिस्तान और आज़ाद काश्मीर के विरुद्ध नियमित या अनियमित सेनाओं द्वारा आक्रमणकारी कार्यवाहियों को रोकने के लिए किसी अन्तर्राष्ट्रीय या निष्पक्ष फौज की व्यवस्था की जाएगी या नहीं — इस बारे में कुछ नहीं कहा गया है।

(६) इसके पूर्व कि कबाइली हटाए जाएं यह आवश्यक है कि उनको आश्वासन दिया जाए कि राज्य में मुसलमानों की सुरक्षा की जाएगी और अन्ततः जनमत लिया जाएगा।

(७) संकल्प में राज्य से सिख व राष्ट्रीय स्वयंसेवकों को हटाने की कोई बात नहीं कही गई।

(८) काश्मीर के जिन भागों से कबाइली और पाकिस्तानी फौजें हटा ली जाएंगी उनके बारे में कहा गया है कि वे आयोग की देख-रेख में स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा प्रशासित किए जाएंगे जब कि अन्य भागों के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा गया है।

(९) यह नहीं बताया गया कि काश्मीर में भारतीय सशस्त्र फौजें रखना क्यों आवश्यक है जब कि पाकिस्तानी फौजों को ऐसे क्षेत्र से हटाने के लिए कहा जा रहा है जहां जनता चाहती है कि वे फौजें उनकी सुरक्षा के लिए रहें।

(१०) आयोग किस प्रकार यह सुनिश्चित करेगा कि पाकिस्तानी फौजें और

अधिकांश भारतीय फौजें साथ-साथ राज्य से हटें।

(११) आयोग किस प्रकार आज़ाद काश्मीर की देख-रेख रखेगा। आज़ाद काश्मीर की फौजों को बरकरार रखना चाहिए।

(१२) विधि और व्यवस्था कायम करने के लिए क्या स्थानीय फौजें रखी जाएंगी और क्या आवश्यकता पड़ने पर भारत और पाकिस्तान दोनों से फौजें मंगाई जाएंगी, जैसा कि २१ अप्रैल के संकल्प में कहा गया था।

(१३) अधिमिलन के प्रश्न पर न्यायपूर्ण जनमत लिए जाने के लिए यह आवश्यक है कि राज्य में निष्पक्ष सरकार हो।

आयोग ने पाकिस्तान की प्रत्येक आपत्ति का जवाब दिया और अनेक बातों के बारे में कहा कि पाकिस्तान के दृष्टिकोण से वे सहमत नहीं हैं। भारतीय फौजें राज्य में रहेंगी और आयोग उनपर कोई विशेष नियंत्रण नहीं करना चाहता।

६ सितम्बर, सन् १९४८ को पाकिस्तान ने आयोग को एक औपचारिक उत्तर भेजा। उसमें यह कहा गया कि यह उत्तर पाकिस्तान सरकार का है, आज़ाद काश्मीर का नहीं, जिसके प्रतिनिधियों से अलग से बात करनी होगी। इसपर भी ज़ोर दिया गया कि आज़ाद प्रदेश आज़ाद काश्मीर सरकार के नियंत्रण में रहे और आज़ाद काश्मीर की फौजों को न तो भंग किया जाए और न निःशस्त्र किया जाए। जहां तक जनमत का सम्बन्ध है, पाकिस्तान ने कहा, भारत और पाकिस्तान दोनों बराबर स्तर पर रखे जाएं। यह भी कहा गया कि राज्य में भारतीय फौजों की उपस्थिति जनमत के किए हानिकर होगी।

पाकिस्तान ने अपने उत्तर में इतनी ज़्यादा बातें कही थीं और इतनी शर्तें लगाई थीं कि आयोग ने उसके उत्तर को अपने संकल्प को अस्वीकार किया जाना समझा। आयोग ने यह आशा प्रकट की कि पाकिस्तान दुबारा विचार करेगा और इस संकल्प को स्वीकार कर लेगा। २१ सितम्बर को आयोग अपनी पहली रिपोर्ट तैयार करने के लिए जेनेवा चला गया और उसने २२ नवम्बर, सन् १९४८ को अपनी रिपोर्ट पेश की। भारत और पाकिस्तान के बीच सहमति प्राप्त करने का आयोग का प्रथम प्रयास विफल हो गया।

पहली अंतरिम रिपोर्ट पेश करने के बाद आयोग ने पेरिस में भारतीय और पाकिस्तानी प्रतिनिधियों से एक अनुपूरक संकल्प तैयार करने के लिए बातचीत की। पाकिस्तान का यह कहना था कि भारत पहले यह स्वीकार कर ले कि वह राज्य में जनमत लेगा। आयोग के प्रयास से दोनों पक्ष एक सैनिक परामर्शक की नियुक्ति के लिए तैयार हो गए थे।

२५ नवम्बर, सन् १९४८ को सुरक्षा परिषद् में काश्मीर के बारे में फिर बहस हुई और उसमें भारत और पाकिस्तान से सभी सदस्यों ने यह अनुरोध किया कि काश्मीर में लड़ाई बन्द कर दी जाए और ऐसी बात न की जाए जिससे स्थिति और गम्भीर हो जाए और बातचीत आपस में न हो सके। एक अनुपूरक संकल्प तैयार किया गया। उसमें यह कहा गया कि जनमत द्वारा राज्य के अधिमिलन का प्रश्न तय किया

जाएगा, जनमत उसी समय होगा जब १३ अगस्त के संकल्प के भाग १ और २ कार्यान्वित हो जाएंगे और जनमत-संग्रह के सभी इंतज़ाम पूरे हो जाएंगे; सेक्रेटरी-जनरल जनमत प्रशासक को नामित करेगा और राज्य सरकार उसको नियुक्त करेगी; उसे अपने कर्मचारी, सहायक और प्रेक्षक नियुक्त करने का अधिकार होगा। उसमें बाकी वही सब बातें कही गई थीं जो २१ अप्रैल के संकल्प में थीं। भारत ने इस बात पर ज़ोर दिया कि जनमत लिए जाने से पूर्व १३ अगस्त के संकल्प के भाग १ और २ का कार्यान्वियन आवश्यक है। आयोग ने भारत को आश्वासन दिया कि जनमत प्रशासक सामान्य प्रशासन, विधि एवं व्यवस्था के स्थापन में राज्य सरकार के अधिकारों का प्रयोग नहीं करेगा; आज़ाद काश्मीर की फौजों का निःशस्त्रीकरण किया जाएगा, पाकिस्तान जाकर आयोग पाकिस्तान में काम करेगा न कि काश्मीर के किसी भाग में, राज्य सरकार यह तय करेगी कि कोई व्यक्ति काश्मीर राज्य में विधिक प्रयोजनों के लिए प्रविष्ट हुआ है या नहीं और विधि एव व्यवस्था के अपराधियों को राज्य-अपराधी नहीं समझा जाएगा।

आयोग ने पाकिस्तान को भी कुछ आश्वासन दिए। आश्वासन थे कि यथाशीघ्र जनमत प्रशासक चुना जाएगा, उसके चुनाव से पहले भारत और पाकिस्तान से सलाह ली जाएगी, किन्तु इस सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी-जनरल लेंगे। वह जम्मू और काश्मीर सरकार का कर्मचारी न होगा और न उसके नियंत्रण में काम करेगा। वह जनमत लेने और लोगों को स्वतंत्रता और निष्पक्षता से अपना मत देने के लिए सभी आवश्यक कार्यवाही करेगा और अपने अधिकारों का प्रयोग करेगा। आयोग ने स्पष्ट रूप से बता दिया कि जनमत के प्रस्तावों पर उस समय तक बातचीत नहीं हो सकती जब तक कि संधि के करारनामे पर हस्ताक्षर नहीं हो जाते और आयोग इससे संतुष्ट नहीं हो जाता कि १३ अगस्त के संकल्प के भाग २ का कार्यान्वियन संतोषजनक रूप से हो रहा है।

इन स्पष्टीकरणों के बाद भारत और पाकिस्तान ने अनुपूरक संकल्पों को स्वीकार कर लिया। भारत ने अपनी स्वीकृति २३ दिसम्बर को और पाकिस्तान ने अपनी स्वीकृति २५ दिसम्बर को दी। दोनों सरकारों ने पहली जनवरी, सन् १९४९ को मध्य रात्रि से एक मिनट पहले से लड़ाई-बन्दी कराये जाने के आदेश निर्गत कर दिए। इस प्रकार आयोग लड़ाई-बन्दी के प्रयास में सफल हो गया। अब प्रश्न भारत और पाकिस्तान के बीच वास्तविक लड़ाई का नहीं था बल्कि यह था कि आगे लड़ाई होने को कैसे बचाया जाए और जो आक्रमणकारी कार्यवाहियां की जा चुकी हैं उनको कैसे निरस्त किया जाए जिससे काश्मीर के लोग अपने भविष्य का निर्णय खुद कर सकें।

इस सम्बन्ध में कहा जाता है कि लड़ाई-बन्दी का श्रेय आयोग को नहीं था, बल्कि भारत को था, क्योंकि भारत के कमाण्डर-जनरल बूचर चाहते थे कि दोनों डोमिनियनों में लड़ाई न हो। उन्होंने लड़ाई-बन्दी के लिए नेहरू से बातचीत की और नेहरू के रज़ामंद हो जाने पर उन्होंने पाकिस्तान के जनरल ग्रेसी को तार दिया। जनरल ग्रेसी

के सहमत हो जाने पर लड़ाई-बन्दी के आदेश निर्गत किए गए। वास्तविकता यह थी कि पाकिस्तान के लिए कठिन स्थिति उपस्थित हो गई थी। भारत की फौजें घाटी में बढ़ गई थीं और इसकी संभावना थी कि यदि पाकिस्तान लड़ाई-बन्दी नहीं करता तो भारतीय फौजें पाकिस्तान के प्रदेश में घुस जाएंगी। उत्तरी क्षेत्र में पाकिस्तान ने बाल्टिस्तान, स्करदू, कारगिल और द्रास पर कब्ज़ा कर लिया था। उसकी फौजें लद्दाख तक पहुंच गई थीं, लेकिन बाद में उन्हें लद्दाख और कारगिल से पीछे हटना पड़ा। १५ नवम्बर तक भारतीय फौज ने पुंछ पर पाकिस्तानी घेरे को तोड़ दिया था और अब भारतीय फौज की स्थिति बहुत सुदृढ़ हो गई थी। तो भी लड़ाई-बन्दी के समय पाकिस्तान के आधिपत्य में काश्मीर का एक तिहाई हिस्सा आ गया था।

सुरक्षा परिषद् को अपनी सफलता की सूचना देने के लिए आयोग १० जनवरी, सन् १९४९ को भारत से चला गया और फिर ४ फरवरी, सन् १९४९ को, १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों के अधीन अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए उप-महाद्वीप आया। इस समय आयोग को दो महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का सामना करना पड़ा :

(१) कबाइलियों और पाकिस्तानी राष्ट्रिकों का हटाए जाना, और

(२) सभी पाकिस्तानी फौजों और अधिकांश भारतीय फौजों को एक साथ हटाए जाने की व्यवस्था का किया जाना।

४ जुलाई, सन् १९४९ को आयोग ने दोनों सरकारों को लड़ाई-बन्दी और रेखा की हदबन्दी करने के लिए एक संयुक्त बैठक में आमंत्रित किया। १८ से २७ जुलाई, सन् १९४९ तक संधि उपसमिति के अधीन दोनों सरकारों के सैनिक प्रतिनिधियों ने बातचीत की। फलस्वरूप १३ अगस्त के संकल्प के भाग १ के उपबन्धों के अधीन एक करारनामा किया गया। लड़ाईबन्दी की रेखा स्थापित की गई और दोनों सरकारें इस बात से सहमत हुईं कि वे अपनी-अपनी फौजों में कोई वृद्धि नहीं करेंगी। संधि उपसमिति के समक्ष भारत और पाकिस्तान ने १३ अगस्त के संकल्प के सम्बन्ध में अपने विभिन्न दृष्टिकोण रखे। पाकिस्तान का कहना था कि संधि करारनामे का उद्देश्य दोनों ओर की फौजों में संतुलन बनाए रखना है। यह संतुलन उसी समय स्थापित किया जा सकता है जब कबाइली हट जाएं, आज़ाद क्षेत्रों से नियमित सैनिक हटाए जाएं और साथ ही भारतीय फौजें भी हटा ली जाएं। पाकिस्तान का यह भी कहना था कि आज़ाद फौजें पाकिस्तानी फौजों की देख-रेख में रहेंगी, अग्रक्षेत्रों में आज़ाद फौजों की जगह पाकिस्तान के नियमित सैनिक भेजे जाएंगे और पाकिस्तान द्वारा आजाद फौजों को ट्रेनिंग दिए जाने के बाद पाकिस्तानी नियमित सैनिकों के स्थान पर आज़ाद सैनिक तैनात किए जाएंगे और आज़ाद सैनिकों पर पाकिस्तान का नियंत्रण रहेगा। दूसरे शब्दों में पाकिस्तान का कहना था कि पाकिस्तानी फौजें उसी समय हटाई जाएंगी जब उनका स्थान लेने के लिए वह आज़ाद फौजों को प्रशिक्षित कर देगा और भारत अपनी फौजों को हटाना शुरू कर देगा। भारत का कहना था कि पाकिस्तान इस प्रकार उस क्षेत्र में, जिसपर उसका फिलहाल कब्ज़ा है अपनी स्थिति को सुदृढ़ करना चाहता है। भारत गिलगिट

को छोड़कर बाकी उत्तरी क्षेत्रों को वापस चाहता था। उसका कहना था कि उन क्षेत्रों का प्रशासन काश्मीर राज्य के अधीन होना चाहिए और उसकी सुरक्षा भारत के अधीन। दोनों सरकारों की राय इतनी जुदा-जुदा थी कि उनमें कोई राज़ीनामा होना मुश्किल था। इसलिए १५ अप्रैल, सन् १९४९ को आयोग ने दोनों सरकारों के सामने अपने प्रस्ताव रखे। उसमें कहा गया था कि ७ हफ्ते के अन्दर पाकिस्तानी फौजें और सभी पाकिस्तानी राष्ट्रिक हट जाएंगे और कबाइलियों और पाकिस्तानी राष्ट्रिकों के हट जाने पर भारतीय फौजें एक निश्चित कार्यक्रम के अनुसार हटा ली जाएंगी, सभी युद्धबन्दी एक महीने के अन्दर छोड़ दिए जाएंगे, संकटकालीन कानून निरस्त कर दिए जाएंगे और राज्य-कैदी छोड़ दिए जाएंगे। उत्तरी क्षेत्रों में संयुक्त राष्ट्र सैनिक प्रेक्षक तैनात किए जाएंगे और यदि वे समझेंगे कि किसी समय राज्य की सुरक्षा को खतरा है तो वे भारतीय फौजों की सहायता लेंगे। भारत और पाकिस्तान ने अलग-अलग कारणों से उन प्रस्तावों को नहीं माना। भारत चाहता था कि आज़ाद फौजों को निःशस्त्र कर दिया जाए और उत्तरी क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण स्थलों पर हिन्दुस्तानी फौजें तैनात की जाएं। २८ अप्रैल को आयोग ने पुनरीक्षित संधि की शर्तें रखीं। भारत ने अपनी आपत्तियां फिर से दुहराईं। पाकिस्तान ने कहा कि यदि बाह्य आक्रमण की आशंका होती है तो पाकिस्तान की राय ली जानी चाहिए और पाकिस्तानी फौजों का भी इस्तेमाल किया जाना चाहिए और किसी भी सूरत में उत्तरी क्षेत्र में राज्य सरकार का प्रशासन नहीं होना चाहिए।

चूंकि दोनों सरकारें आपस में सहमत नहीं थीं, इसलिए आयोग ने यह तय किया कि एक सम्मेलन बुलाया जाए और दोनों सरकारों को इसमें भाग लेने को कहा जाए। दोनों सरकारें इससे सहमत हो गईं और ९ अगस्त, सन् १९४९ को औपचारिक निमंत्रण-पत्र जारी कर दिए और एक स्थायी कार्यक्रम बनाया गया। इस कार्यक्रम के बारे में दोनों सरकारों में फिर मतभेद हुआ। फलतः आयोग ने यह निष्कर्ष निकाला कि संयुक्त बैठक बुलाने से कोई लाभ नहीं होगा और उसने यह संस्तुति की कि १३ अगस्त, सन् १९४९ के भाग में जो बातें उठाई गई हैं उनके सम्बन्ध में मध्यस्थ-निर्णय लिया जाए। मध्यस्थ के रूप में एडमिरल निमिट्ज का नाम प्रस्तावित किया गया। पाकिस्तान ने इस प्रस्ताव को ७ सितम्बर, सन् १९४९ को स्वीकृत किया। भारत ने मध्यस्थ-निर्णय के सुझाव को अस्वीकार कर दिया, क्योंकि उसका ख्याल था कि मध्यस्थ पूरे मसले पर फिर से विचार करेगा और जो बातें मान ली गई हैं उसपर वह फिर से निर्णय देगा। सिद्धांततः मध्यस्थ-निर्णय के विरोध में भारत नहीं था किन्तु वह चाहता था कि सुस्पष्ट और सुनिश्चित प्रश्नों पर ही मध्यस्थ-निर्णय लिया जाना चाहिए। पाकिस्तान ने यह मत व्यक्त किया कि भारत की अस्वीकृति से यह ज़ाहिर हो जाता है कि भारत नहीं चाहता है कि काश्मीर में जनमत लिया जाए।

अपने प्रयत्नों को निष्फल देखकर आयोग ने ५ दिसम्बर, सन् १९४९ को अपनी तीसरी रिपोर्ट सुरक्षा परिषद् के सामने पेश की। इस रिपोर्ट में उसने कहा कि भारत का दृष्टिकोण यह है कि काश्मीर में उसकी उपस्थिति साधिकार है और पाकिस्तान को

काश्मीर में जाने का कोई हक हासिल नहीं है। जब कि पाकिस्तान के विचार में उसको काश्मीर में जाने का उतना ही हक हासिल है जितना कि भारत को। फलतः आयोग ने कहा, तीन मुख्य समस्याएं उठ खड़ी हुई हैं—फौजों को हटाना, आज़ाद फौजों को हटाना, और उत्तरी क्षेत्रों की स्थिति।

आयोग ने यह भी बताया कि लड़ाई-बन्दी में उसे सफलता मिली है लेकिन निःशस्त्रीकरण के मामले में वह नाकामयाब रहा है, क्योंकि उस समय से जब से आयोग गठित हुआ था अब स्थिति में बड़ा परिवर्तन हो गया है। आयोग ने सिफारिश की कि (१) सुरक्षा परिषद् दोनों सरकारों से लड़ाई-बन्दी कायम रखने के लिए और कोई ऐसा कदम न उठाने के लिए कहे जिससे राज्य में तनाव और न बढ़े; (२) निःशस्त्रीकरण समस्या का इस तरह समाधान करे कि सभी फौजें साथ-साथ हटाई जाएं; (३) अनिस्तारित मसलों पर दोनों सरकारों से बातचीत करने के लिए किसी एक व्यक्ति को नियुक्त करे जो संयुक्त राष्ट्र का प्रतिनिधि हो; और (४) दोनों सरकारों के परामर्श से इस प्रतिनिधि के विचार-विषय तय किए जाएं।

आयोग अपने कार्य में मूलतः निष्फल रहा और वह १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों को पूर्णतः कार्यान्वित नहीं कर सका। चेकोस्लोवाकिया के सदस्य डा० चैले ने अपनी रिपोर्ट में आयोग के कार्य की बड़ी आलोचना की। उन्होंने कहा कि आयोग को दृढ़ता से काम लेना चाहिए था और आज़ाद फौजों और उत्तरी क्षेत्र के बारे में ठोस कार्यवाही करनी चाहिए थी। उन्होंने यह भी कहा कि आयोग ने बड़ी सख्त गलती की कि उसने संयुक्त राजनीतिक सम्मेलन को नहीं बुलाया। उन्होंने यह भी कहा कि मध्यस्थ निर्णय के प्रस्ताव की अनुमति सुरक्षा परिषद् ने नहीं दी थी और इस प्रकार की संस्तुति करना आयोग के विचार-विषय के बाहर था। उन्होंने यह आरोप लगाया कि—मध्यस्थ-निर्णय का प्रस्ताव अनियमित रूप से पहले अमेरिका और ब्रिटेन की सरकारों को बता दिया गया और उसके बाद भारत और पाकिस्तान की सरकारों को सूचित किया गया। यह, उन्होंने कहा, आयोग की कार्यवाहियों का घोर उल्लंघन है। चेकोस्लोवाकिया के प्रतिनिधि ने यह निष्कर्ष निकाला कि आयोग ने मध्यस्थ का प्रश्न इसलिए उठाया है कि अमेरिका और ब्रिटेन विवाद में हस्तक्षेप कर सकें। उन्होंने यह भी कहा कि यदि काश्मीर के विवाद को शांतिमय ढंग से सुलझाना है तो यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि काश्मीर बड़ी-बड़ी शक्तियों के पंजे में नहीं फंस जाता।

इस रिपोर्ट में चेकोस्लोवाकिया के प्रतिनिधि ने कहा कि १३ अगस्त और ५ जनवरी के संकल्पों में कमियां हैं, जिन्हें दूर किया जाना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि सुरक्षा परिषद् के सभी सदस्यों के प्रतिनिधियों का एक आयोग स्थापित किया जाए और भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों की एक संयुक्त बैठक बुलाई जाए। इस अल्पसंख्यक रिपोर्ट के सुझावों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। आयोग समाप्त कर दिया गया और काश्मीर-प्रश्न निर्णयार्थ एक मध्यस्थ को सौंप दिया गया।

मध्यस्थ-नियुक्ति प्रस्ताव के किए जाने के एक दिन बाद अर्थात् ३१ अगस्त

को प्रेसीडेण्ट ट्रूमन और प्रधान मंत्री एटली ने भारत और पाकिस्तान सरकारों से इस सुझाव को मान लेने का अनुरोध किया। ४ सितम्बर को नेहरू ने इस प्रस्ताव पर अपना आश्चर्य प्रकट किया और काश्मीर में शेख अब्दुल्ला ने यह मत व्यक्त किया कि मध्यस्थ-निर्णय का केवल एक अर्थ है और वह यह कि आक्रमणकारी को संतुष्ट किया जाए। भारत में इस सुझाव का कड़ा विरोध किया गया और यह कहा गया कि मध्यस्थता समस्या का कोई हल नहीं है। एक चोर और उस आदमी के बीच जिसके घर में चोरी हुई हो मध्यस्थता करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। पाकिस्तान में भी इस सुझाव का विरोध किया गया। पाकिस्तान का कहना था कि इस समस्या को हल करने में संयुक्त राष्ट्र द्वारा टाल-मटोल किया जा रहा है। इसी अवधि में पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के बीच खाई और चौड़ी हो गई। भारत में संविधान का प्रालेख तैयार हो गया था, शरणार्थी बसा दिए जा चुके थे, गांधी जी की हत्या के बाद साम्प्रदायिकता का दमन कर दिया गया था, देश में एकता स्थापित हो चुकी थी, और भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य बन चुका था। इसके विपरीत, पाकिस्तान में जिन्ना की मृत्यु के बाद उनकी जगह लेने के लिए कोई व्यक्ति नहीं था, शासक का कोई विरोध करने का साहस नहीं करता था, धार्मिक नेताओं का बोल-बाला था और पाकिस्तान में बहुत-सी अन्दरूनी समस्याएं उठ खड़ी हुई थीं।

अध्याय ८

मध्यस्थता-प्रस्ताव और समस्या-समाधान वार्ता

संयुक्त राष्ट्र के आयोग की इस सिफारिश को कि भारत और पाकिस्तान के बीच अनिस्तारित विषयों और निःशस्त्रीकरण समस्या के समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा किसी एक व्यक्ति की नियुक्ति की जाए सुरक्षा परिषद् ने १७ दिसम्बर, सन् १९४९ की अपनी बैठक में स्वीकार कर लिया। नार्वे ने मध्यस्थ के रूप में नियुक्ति के लिए कैनाडा के प्रतिनिधि और परिषद् के तत्कालीन प्रेसीडेण्ट जनरल मैकनाटन के नाम का प्रस्ताव किया। ब्रिटेन और फ्रांस ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया, किसी ने विरोध नहीं किया, रूस और यूक्रेन ने मतदान नहीं किया। फलतः प्रस्ताव नौ मतों से पारित हो गया।

काश्मीर-समस्या के अध्ययन के लिए जनरल न भारत गए और न पाकिस्तान। लेकसक्सेस में उन्होंने दोनों पक्षों से १८ दिसम्बर, सन् १९४९ को वार्ता प्रारम्भ की और २२ दिसम्बर को निःशस्त्रीकरण सम्बन्धी अपने प्रस्ताव पेश कर दिए। प्रस्ताव इस प्रकार थे :

(क) पाकिस्तान की सरकार बिना किसी शर्त के भारत सरकार को आश्वासन देगी कि वह अपनी सीमा के अन्दर प्रभावपूर्ण ढंग से जम्मू और काश्मीर में कबाइलियों के आक्रमण की किसी भी सम्भावना को रोकेगी जिससे किसी भी परिस्थिति में कबाइली पाकिस्तान के प्रदेश से या वहां से होकर अवैध रूप से जम्मू और काश्मीर राज्य में दाखिल न हो सकें। पाकिस्तान सरकार की ज़िम्मेदारी होगी कि वह संयुक्त राष्ट्र के ज्येष्ठ सैनिक प्रेक्षक को सूचित करें और संतुष्ट करे कि इस प्रयोजन से जो प्रबन्ध किए गए हैं वे काफी हैं और काफी रहेंगे।

(ख) भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार इसकी संपुष्टि करेगी कि 'लड़ाई-बन्दी रेखा' की अलंघनीयता बराबर कायम रहेगी।

(ग) उपर्युक्त पैराग्राफ २ में उल्लिखित निःशस्त्रीकरण के मूल सिद्धातों पर दोनों सरकारें सहमत होंगी।

(घ) सुरक्षा और स्थानीय विधि एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यक न्यूनतम फौजों के बारे में और उनकी सामान्य तैनाती के बारे में दोनों

सरकारें सहमत होंगी।

(च) उपर्युक्त पैराग्राफ २ में निर्दिष्ट स्तर तक फौजों में कमी किस तारीख तक करनी है, इस बारे में दोनों सरकारें सहमत होंगी।

(छ) इस बारे में वे सहमत होंगी कि उत्तरोत्तर क्या उपाय किए जाएं जिससे उपर्युक्त पैराग्राफ २ में उल्लिखित स्तर तक फौजें कम की जा सकें और उन्हें पुनर्वितरित किया जा सके।

परिषद् के अधिकतर सदस्यों ने इन प्रस्तावों का स्वागत किया और उन्हें न्यायसंगत और निष्पक्ष बताया। नार्वे के प्रतिनिधि ने सुझाव रखा कि जनरल मैकनाटन प्रेसीडेण्ट की पदावधि समाप्त होने पर भी दोनों पक्षों से अपनी वार्ता जारी रखें। सोवियत प्रतिनिधि ने प्रक्रिया सम्बन्धी कतिपय मौलिक आपत्तियां कीं। उन्होंने कहा कि पहले इन प्रस्तावों के सम्बन्ध में दोनों पक्षों की प्रतिक्रिया जानना ज़्यादा आवश्यक है। उन्होंने यह भी कहा कि १ जनवरी, सन् १९५० से कैनेडा सुरक्षा परिषद् का सदस्य नहीं रह जाएगा, इसलिए नार्वे का यह सुझाव कि कैनेडा के प्रतिनिधि जनरल मैकनाटन भारत और पाकिस्तान के बीच मध्यस्थता-वार्ता करते रहें, विचित्र है। किन्तु परिषद् द्वारा सोवियत संघ की आपत्ति अस्वीकृत कर दी गई और नार्वे का सुझाव स्वीकार कर लिया गया।

जनरल ने ३ फरवरी, सन् १९५० को अपनी रिपोर्ट परिषद् को प्रस्तुत की और सूचित किया कि वे अपने प्रयत्नों में असफल रहे हैं और इस सम्बन्ध में उनका कार्य करते रहना निष्प्रयोजन होगा। पाकिस्तान ने जनरल के प्रस्तावों को मामूली संशोधनों के साथ स्वीकार कर लिया किन्तु भारत ने बृहत् संशोधनों की तजवीज़ की। उसकी तजवीज़ थी कि आज़ाद फौजें निःशस्त्र और भंग की जाएं, उत्तरी क्षेत्र सुरक्षा के प्रयोजनों के लिए भारत को लौटाए जाएं और वे जम्मू और काश्मीर सरकार द्वारा प्रशासित किए जाएं।

७ फरवरी, सन् १९५० को काश्मीर-प्रश्न पर परिषद् में फिर वाद-विवाद हुआ। भारत के प्रतिनिधि बी० एन० राव थे और पाकिस्तान के प्रतिनिधि ज़फ़रुल्ला खां। जनरल के प्रस्तावों को अस्वीकृत करने के कारणों पर प्रकाश डालते हुए बी० एन० राव ने बताया कि किस प्रकार संयुक्त राष्ट्र के संकल्पों की उपेक्षा करते हुए पाकिस्तान काश्मीर में अपनी फौजों को भेजकर, आज़ाद फौजों को सुदृढ़ करके और उत्तरी क्षेत्र में अपने आधिपत्य का विस्तार करके काश्मीर में जनमत लिए जाने में रोड़ा अटका रहा है। काश्मीर में पाकिस्तान द्वारा आक्रमण किया गया है, यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया है, किन्तु तो भी जनरल के प्रस्तावों में उत्तरी क्षेत्रों में पाकिस्तान को अपना आधिपत्य बनाए रखने दिया गया है। आयोग ने जो आश्वासन भारत को दे रखे थे उनका कोई ध्यान नहीं रखा गया है, लड़ाई-बन्दी रेखा के दूसरी तरफ जम्मू और काश्मीर राज्य का नियन्त्रण नहीं रखा गया है, आज़ाद प्राधिकारियों को मान्यता दी गई है। उन क्षेत्रों में जिनपर पाकिस्तान का कब्ज़ा था पाकिस्तानी फौजों द्वारा अपनी स्थिति सुदृढ़ करने दी गई है, आज़ाद फौजों के निःशस्त्रीकरण

और उनके भंग किए जाने के साथ-साथ काश्मीर राज्य की फौजों और मिलीशिया के निःशस्त्रीकरण और उनके भंग करने का भी प्रस्ताव रखा गया है, उत्तरी क्षेत्रों पर भारत का अधिकार नहीं स्वीकार किया गया है। भारत का मत है कि जनमत लिए जाने के पूर्व यह आवश्यक है कि उसे पाकिस्तानी आक्रमण से मुक्त किया जाए। यह उसी समय हो सकता है जब उत्तरी क्षेत्रों पर पाकिस्तान-नियंत्रित फौजों का कब्ज़ा न रहे, आज़ाद फौजों में कोई वृद्धि न हो और राज्य से पाकिस्तानी फौजें हटा ली जाएं। वास्तव में आयोग के संकल्पों को स्वीकार करते समय भारत सरकार को जो आश्वासन दिए जा चुके थे वे जनरल के प्रस्तावों द्वारा नाकारा कर दिए गए थे।

बी० एन० राव ने अपने भाषण में सदस्यों की हिन्दू-मुसलमान सम्बन्धी बहुत-सी भ्रांत धारणाओं को भी दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने बताया कि काश्मीर में कोई हिन्दू-मुसलमान समस्या नहीं है, क्योंकि भारत एक धर्म-निरपेक्ष देश है जहां चार करोड़ मुसलमान शांतिपूर्वक रहते हैं और जहां सभी नागरिकों को समान राजनीतिक अधिकार प्राप्त हैं। उन्होंने कहा कि काश्मीर के अधिकांश मुसलमान निवासी भारत में काश्मीर राज्य के अधिमिलन को चाहते हैं, अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद काश्मीर का भारत में अधिमिलन सम्पूर्ण हो गया है, भारत को काश्मीर में जनमत लेने के लिए किसी ने बाध्य नहीं किया है बल्कि भारत ने स्वयं जनमत लेने की इच्छा व्यक्त की है। अधिमिलन के कारण काश्मीर में कोई उपद्रव नहीं हुए हैं बल्कि अधिमिलन के बाद राज्य पर आक्रमण हुआ है। उन्होंने अन्त में क्षोभ प्रकट किया कि जनरल के प्रस्तावों को, जो भारत के हितों के प्रतिकूल हैं, स्वीकार करने के लिए भारत पर अनावश्यक दबाव डाला जा रहा है।

भारत की जनता ने जनरल के प्रस्तावों का विरोध किया, भारतीय समाचार-पत्रों ने उनकी कटु आलोचना की। काश्मीर में मुसलमानों ने इन प्रस्तावों को प्रति-क्रियावादी बताया। बख्शी गुलाम मोहम्मद ने घोषणा की कि जब तक काश्मीर में एक भी काश्मीरी जीवित है, जनरल के प्रस्ताव नहीं स्वीकार किए जाएंगे। मिर्ज़ा अफ़ज़ल बेग ने कहा कि यदि भारत अंग्रेज़ों और अमेरिकनों के दबाव से इन प्रस्तावों को, जिनमें आक्रांत और आक्रमणकारी को एक ही स्तर पर रखा गया है, स्वीकार कर लेता है तो भारत काश्मीर की दोस्ती खो बैठेगा।

इन परिस्थितियों में भारत द्वारा जनरल मैकनाटन के मध्यस्थता-प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिए गए।

परिषद् के आगामी सत्र में क्यूबा, नार्वे, ब्रिटेन और अमेरिका की ओर से परिषद् के प्रेसीडेण्ट क्यूबा के प्रतिनिधि सी० ब्लांको ने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया, जिसमें संयुक्त राष्ट्र के एक नये प्रतिनिधि की नियुक्ति की व्यवस्था की गई। यह प्रस्ताव १४ मार्च, सन् १९५० को पारित हुआ।

प्रस्ताव में कहा गया था कि मैकनाटन के प्रस्तावों के आधार पर पांच महीनों के अन्दर निःशस्त्रीकरण का एक सम्मत कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए। संकल्प में यह भी कहा गया था कि संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि की नियुक्ति निम्न प्रयोजनों के

लिए की जाती है। भारत और पाकिस्तान से वार्ता के लिए अनुकूल वातावरण बनाए रखने में सक्रिय सहयोग की अपेक्षा की गई थी :

(क) उपरिनिर्दिष्ट निःशस्त्रीकरण के कार्यक्रम को तैयार करना और उसके कार्यान्वयन की देख-रेख करना और निःशस्त्रीकरण के लिए पक्षों में निष्पादित करारनामों की व्याख्या करना।

(ख) भारत और पाकिस्तान की सरकारों को अपनी सेवाएं अर्पित करना और इन सरकारों या सुरक्षा परिषद् के समक्ष ऐसा कोई सुझाव रखना, जो, उसके मत में, जम्मू और काश्मीर राज्य के बारे में दोनों सरकारों के बीच उत्पन्न विवाद के शीघ्र और स्थायी समाधान के लिए सहायक सिद्ध हो।

(ग) सुरक्षा परिषद् के वर्तमान संकल्पों के कारण और संयुक्त राष्ट्र आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों में समाविष्ट पक्षों के करारनामों के कारण संयुक्त राष्ट्र आयोग पर जो ज़िम्मेदारियां आयद हो गई हैं और जो उसे अधिकार प्राप्त हो गए हैं उन सबको निभाना और प्रयुक्त करना।

(घ) निःशस्त्रीकरण के उपर्युक्त प्रक्रम पर दोनोंपक्षों में निष्पन्न करारनामों के अधीन जनमत-प्रशासक को सौंपे गए कर्तव्यों को उसके द्वारा पालन कराने के लिए व्यवस्था करना।

(च) सुरक्षा परिषद् को रिपोर्ट करना, जैसा वे आवश्यक समझें, और अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करना तथा ऐसी सिफारिशें करना जो वे चाहें।

प्रस्ताव के स्पष्टीकरण में ब्रिटिश प्रतिनिधि सर टेरीन शोन ने कहा कि निःशस्त्रीकरण एक समस्या है जिसका पूर्णतः समाधान किया जाना चाहिए। राज्य के भीतर स्थित सभी फौजों का और सभी क्षेत्रों का निःशस्त्रीकरण एक ही समय किया जाना चाहिए, और यह कि उत्तरी क्षेत्रों के असैनिक प्रशासन में किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है।

पाकिस्तान ने इस संकल्प को, जो उसके पक्ष में था, तत्काल स्वीकार कर लिया। भारत ने उन आपत्तियों के अधीन, जो मैकनाटन के प्रस्ताव के सम्बन्ध में की गई थीं, इस संकल्प को स्वीकार किया। भारत ने आयोग की समाप्ति और निःशस्त्रीकरण समस्या के सम्बन्ध में मध्यस्थता के लिए संयुक्त राष्ट्र के एक प्रतिनिधि की नियुक्ति को मान लिया किन्तु यह स्पष्ट कर दिया कि प्रतिनिधि दोनों पक्षों की सहमति से नियुक्त किया जाएगा।

संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि के लिए एडमिरल निमिट्ज़, राल्फ बुंच, एरिक काल्बन और डा० फ्रैंक ग्राहम के नाम प्रस्तावित किए गए। पाकिस्तान एडमिरल निमिट्ज़ की नियुक्ति के लिए सहमत था, भारत इसके विरोध में था, क्योंकि एक ही व्यक्ति मध्यस्थ और जनमत-प्रशासक नहीं हो सकता था। अन्ततः आस्ट्रेलिया के जूरिस्ट सर ओवन डिक्सन का नाम प्रस्तावित और स्वीकृत हुआ। डिक्सन की नियुक्ति १२ अप्रैल,

सन् १९५० को की गई।

सर ओवन डिक्सन २८ अप्रैल से २१ मई, सन् १९५० तक संयुक्त राष्ट्र के मुख्यालय पर समस्या के अध्ययनोपरान्त २७ मई को उपमहाद्वीप पहुंचे। दिल्ली और काश्मीर में कुछ दिनों तक प्राधिकारियों से उन्होंने वार्ता की। तत्पश्चात् वे जम्मू और काश्मीर में ७ जून से १२ जुलाई, १९५० तक रहे। इतने दिनों तक काश्मीर में उनका रहने का प्रयोजन वहां के देश की एवं वहां के लोगों से जानकारी प्राप्त करना था। वह इसकी भी व्यक्तिगत जानकारी करना चाहते थे कि लड़ाई-बन्दी रेखा के दोनों तरफ कितनी सशस्त्र फौजें तैनात हैं और काश्मीर में क्या स्थिति है। उन्होंने शेख अब्दुल्ला से भी बातचीत की।

सर ओवन ने सर्वप्रथम भारत और पाकिस्तान के प्रधान मंत्रियों का एक सम्मेलन आयोजित किया। यह सम्मेलन नई दिल्ली में २० जुलाई से २४ जुलाई, सन् १९५० तक रहा। किन्तु राज्य के निःशस्त्रीकरण के सम्बन्ध में दोनों में से किसी भी प्रधान मंत्री ने कोई योजना या प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं किया। इसलिए सर ओवन ने अपना प्रस्ताव रखा। इस प्रस्ताव में उन्होंने यह स्वीकार किया कि २० अक्तूबर, सन् १९४७ को विरोधी तत्त्वों द्वारा जम्मू और काश्मीर राज्य की सीमा का उल्लंघन अन्तर्राष्ट्रीय कानून के प्रतिकूल था और जब मई, सन् १९४८ में पाकिस्तान के नियमित सैनिक राज्य में घुस आए तो वह भी अन्तर्राष्ट्रीय कानून से असंगत था। सर ओवन ने फलतः यह तजवीज़ की कि निःशस्त्रीकरण के लिए यह आवश्यक है कि पहले पाकिस्तान के नियमित सैनिक राज्य से हटा लिए जाएं। उन्होंने यह भी तजवीज़ की कि विधि कायम रखने में असैनिक प्राधिकारी को सहायता देने और संभाव्य घुसपैठ को रोकने के उद्देश्य से उत्तरी मार्गों की रक्षा करने के लिए अपेक्षित सैनिकों को छोड़कर शेष भारतीय फौजें हटा ली जाएं, जम्मू और काश्मीर राज्य की फौजों और मिलीशिया निःशस्त्र और भंग की जाए। पाकिस्तान से यह अपेक्षा की गई कि घाटी में आक्रमणकारियों और कबाइलियों को घुसने से रोकने, आज़ाद फौजों को निःशस्त्र करने, मुसलमानों के भय को दूर करने और व्यवस्था कायम रखने में असैनिक प्राधिकारियों को सहायता देने के लिए अपेक्षित सैनिकों के अलावा पाकिस्तानी फौजें हटा ली जाएं और आज़ाद फौजें तथा उत्तरी स्काउट निःशस्त्र और भंग किए जाएं।

भारत को सर ओवन का प्रस्ताव बिल्कुल नहीं जंचा। पं० नेहरू ने कहा कि भारत काश्मीर राज्य से अपनी फौजों और मिलीशिया को भंग करने के लिए नहीं आग्रह कर सकता क्योंकि राज्य में विधि और व्यवस्था बनाए रखने के लिए उनकी बराबर आवश्यकता बनी रहेगी। फिर राज्य में पाकिस्तानी और आज़ाद फौजों के रहते हुए भारत अपने सैनिकों की संख्या में कोई कमी नहीं कर सकता। आज़ाद क्षेत्रों के प्रशासन के बारे में भी डिक्सन की योजना को भारत ने अस्वीकृत किया। योजना यह थी कि राज्य में प्रचलित रीतियों और विधि के अनुसार वे क्षेत्र ज़िला मजिस्ट्रेटों द्वारा प्रशासित होते रहें। अलबत्ता यह सुनिश्चित करने के लिए कि ज़िला मजिस्ट्रेट अपने कर्त्तव्यों का समुचित और निष्पक्ष रूप से पालन करते हैं प्रत्येक ज़िला मजिस्ट्रेट से

संयुक्त राष्ट्र का एक अधिकारी सम्बद्ध कर दिया जाएगा। भारत का कहना था कि वर्तमान ज़िला मजिस्ट्रेट आक्रमण के बाद नियुक्त किए गए हैं, इसलिए उनका पद पर बने रहना उचित न होगा। भारत उत्तरी क्षेत्रों को वापस चाहता था, क्योंकि उसका कहना था कि उनकी सुरक्षा का दायित्व उसपर है और उनके प्रशासन का दायित्व काश्मीर राज्य पर है। डिक्सन का प्रस्ताव था कि भारत और पाकिस्तान के परामर्श से इन क्षेत्रों के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा राजनीतिक एजेण्ट नियुक्त किए जाएं जो उन क्षेत्रों में तैनात वर्तमान अधिकारियों के ज़रिये प्रशासन करें। भारत की आपत्ति थी कि पाकिस्तान से परामर्श लेने के अर्थ होंगे कि उन क्षेत्रों में उसके अधिकार को स्वीकार किया जा रहा है, यह उचित नहीं है क्योंकि पाकिस्तान वहां आक्रमणकारी के रूप में है और किसी आक्रमणकारी के अधिकार को स्वीकार करना न्यायसंगत नहीं है। डिक्सन के प्रस्तावों में काश्मीर राज्य के अधिकार सीमित कर दिए गए थे और चूंकि जम्मू और काश्मीर राज्य की सरकार ही वैध सरकार थी इसलिए उसके प्रशासन-अधिकारों को सीमित करना न्यायसंगत न था।

सर ओवन ने यह देखकर कि भारत इन प्रस्तावों से सहमत नहीं है, अन्य कई प्रस्ताव रखे; जैसे पूरे राज्य में शेख अब्दुल्ला और आज़ाद काश्मीर के गुलाम अब्बास की एक मिली-जुली सरकार हो, या कुछ विश्वस्त व्यक्तियों की सरकार हो जिसमें आधे हिन्दू और आधे मुसलमान हों और जिसका अध्यक्ष संयुक्त राष्ट्र द्वारा नामित व्यक्ति हो। ये प्रस्ताव भी न उचित थे, और न न्यायसंगत और न भारत के दृष्टिकोण के अनुकूल।

डिक्सन ने यह निष्कर्ष निकाला कि जब तक पूरे राज्य का या ऐसे क्षेत्र का जिसमें काश्मीर घाटी भी शामिल हो विभाजन नहीं किया जाता काश्मीर के सम्बन्ध में दोनों पक्षों में कोई सम्मत समझौता नहीं हो सकता। इसलिए दोनों देशों के प्रधान मंत्रियों के सम्मेलन में डिक्सन ने दो योजनाएं रखीं :

(क) क्षेत्रों या अनुभागों में जनमत लिया जाए, और जनमत-निर्णय के अनुसार दोनों देशों में क्षेत्र या अनुभाग का विभाजन हो।

(ख) ऐसे क्षेत्रों में जिसके बारे में यह बिल्कुल निश्चित हो कि वे भारत या पाकिस्तान के पक्ष में मत देंगे, मतदान न लिया जाए और वे दोनों देशों में वैसे ही बांट दिए जाएं, जनमत-संग्रह केवल अनिश्चित क्षेत्र अर्थात् काश्मीर घाटी में लिया जाए।

भारत इस पर विचार करने के लिए सहमत था। उसने कहा कि उपर्युक्त सिद्धांत पर भारत को सम्पूर्ण जम्मू, लद्दाख और कारगिल मिलना चाहिए और जनमत केवल सुरू नदी के ऊपरी क्षेत्र में लिया जाए। पाकिस्तान को, उसने कहा, गिलगिट, गिलगिट एजेन्सी, गिलगिट बज़ारत, राजनीतिक ज़िले बाल्टिस्तान के कबाइली क्षेत्र और यथा-संशोधित लड़ाई-बन्दी रेखा के पश्चिम में जम्मू का भाग दिया जाए। पाकिस्तान पूरे राज्य का विभाजन चाहता था बशर्ते काश्मीर घाटी उसे मिल जाए। भारत इससे रज़ा-मन्द नहीं था। डिक्सन ने बाद में यह भी प्रस्ताव रखा कि दोनों देशों की फौजें राज्य से

हटा ली जाएं और यदि आवश्यकता पड़ेगी तो दोनों देशों से कुछ सैनिक भेजने के लिए कहा जाएगा। इस प्रस्ताव में सभी मामलों में पाकिस्तान और भारत को आक्रमण-कारी और आक्रान्त को एक स्तर पर रखा गया था। स्पष्ट है भारत को यह प्रस्ताव बिल्कुल पसंद नहीं था और उसने उसे अस्वीकृत कर दिया।

अब यह साफ ज़ाहिर हो गया कि काश्मीर समस्या के समाधान के लिए संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि का प्रयास निष्फल हो गया है। फलत: सर ओवन डिक्सन २३ अगस्त, सन् १९५० को वापस चले गए।

डिक्सन रिपोर्ट के प्रकाशन के बाद पं० नेहरू ने ३० सितम्बर को एक बयान में कहा कि भारत डिक्सन के प्रस्तावों को किसी भी दशा में नहीं मान सकता था क्योंकि काश्मीर में वैध सरकार के दमन से काश्मीर एक साम्प्रदायिक क्षेत्र में परि-वर्तित हो जाएगा जहां शांतिपूर्ण और निष्पक्ष जनमत-संग्रह न हो सकेगा, दूसरे भारत काश्मीर में अपने संवैधानिक अधिकारों का त्याग नहीं कर सकता, तीसरे इस विवाद में पाकिस्तान का कोई अस्तित्व या स्थान नहीं है और चौथे भारत को मिली-जुली सरकार का बड़ा कटु अनुभव है। जहां तक राज्य की सुरक्षा का प्रश्न है, पं० नेहरू ने कहा, संयुक्त राष्ट्र भारत का स्थान नहीं ले सकता।

पाकिस्तान में डिक्सन की रिपोर्ट की कटु आलोचना की गई, और पाकिस्तान के नेताओं ने संयुक्त राष्ट्र को चेतावनी देने की बात कही और यह मत व्यक्त किया कि काश्मीर-समस्या का समाधान केवल तलवार के बल पर किया जा सकता है।

सन् १९५१ के प्रारम्भ में काश्मीर के प्रश्न पर राष्ट्रमंडल में चर्चा करने का प्रयास किया गया, जिसके भारत और पाकिस्तान दोनों सदस्य थे। ब्रिटिश पार्लिया-मेंट में आवाज़ उठाई गई कि काश्मीर-प्रश्न को हल करने के लिए ब्रिटेन को सक्रिय कदम उठाने चाहिए। लियाकतअली खां ने स्वयं दिसम्बर, सन् १९५० में कराची में कहा कि पाकिस्तान ब्रिटेन से इस प्रश्न को प्रधान मंत्रियों के सम्मेलन में विचारार्थ रखने के लिए अनुरोध करेगा। २९ दिसम्बर को रायटर ने यह सूचना प्रसारित की कि यह प्रश्न प्रधान मंत्रियों के सम्मेलन में नहीं रखा जाएगा। फिर क्या था, पाकिस्तान के प्रधान मंत्री लियाकतअली खां ने सम्मेलन में भाग लेने के लिए लंदन जाना स्थगित कर दिया। भारत ने यह मत व्यक्त किया कि इस प्रकार के प्रश्नों पर प्रधान मंत्रियों के सम्मेलन में विचार करना न उचित है और न न्यायसंगत। ४ जनवरी, सन् १९५१ को ब्रिटेन के प्रधान मंत्री एटली ने इस सम्बन्ध में उत्पन्न गतिरोध को दूर करने के लिए लियाकतअली खां और पं० नेहरू से अपील की और यह खबर प्रसारित की गई कि प्रधान मंत्रियों ने अनौपचारिक रूप से काश्मीर-समस्या पर बातचीत करना स्वीकार कर लिया है। फलत: ६ जनवरी को लियाकतअली खां लन्दन के लिए रवाना हुए। कुछ देशों के प्रधान मंत्री जैसे दक्षिण अफ्रीका के प्रधान मंत्री वास्तव में इस समस्या पर अनौपचारिक रूप से भी बात करने को तैयार नहीं थे। पाकिस्तान को आश्वासन दिया गया कि सम्मेलन में एकत्र राष्ट्रमंडल के कुछ प्रधान मंत्रियों से काश्मीर के सम्बन्ध में अनौपचारिक रूप से वार्ता करने का अवसर मिल सकेगा।

आठ जनवरी को ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, कैनेडा, लंका, पाकिस्तान और भारत के प्रधान मंत्रियों ने आस्ट्रेलिया के प्रधान मंत्री राबर्ट मेंज़ीज़ के होटल में एकत्र होकर इस विषय पर बातचीत की। दूसरी अनौपचारिक वार्ता १२ जनवरी को डाउनिंग स्ट्रीट में की गई और इसी विषय पर तीसरी वार्ता १४ जनवरी को चेकर्स में की गई। १५ जनवरी को डाउनिंग स्ट्रीट से एक विज्ञप्ति जारी की गई जिसमें कहा गया कि काश्मीर के विषय पर प्रधान मंत्रियों के बीच निर्बाध रूप से बातचीत हुई, और कुछ सुझाव रखे गए। वार्ता के फलस्वरूप दोनों पक्षों में असहमति का क्षेत्र कम हो गया यद्यपि कोई समझौता नहीं हो सका। प्रधान मंत्रियों ने समस्या के समाधान की आवश्यकता पर बहुत बल दिया और आशा व्यक्त की कि भारत और पाकिस्तान के प्रधान मंत्री प्रस्तुत सुझावों पर विचार करेंगे।

इस सरकारी विज्ञप्ति में वार्ता के सम्बन्ध में कोई जानकारी नहीं कराई गई थी, किन्तु पाकिस्तान के प्रधान मंत्री ने लन्दन में १६ जनवरी को एक सार्वजनिक सभा में घोषित किया कि प्रधान मंत्रियों की वार्ता में तीन सुझाव पेश किए गए थे—काश्मीर में राष्ट्रमंडल के सैनिक तैनात किए जाएं, भारत और पाकिस्तान से कहा कि वे एक संयुक्त फौज काश्मीर में जनमत-संग्रह के दौरान तैनात करें, जनमत-प्रशासक को अधिकृत किया जाए कि वह स्थानीय सैनिकों की भर्ती करे और वही सैनिक राज्य में रहें। पाकिस्तान के प्रधान मंत्री ने यह भी बताया कि आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड काश्मीर में अपनी फौजें भेजने को राज़ी हो गए थे। भारत ने इन सुझावों को अस्वीकृत कर दिया था जब कि पाकिस्तान ने तीनों सुझावों को मान लिया था।

पं० नेहरू ने १२ फरवरी, सन् १९५१ को संसद् में उपर्युक्त सुझावों को अस्वीकार करने के कारणों को बताते हुए कहा कि भारतीय भूमि पर विदेशी सेना के आगमन से भारतीय विचारधारा पर बड़ा बुरा असर पड़ता, फिर काश्मीर में विदेशी फौजों के आने की अनुमति काश्मीर राज्य ही दे सकता था। संयुक्त राष्ट्र ने पहले यह तय किया कि सर्वप्रथम राज्य से पाकिस्तानी फौजों को हटाया जाना चाहिए। प्रस्तुत सुझाव उस निश्चय के बिल्कुल खिलाफ था। भारत की भूमि पर विदेशी फौजों का प्रवेश बिल्कुल अनुचित था। काश्मीर के नेताओं ने भी इन सुझावों का बड़ा विरोध किया। शेख अब्दुल्ला ने २० जनवरी को जम्मू में कहा कि ये सुझाव न केवल अव्यावहारिक थे किन्तु अपमानजनक भी थे। काश्मीर में राष्ट्रमंडल के सैनिकों की तैनाती प्रत्येक ईमानदार नागरिक के आत्मसम्मान के प्रतिकूल है। यदि एक बार विदेशी सैनिक काश्मीर में आ गए तो एक न एक कारणवश वे बराबर उस राज्य में बने रहेंगे। पाकिस्तान ने विभिन्न राष्ट्रों पर ज़ोर-दबाब डालना शुरू कर दिया कि भारत को काश्मीर-समस्या के समाधान के लिए (जो पाकिस्तान के पक्ष में हो) बाध्य किया जाए। इधर ब्रिटेन और अमेरिका के समाचारपत्रों ने भारत द्वारा इन सुझावों के न माने जाने पर क्षोभ प्रकट किया।

जब काश्मीर-समस्या के सम्बन्ध में राष्ट्र-मंडल के माध्यम से भी कोई समझौता दोनों पक्षों में न हो सका तो १४ दिसम्बर, सन् १९५० को पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने

सुरक्षा परिषद् का ध्यान डिक्सन की रिपोर्ट के कार्यान्वयन में विलम्ब की ओर आकर्षित किया और कहा कि काश्मीर राज्य में संविधान सभा जम्मू और काश्मीर के सम्मिलन के निर्धारण के लिए बुलाई जा रही है, जो परिषद् के प्राधिकार को चुनौती है।

काश्मीर-प्रश्न सुरक्षा परिषद् की ५३२वीं बैठक की कार्यावली में फिर सम्मिलित किया गया और २१ फरवरी, सन् १६५१ को इसपर वाद-विवाद प्रारम्भ हुआ। ब्रिटेन के प्रतिनिधि जेब ने दुःख प्रकट किया कि काश्मीर-समस्या का अब तक समाधान नहीं हो पाया है और डिक्सन की इस राय से कि दोनों पक्ष इस विषय में स्वयं बात करें नाइत्तिफाक किया। उन्होंने ब्रिटेन और अमेरिका की ओर से एक संकल्प प्रस्तुत किया जिसमें कहा गया कि (१) डिक्सन का इस्तीफा स्वीकार किया जाता है, (२) डिक्सन के स्थान पर संयुक्त राष्ट्र का एक दूसरा प्रतिनिधि नियुक्त किया जाता है, और (३) उत्तराधिकारी को आदेश दिया जाता है कि वह राज्य का निःशस्त्रीकरण कराने की व्यवस्था करे और जनमत-संग्रह के लिए एक विस्तृत योजना बनाए। इस संकल्प द्वारा संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि को प्राधिकार दिया गया कि वह ओवन डिक्सन की रिपोर्ट पर समुचित ध्यान दे, संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों से फौजों को मंगाने या स्थानीय फौजें भरती करने की संभावना पर विचार करें, जनमत के परिणामस्वरूप राज्य के विभाजन की सभावना पर विचार करे और राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न मात्रा में नियंत्रण रखने की संभावना पर भी विचार करे। अन्ततः संकल्प द्वारा दोनों पक्षों से अनुरोध किया गया कि यदि वे इन सुझावों से सहमत नहीं होते तो मतभेद के समस्त विषयों को, उनके परामर्श से अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय द्वारा नियुक्त निर्णायक अथवा निर्णायकों को निर्णय के लिए सिपुर्द कर दिया जाएगा और उसका अथवा उनका निर्णय वे मानने को बाध्य होंगे।

जेब ने कहा कि न्याययुक्त जनमत के लिए काश्मीर में निष्पक्ष फौज की तैनाती आवश्यक है और समस्या के समाधान के लिए मध्यस्थ-निर्णय का ही सहारा लेना पड़ेगा। पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने काश्मीर राज्य में संविधान सभा के बुलाए जाने पर विरोध प्रकट करते हुए संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् का ध्यान आकर्षित किया था। इसका हवाला देते हुए जेब ने कहा कि संयुक्त राष्ट्र की सहमति के बिना किसी भी प्रकार का मत प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से काश्मीरियों का नहीं लिया जा सकता और न वह परिषद् को मान्य होगा।

इस प्रस्ताव को भारत ने अस्वीकार कर दिया। भारत के प्रतिनिधि ने पहली मार्च, सन् १६५१ को परिषद् में पूरे मसले पर पुनः भारत का दृष्टिकोण रखा और कहा कि भारत किसी भी रूप में काश्मीर में विदेशी फौजों की तैनाती को स्वीकार नहीं कर सकता और न वह राज्य की वैध सरकार के अधिकारों के किसो अतिक्रमण को या उसके स्थान पर किसी अन्य प्रशासन को स्वीकार कर सकता है। जेब ने एक संशोधित प्रालेख विचारार्थ रखा। भारत के दृष्टिकोण को रखते हुए इसमें संयुक्त राष्ट्र की फौजों की तैनाती का कोई जिक्र नहीं किया गया और न राज्य के विभाजन का कोई उल्लेख पाकिस्तान को संतुष्ट करने के लिए किया गया। किन्तु मध्यस्थ-निर्णय और

संविधान सभा सम्बन्धी उपबन्ध संशोधित प्रालेख में पहले की तरह रखे गए।

रूस और युगोस्लाविया को छोड़कर परिषद् के अन्य सदस्यों ने मध्यस्थ-निर्णय के पक्ष में अपना मत व्यक्त किया। युगोस्लाविया का कहना था कि संकल्प द्वारा प्रश्न का समाधान नहीं हो सकता। समाधान दोनों पक्षों द्वारा पारस्परिक वार्ता से ही हो सकता है किन्तु युगोस्लाविया के विचारों की उपेक्षा की गई और जेब का संशोधित संकल्प ३० मार्च, १९५१ को ८ वोटों से अनुमोदित हो गया। भारत, युगोस्लाविया, और रूस ने मतदान नहीं किया। ज़फ़रुल्ला ने इस संकल्प को पाकिस्तान द्वारा स्वीकृति दिए जाने की सूचना २ अप्रैल को परिषद् को दी। भारत ने अपनी मौलिक और महत्त्वपूर्ण आपत्तियों के कारण इस संकल्प को भी अस्वीकार कर दिया। बी० एन० राव ने बताया कि इस संकल्प द्वारा पाकिस्तान को इस विवाद में समान अधिकार दिए गए हैं जो पूर्व संकल्पों में नहीं दिए गए थे, निर्णायकों को विवादग्रस्त प्रश्नों पर स्वतत्र निर्णय लेने का अधिकार दे दिया गया है, जब कि पूर्व संकल्पों में उनके सम्बन्ध में भारत की सहमति आवश्यक थी। जेब के संकल्प की भारत में बड़ी आलोचना की गई और श्यामाप्रसाद मुकर्जी ने यह अनुरोध किया कि काश्मीर-प्रश्न सुरक्षा परिषद् से हटा लिया जाए।

३० मार्च के इस संकल्प द्वारा काश्मीर-समस्या को हल करने के लिए संयुक्त राष्ट्र के एक अन्य प्रतिनिधि डा० ग्राहम, अमेरिकन राजनीतिज्ञ, को नियुक्त किया गया। ये तीसरे मध्यस्थ थे। दो वर्षों तक इन्होंने इस समस्या को हल करने का प्रयत्न किया और सुरक्षा परिषद् को इस अवधि में पांच रिपोर्टें प्रस्तुत कीं। पहली रिपोर्ट डा० ग्राहम ने १५ अक्तूबर, सन् १९५१ को पेश की। इसमें उन्होंने राज्य के निःशस्त्रीकरण के सम्बन्ध में १२ प्रस्ताव किए। निम्नांकित चार प्रस्तावों में निहित सिद्धांत दोनों सरकारों को मान्य थे :

(१) जम्मू और काश्मीर के प्रश्न पर बल का प्रयोग न किया जाएगा।
(२) इस प्रश्न पर उत्तेजनापूर्ण और हिंसात्मक भाषण न दिए जाएंगे।
(३) पहली जनवरी, सन् १९४९ से लागू लड़ाई-बन्दी और २७ जुलाई, सन् १९४९ को कराची-करारनामा द्वारा स्थापित लड़ाई-बन्दी रेखा का उल्लंघन न किया जाएगा।
(४) संयुक्त राष्ट्र के तत्त्वावधान में आयोजित स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत द्वारा राज्य के अधिमिलन का प्रश्न तय किया जाएगा।

एकल अविच्छिन्न प्रक्रम में निःशस्त्रीकरण किए जाने से सम्बन्धित पांचवें प्रस्ताव पर दोनों सरकारें सहमत नहीं हुईं और न वे अन्य प्रस्तावों पर, जिनमें ९० दिनों के भीतर निःशस्त्रीकरण किए जाने की योजना के सिद्धांतों का उल्लेख था, रज़ामंद हुईं।

डा० ग्राहम ने १९ दिसम्बर, सन् १९५१ को अपनी दूसरी रिपोर्ट सुरक्षा परिषद् को पेश की। इसमें बताया गया कि उनके पहले के निम्न प्रस्तावों पर दोनों सरकारों की सहमति प्राप्त हो गई है :

(१) निःशस्त्रीकरण इस प्रकार किया जाएगा जिससे निर्धारित अवधि (६० दिन या जो भी दोनों सरकारें तय करें) में या उसके बाद लड़ाई-बन्दी करारनामा के भंग होने की कोई आशंका न हो।

(२) संयुक्त राष्ट्र के तत्त्वावधान में अपने सैनिक परामर्शकों सहित भारत और पाकिस्तान की सरकारों के प्रतिनिधि वार्त्ता करेंगे और निःशस्त्री-करण का कार्यक्रम बनाएंगे।

(३) निःशस्त्रीकरण कार्यक्रम का कोई असर संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि और जनमत प्रशासक के दायित्वों और कर्तव्यों पर न पड़ेगा जहां तक उनका सम्बन्ध ५ जनवरी, सन् १६४७ के संकल्प के पैराग्राफ ४ क और ख में उल्लिखित फौजों के अंतिम निस्तारण से है।

(४) निःशस्त्रीकरण के सम्बन्ध में जो भी मतभेद होंगे वे संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि के सैनिक परामर्शदाता को और असहमति बने रहने की दशा में संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि को निर्देशित किए जाएंगे और उनका निर्णय अंतिम होगा।

अपनी रिपोर्ट में डा० ग्राहम ने यह कहा कि निःशस्त्रीकरण योजना से सम्बन्धित अन्य प्रस्तावों पर दोनों सरकारों की सहमति नहीं प्राप्त हो सकी, और इसलिए उन्होंने कुछ संशोधनों का प्रस्ताव किया; संशोधन इस प्रकार थे :

(१) निःशस्त्रीकरण प्रक्रम ६० दिनों के बजाय १५ जुलाई, सन् १६५२ को पूरा किया जा सकता है, जब तक कि भारत और पाकिस्तान के प्रति-निधि इस प्रयोजन के लिए कोई दूसरी तारीख न तय करें, और

(२) निःशस्त्रीकरण इस प्रकार किया जाएगा कि उस दिन लड़ाई बन्दी-रेखा के दोनों तरफ कम से कम संख्या में सशस्त्र सैनिक रहेंगे, दोनों तरफ इनका अनुपात वही होगा जो पहली जनवरी, सन् १६४६ को लड़ाई-बन्दी रेखा के दोनों तरफ तैनात सशस्त्र सनिकों का था।

डा० ग्राहम ने अपनी तीसरी रिपोर्ट १६ जुलाई, सन्१६५२ को प्रस्तुत की। उसमें उन्होंने बताया कि उनका प्रयास उनके पहले १२ प्रस्तावों के सम्बन्ध में दोनों सरकारों की सहमति प्राप्त करना रहा है और उनकी यह बराबर कोशिश रही है कि लड़ाई-बन्दी रेखा के दो तरफ तैनात सैनिकों की संख्या में और ज़्यादा कमी हो जाए। उन्होंने कहा कि निःशस्त्रीकरण की अवधि की समाप्ति पर लड़ाई-बन्दी रेखा के दोनों तरफ कितनी और किस प्रकार की फौज रहे इस बारे में दोनों सरकारों में अब भी मतभेद है और उसे दूर नहीं किया जा सका है।

डा० ग्राहम ने अपनी चौथी रिपोर्ट २ सितम्बर, सन् १६५२ को सुरक्षा परिषद् के समक्ष प्रस्तुत की। इसमें उन्होंने यह प्रस्ताव किया कि निःशस्त्रीकरण-अवधि के अंत में लड़ाई-बन्दी रेखा के पाकिस्तान की तरफ ६००० सशस्त्र सैनिक और भारत की तरफ १८,००० सशस्त्र सैनिक रहेंगे जिनमें राज्य की सशस्त्र फौजें भी शामिल होंगी।

राज्य के नि:शस्त्रीकरण का उपर्युक्त प्रस्ताव १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों के आशय के प्रतिकूल था। सम्पूर्ण राज्य का नि:शस्त्रीकरण एक प्रक्रम में हो ऐसी कोई व्यवस्था आयोग के संकल्पों में नहीं की गई थी। एक प्रक्रम में नि:शस्त्रीकरण पाकिस्तानी फौजों का होना चाहिए था न कि भारतीय फौजों का। भारतीय फौजें तो पाकिस्तान द्वारा अपने अवैध आधिपत्याधीन समस्त प्रदेश को खाली कर देने के बाद विभिन्न प्रक्रमों में हटाई जाने को थीं।

लड़ाई-बन्दी रेखा के दोनों तरफ एक साथ नि:शस्त्रीकरण किए जाने का प्रस्ताव वस्तुत: आयोग के संकल्पों के मंतव्य के प्रतिकूल था क्योंकि दोनों देशों की स्थिति जुदा-जुदा थी—एक आक्रमणकारी था, दूसरा आक्रांत, एक की अनुपस्थिति अवैध थी, दूसरे की वैध। फिर लड़ाई-बन्दी रेखा की तरफ किसी भी प्रकार की फौज का कायम रहना आयोग के संकल्पों के प्रतिकूल था और भारत को पहले दिए गए आश्वासनों के खिलाफ। संक्षेप में, डॉ० ग्राहम के प्रस्ताव में पाकिस्तान द्वारा आक्रांत प्रदेश पर पाकिस्तान के अधिकार को स्वीकार किया गया था जो सर्वथा अनुचित था। भारत ने, ज़ाहिर है, उसे स्वीकार करने में अपनी असहमति प्रकट की।

१२ जनवरी, सन् १९५३ को डॉ० ग्राहम न्यूयार्क में भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों से यह जानने के लिए मिले कि काश्मीर-समस्या पर और आगे बातचीत किये जाने के सिलसिले में उनका क्या रुख है। पाकिस्तान २३ दिसम्बर, सन् १९५२ के संकल्प के आधार पर वार्ता करने को तैयार था। भारत उस संकल्प को मानने को तैयार नहीं था। वह उसी आधार पर वार्ता करने को तैयार था जो आयोग के संकल्पों के अनुकूल हो। २३ जनवरी को दोनों देशों की सरकारें मंत्रियों के स्तर पर आयोगके संकल्पों के आधार पर वार्ता करने के लिए सहमत हो गईं। ४-१९ फरवरी, सन् १९५३ को जेनेवा में सम्मेलन हुआ। भारतीय प्रतिनिधिमंडल के नेता इस समय गिरिजाशंकर वाजपेयी थे। आयोग के संकल्पों की व्याख्या में दोनों सरकारों में मतभेद था। भारत चाहता था कि आज़ाद फौजों को पूर्णत: निशस्त्र और भंग किया जाए। डॉ० ग्राहम बातचीत के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि दोनों सरकारों के बीच उस समय कोई समझौता सम्भव नहीं था। डॉ० ग्राहम ने अपनी पांचवीं रिपोर्ट में जो उन्होंने २७ मार्च, सन् १९५३ को पेश की यह प्रस्ताव किया कि पाकिस्तान की तरफ ६००० सैनिक रहेंगे और इनपर पाकिस्तान हाई कमान का कोई प्रशासकीय या संचालन-नियंत्रण नहीं होगा, और भारतीय रेखा की तरफ २१,००० सैनिक होंगे जिनमें राज्य की सशस्त्र सेना भी शामिल होगी। भारत २१,००० सैनिक रखने को राज़ी हो गया किन्तु पाकिस्तान की ओर ६००० सैनिकों के रखे जाने पर उसने आपत्ति की। उसने कहा कि लड़ाई-बन्दी रेखा के पाकिस्तान की ओर ४००० सशस्त्र सैनिकों के रखे जाने में उसे आपत्ति न होगी। पाकिस्तान ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। डा० ग्राहम ने अपनी रिपोर्ट में अपनी असफलता का ज़िक्र किया और यह सिफारिश की कि भारत और पाकिस्तान में समस्या के समाधान के लिए पारस्परिक वार्ता होनी चाहिए।

लगभग चार वर्ष के बाद सुरक्षा परिषद् ने २१ फरवरी, सन् १९५७ को अपनी ७७४ वीं बैठक में अपने प्रेसीडेण्ट, स्वेडन के प्रतिनिधि, गुनार जारिंग से भारत-पाकिस्तान विवाद सुलझाने के लिए प्रार्थना की। जारिंग १४ मार्च, सन् १९५७ को कराची गए और १५-२० मार्च तक पाकिस्तान की सरकार से उन्होंने बातचीत की। उन्होंने २४-२८ मार्च तक भारत सरकार से काश्मीर-समस्या पर वार्ता की। तत्पश्चात् जारिंग ने फिर २-५ अप्रैल तक पाकिस्तान की सरकार से और ६-९ अप्रैल तक भारत सरकार से बात की। उपमहाद्वीप से जाने से पूर्व जारिंग ने एक बार फिर १० अप्रैल को पाकिस्तान की सरकार से विचार-विमर्श किया।

जारिंग ने सुरक्षा परिषद् को अपनी रिपोर्ट २९ अप्रैल, सन् १९५७ को प्रस्तुत की और उसमें काश्मीर-समस्या के समाधान के लिए कोई ठोस प्रस्ताव न पेश कर सकने में अपनी असमर्थता प्रकट की। सुरक्षा परिषद् ने अपनी ८०८ वीं बैठक में २ दिसम्बर, सन् १९५७ को एक संकल्प पारित किया जिसके द्वारा संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि डा० ग्राहम से दुबारा उपमहाद्वीप जाने और आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक उपाय करने का अनुरोध किया गया। डा० ग्राहम १२ जनवरी, सन् १९५८ को दिल्ली पहुंचे और उन्होंने भारत सरकार से १२-१७ जनवरी, २३ जनवरी से १ फरवरी और ७-१३ फरवरी को एवं पाकिस्तान सरकार से १७-२३ जनवरी, १-७ फरवरी और १३-१५ फरवरी को वार्ता की और १५ फरवरी को कराची से संयुक्त राष्ट्र लौट गए। उन्होंने अपनी रिपोर्ट २८ मार्च, सन् १९५८ को पेश की। भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार के बीच सीधी वार्ता के लिए अनुकूल वातावरण बनाने के निमित्त उन्होंने निम्नलिखित प्रस्ताव किए :

(१) दोनों सरकारें दुबारा अपनी-अपनी जनता से वार्ता के लिए अनुकूल वातावरण बनाने का अनुरोध सार्वजनिक रूप से करेंगी और यह वचन देंगी कि वे ऐसे कोई बयान न जारी करेंगी और न ऐसी कोई कार्यवाहियां करेंगी जिनसे स्थिति के गम्भीर हो जाने की आशंका हो।

(२) दोनों सरकारें प्रतिज्ञान करेंगी कि वे मौजूदा लड़ाई-बन्दी की रेखा को भंग नहीं करेंगी।

(३) संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि के तत्त्वावधान में इस बात पर विचार किया जाएगा कि जब तक काश्मीर-समस्या का अंतिम रूप से समाधान नहीं हो जाता जम्मू और काश्मीर राज्य से किस प्रकार (आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ के संकल्प के अधीन) पाकिस्तानी फौजें हटाई जाएंगी, तथा जम्मू और काश्मीर की पाकिस्तान की ओर सीमा से पाकिस्तानी फौज हटा लिए जाने के बाद सीमा के पाकिस्तान की तरफ संयुक्त राष्ट्र की फौज तैनाती की सम्भावना पर भी विचार किया जाएगा।

(४) १३ अगस्त के संकल्प के भाग तीन और ५ जनवरी के संकल्प के जन-

मत-संग्रह सम्बन्धी भागों की व्याख्या के बारे में दोनों सरकारों की सहमति शीघ्र अपेक्षित होगी, और

(५) संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि के तत्त्वावधान में भारत और पाकिस्तान के प्रधान मंत्रियों का एक सम्मेलन होगा।

भारत को ये प्रस्ताव स्वीकार्य नहीं थे, क्योंकि सुरक्षा परिषद् और आयोग के पूर्व संकल्पों को कार्यान्वित नहीं किया गया था और उनको कार्यान्वित न किए जाने की ज़िम्मेदारी पूर्णतः पाकिस्तान की थी। डा० ग्राहम ने अपनी सिफारिशों और प्रस्तावों में न केवल इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया था, अपितु उन्होंने उन संकल्पों के कार्यान्वयन की दिशा में कोई ठोस सुझाव भी नहीं दिए थे।

इस अवधि में कुछ खास घटनाएं हुईं, पहली यह कि काश्मीर में संविधान सभा स्थापित करने की पूरी तैयारी की गई, जिसके विरुद्ध पाकिस्तान ने सुरक्षा परिषद् में अपनी आवाज़ बुलन्द की। २९ मई, सन् १९५१ को इस मसले पर परिषद् में बहस हुई। भारत ने कहा कि काश्मीर स्वायत्त राज्य है और उसे अपनी संविधान सभा बनाने की पूरी स्वतंत्रता और अधिकार प्राप्त है। संविधान सभा अधिमिलन के प्रश्न पर अपना मत व्यक्त कर सकती है किन्तु उससे परिषद् के सामने प्रस्तुत प्रश्न पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। नेहरू ने ११ जून, सन् १९५१ को नई दिल्ली में कहा कि किसी भी देश को काश्मीर के अन्दरूनी मामले में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है और इससे उनका कोई सरोकार नहीं है कि काश्मीर में भारत या अब्दुल्ला की सरकार क्या करती है। अब्दुल्ला ने नेशनल कान्फरेन्स को यह सूचित किया कि सितम्बर में सभा के लिए निर्वाचन होगा और सुरक्षा परिषद् को या संयुक्त राष्ट्र को इसपर आपत्ति करने का कोई हक नहीं है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण किन्तु दुःखद घटना यह हुई कि १६ अक्तूबर, सन् १९५१ को पाकिस्तान के प्रधान मंत्री श्री लियाकतअली खां की निर्मम हत्या एक पठान ने कर दी। लियाकतअली खां के बाद जो प्रधान मंत्री हुए वे उतने योग्य नहीं थे, फलतः काश्मीर के मामले में उनका दृष्टिकोण संकीर्ण रहा।

तीसरी घटना यह हुई कि जब डा० ग्राहम की दूसरी रिपोर्ट पर परिषद् में १० जनवरी, सन् १९५२ को बहस हुई और डा० ग्राहम ने स्वयं अपनी रिपोर्ट की व्याख्या की तो रूस के प्रतिनिधि जेकब मलिक ने पहली बार काश्मीर-समस्या के सम्बन्ध में रूसी दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि अमेरिका और ब्रिटेन काश्मीर-समस्या के हल किए जाने में लगातार रोड़े अटका रहे हैं और इन रिपोर्टों का केवल एक मन्तव्य है और वह है काश्मीर के अन्दरूनी मामले में हस्तक्षेप करना। अमेरिका और ब्रिटेन का ध्येय काश्मीर को अपने संरक्षण में लेना है। उन्होंने कहा कि संविधान सभा की स्थापना पर आपत्ति करना अपना भविष्य तय करने के काश्मीर के लोगों के अधिकार का अतिक्रमण करना है। जेकब मलिक ने कहा कि रूसी सरकार का यह मत है कि काश्मीर-समस्या का समाधान काश्मीर के लोग स्वयं बिना किसी हस्तक्षेप के या सहायता के कर सकते हैं और काश्मीर के लोगों द्वारा प्रजा-

तांत्रिक ढंग से निर्वाचित संविधान सभा काश्मीर के भविष्य को निर्धारित कर सकती है। स्पष्ट था कि भारत-विरोधी सदस्यों के बीच रूस भारत के पक्ष का सक्रिय समर्थन कर रहा था और इससे भारतीयों को बड़ी प्रसन्नता हुई ।

डा० ग्राहम द्वारा पांचवीं रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के लगभग ४ वर्ष बाद पाकिस्तान ने काश्मीर का प्रश्न जनवरी, सन् १९५७ में फिर उठाया क्योंकि काश्मीर में संविधान सभा ने अपना कार्य समाप्त कर लिया था और यह घोषणा की गई थी कि २६ जनवरी, सन् १९५७ से राज्य में नया संविधान लागू होगा। २ जनवरी, सन् १९५७ को पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने यह रिपोर्ट की कि पाकिस्तान-भारत से सीधी बातचीत का कोई फल नहीं निकला है; भारत अपने वचनों को पूरा करने के लिए तैयार नहीं है; ३० मार्च, सन् १९५१ के संयुक्त राष्ट्र के संकल्प के बावजूद राज्य को भारत में मिलाने के कदम काश्मीर की संविधान सभा ने उठाए हैं और राज्य में विरोधी दल का दमन किया जा रहा है। नून ने इसलिए अनुरोध किया कि सुरक्षा परिषद् आयोग के संकल्पों को लागू करने के लिए ठोस उपाय करे।

पाकिस्तान की उपर्युक्त रिपोर्ट पर विचार करने के लिए परिषद् की बैठक १६ जनवरी, सन् १९५७ को हुई। पाकिस्तानी प्रतिनिधि ने कहा कि काश्मीर-समस्या को सन्तोषजनक रूप से सुलझाने के लिए ११ प्रस्ताव[१] रखे गए, पाकिस्तान ने प्रत्येक प्रस्ताव को स्वीकार किया किन्तु भारत ने एक न एक बहाने से सभी प्रस्तावों को नामंजूर कर दिया। भारत ने अब यह आश्रय लिया है कि पाकिस्तान को अमेरिकी इमदाद मिल रही है और पाकिस्तान सैनिक-संधियों का सदस्य है। यदि भारत जनमत लेने को तैयार हो जाता है तो पाकिस्तान (१) युद्ध न करने की संधि कर लेगा, और (२) यह ऐलान कर देगा कि भारत पर कोई आक्रमण पाकिस्तान पर आक्रमण समझा जाएगा। १९४८-४९ के करारनामा के तीन पक्ष हैं,—सुरक्षा परिषद्, पाकिस्तान और भारत। भारत द्वारा किसी एकतरफा कार्यवाही को वैध नहीं कहा जा सकता। अगर जम्मू और काश्मीर की संविधान सभा प्रजातांत्रिक ढंग से निर्वाचित भी हो तो भी वह राज्य का भविष्य निश्चित नहीं कर सकती। पाकिस्तान ने सुरक्षा

---

(१) १. फौजों को हटाने की योजना के लिए आयोग द्वारा मार्च, सन् १९४९ में प्रार्थना।
२. अगस्त, सन् १९४९ में मध्यस्थ-निर्णय का प्रस्ताव।
३. दिसम्बर, सन् १९४९ में मैकनाटन का प्रस्ताव।
४. जुलाई, सन् १९५० में डिक्सन के प्रस्ताव।
५. राष्ट्रमंडल सम्मेलन के प्रधान मंत्रियों द्वारा आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड की फौजों को भेजने का प्रस्ताव।
६. राष्ट्रमंडल द्वारा भारत और पाकिस्तान की एक संयुक्त फौज का प्रस्ताव।
७. राष्ट्रमंडल द्वारा प्रस्ताव, कि जनमत-प्रशासक स्थानीय फौजों की भरती करें।
८. मार्च, १९५१ का प्रस्ताव।
९. मार्च, १९५१ में सुरक्षा परिषद् का प्रस्ताव।
१०. ग्राहम के प्रस्ताव, और
११. २३ दिसम्बर, १९५२ का परिषद् का प्रस्ताव।

परिषद् से अनुरोध किया कि वह भारत से कहे कि वह (१) संविधान सभा द्वारा स्वीकृत संविधान में उल्लिखित परिवर्तनों को स्वीकार न करे, (२) फौजों को हटाने की व्यवस्था करे और राज्य की सुरक्षा का दायित्व तत्काल संयुक्त राष्ट्र की फौज को समर्पित कर दे।

जब ६ दिन बाद २३ जनवरी, सन् १९५७ को परिषद् की बैठक हुई तो भारत के प्रतिनिधि वी० के० कृष्णा मेनन ने परिषद् की लगातार तीन बैठकों में काश्मीर समस्या पर भारत का दृष्टिकोण रखा। उन्होंने कहा, "काश्मीर समस्या कोई प्रादेशिक विवाद नहीं है, प्रश्न वस्तुतः आक्रमण का है। आक्रमणकारी होने के नाते पाकिस्तान का विवाद में कोई अस्तित्व नहीं है, १३ अगस्त के संकल्प के भाग २ के कार्यान्वित हो जाने के बाद ही जनमत-संग्रह का प्रश्न उपस्थित होता है। पाकिस्तान ने संकल्प के भाग २ को कार्यान्वित करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया है, यही नहीं उसने अपनी सैनिक शक्ति में वृद्धि कर ली है, और गिलगिट, चित्राल और बाल्टिस्तान में हवाई अड्डे बना लिए हैं। इसलिए भारत द्वारा किसी संकल्प के उल्लंघन करने का प्रश्न ही नहीं उठता।" उन्होंने बताया कि भारत के खिलाफ पाकिस्तान का प्रत्येक अभियोग गलत है।

कृष्णा मेनन का भाषण समाप्त होने के पहले ही आस्ट्रेलिया, कोलम्बिया, क्यूबा, ब्रिटेन और अमेरिका ने एक संकल्प का प्रालेख तैयार किया और स्वीकृति के लिए सदस्यों में घुमाया। उसमें कहा गया कि संविधान सभा द्वारा राज्य का भविष्य नहीं निर्धारित किया जा सकेगा। भारत ने इसके विरोध में कहा कि परिषद् का यह प्रस्ताव काश्मीर के अन्दरूनी मामले में हस्तक्षेप का द्योतक है और इसलिए भारत को स्वीकार्य नहीं है। सोवियत प्रतिनिधि सोवोलेव ने संकल्प के विपक्ष में अपना मत व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि संविधान सभा द्वारा राज्य का संविधान स्वीकार किए जाने का मतलब यह है कि काश्मीर के लोगों ने इस प्रश्न को तय कर लिया है और काश्मीर भारत का एक अभिन्न अंग है।

जब परिषद् की बैठक ३० जनवरी, सन् १९५७ को फिर हुई तो पाकिस्तान ने काश्मीर के सम्बन्ध में गतिरोध हटाने के लिए ज़ोर दिया। यद्यपि मेनन ने बड़ी ज़ोरदार तकरीर की तो भी परिषद् के अधिकांश सदस्यों ने काश्मीर के सम्बन्ध में तत्काल कार्यवाही करने पर बडा बल दिया और ब्रिटेन, अमेरिका, क्यूबा और आस्ट्रेलिया ने एक संकल्प स्वीकृत्यर्थ परिषद् के समक्ष रखा। इसमें कहा गया था कि पाकिस्तान का यह सुझाव किराज्य में संयुक्त राष्ट्र की फौज रखी जाए विचारणीय है। परिषद् ने अपने प्रेसीडेण्ट जारिंग से इस सम्बन्ध में और निःशस्त्रीकरण के सम्बन्ध में दोनों पक्षों से बात करने का अनुरोध किया। भारत संयुक्त राष्ट्र की फौज को राज्य में रखे जाने के पक्ष में नहीं था और उसने संकल्प का विरोध किया। रूस के प्रतिनिधि ने संकल्प का विरोध किया और उसके खिलाफ अपना विशेषाधिकार प्रयुक्त किया। फलतः वह संकल्प गिर गया, और आस्ट्रेलिया, ब्रिटेन और अमेरिका ने एक दूसरा संकल्प रखा जिसमें केवल जारिंग से उपमहाद्वीप जाने और भारत और पाकिस्तान

से बात करने के लिए कहा गया था। यह संकल्प २१ फरवरी, सन् १९५७ को स्वीकार हो गया।

सोवियत प्रतिनिधि ने एक बार फिर काश्मीर-समस्या में भारतीय पक्ष का समर्थन किया जब जारिंग की रिपोर्ट पर परिषद् में विचार हो रहा था और ब्रिटेन तथा अन्य ४ सदस्यों ने एक संकल्प स्वीकृत्यर्थ प्रस्तुत किया जो भारत के दृष्टिकोण से न्यायोचित नहीं था। २१ नवम्बर सन् १९५७ को प्रस्तावित संकल्प पर बोलते हुए सोवियत प्रतिनिधि सोवोलेव ने कहा कि पश्चिमी राष्ट्रों के प्रतिनिधि काश्मीर की वर्तमान स्थिति की उपेक्षा कर रहे हैं और यदि इस संकल्प में समुचित संशोधन नहीं किया जाता तो वे अपने विशेषाधिकार का प्रयोग करेंगे। फलतः २ दिसम्बर, सन् १९५७ को एक संशोधित संकल्प स्वीकृत हुआ जिसमें संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि डा० ग्राहम से एक बार फिर इस समस्या को सुलझाने के लिए उपमहाद्वीप जाने का अनुरोध किया गया। जैसा पहले बताया जा चुका है डा० ग्राहम की पांचवीं रिपोर्ट में किए गए प्रस्तावों को स्वीकार करने में भारत असमर्थ था क्योंकि इन प्रस्तावों में १३ अगस्त, सन् १९४८ के संकल्प के भागों को पाकिस्तान द्वारा कार्यान्वित न किए जाने का कोई विचार नहीं रखा गया था। ४ अप्रैल को भारत के प्रधान मंत्री ने इस सम्बन्ध में भारत की स्थिति पुनः सुस्पष्ट की। उन्होंने कहा कि ऐसा प्रस्ताव या संकल्प जिसमें मूल बातों की उपेक्षा की जाती है और आक्रमणकारी और आक्रांत को एक ही स्तर पर रखा जाता है कभी स्वीकार्य नहीं होगा। यदि पाकिस्तान द्वारा आक्रमण और काश्मीर का भारत में अधिमिलन स्वीकार कर लिया जाता है तो अन्य विषयों पर बातचीत की जा सकती है।

चौथी महत्त्वपूर्ण घटना शेख अब्दुल्ला की ८ अगस्त, सन् १९५३ को बरखास्तगी[1] और गिरफ्तारी थी, और ९ अगस्त, सन् १९५३ को काश्मीर में उपप्रधान मंत्री बख्शी गुलाममोहम्मद की प्रधान मंत्री के पद पर नियुक्ति थी।

पांचवीं महत्त्वपूर्ण घटना सन् १९५३-५६ में भारत और पाकिस्तान के प्रधान मंत्रियों का काश्मीर तथा अन्य मामलों के विषय में परस्पर मिलना और वार्ता करना था। १ अप्रैल, सन् १९५३ को पाकिस्तान के प्रधान मंत्री ने बातचीत के लिए पं० नेहरू को आमंत्रित किया। डा० ग्राहम ने, स्मरण होगा, अपनी पांचवीं रिपोर्ट में काश्मीर-समस्या को तय करने के लिए दोनों प्रधान मंत्रियों के आपस में बातें करने का सुझाव दिया था। पाकिस्तान में कय्यूम खां, शहाबुद्दीन जैसे नेता प्रधान मंत्री-स्तर पर वार्ता के खिलाफ थे, वे लगातार भारत को शत्रु कहकर पुकारते थे। इस बीच पाकिस्तान में प्रधान मंत्री नाजिमुद्दीन को पाकिस्तान के गवर्नर जनरल गुलाम मुहम्मद ने बरखास्त कर दिया। गुलाम मुहम्मद भारत से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखना चाहते थे। काश्मीर कार्य के मंत्री शोयब कुरेशी हुए जो पहले गांधी जी के साथी रह चुके थे। मोहम्मद अली पाकिस्तान के प्रधान मंत्री बने। इन्होंने, नेहरू को पद ग्रहण करने के तुरन्त बाद २५ अप्रैल को एक पत्र लिखा और उनसे वार्ता करने की इच्छा प्रकट की। मोहम्मद

१. बरखास्तगी और गिरफ्तारी के कारणों की सविस्तार चर्चा सम्बन्धित अध्याय में की गई है।

अली ने पं० नेहरू को अपना बड़ा भाई कहा और राजनीतिक क्षेत्रों में ऐसा समझा जाने लगा कि काश्मीर का जटिल प्रश्न अब तय हो जाएगा। पं० नेहरू ने मोहम्मद अली के पत्र का स्वागत किया।

सम्राज्ञी एलिज़ाबेथ का राज्याभिषेक लन्दन में होने वाला था, जिसमें दोनों देशों के प्रधान मंत्री जाने वाले थे। २२ मई को मोहम्मद अली ने घोषित किया कि वे प्रारम्भिक बातें करने के लिए जून में लन्दन में पं० नेहरू से मिलेंगे। ५ जून, सन् १९५३ को दोनों प्रधान मंत्री लन्दन में मिले और भारत-पाकिस्तान समस्याओं पर अनौपचारिक रूप से बातचीत की। ८ जून को दोनों प्रधान मंत्रियों ने लन्दन में प्रेस सम्मेलन में बताया कि बातें सौहार्दपूर्ण वातावरण में हुई हैं और अब भारत-पाकिस्तान के सम्बन्धों में एक नया अध्याय प्रारम्भ हो रहा है। लन्दन में लगभग ३ बार दोनों प्रधान मंत्री मिले। उसके बाद २५ जुलाई, सन् १९५३ को कराची में प्रधान मंत्रियों की बैठक हुई। नेहरू जब पाकिस्तान गए तो लोगों में बड़ा उत्साह था, कराची की सड़कों पर अपार भीड़ नेहरू के दर्शन के लिए उमड़ पड़ी थी। 'नेहरू ज़िन्दाबाद' के नारे लगाए गए, पाकिस्तान के समाचारपत्रों में नेहरू को एक 'महान् व्यक्ति' कहा गया। दोनों प्रधान मंत्रियों ने एक संयुक्त विज्ञप्ति जारी की। उसमें कहा गया :

> भारत और पाकिस्तान के प्रधान मंत्रियों ने २५, २६ और २७ जुलाई, सन् १९५३ को विभिन्न समस्याओं पर मैत्रीपूर्ण और सौहार्दपूर्ण वातावरण में बातचीत की। काश्मीर-समस्या पर बातचीत की गई और विभिन्न दृष्टिकोणों पर प्रकाश डाला गया। दोनों प्रधान मंत्रियों ने एक दूसरे के विचारों को आदर दिया। अगली बैठक नई दिल्ली में होगी, यह निश्चय हुआ।

वार्ता से दोनों प्रधान मंत्री संतुष्ट थे और वे आशा करते थे कि काश्मीर समस्या का हल निकल आएगा। प्रधान मंत्रियों की दूसरी बैठक १७ अगस्त, सन् १९५३ को नई दिल्ली में हुई। पाकिस्तान के प्रधान मंत्री १६ अगस्त को नई दिल्ली पहुंचे। उनका वहां भव्य स्वागत किया गया। २० अगस्त, सन् १९५३ को एक संयुक्त विज्ञप्ति जारी की गई। उसमें कहा गया :

> दोनों प्रधान मंत्री इस दृढ़ विचार से प्रेरित थे कि यथाशीघ्र भारत-पाकिस्तान-समस्याओं का शांतिपूर्वक हल निकाला जाना चाहिए। काश्मीर-समस्या के सम्बन्ध में यह मत व्यक्त किया गया कि इसका समाधान राज्य के लोगों की इच्छानुसार इस प्रकार किया जाना चाहिए कि राज्य में गड़बड़ी न हो। ऐसा निष्पक्ष जनमत द्वारा ही सम्भव है। जनमत-संग्रह के बारे में पहले प्रस्ताव किए गए थे किन्तु जनमत के पूर्व प्रारम्भिक बातें तय नहीं हो सकी थीं। दोनों प्रधान मंत्री इससे सहमत हुए कि प्रारम्भिक बातों पर वे स्वयं विचार करेंगे जिससे जनमत सम्बन्धी अन्य विषयों पर आपस में सहमति हो सके और जनमत-प्रशासक नियुक्त किया जा सके। यह भी तय हुआ कि जनमत-प्रशासक की नियुक्ति अप्रैल, सन् १९५४ के अन्त तक हो जानी चाहिए और इसके पूर्व अन्य प्रारम्भिक विषय तय हो जाने चाहिए।

यह भी तय हुआ कि जनमत-प्रशासक जम्मू और काश्मीर सरकार द्वारा नियुक्त किया जाए और मैत्रीपूर्ण वातावरण बनाए रखा जाए।

इस विज्ञप्ति का भारत और काश्मीर में स्वागत किया गया किन्तु पाकिस्तान के समाचारपत्रों में इसका बिल्कुल स्वागत नहीं हुआ और पं० नेहरू के सम्बन्ध में अशोभनीय बातें कही गईं। यह भी कहा गया कि पाकिस्तान को वक्त-ज़रूरत के लिए तैयार रहना चाहिए।

जनमत-प्रशासक की नियुक्ति के बारे में पं० नेहरू ने एक बयान में कहा कि पाकिस्तान के प्रधान मंत्री से बातचीत में यह तय हो गया था कि जनमत-प्रशासक छोटे राष्ट्रों में से चुना जाएगा न कि बड़े राष्ट्रों के प्रतिनिधियों में से। इसका खंडन पाकिस्तान ने किया और कहा कि पं० नेहरू ऐसा अमेरिका और पाकिस्तान में फूट डालने के लिए कह रहे हैं क्योंकि एडमिरल निमिट्ज़ की जगह दूसरा व्यक्ति नियुक्त करने की बात बैठक में कभी नहीं उठाई गई थी। इस बीच छोटे-मोटे ऐसे कई मसले उठ खड़े हुए जिनके सम्बन्ध में दोनों प्रधान मंत्रियों में लिखा-पढ़ी चलती रही, और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध में कटुता आ गई। अक्तूबर, सन् १९५३ के अन्त में कराची मुस्लिम लीग की बैठक में भारत के खिलाफ 'मुक्का' का प्रदर्शन किया गया।

इस बीच एक और नई घटना घटी और वह थी पाकिस्तान को अमेरिकी फौजी सहायता का दिया जाना। अमेरिका और पाकिस्तान में सैनिक संधि का सूत्रपात हुआ। इससे जहां तक पाकिस्तान का सम्बन्ध था, काश्मीर-स्थिति में परिवर्तन हो गया। भारत की सुरक्षा के लिए भी खतरा पैदा हो गया। इस बारे में पं० नेहरू ने मोहम्मद अली को १० नवम्बर, सन् १९५३ को एक पत्र भेजा जिसमें इस बात की शिकायत की गई। मोहम्मद अली ने उसका उत्तर १७ दिसम्बर को दिया और उसमें अमेरिका के साथ कोई सैनिक संधि न किए जाने की सूचना दी। उन्होंने कहा, "अलबत्ता सैनिक सहायता दिए जाने के सम्बन्ध में कुछ बात हुई है।" पाकिस्तान और टर्की ने १९ फरवरी, सन् १९५४ को संधि की और अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को सैनिक सहायता दिए जाने के सम्बन्ध में किए गए करारनामे का सार्वजनिक ऐलान पाकिस्तान के प्रधान मंत्री मोहम्मद अली ने २२ फरवरी, सन् १९५४ को किया।

भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध फिर बिगड़ ही रहे थे कि २४ फरवरी, सन् १९५४ को मोहम्मद अली ने पं० नेहरू को एक पत्र भेजा और उसमें उन्होंने जम्मू और काश्मीर संविधान सभा द्वारा भारत में काश्मीर अधिमिलन को स्वीकार किए जाने पर विरोध प्रकट किया। पं० नेहरू ने कहा कि काश्मीर संविधान सभा ने जो निश्चय लिया है उसे वे पलट नहीं सकते, अलबत्ता इस सम्बन्ध में भारत ने जो अन्तर्राष्ट्रीय वचन दे रखा है उसका वह पालन करेगा, किन्तु इस अनुपालन में उन घटनाओं का और उनके फलस्वरूप स्थिति में हुए किसी परिवर्तन का ध्यान रखा जाएगा। अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को सैनिक सहायता दिए जाने के सम्बन्ध में पं० नेहरू ने पहली मार्च, सन् १९५४ को संसद् में एक बयान दिया। उसमें कहा गया :

अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को दी जाने वाली सैनिक सहायता से भारत और

एशिया में गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गई है। हमारे तनाव बढ़ गए हैं। भारत और पाकिस्तान की समस्याओं को हल करने में अब बड़ी कठिनाई उत्पन्न हो गई है। ये समस्याएं केवल दोनों देशों द्वारा ही, किसी बाहरी देश के हस्तक्षेप के बिना हल की जा सकती हैं। हाल में भारत और पाकिस्तान के बीच मैत्री-पूर्ण वातावरण पैदा हो गया था और उन समस्याओं के समाधान के लिए दोनों देशों के प्रधान मंत्रियों में विचार-विमर्श हो रहा था और उसमें कुछ प्रगति भी हुई थी वह प्रगति अब अवरुद्ध हो गई है।

अमेरिका द्वारा जो सैनिक सहायता दी जा रही है वह एक प्रकार से इन समस्याओं के समाधान में हस्तक्षेप स्वरूप है जिसका बहुत गहरा प्रभाव दोनों देशों पर पड़ेगा।

पं० नेहरू ने यह मांग की कि चूंकि भारत-पाकिस्तान-समस्या में अमेरिका एक पक्ष बन गया है इसलिए काश्मीर में स्थित संयुक्त राष्ट्र के प्रेक्षकों में से अमेरिकी कर्मचारी हटा लिए जाएं। उन्होंने अपने उपर्युक्त बयान की एक प्रति ५ मार्च, सन् १९५४ को पाकिस्तान के प्रधान मंत्री को भेजी और कहा कि अमेरिकी निर्णय से काश्मीर-प्रश्न की स्थिति ही बदल गई है और सन् १९५३ तक इस सम्बन्ध में जो वार्ता हुई है वह अब अप्रासंगिक और असंगत हो गई है। अब चूंकि पाकिस्तान विदेशी शस्त्रों का सहारा ले रहा है, इसलिए हम अब कोई जोखिम नहीं उठा सकते और हम काश्मीर में इस परिवर्तित स्थिति में यथावश्यक फौजें रखेंगे। यद्यपि पाकिस्तान ने भारत को आश्वासन दिलाना चाहा कि वह काश्मीर-समस्या को हल करने के लिए अमेरिकी सहायता का उपयोग नहीं करेगा, लेकिन बाद की घटनाओं ने बिल्कुल सिद्ध कर दिया कि भारत का भय न्यायोचित था। मोहम्मद अली ने १४ जुलाई, सन् १९५४ के पत्र में लिखा कि यदि भारत समझता है कि काश्मीर का संदर्भ बदल गया है और स्थिति में परिवर्तन हो गया है तो अब और कोई वार्ता करना लाभप्रद न होगा और वे अब यह समझते हैं कि भारत और पाकिस्तान पहले की उसी स्थिति पर पहुंच गए हैं जब उन दोनों देशों के प्रधान मंत्रियों ने समस्या के समाधान के लिए आपस में बातचीत करना प्रारम्भ किया था। उन्होंने यह भी कहा कि उनकी सरकार का विश्वास है कि पाकिस्तान की सुरक्षा खतरे में है इसलिए उसने अपनी सुरक्षा को दृढ़ करने के लिए कार्यवाहियां की हैं। पाकिस्तान के समाचारपत्रों में एक बार फिर भारत के खिलाफ विष उगला जाने लगा। दोनों प्रधान मंत्रियों की वार्ता इस प्रकार विफल हो गई।

पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल द्वारा संविधान सभा के २४ अक्तूबर, सन् १९५४ को भंग किए जाने पर और मंत्रिमंडल में डा० खां साहब के सम्मिलित हो जाने पर एक बार फिर भारत और पाकिस्तान के बीच बातचीत का सिलसिला कायम करने के लिए प्रयास किया गया। गवर्नर-जनरल गुलाम मोहम्मद अपने मंत्री इसकन्दर मिर्ज़ा के साथ ढाका जाते वक्त लखनऊ से गुज़रे और कहा कि हमें पिछली बातें भूल जानी चाहिए और एक नया अध्याय प्रारम्भ करने के लिए कोशिश करनी चाहिए। हमें जवाहरलाल नेहरू में विश्वास है। कराची के प्रमुख समाचारपत्रों में भी कहा गया कि

दोनों देशों के प्रधान मंत्री फिर से भारत-पाकिस्तान-समस्या सुलझाने के लिए बातचीत करेंगे। वातावरण में सुधार हुआ। पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल २६ जनवरी, सन् १९५५ को भारत के गणतंत्र दिवस पर भारत के अतिथि हुए। गवर्नर-जनरल के साथ उनके प्रधान मंत्री चौ० मोहम्मद अली और दो मंत्री इसकन्दर मिर्ज़ा और डा० खां साहब भारत आए। गवर्नर-जनरल ने भाषणों में फिर दोहराया कि प० नेहरू में हमारी बड़ी आस्था है और हमें विश्वास है कि हमारे सब विवाद और समस्याएं समाप्त हो जाएंगी। गवर्नर-जनरल ने स्वयं पं० नेहरू, मौलाना आज़ाद आदि से विभिन्न समस्याओं पर विचार-विमर्श किया।

मार्च, सन् १९५५ में फिर वार्ता होना निश्चित हुआ। किन्तु अभाग्यवश १६ फरवरी, सन् १९५५ को मोहम्मद अली ने ढाका में कहा कि काश्मीर के विभाजन के लिए पाकिस्तान किसी भी परिस्थिति में तैयार नहीं होगा। काश्मीर मामलों के वज़ीर मुमताज अली ने कहा कि काश्मीर पाकिस्तान में ही शामिल होगा। भारत में प्रतिक्रियास्वरूप पंजाब के गवर्नर ने कहा कि काश्मीर-समस्या अब समाप्त हो गई है। सुरक्षा संगठन के मंत्री महावीर त्यागी ने कहा कि जनमत के लिए भारत ने पाकिस्तान को कोई वचन नहीं दिया है। वातावरण में कुछ तनाव आया, तो भी १४ मई, सन् १९५५ को दिल्ली में वार्ता प्रारम्भ हुई। गवर्नर-जनरल स्वयं भारत आने वाले थे किन्तु अचानक बीमार पड़ जाने से वे न आ सके। मोहम्मद अली और इसकन्दर मिर्ज़ा ने नेहरू और पंत से बात की। वार्ता १४ मई से १८ मई, सन् १९५५ तक चली। काश्मीर-समस्या के प्रत्येक पहलू पर गौर किया गया और उसके समाधान के लिए नये उपायों पर, नये प्रस्तावों पर विचार किया गया। किन्तु कोई विशेष प्रगति नहीं हुई यद्यपि भारत और पाकिस्तान दोनों देशों में आशा यही व्यक्त की गई कि समस्या का हल शीघ्र ही होने वाला है। यह सुनने में आया कि काश्मीर घाटी भारत के पास रहेगी और उसके बदले में पाकिस्तान को काश्मीर का दूसरा हिस्सा मिलेगा। यह भी रिपोर्ट पढ़ने को मिली कि लड़ाई-बन्दी की वर्तमान रेखा ही काश्मीर विभाजन की रेखा मान ली जाएगी।

पाकिस्तान की राजनीतिक स्थिति में इस बीच परिवर्तन हो गया। इसकन्दर मिर्ज़ा गवर्नर-जनरल हो गए। प्रधान मंत्री ने इस्तीफा दे दिया। पाकिस्तान के समाचारपत्रों में मोहम्मद अली के खिलाफ लेख प्रकाशित होने लगे कि काश्मीर-समस्या पर वार्ता करते समय पाकिस्तान का हित उन्होंने अपने सामने नहीं रखा। पाकिस्तान की सियासी जमातें मोहम्मद अली से जवाब-तलब की मांग करने लगीं। २५ मई को पाकिस्तान के प्रधान मंत्री ने एक बयान दिया और कहा कि यह बिल्कुल गलत है कि उन्होंने जनमत के अलावा किसी दूसरे तरीके से काश्मीर के अधिमिलन का प्रश्न तय करने पर कोई समझौता किया है। उन्होंने यह भी कहा कि संयुक्त राष्ट्र से काश्मीर के प्रश्न को हटाए जाने का कोई इरादा नहीं है और ऐसा कोई समझौता नहीं किया जाएगा और न हल निकाला जाएगा जो पाकिस्तान के लोगों को नापसन्द हो। इतना ही नहीं, उन्होंने १ जून, सन् १९५५ को ब्राडकास्ट किया और उसमें इस बात को दोहराया कि काश्मीर में जनमत-संग्रह की मांग को छोड़ने का कोई प्रश्न नहीं उठता।

मोहम्मद अली के इस व्यवहार से भारत में निराशा की लहर दौड़ गई और यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया कि पाकिस्तान काश्मीर-समस्या का कोई सन्तोषप्रद हल ढूंढ़ने के लिए तैयार नहीं है। पं० पंत ने इस सिलसिले में ८ जुलाई, सन् १९५५ को श्रीनगर में एक भाषण दिया। उसमें उन्होंने कहा :

> जब काश्मीर भारत में मिला तो हमने कुछ बयान दिए। जिन्हें अस्वीकृत नहीं किया जा सकता। लेकिन जब हमने बयान दिए थे, परिस्थितियां आज की परिस्थितियों से भिन्न थीं। समय भी तब से काफी हो गया है, और बहुत-सी बातें उठ खड़ी हुई हैं। इन आठ वर्षों में काश्मीर में तरक्की की नीति का अनुसरण किया जा रहा है और बहुत-सी विकास-योजनाएं चल रही हैं। पाकिस्तान ने अमेरिका से सैनिक संधि कर ली है। वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित काश्मीर की संविधान सभा ने सुनिश्चित निर्णय ले लिया है। संविधान सभा के चुनाव के अवसर पर जम्मू और काश्मीर की नेशनल कान्फरेंस द्वारा पारित प्रस्तावों और शेख अब्दुल्ला द्वारा दिए गए उद्घाटन-अभिभाषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि संविधान सभा मुख्यतः इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न को तय करने के प्रयोजन से ही गठित की गई थी। यद्यपि मैं भारत सरकार द्वारा प्रारम्भ में की गई घोषणा को नज़र अन्दाज़ नहीं कर सकता तो भी कुछ महत्त्वपूर्ण बातों की, जिनका मैंने संक्षेप में ऊपर उल्लेख किया है, उपेक्षा नहीं की जा सकती। इन परिस्थितियों में मेरा व्यक्तिगत विचार है कि उल्टी गंगा नहीं बहाई जा सकती। इसका सम्बन्ध काश्मीर के उस भाग से है जो हमारे साथ है। काश्मीर के दूसरे भाग ने अभी तक अपना निर्णय नहीं लिया है, कदाचित् वहां के निवासियों को ऐसा करने का अवसर नहीं दिया गया है। वहां के हालात सन्तोषप्रद नहीं बताए जाते हैं। जनमत-संग्रह लिए जाने के लिए किसी उचित शर्त पर पाकिस्तान रज़ामन्द नहीं हो सका है और न मैं समझता हूं वह रज़ामन्द होगा। हम सब मसलों पर पाकिस्तान से समझौता करने के लिए उत्सुक हैं। हम चाहेंगे कि भारत और पाकिस्तान के बीच सद्भावपूर्ण पड़ोसी के सम्बन्ध बने रहें।

पंत के इस बयान से पाकिस्तान में तूफान मच गया। इसकन्दर मिर्ज़ा ने कहा कि पाकिस्तान को फिर से सोचना पड़ेगा यदि भारत इस प्रकार अपने वचनों से मुकर जाएगा। नेहरू को विरोध-पत्र भेजा गया। नेहरू ने आश्वासन दिया कि भारत अपने वचनों पर दृढ़ है। पाकिस्तान के प्रधान मंत्री ने रेडियो पर १ अगस्त, सन् १९५५ के अपने भाषण में कहा कि नेहरू के आश्वासन से पाकिस्तान सन्तुष्ट है और काश्मीर के अधिमिलन का प्रश्न काश्मीर की जनता द्वारा तय किया जाना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि पाकिस्तान सरकार को इस मसले पर सलाह देने के लिए उन्होंने संविधान सभा के सभी राजनीतिक दलों का एक सम्मेलन बुलाया है।

२ सितम्बर, सन् १९५५ को चौधरी मोहम्मद अली ने प्रेस सम्मेलन में यह तस्लीम किया कि पाकिस्तान में काश्मीर के प्रश्न पर बड़ी बेचैनी है। एक सर्वदलीय

सम्मेलन किया गया और उसमें भारत को बुरा-भला कहा गया। पाकिस्तान सरकार से यह अनुरोध किया गया कि वह काश्मीर के आत्मनिर्णय के प्रश्न को तय करने के लिए हर सम्भव उपाय करे।

एक और महत्त्वपूर्ण घटना इस बीच हुई। पाकिस्तान बगदाद संधि में शामिल हो गया। चौधरी मोहम्मद अली ने १ जुलाई, सन् १९५५ को ऐलान किया कि टर्की, इराक और पाकिस्तान एक दूसरे की हिफाज़त और सुरक्षा में सहयोग देंगे। इस संधि में पाकिस्तान के शामिल हो जाने के बाद भारत की चिंता और बढ़ गई। शीत युद्ध के बादल मंडराने लगे। सीटो ने कहना शुरू किया कि काश्मीर की समस्या का तुरन्त समाधान होना चाहिए। पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल इसकन्दर मिर्ज़ा ने अपने भाषणों में कहना प्रारम्भ कर दिया कि भारत के प्रधान मंत्री के भाषण, जो उन्होंने हाल में काश्मीर के सम्बन्ध में दिए थे, एशिया के लिए खतरनाक हैं और काश्मीर-समस्या के समाधान के लिए पाकिस्तान सिवाय जनमत-संग्रह के किसी अन्य उपाय पर कभी भी नहीं विचार करेगा।

भारत और पाकिस्तान में पारस्परिक वार्ता का क्रम जो १९५३-५६ तक चलता रहा इस प्रकार बिल्कुल टूट गया। डा० ग्राहम द्वारा काश्मीर-समस्या के समाधान के बारे में अपने प्रयासों की असफलता की सूचना देने के बाद और ३० अप्रैल को शेख अब्दुल्ला की गिरफ्तारी के बाद, पाकिस्तान के नेता भारत के विरुद्ध युद्ध करने की तीव्र मांग करने लगे। मुस्लिम लीगी नेता दौलताना ने लोगों से तैयार रहने की अपील की, सुहरावर्दी ने ऐलान किया कि वे 'खामोश दर्शक' की तरह नहीं बैठ सकते, भूतपूर्व प्रधान मंत्री चौधरी मोहम्मद अली ने कहा कि भारत से युद्ध अनिवार्य है और जितना शीघ्र युद्ध प्रारम्भ किया जाए उतना ही अच्छा होगा, लीग के प्रेसीडेण्ट कयूम खां ने कहा कि काश्मीर-समस्या केवल युद्ध से ही हल की जा सकती है, मशरिकी ने अपने नेताओं से लड़ाई-बन्दी रेखा का उल्लंघन करने की अनुमति मांगी, पार्लियामेंट के सदस्य यूसुफ मोहम्मद ने कहा कि कबाइली काश्मीर में फिर घुस जाने की तैयारी कर रहे हैं, आज़ाद काश्मीर के नेता चौधरी गुलाम अब्बास ने सरकार से अनुरोध किया कि वे लोगों को लड़ाई-बन्दी रेखा का उल्लंघन करने दें। ऐसी धमकियों के वातावरण में दोनों देशों के नेताओं के बीच शांतिपूर्वक वार्ता कठिन ही नहीं किन्तु असम्भव थी।

इसके बावजूद पूर्वी सीमा और अन्तःक्षेत्रों के जटिल प्रश्न पर भारत और पाकिस्तान में समझौता हो गया, और कुछ ही समय बाद पाकिस्तान के प्रधान मंत्री फिरोज़खां नून के रवैये में परिवर्तन आ गया, और उन्होंने भारत-विरोधी नारा लगाने वाले लोगों की निन्दा की। उन्होंने ५ जुलाई, सन् १९५८ को स्पष्ट रूप से कहा कि "जब तक मैं प्रधान मंत्री हूं, कोई युद्ध नहीं किया जाएगा। पाकिस्तान की यह मांग बरकरार है कि काश्मीर में जनमत-संग्रह हो, किन्तु युद्ध से काश्मीर-समस्या या कोई भी समस्या हल नहीं की जा सकती।" नून के भाषण का इतना अच्छा प्रभाव पड़ा कि यह तय हुआ कि दोनों प्रधान मंत्री एक बार फिर आपस में काश्मीर तथा अन्य समस्याओं पर

बातचीत करें। फलतः ६ सितम्बर को नून दिल्ली में नेहरू से बात करने आए। ११ सितम्बर को एक प्रेस विज्ञप्ति में यह कहा गया कि पूर्वी प्रदेश में अधिकांश सीमा क्षेत्रों के प्रश्न पर समझौता हो गया है। किन्तु इसके कुछ ही समय बाद फिरोज़खां नून पदच्युत कर दिए गए, संविधान निराकृत कर दिया गया और पाकिस्तान में सैनिक शासन लागू हो गया। भारत-पाकिस्तान की समस्याओं पर समझौता की दुबारा जो किरण दिखाई पड़ी थी वह लुप्त हो गई।

जनरल अयूब सर्वेसर्वा हो गए। १० अक्तूबर को अयूब ने प्रेस कान्फरेन्स में कहा कि कोई भी पाकिस्तानी काश्मीर को नहीं भुला सकता। सैनिक और सुरक्षा की दृष्टि से हमें जम्मू और काश्मीर राज्य की मुक्ति करानी है। हम इस संघर्ष को नहीं छोड़ सकते। हम कोशिश करेंगे कि शांतिपूर्वक काश्मीर-समस्या का समाधान हो। किन्तु पाकिस्तान में सैनिक प्रशासन हो जाने से दोनों देशों के बीच तनाव बना रहा। यह तनाव और भी बढ़ गया जब १० अप्रैल, सन् १९५९ को भारतीय हवाई बेड़े का कैनबरा जहाज़ पाकिस्तान में मार गिरा दिया गया और क्यू गिरफ्तार कर लिया गया। भारतीय हवाई जहाज़ गलती से पाकिस्तानी प्रदेश में जहाज़ की कुछ खराबी से प्रवेश कर गया था। किन्तु स्थिति अधिक नहीं बिगड़ी, दोनों देशों के नेताओं ने संयम से काम लिया और एक बार फिर भारत-पाकिस्तान मतैक्य पर ज़ोर दिया जाने लगा। पहली सितम्बर, सन् १९५९ को प्रेसीडेंट अयूब और प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने दोनों देशों की विभिन्न समस्याओं पर बातचीत की। पालम हवाई अड्डे पर अयूब ने संवाददाताओं से कहा कि मैं सैनिक हूं और यदि हम लोग इस प्रकार छोटी-छोटी बातों पर झगड़ते रहेंगे और अपनी समस्याओं को हल नहीं करेंगे तो बड़ी चीज़ों में हम पराजित हो जाएंगे। इतिहास साक्षी है कि इसी प्रकार इस महाद्वीप पर पहले आक्रमण हुए हैं। इसलिए संयुक्त सुरक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए किन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि पहले काश्मीर समस्या का समाधान हो जाए। भारत इससे सहमत नहीं था। क्योंकि ऐसा करने से उसकी विदेशी नीति में आमूल परिवर्तन हो जाता था।

सितम्बर, सन् १९६० में भारत के प्रधान मंत्री पं० नेहरू सिंधुजल-संधि पर हस्ताक्षर करने पाकिस्तान गए। यह संधि बहुत महत्त्वपूर्ण थी और इससे दोनों देशों के बीच एक बड़ा रोड़ा हट गया। दोनों देशों में यह आशा व्यक्त की जाने लगी कि अब काश्मीर-समस्या पर भी कुछ न कुछ समझौता हो जाएगा। किन्तु काश्मीर के सम्बन्ध में दोनों देशों के दृष्टिकोण में पहले की तरह अन्तर बना रहा। तो भी एक बार फिर काश्मीर के प्रश्न पर समझौता करने का प्रयास किया गया। प्रधान मंत्री नेहरू १९ सितम्बर, सन् १९६० को कराची प्रेसीडेंट अयूब से बात करने गए। पांच दिनों तक वार्ता चलती रही। वार्ता की समाप्ति पर २३ सितम्बर, सन् १९६० को एक विज्ञप्ति जारी की गई जिसमें कहा गया कि वार्ता मैत्रीपूर्ण वातावरण में हुई, और भारत के प्रधान मंत्री और प्रेसीडेंट अयूब इस नतीजे पर पहुंचे कि काश्मीर का मसला बहुत जटिल है इसलिए इस प्रश्न पर और अधिक विचार करने की आवश्यकता है।

पंडित नेहरू के दिल्ली वापस आ जाने के कुछ समय बाद अयूब आज़ाद काश्मीर गए और मुज़फ्फराबाद में ६ अक्तूबर, सन् १९६० को एक सार्वजनिक भाषण में यह ऐलान किया कि पाकिस्तान भारत का उस समय तक विश्वास नहीं कर सकता जब तक काश्मीर का मसला तय नहीं हो जाता और यह कि पाकिस्तानी सेना अनिश्चित काल तक काश्मीर-प्रश्न को अनिर्णीत नहीं छोड़ सकती। भारत ने समझा और ठीक ही समझा कि इस भाषण में उसे धमकी दी गई है। भारत का यह कथन था कि काश्मीर-प्रश्न पर यदि कोई समझौता हो सकता है तो वह वर्तमान लड़ाई-बन्दी रेखा के आधार पर ही हो सकता है, किन्तु पाकिस्तान इससे सहमत नहीं था।

दिसम्बर, सन् १९६१ में भारत ने गोआ में पुलिस कार्यवाही करके उस पर कब्ज़ा कर लिया। पश्चिमी जगत् पर इसकी बड़ी कड़ी प्रतिक्रिया हुई। इसका लाभ उठाकर पाकिस्तान ने सुरक्षा परिषद् में काश्मीर का प्रश्न फिर खड़ा किया। ११ जनवरी, सन् १९६२ को ज़फरुल्ला खां ने सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेंट को एक पत्र लिखा और उसमें काश्मीर-समस्या पर शीघ्र ही विचार करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया क्योंकि भारत और पाकिस्तान के बीच पारस्परिक वार्ता द्वारा समस्या के समाधान के सभी प्रयास विफल हो चुके थे। भारत के प्रतिनिधि ने १६ जनवरी के अपने पत्र में काश्मीर प्रश्न पर विचार करने के लिए सुरक्षा परिषद् की बैठक के बुलाए जाने पर विरोध किया क्योंकि भारत में सामान्य निर्वाचन होने वाला था। किन्तु पाकिस्तान बैठक के लिए बार-बार जोर देता रहा, और फलतः पहली फरवरी, सन् १९६२ को सुरक्षा परिषद् की बैठक हुई। ज़फरुल्ला ने एक लम्बे-चौड़े बयान में सुरक्षा परिषद् से अनुरोध किया कि,

(१) यह सुनिश्चित किया जाए कि विवाद के समाधान के लिए बल का प्रयोग नहीं किया जाएगा जिससे दोनों देशों के बीच वर्तमान तनाव जाता रहे।

(२) काश्मीर-विवाद पर विचार किया जाए जिससे समस्या का समाधान हो सके और काश्मीर के लोगों को आत्मनिर्णय का अधिकार प्राप्त हो सके।

भारत के प्रतिनिधि सी०एस०झा ने कहा कि पिछली बार जब सुरक्षा परिषद् की बैठक हुई थी तब से कोई ऐसी नई बातें उत्पन्न नहीं हो गई हैं जिनके आधार पर समस्या पर पुनर्विचार आवश्यक हो गया हो। उन्होंने कहा कि भारत की ओर से बल-प्रयोग का प्रश्न ही नहीं उठता। वास्तव में बल-प्रयोग की धमकी पाकिस्तान देता रहता है। उन्होंने अनुरोध किया कि चूंकि भारत में सामान्य निर्वाचन होने वाला है, इसलिए इस प्रश्न पर विचार कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया जाए। रूस ने भारत का समर्थन किया और कहा कि सुरक्षा परिषद् की बैठक बुलाने की आवश्यकता फिलहाल नहीं है।

काश्मीर के प्रश्न पर विचार करने के लिए सुरक्षा परिषद् की बैठक २७ अप्रैल को बुलाई गई। ज़फ़रुल्ला खां ने इसी बात पर मुख्यतया ज़ोर दिया कि काश्मीर-

समस्या का समाधान शांति के लिए आवश्यक है, और अनिर्णीत समस्या खतरा का बाइस है। कृष्ण मेनन ने भारतीय दृष्टिकोण को एक बार फिर स्पष्ट किया और कहा कि जम्मू और काश्मीर राज्य का भारत में अधिमिलन पूर्ण हो चुका है और भारत अपने संघ के किसी एकक के अलग किए जाने की अनुमति नहीं दे सकता, भारत ने पहले जनमत लिए जाने के लिए कहा था किन्तु तब से स्थिति में इतना परिवर्तन हो गया है कि पहले के संकल्प निरर्थक हो गए हैं। उन्होंने कहा :

> काश्मीर के विषय पर यह १०४ वीं बैठक है। आप २०० वीं बैठक भी कर सकते हैं। हम हर बार बैठक में उपस्थित होने आएंगे। किन्तु हम किसी भी दशा में अपनी सर्वोच्च सत्ता का व्यापार नहीं कर सकते। किसी भी दशा में अपनी परम्परा को नहीं बेच सकते। किसी भी दशा में हम भारत का विघटन नहीं होने देंगे।......

इस विवाद में विभिन्न देशों ने भाग लिया। रूस के प्रतिनिधि ने कहा :

> काश्मीर भारत गणराज्य में एक राज्य है और भारत का एक अविछिन्न अंग है। काश्मीर-प्रश्न काश्मीर के लोगों द्वारा तय किया जा चुका है। काश्मीर के लोग इस विषय को प्रजातांत्रिक सिद्धांतों के अनुसार निश्चित कर चुके हैं।......

उन्होंने कहा कि पाकिस्तान के प्रतिनिधि ने काश्मीर में बड़े पैमाने पर फिर आक्रमण करने की धमकी दी है और रूस परिषद् द्वारा मध्यस्थ-निर्णय आदि की अनुमति नहीं देगा। रूमानिया ने भी इसी आशय के विचार व्यक्त किए। पश्चिमी देशों ने एक मत व्यक्त किया कि परिषद् दोनों पक्षों को समस्या के समाधान में सहायता करे। घाना और अरब गणराज्य भी इसी मत के थे।

परिषद् की बैठक २१ जून को फिर हुई। इस समस्या पर आयरलैंड, अरब, घाना, चिली और बेनेजुएला ने आपस में बातचीत की। आयरलैंड ने एक संकल्प का प्रालेख प्रस्तुत किया। इस प्रालेख में कहा गया था कि समस्या के समाधान के लिए भारत और पाकिस्तान की सरकारें चार्टर के संगत उपबन्धों के अधीन तुरन्त वार्ता प्रारम्भ करें। संकल्प में यह भी कहा गया था कि संकल्प के उपबन्धों को कार्यान्वित करने के लिए सेक्रेटरी-जनरल दोनों देशों को अपेक्षित सहयोग देंगे। ब्रिटिश प्रतिनिधि ने संकल्प का बड़ा समर्थन किया। मेनन ने संकल्प का विरोध किया। सोवियत प्रतिनिधि ने कहा कि वह संकल्प के विरुद्ध अपने विशेषाधिकार का प्रयोग करेगा। चिली, चीन, फ्रांस, आयरलैंड, ब्रिटेन, अमेरिका और बेनेजुएला ने अपना मत संकल्प के पक्ष में दिया, अरब और घाना ने मतदान नहीं किया, रूमानिया और रूस ने विपक्ष में मतदान किया। परिषद् के स्थायी सदस्य रूस के नकारात्मक मतदान के कारण संकल्प गिर गया।

चीन द्वारा भारत पर आक्रमण के फलस्वरूप जब ब्रिटेन और अमेरिका के प्रतिनिधिमंडल भारत को सैनिक सहायता दिए जाने के विषय पर बातचीत करने भारत आए तो उन्होंने भारत से काश्मीर के प्रश्न पर पाकिस्तान से वार्ता करने का अनुरोध किया। स्वर्णसिंह के नेतृत्व में भारतीय प्रतिनिधि मंडल की वार्ता जुलफिकार

अली भुट्टो के नेतृत्व में पाकिस्तानी प्रतिनिधिमंडल से २७ दिसम्बर, सन् १९६२ से १६ मई, सन् १९६३ तक हुई। दोनों प्रतिनिधिमंडलों की ६ बैठकें हुईं। रावलपिंडी में पहली बैठक २७-२९ दिसम्बर, सन् १९६२ को हुई भी नहीं थी कि यह घोषणा की गई कि अधिकृत काश्मीर और चीन की सीमा-निर्धारण के बारे में पाकिस्तान और चीन में करारनामा हो गया है। भारत में इससे बड़ी निराशा हुई और यह अनुभव किया जाने लगा कि भारत के विरुद्ध चीन से दोस्ती करने के लिए अवैध रूप से अधिकृत काश्मीर का हिस्सा चीन को दिए जाने की तैयारी की जा रही है। पहली बैठक में कोई-खास मामला तय नहीं हुआ। दूसरी बैठक १६-१९ जनवरी, सन् १९६३ को नई दिल्ली में हुई। इस बैठक में काश्मीर-प्रश्न के किसी दूसरे हल पर विचार करने को पाकिस्तान राज़ी हुआ। तीसरी बैठक ८-१० फरवरी को, चौथी बैठक कलकत्ता में १२-१४ मार्च को, पांचवीं बैठक कराची में २२-२३ अप्रैल को और अंतिम बैठक नई दिल्ली में १५-१६ मई को हुई। काश्मीर के विभाजन सम्बन्धी कई प्रस्तावों पर विचार हुआ किन्तु किसी पर दोनों देशों में सहमति न हो सकी। इस बैठक के अंत में एक विज्ञप्ति जारी की गई जिसमें कहा गया कि काश्मीर-विवाद पर दोनों देशों में कोई समझौता नहीं हो सका है।

पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने १६ जनवरी, सन् १९६४ को सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट को एक पत्र लिखा और काश्मीर-प्रश्न पर विचारार्थ तत्काल बैठक बुलाए जाने की प्रार्थना की। २४ जनवरी को भारतीय प्रतिनिधि ने प्रेसीडेण्ट को लिखा कि काश्मीर की स्थिति यथावत् है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ है और इसइिस लए समस्या पर विचार करने के लिए परिषद् की कोई बैठक बुलाने की आवश्यकता नहीं है। ३ फरवरी, सन् १९६४ को परिषद् में काश्मीर के प्रश्न पर वाद-विवाद हुआ। पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने हज़रत बल घटना का ज़िक्र करते हुए कहा कि काश्मीर में लोगों ने विद्रोह कर दिया है। कलकत्ता और पश्चिमी बंगाल के अन्य क्षेत्रों में सांप्रदायिक दंगे हुए हैं और मुसलमानों की सम्पत्ति और उनका जीवन खतरे में है। ५ फरवरी, सन् १९६४ को भारत के शिक्षा मंत्री छागला ने उत्तर दिया। उन्होंने कहा कि काश्मीर में शांति है, पूर्वी भारत में साम्प्रदायिक दंगे इसलिए हुए कि पूर्वी पाकिस्तान में दंगे हुए थे। उन्होंने स्पष्ट किया पाकिस्तान और चीन की सांठ-गांठ है, काश्मीर भारत का एक अभिन्न अंग है। सोवियत प्रतिनिधि ने इस बार फिर यही मत व्यक्त किया कि काश्मीर का प्रश्न पहले ही तय हो चुका है। इस समय कोई संकल्प पारित करने से भारत-पाकिस्तान के सम्बन्ध में और कटुता आ जाएगी। १७ फरवरी को भुट्टो ने परिषद् से बैठक स्थगित करने का अनुरोध किया। बैठक दुबारा २७ मार्च को हुई। फिर इस प्रश्न पर बहस ५-१८ मई को हुई। प्रेसीडेण्ट ने इस प्रश्न पर सदस्यों को सुनने के बाद वाद-विषय का संक्षेप प्रस्तुत किया। पाकिस्तान ने खेद प्रकट किया कि परिषद् ने समस्या को हल करने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया है।

८ अप्रैल, सन् १९६४ को जम्मू और काश्मीर राज्य की सरकार ने शेख अब्दुल्ला को रिहा कर दिया। शेख अब्दुल्ला नई दिल्ली में पं० नेहरू के अतिथि हो-

कर रहे। नई दिल्ली में उन्होंने सरकारी और गैरसरकारी अनेक व्यक्तियों से काश्मीर प्रश्न पर बात की। २४ मई को वे काश्मीर-समस्या पर अयूब से बात करने रावलपिंडी गए। पं० नेहरू ने शेख अब्दुल्ला के इन प्रयासों की प्रशंसा की और आशा व्यक्त की कि भारत-पाकिस्तान में मित्रता कायम करने में शेख के प्रयास सफल हो जाएंगे।

शेख अब्दुल्ला ने रावलपिंडी में २६ मई, सन् १९६४ को यह ऐलान किया कि काश्मीर और भारत-पाकिस्तान सम्बन्धी अन्य मसलों पर वार्ता करने के लिए पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट अयूब नई दिल्ली में पं० नेहरू से जून, सन् १९६४ में मिलेंगे। एक बार फिर लोगों में आशा का संचार हुआ कि भारत और पाकिस्तान के मतभेद दूर हो जाएंगे। किन्तु शेख की उपर्युक्त घोषणा के एक दिन बाद २७ मई को भारत के प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू का निधन हो गया और आशा की वह किरण फिर लुप्त हो गई।

अध्याय ९

जम्मू और काश्मीर की प्रगति

स्वतंत्रता-प्राप्ति अर्थात् अगस्त्, सन् १९४७ से पूर्व जम्मू और काश्मीर कांस्टीट्यूशन ऐक्ट (१९३९) के अधीन शासित था। राज्य के सम्बन्ध में सभी अधिकार—वैधिक, न्यायिक और कार्यकारी—महाराजा में निहित थे। कायदे-कानून निर्मित करने, विनियम, उद्घोषणा और आदेश निर्गत करने का महाराजा को अधिकार था। इनके अतिरिक्त महाराजा को कुछ आरक्षित अधिकार भी प्राप्त थे जो विधान-मंडल के अधिकार-क्षेत्र के बाहर थे। राज्य की सेना अकेले महाराजा के अधिकार-क्षेत्र में थी। ब्रिटिश प्राधिकारियों तथा अन्य राज्यों से वार्ता करने, संधि करने आदि का एकल अधिकार महाराजा में निहित था।

महाराजा को प्रशासन-कार्य में सहायता देने के लिए सन् १९३४ में पहली बार मंत्रि-परिषद् की स्थापना की गई थी। इस परिषद् के लगभग आधे सदस्य महाराजा द्वारा नामित किए जाते थे। मंत्री महाराजा के प्रति उत्तरदायी होते थे न कि विधान-मंडल के प्रति।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद जो पहला कार्य महाराजा ने किया वह प्रधान मंत्री रामचन्द्र काक की बरखास्तगी और २९ सितम्बर, सन् १९४७ को शेख अब्दुल्ला की रिहाई। अक्तूबर, सन् १९४७ में काश्मीर में कबाइलियों द्वारा घुस-पैठ और पाकिस्तान की सहायता से आक्रमण के कारण महाराजा हरीसिंह ने भारत सरकार से २४ अक्तूबर, सन् १९४७ को सहायतार्थ अपील की और २७ अक्तूबर, सन् १९४७ को भारत में जम्मू और काश्मीर राज्य के अधिमिलन के लिए अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। जम्मू और काश्मीर विधित: उस दिन से भारत का एक अंग बन गया और उसकी सुरक्षा का दायित्व भारत सरकार पर आ पड़ा।

काश्मीर में शेख अब्दुल्ला की अध्यक्षता में अंतरिम सरकार की स्थापना ३० अक्तूबर, सन् १९४७ को की गई। नियमित सरकार के अध्यक्ष प्रधान मंत्री एम० सी० महाजन थे। सम्पूर्ण लोकप्रिय सरकार बनाने की नेशनल कान्फरेन्स की मांग को महाराज ने ५ अप्रैल, सन् १९४८ को अपनी उद्घोषणा में स्वीकार किया। फलत: ६ अप्रैल, सन् १९४८ को इस द्वैत प्रशासन का अन्त हो गया। १७ मार्च, सन् १९४८ को शेख अब्दुल्ला नई लोकप्रिय सरकार के प्रधान मंत्री नियुक्त किए गए। महाराजा

ने यह ऐलान किया कि राज्य में सामान्य स्थिति के फिर से कायम हो जाने के बाद प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर एक नेशनल असेम्बली बुलाई जाएगी जो राज्य के लिए नया संविधान तैयार करेगी। १५ अक्तूबर, सन् १९५१ को निर्वाचन हुए और सभी ७५ जगहों पर नेशनल कान्फरेन्स के उम्मीदवार चुने गए। ७३ उम्मीदवार तो निर्विरोध निर्वाचित हुए। काश्मीर संविधान सभा की पहली बैठक ३१ अक्तूबर, सन् १९५१ को हुई और १७ नवम्बर, सन् १९५६ को उसने संविधान तैयार कर लिया।

शेख अब्दुल्ला ने संविधान सभा के पहले सत्र में अपने भाषण में सभा के कार्यों का उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि सभा के चार मुख्य कार्य हैं : संविधान बनाना, शाही खानदान का भविष्य तय करना, भू-स्वामी की प्रतिकर मांग पर विचार करना और राज्य के अधिमिलन के सम्बन्ध में अंतिम रूप से निर्णय लेना।

सबसे पहले भू-स्वामियों की मांग पर विचार किया गया। भू-प्रतिकर समिति गठित की गई और उसने अपनी रिपोर्ट २७ मार्च, सन् १९५२ को संविधान सभा की दूसरी बैठक में प्रस्तुत की। समिति ने कोई प्रतिकर देने का प्रस्ताव नहीं किया। राजस्व मंत्री अफ़ज़ल बेग ने बताया कि ज़मीन किसानों की है, उनसे ज़बरदस्ती ले ली गई थी, उसपर बेजा अधिकार कर लिया गया था, अब वही ज़मीन किसानों को वापस की जा रही है। इसलिए कोई प्रतिकर या मुआवजा देने का सवाल नहीं उठता। ३१ मार्च, सन् १९५२ को सभा ने समिति की सिफारिशें स्वीकार कर लीं।

स्वतंत्रता से पूर्व काश्मीर में जहां तक ज़मीन का सम्बन्ध था दो प्रकार के मध्यवर्ती थे—जागीरदार और माफीदार। राज्य को अर्पित राजनीतिक सेवा के बदले में जो ज़मीनें दी गई थीं उन्हें जागीर कहते थे और दानस्वरूप कुछ लोगों को तथा संस्थाओं को जो ज़मीनें दी गई थीं उन्हें माफी कहते थे। इनके अतिरिक्त मुकर्ररीदार भी थे जिन्हें राज्य से राजनीतिक सेवा के बदले या दानस्वरूप नकद या ज़मीन का अनुदान दिया जाता था। जागीरदारों और माफीदारों को राजस्व में से ५५६,३१३ रु० की रकम इस प्रकार दी जाती थी। मुकर्ररीदारों की संख्या २३४७ थी। इन्हें प्रतिवर्ष १,७७,९२१ रु० अनुदान के रूप में दिया जाता था। किसानों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिए भू-सुधार अत्यावश्यक था।

अप्रैल, सन् १९४८ में जम्मू और काश्मीर में भू-सुधार कार्य प्रारम्भ किया गया। सरकार ने जागीर, माफी और मुकर्ररी की प्रथा बन्द कर दी और सब ज़मीन स्वयं ले ली सिवाय उस ज़मीन के जो धार्मिक संस्थाओं को दी गई थी। मध्यवर्ती के अधिकार भी समाप्त कर दिए गए। टेनेन्सी ऐक्ट १९२४ का संशोधन अक्तूबर, सन् १९४८ में किया गया। इसके द्वारा लगान की अधिकतम सीमा निर्धारित की गई, दाखिल-खारिज रोकने और असामियों को दखलकारी अधिकार देने की व्यवस्था की गई। इस संशोधन से राज्य के किसानों को लाभ पहुँचा।

१७ अक्तूबर, सन् १९५० को सरकार ने बिग लैंडेड इस्टेट्स एबालिशन (बड़ी ज़मींदारी उन्मूलन) ऐक्ट २००७ निर्मित किया। यदि २२ एकड़ से ज़्यादा ज़मीन किसी एक व्यक्ति के पास थी तो वह उससे ले ली गई और किसानों को हस्तां-

तरित कर दी गई। जुलाई, सन् १६५२ के अन्त तक १८२,४६६ एकड़ जमीन १२६, ७८१ किसानों को बांट दी गई और ४७,८०४ एकड़ जमीन सरकार ने ले ली।

भू-सुधार के अतिरिक्त राज्य में आर्थिक प्रगति भी हुई। विभिन्न मदों पर योजनाओं के अन्तर्गत अपेक्षाकृत अधिक धनराशि लगाई गई। राज्य में चावल का उत्पादन बढ़ गया और भाव गिर गए, जैसा निम्न आंकड़ों से स्पष्ट होगा :

चावल का उत्पादन

सन् १६५१-५२	१·६३ लाख टन
सन् १६६६-६७	२·७२ लाख टन

गेहूं का उत्पादन

सन् १६५१-५२	·४५ लाख टन
सन् १६६५-६६	१·२२ लाख टन

प्रति हेक्टर चावल का उत्पादन सन् १६५१-५२ में ८·६६ क्विटल था। यह उत्पादन बढ़कर सन् १६६६-६७ में १२·१६ क्विटल हो गया। इसी प्रकार मक्का का उत्पादन जो सन् १६५१-५२ में प्रति हेक्टर ४·८१ क्विटल था बढ़कर सन् १६६६-६७ में ६·२२ क्विटल हो गया।

वर्ष	काश्मीर में चावल का भाव	जम्मू में चावल का भाव
सन् १६४७-४८	रु० १०·५० प्रति मन	रु० ११·५० प्रति मन
सन् १६५३-५४	रु० ७·५० प्रति मन रु० ८·५० प्रति मन	रु० १०,१७·५० प्रति मन
सन् १६५६-५७	रु० ७·५०,८ प्रति मन	रु० १०,१२·५० प्रति मन

फल और मेवे तथा तरकारियों का निर्यात बहुत बढ़ गया। सन् १६४५-५६ में १०४·५१ लाख रुपये का निर्यात हुआ था। यह बढ़कर सन् १६६६-६७ में १२ करोड़ रुपये का हो गया। इसी प्रकार शहतीरों का निर्यात जो सन् १६४५-५६ में ६·८८ लाख रुपये था, बढ़कर सन् १६६६-६७ में ६ करोड़ रुपये का हो गया। कपड़े और ऊन का भी निर्यात जो सन् १६४५-५६ में ७२·१३ लाख रुपये का था बढ़कर सन् १६६६-६७ में ३१ करोड़ रुपये से अधिक हो गया।

सरकारी उद्योगों में रोजगार में लगे हुए व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि हुई :

वर्ष	सेवायुक्त व्यक्तियों की संख्या
सन् १६४७-४८	६,५००
सन् १६५३-५४	६,०००
सन् १६५७-५८	१४,०००

(२)

प्रत्येक मज़दूर की औसत आमदनी में भी बढ़ोतरी हुई। दस वर्षों में उसकी आमदनी २६ रु० से बढ़कर ७७ रु० हो गई। उद्योगों पर सन् १६४७-४८ में एक लाख रुपया खर्च किया जाता था। यह खर्चा सन् १९५६-५७ में बढ़कर ४४·०२ लाख रुपया हो गया। पिछले २० वर्ष में जम्मू और काश्मीर में बड़ी प्रगति हुई है। आर्थिक विकास की दृष्टि से राज्य में घड़ी निर्माण कारखाना, टेलीफोन के हिस्से और ट्रान्ज़िस्टर रेडियो बनाने के कारखाने निकट भविष्य में खोलने का प्रस्ताव है। हिन्दुस्तान मशीन टूल्स लिमिटेड घड़ी का कारखाना खोलेगी और इंडिया टेलीफोन इण्डस्ट्रीज़ टेलीफोन के हिस्से और ट्रांज़िस्टर बनाने का कारखाना खोलेगी। राज्य में टेलीविज़न स्टेशन स्थापित करने के उपाय किए जा रहे हैं।

राज्य के औद्योगिक विकास के लिए पुराने और नये उद्योगों को विद्युत्-शक्ति उत्पादन करने के लिए व्याजरहित ऋण दिए जा रहे हैं। ऋण का २५ प्रतिशत राजकीय सहायता के रूप में होगा और शेष ७५ प्रतिशत ७-१४ वर्षों में वसूल किया जाएगा। उत्पादित विद्युत्-शक्ति पर पांच वर्षों तक विद्युत्-शुल्क नहीं लिया जाएगा।

राज्य से शाल, ऊन, नमदा, कालीन, फल आदि सामान बाहर ले जाने और राज्य में बाहर से लाने के लिए निर्माणकर्ताओं और उत्पादकों को परिवहन शुल्क में ५० प्रतिशत तक सरकारी परिवहन विभाग द्वारा छूट दी जाएगी।

लघु उद्योग-धंधों को सरकार उनका माल खरीदकर प्रोत्साहित करेगी।

वर्ष सन् १६४६-४७ की अपेक्षा सन् १९५६-५७ में सिंचाई पर भी खर्चा अधिक किया जाने लगा। इसी अवधि में बिजली की सप्लाई और खपत बढ़ गई। विद्युत्-शक्ति का उत्पादन राज्य में सन् १६४७ की अपेक्षा आज बहुत बढ़ गया है। सन् १६४७ में उत्पादन ४ मेगावाट था अब ३७ मेगावाट से भी अधिक है। लगभग १,००० गांवों में बिजली पहुंचा दी गई है। लद्दाख के लेह और कारगिल नगरों में बिजली पहुंच गई है।

विद्युत्-शक्ति उत्पादन की विभिन्न प्रायोजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं, जैसे ४·४० करोड़ की लागत से कालाकोट थर्मस प्रायोजना, जो २२·५ मेगावाट विद्युत्-शक्ति उत्पादित करेगी, जम्मू में चेनानी हाइडेल प्रायोजना, जो २४ मेगावाट विद्युत्-शक्ति उत्पादित करेगी, लोअर झेलम हाइडेल प्रायोजना, जो ८ महीनों तक ६२ मेगावाट और ४ महीने तक ४६ मेगावाट विद्युत्-शक्ति उत्पादित करेगी। इसी प्रकार अपर सिंध हाइडेल प्रायोजना ३४·५ मेगावाट बिजली उत्पादित करेगी। चतुर्थ योजना के अधीन, जम्मू प्रान्त के सलाल में ७८ करोड़ की लागत से केन्द्रीय हाइडेल प्रायोजना चालू की जाएगी, जो ५०० मेगावाट विद्युत्-शक्ति उत्पादित करेगी।

यही नहीं, सड़कों का निर्माण भी अधिक हुआ। सन् १६४७ में १००३ मील पक्की सड़कें थीं, मार्च, सन् १९५६ में २११६ मील पक्की सड़कें बन गई। जनवरी सन् १९५५ में बनिहाल सुरंग पर काम शुरू किया गया और वह सन् १९५६ में पूरा हो गया। इस सुरंग के जरिये घाटी का सम्पर्क सभी मौसमों में देश के अन्य भागों से

स्थापित हो गया।

शिक्षा के क्षेत्र में भी काफी प्रगति हुई। सन् १९५३ में प्रारम्भिक कक्षाओं से लेकर पोस्ट ग्रेजुएट कक्षाओं तक शिक्षा-शुल्क माफ कर दिया गया। सन् १९५३ में लड़कों के १०६४ प्राथमिक स्कूल थे, सन् १९५६ में इनकी संख्या बढ़कर १९७१ हो गई। १९५३ में लड़कियों के १७५ स्कूल थे, इनकी संख्या १९५६ में बढ़कर १९९ हो गई। इसी अवधि में छात्रों की संख्या में ३४ प्रतिशत और छात्राओं की संख्या में १९७ प्रतिशत वृद्धि हुई। सन् १९५४ में ७ कालिज थे, सन् १९५७ में १२ कालिज हो गए। डिग्री कक्षाओं में छात्रों की संख्या में ८० प्रतिशत वृद्धि हुई। सन् १९५३-५४ में उनकी संख्या २९८७ थी, सन् १९५६-५७ में यह संख्या बढ़कर ४,६१५ हो गई।

सन् १९४७-४८ में शिक्षा पर ३३.५ लाख व्यय होता था। अब यह व्यय सन् १९६६-६७ में बढ़कर ६·८१ करोड़ हो गया।

स्वास्थ्य और चिकित्सा पर सन् १९४७ में १८·९४ लाख खर्च होता था। सन् १९६६-६७ में यह बढ़कर ४ करोड़ हो गया है। जहां सन् १९४७ में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष ४७ पैसा खर्च होता था, सन् १९६६-६७ में अब ९·१२ रु० खर्च होता है।

पर्यटकों की संख्या में भी काफी वृद्धि हुई, जैसा निम्न तालिका से व्यक्त होगा :

वर्ष	पर्यटकों की संख्या	भारतीय	विदेशी
१९४९	३,७४६	३,३२१	४२०
१९५१	१०,५७९	९,३३३	१,२४६
१९५३	२१,३८१	१९,३१९	२,०६२
१९५५	५१,०२५	४८,१९५	२,८३०
१९५६	७०,०००	६२,३२९	७,६७१

सन् १९६७ में पर्यटकों की संख्या १·४६ लाख थी और जुलाई, सन् १९६८ तक ७०,००० पर्यटक राज्य में आ चुके थे।

काश्मीर में यह सब प्रगति केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रदत्त अनुदान से ही सम्भव हो सकी है। केवल १९५९-६० में केन्द्रीय सरकार ने १,२११ लाख रुपये जम्मू और काश्मीर राज्य को हस्तांतरित किए।

जहां काश्मीर राज्य में इतनी प्रगति हुई, आज़ाद काश्मीर में प्रगति नगण्य रही। आज़ाद काश्मीर की सरकार की स्थापना रावलपिंडी के एक होटल में ३ अक्तूबर, सन् १९४७ को की गई थी। २४ अक्तूबर, सन् १९४७ को इब्राहीम ने उस भाग के लिए, जिस पर कबाइलियों का आधिपत्य हो गया था आज़ाद काश्मीर सरकार की स्थापना थी। 'आज़ाद काश्मीर' पर वास्तव में पाकिस्तान का कब्ज़ा बना रहा। सरकार को बनाना-तोड़ना पाकिस्तान की सरकार का दैनिक कार्य हो गया। पाकिस्तानी नेताओं के नियंत्रण में आज़ाद काश्मीर के हालात बद से बदतर हो गए। अप्रैल, सन् १९५३ में आज़ाद काश्मीर के एक भूतपूर्व मंत्री नाज़िर हुसैन शाह

के कथनानुसार :

> जब आज़ाद काश्मीर का झंडा फहराया गया था, लोगों का यह विश्वास था कि राज्य के लोगों के लिए आज़ाद काश्मीर स्वर्ग की तरह होगा, राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से लोग स्वतंत्र होंगे। किन्तु ६ वर्ष के संघर्ष के बाद हम देखते हैं कि हालात दिन-बदिन खराब होते जा रहे हैं, हर जगह अकाल है, भुखमरी से हज़ारों की संख्या में लोग मर चुके हैं, आमदनी के ज़रिये समाप्त हो चुके हैं, बे-रोजगारी फैल रही है, टैक्स बढ़ गए हैं और ज़िन्दगी के लिए आवश्यक वस्तुओं का सर्वथा अभाव है। फलतः लोग जुर्म और अधिक जुर्म करने को बाध्य हो गए हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में कोई सुधार नहीं किया गया। आल जम्मू और काश्मीर मुस्लिम कान्फरेन्स ने यह कहा कि "आज़ाद काश्मीर में बिजली नहीं है, कोई फैक्टरी नहीं है, कोई छापाखाना नहीं है। आज़ादी से आज़ाद काश्मीर के लोगों को कोई राहत नहीं मिली है और इसकी स्थिति एक उपनिवेश बनकर रह गई है।" 'सिविल और मिलीटरी गज़ट' ने लिखा कि मीरपुर जैसे स्थान में भी कोई तारघर नहीं है।

२ मई, सन् १९६० को मार्शल ला के घोषित किए जाने के बाद कुछ भूमि-सुधार अवश्य किए गए, किन्तु जहां जम्मू और काश्मीर राज्य खुशहाल हो गया, आज़ाद काश्मीर बहुत पिछड़ा बना रहा और वहां के लोगों की गरीबी और बढ़ गई।

आज़ाद काश्मीर के लोगों की यह शिकायत है कि उन्हें कोई भी लोक-तंत्रीय अधिकार प्राप्त नहीं हैं। अक्तूबर, सन् १९४८ में घोषणा की गई थी कि आज़ाद काश्मीर का शासन सर्वोच्च सेनाधिपति के अधीन होगा और वह वहां का प्रेसीडेण्ट भी होगा। सन् १९६४ के अधिनियम में आज़ाद काश्मीर के प्रेसीडेण्ट की नामज़दगी और उसके कार्यकाल नियत करने का अधिकार सरकार के मुख्य परामर्शदाता को दे दिया गया। आज़ाद काश्मीर सरकार के संविधान में किसी भी तरह के कानूनी और बुनियादी अधिकारों का उल्लेख नहीं है।

आज़ाद काश्मीर के नेता स्वर्गीय चौधरी गुलाम अब्बास ने, जिनका गत वर्ष गरीबी की हालत में निधन हो गया, बहुत दुःखी होकर कहा था कि पाकिस्तान ने अधिकृत काश्मीर के लोगों को गूंगे-बहरों की श्रेणी में रख छोड़ा है। मुज़फ़्फ़राबाद के साप्ताहिक 'पाक काश्मीर' ने लिखा कि हम काश्मीर को विशेष स्थिति देने की बात तो करते हैं पर हम अभी उस तरह की सरकार बनाने का सपना ही देख रहे हैं जो काश्मीर के दूसरे भाग में सहज रूप से चल रही है।

आज़ाद काश्मीर के तीन राजनीतिक दलों—मुस्लिम कांग्रेस, आज़ाद कान्फरेन्स और लिबरेशन लीग—ने पाकिस्तान सरकार द्वारा स्थापित कठपुतली सरकार का तख्ता पलट देने के लिए आन्दोलन शुरू करने का निश्चय लिया है। इनके प्रतिनिधियों ने आज़ाद काश्मीर के प्रेसीडेण्ट के चुनाव में भाग नहीं लिया। केवल ८ सदस्यों ने, जिनमें से ४ निर्वाचित और ४ मनोनीत थे, प्रेसीडेण्ट के निर्वाचन में भाग लिया और अब्दुल हामिद खां को प्रेसीडेण्ट चुना।

आज़ाद काश्मीर के भूतपूर्व तीन प्रेसीडेण्ट—मिस्टर एच० खुरशीद, सरदार मोहम्मद इब्राहीम और सरदार अब्दुल कयूम खान—ने यह मांग की है कि आज़ाद काश्मीर में वैधानिक सरकार कायम की जाए। उन्होंने पाकिस्तान सरकार से अनुरोध किया है कि राज्य परिषद् (स्टेट काउन्सिल) में मनोनयन की पद्धति समाप्त की जाए और हरेक सदस्य जनता द्वारा निर्वाचित किया जाए। उन्होंने कहा कि फिलहाल आज़ाद काश्मीर में काश्मीरियों को अपना भविष्य निश्चित करने और भाग्य-निर्माण करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। लोग खुले आम और स्वतंत्रतापूर्वक अपने विचार नहीं व्यक्त कर सकते। एयर मार्शल असगर खां ने आज़ाद काश्मीर के भूतपूर्व तीन प्रेसीडेण्टों के बयान का स्वागत किया और कहा कि आज़ाद काश्मीर की सरकार पाकिस्तान सरकार द्वारा जनता पर आरोपित की गई है। यही कारण है कि आज़ाद काश्मीर में कोई विधान नहीं है, उसने गत बीस वर्षों में कोई उन्नति नहीं की है।

अध्याय १०

काश्मीर पर फिर आक्रमण और भारत-पाकिस्तान युद्ध

काश्मीर के प्रश्न पर पाकिस्तान में भारत के विरुद्ध जेहाद के नारे लग रहे थे। रज़ाकार और मुजाहिदों को सशस्त्र ट्रेनिंग दी जा रही थी। काश्मीर में युद्ध-विराम-रेखा का अतिक्रमण हो रहा था। सन् १९६३ में ऐसे ४४८ अतिक्रमण हुए, सन् १९६४ में १५२२ और सन् १९६५ के जुलाई के अन्त तक १८०० से भी अधिक अतिक्रमण हुए। पाकिस्तान काश्मीर पर फिर से आक्रमण करने की अपनी योजनाएं बना रहा था। सन् १९६५ के जनवरी मास में उसने कच्छ पर आक्रमण किया परन्तु इसमें उसे सफलता नहीं मिली तो उसने अपना सारा ध्यान काश्मीर पर केन्द्रित कर दिया और श्रीनगर-लेह सड़क को कारगिल पर काटने की कोशिश की। भारतीय सेना ने १६ मई, सन् १९६५ को कारगिल सेक्टर में स्थित दोनों चौकियों से पाकिस्तानियों को निकाल दिया और उनपर फिर से कब्ज़ा कर लिया। ५ अगस्त, सन् १९६५ को ४७० मील लम्बी युद्ध-विराम-रेखा को पार कर पूर्ण रूप से हज़ारों पाकिस्तानी सैनिक नागरिकों की पोशाक पहनकर जम्मू और काश्मीर में घुस आए। उन सैनिकों की संख्या ५००० थी। घने जंगलों, दुर्गम पहाड़ी स्थलों में छिपकर ये सैनिक काश्मीर में घुसे थे। काश्मीर घाटी के अन्दर काफी दूर तक ये सैनिक कई गिरोहों में पहुंच गए। उन्होंने लद्दाख में तैनात भारतीय सैनिकों की सप्लाई को रोकने के लिए कारगिल के निकट श्रीनगर-लेह मार्ग को, जैसा कि ऊपर बताया गया है, काट देने की कोशिश की। इन आक्रमणकारियों को मुख्य रूप से भेजने का मकसद यह था कि तोड़-फोड़ और छापामार युद्ध के आधार पर काश्मीर में विद्रोहात्मक स्थिति पैदा कर दी जाए जिससे काश्मीर को हड़प लिया जा सके।

जिस प्रकार सन् १९४७ में पाकिस्तानी आक्रमणकारियों ने बारामूला में मुसलमानों की हत्याएं की थीं और अनेक अत्याचार किए थे उसी प्रकार इस बार भी उन्होंने स्कूलों, बन्दीघरों और गांवों में आग लगाई और पूजा के स्थानों को जलाया तथा निहत्थे ग्रामीणों की हत्याएं कीं। पाकिस्तानी आक्रमणकारियों के अत्याचारों के बावजूद काश्मीरी जनता आतंकित नहीं हुई। भारतीय गश्ती पुलिस ने काश्मीरी जनता के पूर्ण सहयोग से पाकिस्तानी सशस्त्र आक्रमण का मुकाबला सफलतापूर्वक करना आरम्भ कर दिया।

कारगिल क्षेत्र में पाकिस्तानी चौकियों पर कब्ज़ा करके भारतीय फौजों ने श्रीनगर-लेह सड़क को काटने की पाकिस्तानी योजना को निष्फल कर दिया और भारत और लद्दाख के बीच इस जीवन-रेखा पर अपना नियंत्रण बनाए रखकर लद्दाख में सैनिकों को रसद ले जाने की व्यवस्था को भंग नहीं होने दिया।

प्रत्येक वर्ष जम्मू के लोग बड़ी संख्या में ८ अगस्त को पीर दस्तगीर साहिब के उत्सव को मनाने के लिए श्रीनगर जाते हैं। आक्रमणकारियों को आशा थी कि वे मेले में जाने वाले लोगों में मिल जाएंगे और किसी के पहचाने बिना काश्मीर पहुंच जाएंगे। ९ अगस्त, सन् १९६५ को शेख अब्दुल्ला की पहली गिरफ्तारी की वर्षगांठ मनाई जाने वाली थी। उसी दिन जनमत मोर्चे ने और कार्यवाही समिति ने श्रीनगर में एक बड़ा भारी प्रदर्शन करने की योजना बनाई थी। आक्रमणकारियों की योजना थी कि वे सशस्त्र इस जलसे में शामिल हो जाएंगे और विद्रोह करके रेडियो स्टेशन, हवाई अड्डे और अन्य महत्त्वपूर्ण स्थानों पर कब्ज़ा कर लेंगे। बाकी आक्रमणकारी दक्षिण और उत्तर-पूर्व में बढ़ते जाएंगे और वहां पर जम्मू-श्रीनगर मार्ग को काट देंगे और श्रीनगर-कारगिल मार्ग को भी काट देंगे। उनकी यह भी योजना थी कि वे एक क्रान्तिकारी परिषद् की स्थापना करेंगे जिसमें जनमत मोर्चे के और कार्यवाही समिति के कुछ लोग होंगे। यह परिषद् जम्मू-काश्मीर की सरकार घोषित कर दी जाएगी। किन्तु पाकिस्तान की यह चाल निष्फल हो गई। घुसपैठिये घाटी में घुसे अवश्य लेकिन वे कुछ बिगाड़ नहीं सके।

१४ अगस्त, सन् १९६५ को जनरल निम्मो ने यह सूचना दी कि पाकिस्तान की ओर से अवैध रूप से छम्ब क्षेत्र की ओर से युद्धरेखा पार करके पाकिस्तानी काश्मीर में एक मील घुस आए हैं। पाकिस्तानी फौज ने अन्तर्राष्ट्रीय सीमा को पार करके, निम्मो की रिपोर्ट के अनुसार, पाकिस्तान-जम्मू सीमा पर भारत की ओर ५ मील अन्दर राजीपुर गांव पर हमला किया। इन आक्रमणकारियों की कोई सहायता गांव वालों ने नहीं की। आक्रमणकारियों ने जम्मू में मंडी पर कब्ज़ा कर लिया और पुंछ क्षेत्र में उन्होंने थाना मंडी पर कब्ज़ा कर लिया। १२ अगस्त, सन् १९६५ को मंडी मुक्त कर लिया गया और बाद में थाना मंडी। १६ अगस्त, सन् १९६५ को ३०० पाकिस्तानी सैनिकों ने केरान क्षेत्र में भारतीय चौकी पर आक्रमण किया। फिर १६ अगस्त को उड़ी क्षेत्र में, १७-१८ अगस्त को छम्ब क्षेत्र में, २१-२२ और २६ अगस्त को मेंढर क्षेत्र में शत्रु ने आक्रमण किया।

पाकिस्तानी आक्रमणकारियों को कोई स्थानीय सहायता नहीं मिली। उनका राशन खत्म हो गया। गोला-बारूद भी समाप्त हो चला और वे युद्धबन्दी रेखा को पार करके अपने प्रदेश में भागने लगे। यह स्पष्ट हो गया था कि जब तक उस क्षेत्र पर कब्ज़ा कर न लिया जाता जहां से घुसपैठिये आ रहे थे तब तक घाटी सुरक्षित नहीं रखी जा सकती थी।

२६ अगस्त को उड़ा से दक्षिण युद्ध-विराम रेखा को पार करने के लिए भारतीय सैनिक विवश हुए क्योंकि ऐसा किए बिना युद्धबन्दी रेखा के उस ओर अड्डों

में एकत्र आक्रमणकारियों का सफाया नहीं किया जा सकता था। उन्हीं अड्डों से पाकिस्तानी आक्रमणकारी गुलमर्ग और काश्मीर घाटी में घुसे थे। उन्हीं अड्डों से आक्रमणकारियों को हथियार दिए जा रहे थे। २८ अगस्त को १०-३० बजे पूर्वाह्न भारतीय सैनिकों द्वारा हाजीपीर दर्रे पर कब्ज़ा कर लेने के फलस्वरूप पाकिस्तानियों की साज़िश विफल हो गई और पाकिस्तान अधिकृत काश्मीर के कुछ भागों को मुक्त करा लिया गया। ये भाग वे थे जहां काश्मीरी जनता पर पाकिस्तानी सैनिकों द्वारा दमनचक्र चलाया जा रहा था। १८ वर्ष बाद उत्पीड़ित जनता स्वतंत्र हुई। उन्होंने इसके उपलक्ष्य में भारतीय सैनिकों का स्वागत किया।

२९ अगस्त, सन् १९६५ को भारतीय सेना की दो टुकड़ियां तिथवाल क्षेत्र में पहुंच गईं और पहाड़ी पर स्थित तीन पाकिस्तानी चौकियों पर कब्ज़ा कर लिया। उनमें से एक चौकी पीर साहिब की थी। कुछ ही दिनों में भारतीय सेना ने अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली और वह किशननगर नदी की ओर बड़ी तेज़ी से बढ़ने लगी। ११ सितम्बर, सन् १९६५ को पाकिस्तानियों ने नीरपुर के पुल को उड़ा दिया। मुज़फ़्फ़राबाद-केल मार्ग भारतीयों के कब्ज़े में आ गया।

पहली सितम्बर को जम्मू-पश्चिमी पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का उलंघन करके पाकिस्तान ने एक पैदल ब्रिगेड, तोपखाना और ७० टैंकों और २ रेजीमेंटों के साथ काश्मीर पर आक्रमण कर दिया। छम्ब-जोड़ियां क्षेत्र में पाकिस्तानी आक्रमण का प्रमुख उद्देश्य अखनूर पुल को उड़ाकर जम्मू और काश्मीर को शेष भारत से काट देने का था। तोपखाना और टैंक रेजीमेंट की सहायतार्थ पाकिस्तान ने बमवर्षकों का इस्तेमाल किया। कारगिल और उड़ी-पुंछ क्षेत्र में जब पाकिस्तान जवाबी प्रहार करने में सफल न हो सका तो उसने अमरीकी पैटन टैंकों की मदद से जम्मू क्षेत्र में एक नया मोर्चा खोल दिया। यह क्षेत्र मैदानी इलाका था और चूंकि टैंक युद्ध के प्रतिरोध की तैयारियां पहले से नहीं की गई थीं इसलिए परिस्थिति का लाभ उठाकर पाकिस्तानी फौजें भारतीय क्षेत्र में ५ मील अन्दर घुस आईं। किन्तु भारतीय सेना की वायु सेना ने अपने अद्वितीय शौर्य और पराक्रम का परिचय दिया और बख्तरी हथियारों की सहायता से वे शत्रुओं की सेना पर टूट पड़े। शत्रु की चाल यह थी कि अखनूर से होते हुए उसकी फौजें जम्मू पहुंच जाएंगी और भारतीय सेना को जम्मू-में घेर लेंगी। देवा, छम्ब और जोड़ियां से अर्ध-चन्द्राकार हमला करके शत्रु ने भारतीय फौजों को घेरने की कोशिश की। इस कोशिश को निष्फल करने के लिए भारतीय सेना ने पैटन टैंकों पर प्रहार करना शुरू कर दिया। भारतीय नभ सेना ने २ सितम्बर को शत्रु के १३ टैंकों और २ अमरीकी एफ-८६ विमानों को मार गिराया। छम्ब क्षेत्र के हवाई युद्ध में सोवियत सरकार से प्राप्त ९ मिग विमानों का प्रयोग किया गया था और उनमें से केवल एक विमान ही शत्रु द्वारा नष्ट किया जा सका। भारतीय सेना ने अपने क्षेत्र के अन्दर शत्रु के टैंक रेजीमेंट और बख्तरबन्द दस्ते पर ही प्रहार किया किन्तु पाकिस्तानी सेना ने भारतीय हवाई सीमा का अतिक्रमण करके नागरिक क्षेत्रों पर बमवर्षा शुरू कर दी। उन्होंने अमृतसर पर भी राकेट गिराए। पाकिस्तान

की इस रणनीति को विफल करने के लिए यह आवश्यक हो गया कि अमरीकी टैंकों और अन्य हथियारों को अधिकाधिक मात्रा में नष्ट किया जाए और दुश्मन की प्रहार-शक्ति को क्षीण कर दिया जाए जिससे कि छम्ब क्षेत्र में शत्रु का दबाव कम हो जाए।

भारत ने भी दूसरा मोर्चा खोल दिया और डटकर पाकिस्तान से युद्ध किया और उसे गहरी शिकस्त दी।

युद्धबन्दी के प्रस्ताव

२ सितम्बर, सन् १९६५ को संयुक्त राष्ट्र सेक्रेटरी जनरल ऊ थां ने पाकिस्तान और भारत से युद्धबन्दी की अपील की। अगले दिन उन्होंने सुरक्षा परिषद् में काश्मीर के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट पेश की। भारत युद्धबन्दी स्वीकार करने को तैयार था बशर्ते पाकिस्तान जम्मू से अपनी फौजें वापस ले ले और काश्मीर से घुसपैठियों को वापस बुला ले और यह आश्वासन दे कि दोबारा वह भारत पर किसी प्रकार का आक्रमण नहीं करेगा। पाकिस्तान ने युद्धबन्दी स्वीकार नहीं की। ४ सितम्बर, सन् १९६५ को चीन के विदेश मंत्री मार्शल चेन ई कराची गए और उन्होंने भुट्टो से ६ घंटे तक बातचीत की। उसके एक दिन पहले पाकिस्तानी राजदूत पेकिंग में चाउ एन लाई से मिल चुके थे। चेन-ई ने पाकिस्तान की पीठ थपथपाई और कहा कि पाकिस्तान ने काश्मीर से भारतीय आक्रमणकारियों को निकालने के लिए सही कदम उठाया है। भारत को अग्रिम कार्यवाही करनी पड़ी और ६ सितम्बर को, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, उसे लाहौर क्षेत्र में पाकिस्तानी सीमा को पार करना पड़ा। भारतीय आक्रमण ३० मील लम्बे मोर्चे पर था। वाघा से डोगराई तक, ग्रैंड ट्रंक रोड पर खालरापुर की धुरी पर और खेमकरन-कसरूर धुरी पर।

अक्तूबर-नवम्बर, सन् १९६२ में चीन ने भारत की उत्तरी सीमा पर आक्रमण किया था। पंडित जवाहरलाल नेहरू के व्यक्तित्व और पश्चिमी देशों के सक्रिय सहयोग तथा इस संघर्ष में रूस और पूर्वी यूरोपीय देशों की निष्पक्षता के कारण पाकिस्तान भारत-चीन की लड़ाई से कोई लाभ नहीं उठा सका था। अलबत्ता उसने चीन से सांठ-गांठ करनी शुरू कर दी थी। चीन ने काश्मीर के सम्बन्ध में पाकिस्तान की मांग का समर्थन किया। चीन से दोस्ती बनाए रखने के लिए पाकिस्तान ने चीन से सन् १९६३ में एक व्यापार-करारनामा किया और मार्च, सन् १९६३ में सीमा के सम्बन्ध में एक करारनामा निष्पादित किया, यद्यपि भारत ने दोनों करारनामों के सम्बन्ध में आपत्ति की थी। सीमा सम्बन्धी करारनामे के अन्तर्गत जम्मू-काश्मीर राज्य का २,००० वर्गमील भू-भाग, जो पाकिस्तान के अवैध आधिपत्य में था, चीन को दे दिया गया। वास्तव में पाकिस्तान ने ऐसा केवल भारत को चिढ़ाने के लिए ही किया था। चूंकि काश्मीर सम्बन्धी विवाद सुरक्षा परिषद् में प्रस्तुत था इसलिए विधिक दृष्टिकोण से पाकिस्तान को विवादग्रस्त क्षेत्र के किसी भी भू-भाग को चीन

को देने का अधिकार प्राप्त नहीं था। उसके लिए ऐसा करना भारत और पाकिस्तान के संयुक्त राष्ट्र आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के प्रस्तावों का उल्लंघन करना था।

चीन के निकट सम्पर्क में आ जाने से पाकिस्तान युद्धबन्दी सीमा का अधिकाधिक अतिक्रमण करने लगा। युद्धबन्दी सीमा पर शांति बनाए रखने के लिए जनरल निम्मो ने कई बार भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों के बीच विचार-विमर्श का प्रस्ताव किया किन्तु उसका कोई फल नहीं निकला। अन्तत: २ नवम्बर, सन् १९६५ को भारत के अनुरोध पर कराची में एक बैठक बुलाने का आयोजन किया गया। किन्तु पाकिस्तान ने उस बैठक को स्थगित कर दिया। अनेक बार पाकिस्तान के अनुरोध पर सन् १९६४ में काश्मीर-समस्या पर सुरक्षा परिषद् में बहस हुई। परिषद् के सभी सदस्यों ने अनुभव किया कि प्रस्ताव पारित करने से कोई विशेष लाभ नहीं होता। ऐसे प्रस्तावों को जो पहले पारित किए जा चुके हैं पुनरावृत्ति अनावश्यक है, क्योंकि वर्तमान परिवर्तित स्थिति में उनको कार्यान्वित नहीं किया जा सकता, इसलिए सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट ने दोनों सरकारों के प्रतिनिधियों से अनुरोध किया कि विश्व में शांति बनाए रखने के लिए जम्मू और काश्मीर के प्रश्न को शांतिपूर्वक ढंग से तय कर लिया जाना चाहिए। उन्होंने यह आशा व्यक्त की कि दोनों देश इस सम्बन्ध में पारस्परिक सम्पर्क बनाए रखेंगे। सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेंट के उपर्युक्त अनुरोध पर दोनों सरकारों ने विदेश मंत्री के स्तर पर बातचीत की किन्तु उसका कोई फल नहीं निकला।

उसी समय प्रधान मंत्री विल्सन ने एक बहुत गलत बयान दिया कि पश्चिमी पंजाब में अन्तर्राष्ट्रीय सीमा को पार करके भारतीय सशस्त्र सेना ने युद्ध के विस्तार को बढ़ा दिया है। यह नहीं भूल जाना चाहिए कि भारत पाकिस्तानी आक्रमण का सामना कर रहा था और उसका जवाब दे रहा था। वास्तव में विल्सन को उस समय बोलना चाहिए था जब पाकिस्तान ने घुसपैठियों के द्वारा काश्मीर पर आक्रमण कर दिया था और जब सेक्रेटरी-जनरल ने अपनी रिपोर्ट में यह बता दिया था कि पाकिस्तान से सशस्त्र आदमियों ने युद्ध-विराम को पार करके भारत के खिलाफ सशस्त्र कार्यवाही की है। जनरल निम्मो ने युद्धबन्दी रेखा के अतिक्रमणों की सूचना सेक्रेटरी-जनरल को दी थी। ९ अगस्त, सन् १९६५ को प्रात: निम्मो से सेक्रेटरी-जनरल को एक केबुल प्राप्त हुआ था। उसमें कहा गया था कि युद्धबन्दी रेखा पर स्थिति दिन-ब-दिन बिगड़ती जा रही है। सेक्रेटरी-जनरल ने पाकिस्तान की सरकार के प्रतिनिधि को बुलाकर अपनी चिन्ता व्यक्त की कि पाकिस्तान के सैनिक भारत की ओर युद्धबन्दी रेखा को पार कर रहे हैं और भारतीय सैनिक अड्डों पर आक्रमण कर रहे हैं। भारत के प्रतिनिधि से भी सेक्रेटरी-जनरल ने अनुरोध किया कि वह संयम से काम लें, कोई जवाबी हमला न करे। दोनों सरकारों से सेक्रेटरी-जनरल का अनुरोध था कि युद्धबन्दी रेखा को कायम रखा जाए। पाकिस्तान की सरकार ने कोई आश्वासन नहीं दिया। भारत की सरकार ने सेक्रेटरी-जनरल को आश्वासन दिया कि वह संयम से काम लेगी और युद्धबन्दी

करारनामे का तथा युद्धबन्दी रेखा का आदर करेगी अगर पाकिस्तान भी ऐसा ही करता है।

बिगड़ती हुई स्थिति को देखकर सेक्रेटरी-जनरल युद्धबन्दी अतिक्रमण के सम्बन्ध में एक बयान देना चाहते थे। उस बयान का प्रालेख उन्होंने दोनों सरकारों के प्रतिनिधियों को दिया। भारत सरकार ने इंगित किया कि इस बयान को जारी करने में उसे कोई आपत्ति नहीं है बशर्ते इसमें कुछ संशोधन कर दिया जाए। पाकिस्तान की सरकार ने बयान को जारी करने में घोर आपत्ति की और कहा कि वह बयान भारत के पक्ष में था। तत्पश्चात् सेक्रेटरी-जनरल ने बयान जारी करने के अपने इरादे को छोड़ दिया। सेक्रेटरी-जनरल ने जनरल निम्मो को विचार-विमर्श के लिए संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय पर आने का आदेश दिया। २६ अगस्त, सन् १९६५ को जनरल निम्मो न्यूयार्क पहुंचे और विचार-विमर्श के उपरान्त ३१ अगस्त, सन् १९६५ को श्रीनगर वापस आ गए। सेक्रेटरी-जनरल ने पहली सितम्बर, सन् १९६५ को भारत के प्रधान मंत्री और पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट को तार भेजा और उसमें उन दोनों सरकारों से अनुरोध किया कि वे युद्धबन्दी करारनामों और युद्धबन्दी रेखा का पालन करें और ऐसा कोई कदम न उठाएं जो चार्टर के उपबन्धों के प्रतिकूल हो। उन्होंने यह भी कहा कि दोनों ओर से युद्धबन्दी रेखा का पार किया जाना बन्द कर दिया जाए और दोनों देशों के सशस्त्र कर्मचारी अपनी-अपनी जगहों को वापस हो जाएं। ३ सितम्बर, सन् १९६५ को सेक्रेटरी-जनरल ने सुरक्षा परिषद् के सामने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। उस रिपोर्ट में उन्होंने ५ अगस्त, सन् १९६५ की स्थिति का उल्लेख किया। उन्होंने बताया कि पाकिस्तान की ओर से सशस्त्र आदमियों ने, जो अपनी वर्दी में नहीं थे, युद्धबन्दी रेखा को पार करके भारत पर सशस्त्र कार्यवाही की है।

सुरक्षा परिषद् की बैठक ४ सितम्बर, सन् १९६५ को हुई। परिषद् के प्रेसीडण्ट उस समय अमेरिका के प्रतिनिधि गोल्डबर्ग थे। भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों को उस बैठक में आमंत्रित किया गया। भारत के प्रतिनिधि ने बताया कि सन् १९४८ से जब कि भारत ने पहले पहल काश्मीर में पाकिस्तान के आक्रमण की शिकायत की थी भारत-पाकिस्तान का प्रश्न परिषद् के सामने है। यह प्रश्न अभी तक हल नहीं हो सका है क्योंकि परिषद् ने पाकिस्तान को आक्रमणकारी नहीं घोषित किया है। उन्होंने बताया कि भारत ने हर सम्भव उपाय किया है कि यह प्रश्न हल हो जाए और परिषद् के प्रत्येक प्रस्ताव का पालन किया जाए किन्तु पाकिस्तान ने युद्धबन्दी रेखा का असंख्य बार अतिक्रमण किया है और शांति बनाए रखने के लिए जनरल निम्मो के प्रस्तावों को ठुकरा दिया है, यही नहीं पाकिस्तान ने सन् १९६४ में भारत के इस प्रस्ताव को कि दोनों सरकारें आपस में इस प्रश्न को हल करने के लिए बातचात करें अस्वीकृत कर दिया। भारत के प्रतिनिधि ने बताया कि किस प्रकार ५,००० सशस्त्र पाकिस्तानी सैनिकों ने नागरिकों के भेस में युद्धबन्दी रेखा को इस उद्देश्य से पार किया कि सामरिक महत्त्व और यातायात के साधन और प्रतिष्ठान नष्ट कर दिए जाएं। वे काश्मीर के राजनीतिक नेताओं और कर्मचारियों की हत्याएं करना चाहते

थे और साथ ही स्थानीय जनता में आतंक फैलाना चाहते थे। उन्होंने पाकिस्तानी कार्यवाही का पूर्ण विवरण परिषद् के सामने रखा। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि सन् १९४७-४८ के आक्रमण के फलस्वरूप पाकिस्तान को आक्रमणकारी घोषित न करके वास्तव में पाकिस्तान को काश्मीर पर दूसरा आक्रमण करने के लिए प्रोत्साहित किया गया है। उन्होंने अनुरोध किया कि पाकिस्तान को आक्रमणकारी घोषित किया जाए और उससे कहा जाए कि वह जम्मू और काश्मीर राज्य से अपनी सेना को वापस बुला ले। पाकिस्तान के प्रतिनिधि ने भारत के प्रतिनिधि के आरोपों का खंडन किया और उन्होंने उसका पूरा उत्तर अपनी सरकार के आदेश प्राप्त होने पर देने को कहा।

इसी समय मलेशिया के प्रतिनिधि राधाकृष्ण रमाणी ने बोलविया, एवरीकोस्ट, जार्डन, मलेशिया, नीदरलैंड्स, उरुग्वे द्वारा प्रस्तावित प्रस्ताव का प्रालेख रखा। सुरक्षा परिषद् के सदस्यों ने प्रालेख का समर्थन किया और वह ४ सितम्बर, सन् १९६५ को पारित हुआ। इस प्रस्ताव द्वारा पाकिस्तान और भारत की सरकारों से कहा गया था कि वे तुरन्त युद्ध बन्द कर दें और युद्धबन्दी रेखा के अपनी ओर अपने सशस्त्र कर्मचारियों को हटा लें। ६ सितम्बर, सन् १९६५ को सुरक्षा परिषद् की दूसरी बैठक बुलाई गई। उसमें परिषद् के उपर्युक्त अस्थायी सदस्यों द्वारा रखा गया प्रस्ताव पारित किया गया। इस प्रस्ताव में दोनों पक्षों से तुरन्त युद्ध बन्द करने और ५ अगस्त, सन् १९६५ के पूर्व अपनी-अपनी जगह अपनी सेना हटा लेने का अनुरोध किया गया।

सेक्रेटरी-जनरल ७ से १६ सितम्बर, सन् १९६५ के बीच भारत और पाकिस्तान देशों में गए। वहां उन्होंने प्रेसीडेण्ट, प्रधान मंत्री और विदेश मंत्री आदि से बातचीत की। १६ सितम्बर, सन् १९६५ को उन्होंने एक प्रारम्भिक रिपोर्ट पेश की और उसमें उन्होंने बताया कि युद्ध बन्द करने के उनके प्रयास सफल नहीं हो सके हैं। सुरक्षा परिषद् १७ सितम्बर, सन् १९६५ को फिर बैठी। उस परिषद् में भारत के प्रतिनिधि छागला ने अपने बयान में यह सिद्ध किया कि पाकिस्तान आक्रमणकारी है। उन्होंने ३ सितम्बर, सन् १९६५ के सेक्रेटरी-जनरल की रिपोर्ट का हवाला दिया जिसमें कहा गया था कि ५ अगस्त, सन् १९६५ को जब पाकिस्तानी सशस्त्र आदमियों द्वारा भारत की ओर युद्धबन्दी रेखा को पार किया गया तब दोनों देशों के बीच वर्तमान संघर्ष छिड़ गया। छागला ने बताया कि जब ५ अगस्त, सन् १९६५ को पाकिस्तानी घुसपैठियों द्वारा युद्ध-विराम-रेखा का उल्लंघन किया गया तो और अतिक्रमण को रोकने के लिए भारत ने युद्ध-विराम-रेखा को पार किया। यह एक रक्षात्मक कार्यवाही थी। जब पाकिस्तान ने छम्ब पर आक्रमण किया तो अपनी जीवन-रेखा को बचाने और सुरक्षित रखने के लिए भारत को पाकिस्तानी क्षेत्र को पार करना पड़ा। यह भी आत्मरक्षा में किया गया था। उन्होंने मांग की कि पाकिस्तान को आक्रमणकारी घोषित किया जाए।

जब १८ सितम्बर, सन् १९६५ को परिषद् का फिर बैठक हुई तो पाकिस्तान के विधि मंत्री ने कहा कि जब तक भारत ने आज़ाद काश्मीर के खिलाफ आक्रमणकारी कार्यवाही नहीं की तब तक आज़ाद काश्मीर का कोई भी व्यक्ति या पाकिस्तान का

कोई भी सैनिक युद्ध-विराम-रेखा के पार नहीं गया। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि घुसपैठियों द्वारा युद्धबन्दी रेखा का उल्लंघन केवल एक मनगढ़ंत कहानी है। वास्तविकता तो यह है कि जम्मू और काश्मीर के लोग भारत के आतंकवादी राज के विद्रोह में खड़े हो गए हैं। उन्होंने कहा कि पाकिस्तान के खिलाफ आक्रमण किया गया है और इसलिए पाकिस्तान से यह कहना कि वह युद्धबन्दी स्वीकार कर ले पाकिस्तान के प्रति अन्याय होगा। पाकिस्तान का कर्तव्य है कि वह अपने प्रदेश की रक्षा करे और काश्मीर के लोगों को निष्पक्ष जनमत द्वारा अपने भविष्य के सम्बन्ध में निर्णय लेने के लिए भारत को बाध्य करे। इस सिलसिले में पाकिस्तान जितना भी त्याग हो सकेगा करेगा।

सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट गोल्डबर्ग ने कहा कि उनकी सरकार का मत है कि भारत और पाकिस्तान दोनों से तुरन्त युद्ध बन्द करने को कहा जाए और सुरक्षा परिषद् में जो प्रस्ताव पारित किए गए हैं उनको कार्यान्वित किया जाए। रूस के प्रतिनिधि ने कहा कि भारत और पाकिस्तान के बीच जो विवाद है उसका निपटारा दोनों सम्बन्धित देशों को पारस्परिक वार्ता द्वारा करना चाहिए। अलबत्ता परिषद् को प्रयास करना चाहिए कि युद्धबन्दी हो जाए। २० सितम्बर, सन् १९६५ को परिषद् की एक दूसरी बैठक हुई। उस बैठक में नीदरलैंड के प्रतिनिधि ने एक प्रस्ताव रखा जो १० वोटों से स्वीकृत हुआ। इस प्रस्ताव द्वारा परिषद् ने यह मांग की कि बुधवार २२ सितम्बर, सन् १९६५ को ७ बजे प्रातः युद्धबन्दी कर दी जाए और दोनों सरकारें इस सम्बन्ध में आदेश निर्गत कर दें। दोनों सरकारें इस आशय का भी आदेश जारी करें कि उनके सशस्त्र सैनिक या अन्य कर्मचारी ५ अगस्त, सन् १९६५ की अपनी पूर्वस्थिति को लौट जाएंगे। २२ सितम्बर, सन् १९६५ को पाकिस्तान के विदेश मंत्री के अनुरोध पर सुरक्षा परिषद् की बैठक हुई। पाकिस्तान के मंत्री ने परिषद् को सूचित किया कि युद्धबन्दी के आदेश जारी हो गए हैं। भारत के प्रतिनिधि ने यह बताया कि उन्होंने पहले ही युद्धबन्दी स्वीकार कर ली थी और अब युद्धबन्दी के आदेश देने के लिए भी कोई दूसरा समय नियत किया जाए। परिषद् के प्रेसीडेण्ट ने संतोष प्रकट किया कि दोनों सरकारों ने युद्धबन्दी को स्वीकार कर लिया है और यह अनुरोध किया कि २२ सितम्बर, सन् १९६५ को १० बजे रात्रि तक युद्धबन्दी कर दी जाए। फलतः २२ सितम्बर, सन् १९६५ को १० बजे रात्रि को युद्धबन्दी हो गई।

इस सम्बन्ध में इसका उल्लेख कर देना उचित होगा कि वास्तव में संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी जनरल ऊ थां ने प्रस्ताव किया था कि १४ सितम्बर को ६-३० बजे शाम से युद्ध-विराम हो किन्तु चूंकि चीन ने भारत को अल्टीमेटम दे दिया था इसलिए पाकिस्तान ने उस समय उस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। वह चाहता था कि युद्धबन्दी के साथ-साथ काश्मीर-समस्या का भी समाधान कर दिया जाए। भारत इस प्रकार के राजनीतिक समझौते के लिए तैयार नहीं था। क्योंकि उसका यह कथन था कि काश्मीर भारत का एक अंग है इसलिए काश्मीर भारत की अपनी समस्या है इसमें किसीके द्वारा किसी प्रकार का हस्तक्षेप करने की आवश्यकता नहीं है और न

उसका कोई समाधान किसी बाहरी देश की देख-रेख में किया जा सकता है। चीन का अल्टीमेटम २२ सितम्बर को समाप्त हो गया और पाकिस्तान ने कुछ घंटे बाद ही युद्धवन्दी का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

इस २२ दिन की लड़ाई में पाकिस्तान के ४७१ टैंकों की क्षति हुई जिसमें २६२ पैटन टैंक थे। साथ ही भारतीय सेना ने कारगिल में पाकिस्तान की तीन चौकियों पर कब्ज़ा कर लिया और तिथवाल के प्रदेश में वह २० मील अन्दर प्रवेश कर गई। उड़ी-पुंछ क्षेत्र में २०० वर्गमील, सियालकोट क्षेत्र में १८० वर्गमील, पंजाब में १४० वर्गमील और राजस्थान में सिंध सीमा पर १५० वर्गमील क्षेत्रों पर भारतीय फौजों का कब्ज़ा हो गया। इस प्रकार शत्रु के ६९० वर्गमील प्रदेश पर भारतीय फौजों का आधिपत्य हो गया जब कि पाकिस्तान ने केवल २१० वर्गमील भारतीय प्रदेश पर कब्ज़ा कर लिया था—छम्ब क्षेत्र में १९० वर्गमील, पंजाब में २० वर्ग मील। राजस्थान में घुसपैठ करके कुछ हिन्दुस्तानी चौकियों पर भी उसने कब्ज़ा कर लिया था। जहां तक हताहत लोगों की संख्या का सम्बन्ध है इस लड़ाई में पाकिस्तान के लगभग ५,८०० जवान और अधिकारी मारे गए जब कि भारत के १६१ अधिकारी और २,०३५ अन्य कर्मचारी मारे गए। १५०० कर्मचारियों का पता नहीं लगा।

युद्धबन्दी रेखा के अतिक्रमण के प्रश्न पर २२ सितम्बर, सन् १९६५ को परिषद् की एक बैठक हुई थी। उसमें इसपर विचार किया गया था कि युद्धबन्दी रेखा के अतिक्रमण से सम्बन्धित संयुक्त राष्ट्र के पर्यवेक्षकों की रिपोर्ट पर क्या कार्यवाही की जाए। बैठक में एक प्रस्ताव पारित किया गया कि भारत और पाकिस्तान दोनों युद्धबन्दी रेखा का पालन करें। इसके बाद पाकिस्तान की प्रार्थना पर २५, २७ और २८ अक्तूबर, सन् १९६५ को सुरक्षा परिषद् की बैठकें हुईं। उसमें परिषद् के प्रेसीडेण्ट ने भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों को विचार-विमर्श के लिए आमंत्रित किया। पाकिस्तान के विदेश मंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने परिषद् के सामने एक बड़ा भारी बयान दिया। उसमें उन्होंने काश्मीर-समस्या के राजनीतिक पहलू पर प्रकाश डालते हुए कहा कि भारत जम्मू और काश्मीर के लोगों पर अत्याचार कर रहा है। भारत के विदेश मंत्री सरदार स्वर्णसिंह ने आपत्ति की और कहा कि जम्मू-काश्मीर भारत का अंग है और उसके अन्दरूनी मामलों का ज़िक्र करने का पाकिस्तान को कोई अधिकार नहीं है। उन्होंने परिषद् के प्रेसीडेण्ट से अनुरोध किया कि इस प्रकार के बयान देने से भुट्टो को रोका जाए। भारत की आपत्ति पर कोई ध्यान नहीं दिया गया और परिषद् के प्रेसीडेण्ट ने पाकिस्तान के प्रतिनिधि को अपना बयान जारी रखने के लिए अनुमति दी। भारत के प्रतिनिधि परिषद् से उठ गए। कुछ समय के लिए परिषद् की बैठक स्थगित की गई किन्तु जब बाद में परिषद् की बैठक हुई तो पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने भारत के विरुद्ध बहुत-सी अनर्गल बातें कहीं। नवम्बर, सन् १९६५ में भारत-पाकिस्तान-प्रश्न पर विचार करने के लिए परिषद् की फिर बैठक हुई। इस बैठक में भी भारत अनुपस्थित रहा। परिषद् ने एक बार फिर भारत और पाकिस्तान सरकारों से युद्धवन्दी रेखा का कठोरता से पालन करने के लिए अनुरोध किया।

परिषद् की अंतिम बैठक के कई महीने बाद भी पाकिस्तान के सैनिक ५ सितम्बर के पूर्व की स्थिति पर नहीं वापस आए और वे बराबर युद्धबन्दी रेखा का अतिक्रमण करते रहे। रूस की मंत्रि परिषद् के चेयरमैन कोसिगिन ने भारत और पाकिस्तान के बीच मतभेद को दूर करने के लिए अपनी सेवाएं भारत के प्रधान मंत्री लालबहादुर शास्त्री और पाकिस्तान के प्रेसीडेंट अयूब खां को अर्पित कीं। भारत और पाकिस्तान ने रूस के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया कि ४ जनवरी, सन् १९६६ को ताशकंद में लालबहादुर शास्त्री और प्रेसीडेंट अयूब खां की एक बैठक बुलाई जाए। एक हफ्ते तक दोनों नेताओं के बीच ताशकंद में वार्त्ता चलती रही और कोसिगिन स्थिति को सुलझाने का प्रयत्न करते रहे। अन्ततः कोसिगिन के प्रयास से प्रधान मंत्री लालबहादुर शास्त्री और प्रेसीडेंट अयूब खां ने १० जनवरी, सन् १९६६ को एक घोषणा पर हस्ताक्षर कर दिए। घोषणा में कहा गया कि भारत के प्रधान मंत्री और पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट इससे सहमत हैं कि दोनों ओर से इस बात का निरंतर प्रयास किया जाए कि संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुसार भारत और पाकिस्तान के बीच अच्छे सम्बन्ध बने रहें। उन्होंने यह भी प्रतिज्ञान किया कि वे अपने विवाद को तय करने में बल का प्रयोग नहीं करेंगे बल्कि शांतिमय ढंग से उसको सुलझाने की कोशिश करेंगे। घोषणा में दोनों नेताओं के इस मत को व्यक्त किया गया कि भारत और पाकिस्तान में शांति बनाए रखने के लिए और भारत एवं पाकिस्तान की जनता के हित में यह आवश्यक है कि दोनों देशों में तनाव न बना रहे और वे एक दूसरे के विरुद्ध विष-वमन न करें। इस घोषणा ने वस्तुतः भारत और पाकिस्तान के लिए यह अनिवार्य कर दिया कि वे काश्मीर-समस्या तथा अन्य विवादों को केवल पारस्परिक वार्ता द्वारा तय करें।

इस महत्त्वपूर्ण घोषणा पर हस्ताक्षर करने के कुछ ही घंटे बाद प्रधान मंत्री लालबहादुर शास्त्री का ताशकंद में ११ जनवरी, सन् १९६६ को १-३२ बजे प्रातः निधन हो गया। भारत आज तक ताशकंद-घोषणा के अनुरूप कार्य कर रहा है किन्तु पाकिस्तान की ओर से इस घोषणा का उल्लंघन ही होता रहा है।

दोनों देशों के सशस्त्र व्यक्ति किस प्रकार ५ अगस्त से पूर्व की स्थिति पर हटा लिए जाएं इस सम्बन्ध में भारत और पाकिस्तान के सेनाध्यक्षों में मतैक्य हो गया। ताशकंद-घोषणा के फलस्वरूप दोनों देशों में हाई कमीशनर के स्तर पर राजनीतिक सम्बन्ध फिर से स्थापित किए गए, युद्ध में पकड़ा गया माल मुक्त किया गया और युद्ध-बंदियों का विनिमय किया गया।

ताशकंद-करारनामा के होते हुए भी भुट्टो ने पाकिस्तान में यह कहना शुरू कर दिया कि काश्मीर-समस्या के समाधान के लिए जहां तक बल के न प्रयोग करने का सम्बन्ध है पाकिस्तान ताशकंद-करारनामा से बाध्य नहीं है। मंत्रिस्तर पर पिंडी और दिल्ली की वार्त्ता असफल रही क्योंकि पाकिस्तान केवल काश्मीर के बारे में बात करना चाहता था और भारत काश्मीर के अतिरिक्त अन्य विवादास्पद विषयों पर बात करना चाहता था क्योंकि करारनामा में यह तय हो चुका था कि भारत या पाकिस्तान एक दूसरे के अन्दरूनी मामले में कोई हस्तक्षेप नहीं करेगा और काश्मीर भारत का

अन्दरूनी मामला था जिसके बारे में पाकिस्तान को बात करने का अधिकार नहीं था।

शास्त्री जी उड़ी-पुंछ, तिथवाल और कारगिल क्षेत्रों में सामरिक महत्त्व के स्थानों को वापस कर देने को तैयार हो गए थे, इससे भारत में असंतोष था। शास्त्री जी के प्रति कोई भी आलोचना न्यायसंगत नहीं है क्योंकि इन स्थलों पर ५ अगस्त के बाद भारतीय सेना ने कब्ज़ा किया था और करारनामा की यह एक शर्त थी कि दोनों ओर के सैनिक ५ अगस्त के पूर्व की स्थिति पर लौट जाएंगे।

यद्यपि ताशकंद-करारनामा पाकिस्तान ने कर लिया था तो भी वह इसकी शर्तों को पालन करने के लिए तैयार नहीं था। युद्ध में जितने टैंकों और हवाई जहाज़ों का नुकसान पाकिस्तान को हुआ था उसने सब पूरा कर लिया। चीन ने २०० टैंक उसे दिए। लड़ाई-बन्दी के अगले वर्ष उसने अपने सुरक्षा बजट को ६० प्रतिशत बढ़ा दिया और सैनिकों की संख्या १,६०,००० से बढ़ा कर २,५०,००० कर दी। अपने नियमित डिवीज़नों की संख्या भी उसने ६ से ८ कर दी और लड़ाकू हवाई स्क्वैड्रन की संख्या ४ से बढ़ाकर ६ कर दी। वह प्रत्येक सम्भव उपाय से अपनी प्रहार-शक्ति बढ़ाने में जुट गया।

इन सबके बावजूद भारत ताशकन्द-करारनामा की शर्तों का अनुपालन करता रहा। करारनामा की दूसरी वर्षगांठ पर ६ जनवरी, सन् १९६८ को भारत के प्रेसीडेंट डा० ज़ाकिर हुसैन ने ताशकन्द-घोषणा की शर्तों का उल्लेख किया और आशा व्यक्त की कि भारत और पाकिस्तान में मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित होंगे और पारस्परिक मसलों को तय करने में बल का प्रयोग नहीं किया जाएगा। उन्होंने यह भी आशा प्रकट की कि दोनों देशों के नेता आपस में मिलेंगे जिससे कि दोनों देशों के बीच चिरस्थायी शांति स्थापित हो सके। भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने भी इस अवसर पर ताशकन्द-घोषणा के पूर्णतः कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए भारत सरकार का दृढ़ विचार फिर से व्यक्त किया। उन्होंने कोसिगिन को भी इसी आशय का एक पत्र भेजा। इस अवसर पर कोसिगिन और अयूब से भी पत्र-व्यवहार हुआ। किन्तु भारत के प्रति पाकिस्तानी नेताओं के वैमनस्यपूर्ण भाषणों से यह बिलकुल स्पष्ट हो गया कि पाकिस्तान ताशकन्द-घोषणा को कार्यान्वित नहीं कर रहा है और न करने के लिए तैयार है।

सामरिक अध्ययन इन्स्टीट्यूट, लन्दन के अगस्त, सन् १९६८ के आंकड़ों के अनुसार पाकिस्तान प्रतिरक्षा पर प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति ४ डालर व्यय करता है, जब कि भारत, जो पाकिस्तान से चार-पांच गुणा बड़ा है, २·५ डालर ख़र्च करता है। पाकिस्तान अपनी राष्ट्रीय आय का ३·६ प्रतिशत प्रतिरक्षा पर खर्च करता है, जब कि भारत केवल ३·२ प्रतिशत खर्च करता है। इन्स्टीट्यूट के अनुसार अगस्त, सन् १९६८ में पाकिस्तान के सैनिकों की संख्या बढ़कर ३,२०,००० थी और लड़ाकू हवाई बेड़े की संख्या बढ़कर १४ हो गई थी।

पाकिस्तान शस्त्रों को जुटाने की भरसक कोशिश करता रहा। उसने अक्तूबर-

नवम्बर, सन् १९६८ में तुर्की से १०० अमरीकी एम-४७ पैटन टैंक लेने के बारे में करारनामा कर लिया । इन टैंकों को तुर्की ने 'नाटो' फौजी संगठन का सदस्य होने के नाते प्राप्त किया था । इन पुराने टैंकों के स्थान पर तुर्की द्वारा नये टैंक खरीदे जाने के लिए अमेरिका तुर्की को १ लाख ५० हज़ार डालर देने को तैयार हो गया है । यही नहीं, पाकिस्तान रूस से भी काफी संख्या में लड़ाकू व बमवर्षक विमान ले रहा है । रूस और पाकिस्तान में हुए करारनामे के अनुसार रूस पाकिस्तान को १०० मिग–१९, ६० या ७० मिग-२१ और ३० या ४० आई एल–२० बमवर्षक विमान देगा । इसके अतिरिक्त रूस १२ लाख रुपये की मशीनरी और फालतू हिस्से भी पाकिस्तान को देगा ।

सितम्बर, सन् १९६८ को कराची में बोलते हुए जान मैकारथी ने बताया कि अमेरिका ने पाकिस्तान को अगस्त, सन् १९६८ तक ६४,००,००,००० (चौंसठ करोड़) डालर के सैनिक शस्त्र दिए जब कि भारत को उसी अवधि में केवल दस करोड़ के शस्त्र दिए गए ।

इस प्रकार शस्त्र-सुसज्जित होकर पाकिस्तान ने अपना रुख बिल्कुल बदल दिया है । वह बराबर अनधिकृत, अवैध रूप से भारतीय भू-भाग की मांग कर रहा है, आपसी झगड़े तय करने के लिए बल-प्रयोग का आश्रय ले रहा है, ताशकन्द-घोषणा की शर्तों को मानने और उन्हें कार्यान्वित करने में आना-कानी कर रहा है, भारत-विरोधी प्रचार ज़ोरों से कर रहा है और भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप कर रहा है ।

पश्चिमी बंगाल के पुलिस महानिरीक्षक के अनुसार पश्चिमी बंगाल-पूर्वी बंगाल सीमा पर पाकिस्तानी सैनिकों का जमाव है । पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान में हवाई उड़ान की सुविधाएं और अधिक उपलब्ध कर दी गई हैं, मुजाहिदों को ट्रेनिंग दी जा रही है ।

भारत-पाकिस्तान सीमा के फाजिलका सेक्टर में स्थापित चौकियों को अभी तक पाकिस्तान ने नहीं तोड़ा है जब कि उनको तोड़ देने के बारे में बहुत पहले भारत और पाकिस्तान में करारनामा हो चुका था ।

पाकिस्तान ने काश्मीर-प्रश्न को एक बार फिर अक्तूबर, सन् १९६८ में संयुक्त राष्ट्र संघ में उठाने का प्रयास किया । उसके विदेश मंत्री अरशाद हुसैन ने भारत के खिलाफ कई आरोप लगाए जिनमें एक था भारत द्वारा काश्मीर में भारतीय उपनिवेश का कायम करना और दूसरा था भारतीय मुसलमानों के साथ दुर्व्यवहार करना । भारतीय प्रतिनिधिमंडल के नेता श्री बलीराम भगत ने यह स्पष्ट किया कि जम्मू-काश्मीर भारत का अविभाज्य अंग है और भारत कोई ऐसी दलील या ऐसी मांग को स्वीकार नहीं कर सकता जिससे उसकी प्रभुसत्ता को ठेस पहुंचती हो । श्री भगत ने यह भी कहा कि पाकिस्तान गत २० वर्षों से लोगों को भारत के विरुद्ध उकसा रहा है और काश्मीर में विस्फोटक स्थिति पैदा कर रहा है ।

पाकिस्तान के भारत-विरोधी रवैये के बावजूद ताशकन्द-घोषणा के तृतीय वार्षिकी के अवसर पर प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खां को एक संदेश भेजा और यह आशा व्यक्त की कि भारत और पाकिस्तान

ताशकन्द-घोषणा के अनुसार अपने सम्बन्धों में सामान्यता लाने के लिए तत्पर होगा। किन्तु इसके विपरीत कराची में ११ जनवरी, सन् १९६९ को ताशकन्द-घोषणापत्र के विरोध में प्रदर्शन किए गए। ऐसे प्रदर्शन रावलपिंडी और लाहौर में भी हुए।

पाकिस्तान के इस रुख से भारत हतोत्साह नहीं हुआ, बल्कि उसने ताशकन्द-घोषणा के तृतीय वर्षगांठ के अवसर पर भारत-पाकिस्तान के विभिन्न मसलों को तय करने के लिए एक संयुक्त संगठन स्थापित करने का पाकिस्तान से प्रस्ताव किया। इसके पूर्व मार्शल अयूब भारत के 'अनाक्रमण समझौता' के प्रस्ताव को कई बार ठुकरा चुके थे। इंदिरा गांधी के इस प्रस्ताव का भी पाकिस्तान में कुछ असर नहीं हुआ। प्रेसीडेंट अयूब पहले की तरह यह कहते रहे कि दोनों देशों के बीच युद्ध न होने के बारे में समझौता उसी समय हो सकता है जब साथ ही भारत और पाकिस्तान के झगड़ों को निपटाने का एक दूसरा समझौता भी किया जाए। वास्तव में पाकिस्तान तो भारत के साथ मित्रता चाहता ही नहीं। यही कारण है कि उसने सन् १९६५ में भारत-पाक युद्ध के दौरान पकड़े गए भारतीय माल को छोड़ने से बिल्कुल इनकार कर दिया है, जब कि भारत ने समस्त पकड़ी गई पाकिस्तानी सामग्री को छोड़ दिया है। स्मरण रहे कि पाकिस्तान द्वारा पकड़े गए भारतीय राष्ट्रिकों और फर्मों के माल की कीमत १,०१,२६,३२,७९७ रु० है।

अध्याय ११

शेख अब्दुल्ला : तब और अब

शेख अब्दुल्ला का जन्म सन् १९०५ ई० में श्रीनगर के पास एक गांव में हुआ था। इनके पिता शाल बुनते थे। अब्दुल्ला के जन्म से पूर्व ही उनकी मृत्यु हो गई थी। इनका लालन-पालन उनकी विधवा मां और उनके बड़े भाइयों ने, जो शाल का व्यापार करते थे, किया। इन्होंने श्रीनगर में श्री प्रताप कालिज से इंटरमीडिएट की परीक्षा पास की और फिर वह आगे पढ़ने के लिए लाहौर चले गए। पंजाब विश्वविद्यालय से सम्बद्ध इस्लामिया कालेज से इन्होंने बी० एस-सी० किया। सन् १९२८ में इन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में अपना नाम एम० एस-सी० में लिखवाया और सन् १९३० में एम० एस-सी० की परीक्षा पास की। एम० एस-सी० करने के बाद अब्दुल्ला काश्मीर वापस आए और गवर्नमेंट हाई स्कूल, श्रीनगर में अध्यापक नियुक्त हो गए।

काश्मीर के महाराजा की सरकार ने सिविल सर्विस में भर्ती के लिए चुनाव करने को एक परिषद् कायम की थी। चूंकि हिन्दू अपेक्षाकृत अधिक अर्ह थे और पढ़े-लिखे थे, इसलिए वे आसानी से राज्यसेवा में भर्ती हो जाते थे और मुसलमान बहुत कम संख्या में राज्य की सेवा में नियुक्त हो पाते थे। शेख अब्दुल्ला ने इसके विरोध में अध्यापक के पद से इस्तीफा दे दिया और काश्मीर सरकार की इस नीति के विरुद्ध अपनी आवाज़ उठाई। राज्य के प्रशासन में मुसलमानों का प्रतिनिधित्व बढ़ाने के लिए एक आंदोलन प्रारम्भ किया गया और शेख अब्दुल्ला मस्जिदों में उत्तेजनापूर्ण भाषण देने लगे। सारा वातावरण साम्प्रदायिकता से भर गगा।

अब्दुल कादिर नाम का एक मुसलमान बावर्ची के रूप में एक यूरोपियन-यात्री के साथ काश्मीर आया था। वह भी इस आंदोलन में शामिल हो गया और उसने २१ जून, सन् १९३१ को शाह हमदन में आयोजित एक बैठक में राजविद्रोहात्मक भाषण दिया, फलस्वरूप वह गिरफ्तार किया गया और उसपर मुकदमा चला। श्रीनगर सेंट्रल जेल में सुनवाई हो रही थी कि चार-पांच हज़ार लोग जेल के बाहर जमा हो गए और जेल के फाटक पर टूट पड़े। उनकी मांग थी कि कादिर के खिलाफ मुकदमा हटा लिया जाए। भीड़ ने तार काट दिए। जेल के कैदी भी उत्तेजित हो गए। गोली चली और २१ आदमी मरे। उनकी लाशें लेकर जलूस निकाला गया और पूरे शहर

में साम्प्रदायिक तनाव बढ़ गया। हिन्दुओं की दूकानें लूटी गईं और ३ हिन्दू मार डाले गए। हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच अभी तक जो अच्छा सम्बन्ध था वह कटु हो गया। महाराजा ने गोलीकांड की जांच कराने के लिए राज्य के हाई कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई। मुसलमानों ने इस कमेटी का बहिष्कार किया। ब्रिटिश वायसराय ने महाराजा पर दबाव डाला कि मुसलमानों की मांग मान ली जाए और किसी अंग्रेज़ी अधिकारी द्वारा निष्पक्ष जांच कराई जाए।

महाराजा ने राजा हरिकृष्ण कौल को अपना नया प्रधान मंत्री नियुक्त किया। उन्होंने मुसलमानों के प्रतिनिधियों से बातचीत करके २६ अगस्त, सन् १९३१ को एक करारनामा किया। उसमें कहा गया कि मुसलमान अपना आंदोलन स्थगित कर देंगे और अपनी शिकायत सरकार को भेजेंगे। सरकार ने राजनीतिक बंदियों को छोड़ देने और उनके खिलाफ मुकदमे उठा लेने की घोषणा की। यह करारनामा काश्मीर मुस्लिम कान्फरेन्स को रुचिकर नहीं लगा। उसको तोड़ने के लिए उन्होंने एक आंदोलन प्रारम्भ किया और शेख अब्दुल्ला ने उसमें सबसे बड़ा भाग लिया। फौरन शेख अब्दुल्ला गिरफ्तार कर लिए गए।

बाहर की मुस्लिम संस्थाएं राज्य में आंदोलन चलाने के लिए जत्था भेजने लगीं। मीरपुर ज़िले में, जहां ज़्यादातर आबादी हिन्दुओं की है, साम्प्रदायिक दंगा हो गया। हिन्दू लूटे गए। महाराजा ने भारत सरकार से सेना की याचना की और भारत सरकार की सेना ३ नवम्बर, सन् १९३१ को राज्य में पहुंच गई। एक अध्यादेश जारी किया गया और जत्थों का राज्य में आना बन्द कर दिया गया।

इस बीच वायसराय ने महाराजा पर निष्पक्ष जांच कराने के लिए फिर दबाव डाला। १२ नवम्बर को महाराजा ने भारत सरकार के विधि और राजनीति विभाग के सर बी० जे० ग्लैंसी की अध्यक्षता में एक कमीशन नियुक्त किया। काश्मीर के प्रधान मंत्री लेफ्टिनेंट काल्विन नियुक्त किए गए। गृह, राजस्व और पुलिस के मंत्री आई० सी० एस० अफसर मुकर्रर किए गए। राज्य का पूरा शासन अंग्रेज़ों के हाथ में आ गया।

थे। यद्यपि शेख अब्दुल्ला और उनके साथी पुरानी मुस्लिम कान्फरेन्स से अलग हो गए थे तो भी मुस्लिम कान्फरेन्स में कुछ ऐसे लोग थे जो साम्प्रदायिक स्थिति के तनाव को बनाए रखना चाहते थे। उनको मुस्लिम लीग के प्रेसीडेण्ट, जिन्ना से इस दिशा में बल मिला। फलतः सन् १९३९ से काश्मीर में दो संस्थाएं हो गईं—मुस्लिम कान्फरेन्स और नेशनल कान्फरेन्स।

नेशनल कान्फरेन्स ने सन् १९३९ में 'राष्ट्रीय मांग' सम्बन्धी एक प्रस्ताव पारित किया। उसमें महाराजा से एक उत्तरदायी सरकार बनाने के लिए अनुरोध किया गया। महाराजा की सरकार ने कुछ सुधार किए। सन् १९४२ में भारतीय नेशनल कांग्रेस ने 'भारत छोड़ो' आंदोलन चलाया। नेशनल कान्फरेन्स ने इसका समर्थन किया।

शेख अब्दुल्ला भारत के कांग्रेसी नेताओं के सम्पर्क में आए और कांग्रेस से प्रभावित हुए। जिन्ना भारत में मुसलमानों के लिए एक अलग राज्य का नारा अलाप रहे थे। उन्होंने इसकी कोशिश की कि काश्मीर में भी, जहां हिन्दू राजा था, हिन्दू-मुस्लिम तनाव बराबर बना रहे। सन् १९४१ में पंडित नेहरू काश्मीर गए। वहां उनका बड़ा स्वागत हुआ। काश्मीर राज्य के लोगों के लिए उत्तरदायी सरकार बनाने की कान्फरेन्स की मांग का उन्होंने समर्थन किया। इससे काश्मीरियों के वे प्रिय बन गए। सन् १९४४ में जिन्ना ने अपने भाषण में साम्प्रदायिक पहलू पर ही अधिक ज़ोर दिया और मुसलमानों से अनुरोध किया कि वे मुस्लिम कान्फरेन्स को शक्तिशाली बनाएं। शेख अब्दुल्ला ने जिन्ना की आलोचना की।

इस बीच काश्मीर के महाराजा ने यह घोषणा की कि मंत्रि-परिषद् में दो निर्वाचित सदस्य होंगे। नेशनल कान्फरेन्स ने इसका स्वागत किया किन्तु वास्तविक व्यवहार में निर्वाचित मंत्री कुछ भी करने में असमर्थ थे। पग-पग पर नामित मंत्री उनसे असहयोग करते थे। इन मंत्रियों ने बाद में इस्तीफा दे दिया और मई सन् १९४६ में नेशनल कान्फरेन्स ने 'काश्मीर छोड़ो' का नारा लगाया। कान्फरेन्स के नेता गिरफ्तार किए गए। २० मई, सन् १९४६ को शेख अब्दुल्ला गिरफ्तार हो गए। पं० जवाहलाल नेहरू काश्मीर भागे गए। वे भी गिरफ्तार कर लिए गए। भारत में इससे बेचैनी हुई।

जिन्ना ने इसी समय एक बयान जारी किया कि 'काश्मीर छोड़ो' आन्दोलन का अभिप्राय काश्मीर राज्य में अव्यवस्था और असंतोष फैलाना है। नेहरू जी छोड़ दिए गए और वे भारत वापस चले आए। २९ सितम्बर को शेख अब्दुल्ला भी रिहा कर दिए गए। अब्दुल्ला ने एक अपील जारी की और उसमें कहा कि "काश्मीर में हम जनता का राज्य चाहते हैं। मैं ऐसी सरकार चाहता हूं जो सभी लोगों को, चाहे जो भी उनका धर्म हो, समान अधिकार और अवसर प्रदान करे। काश्मीर सरकार किसी एक सम्प्रदाय की सरकार नहीं होगी। यह सरकार हिन्दुओं, सिक्खों और मुसलमानों की होगी और इसकी स्थापना के लिए हम लड़ रहे हैं।"

अगस्त, सन् १९४७ में भारत स्वतंत्र हो गया। भारत से ब्रिटिश शासन

समाप्त हो जाने पर अंग्रेजों की सर्वोच्च सत्ता समाप्त हो गई। लार्ड माउण्टबैटन ने २५ जुलाई, सन् १९४७ को यह स्पष्ट किया कि "सैद्धांतिक रूप से देशी राज्य अपना भविष्य निर्धारण के लिए स्वतंत्र हो गए हैं। वे किसी भी डोमिनियन––भारत या पाकिस्तान––में शामिल हो सकते हैं। किन्तु शामिल होने से पहले उन्हें यह ध्यान में रखना होगा कि उनके राज्य की भौगोलिक स्थिति क्या है। इस भौगोलिक स्थिति की बाध्यताओं से वे भाग नहीं सकते। इस समय लगभग ५६५ देशी रियासतें हैं जिनमें से अधिकतर भौगोलिक दृष्टिकोण से भारत से सम्बद्ध हैं।"

अगस्त, सन् १९४७ के पूर्व काश्मीर के अतिरिक्त सभी देशी रियासतें भारत में शामिल हो गईं। काश्मीर के महाराजा टाल-मटोल कर रहे थे। २२ अक्तूबर, सन् १९४७ को पाकिस्तान द्वारा काश्मीर पर आक्रमण करने के बाद काश्मीर की स्थिति बहुत नाजुक हो गई और काश्मीर के महाराजा ने २४ अक्तूबर, सन् १९४७ की शाम को भारत सरकार से सहायता की अपील की। महाराजा ने भारत में अपने राज्य के अधिमिलन को स्वीकार करने की भी भारत सरकार से याचना की। अधिमिलन के स्वीकार कर लेने में शेख अब्दुल्ला ने काफी बड़ा भाग लिया। यह काश्मीर के तत्कालीन प्रधान मंत्री महाजन के बयान से स्पष्ट है। बयान इस प्रकार है :

> मैं भारत के प्रधान मंत्री और उप-प्रधान मंत्री से मिला और राज्य की खतरनाक और गम्भीर स्थिति से उन्हें अवगत किया। मैंने सैनिक सहायता की याचना की और कहा कि सेना को तुरन्त हवाई जहाज़ से भेजा जाए वरना पूरा श्रीनगर नष्ट हो जाएगा और साथ ही वे सब चीज़ें भी नष्ट हो जाएंगी जिन्हें मैं अमूल्य समझता हूं। मुझसे पूछा गया कि किस प्रकार फौज तुरन्त भेजी जा सकती है। मुझे विश्वास दिलाया गया कि यदि श्रीनगर पाकिस्तानी आक्रमणकारियों के कब्ज़े में आ भी जाता है तो उसे बाद में जीत लिया जाएगा। मैं इस दलील से प्रभावित नहीं हुआ और मैंने दृढ़ता से काम लिया। मैंने कहा कि सेना भेजिये, काश्मीर का अधिमिलन स्वीकार कीजिए और लोकप्रिय पार्टी को जो भी अधिकार देना चाहें दे दीजिए किन्तु आज ही शाम को सेना हवाई जहाज़ के ज़रिए, अवश्य श्रीनगर भेजिए वरना मैं जिन्ना के पास जाकर उनसे संधि की शर्तें करूंगा क्योंकि श्रीनगर को बचाना आवश्यक है। इसपर प्रधान मंत्री नेहरू गुस्से में आ गए और मुझसे कमरे से बाहर निकल जाने को कहा। जैसे ही मैं कमरे से बाहर निकलने के लिए उठा एक घटना हो गई और उसने मुझे और काश्मीर को पाकिस्तान के हाथ में पड़ने से बचा लिया। शेख अब्दुल्ला ने, जो प्रधान मंत्री के घर में ठहरे हुए थे, मेरी और नेहरू की उक्त बात सुन ली थी और स्थिति को गम्भीर देखकर एक पर्ची प्रधान मंत्री नेहरू को भेजी। पंडित जी ने उसे पढ़ा और मुझसे कहा कि शेख साहब का भी वही मत है जो आपका है। पंडित जी का रवैया बिल्कुल बदल गया। मैं इस सामयिक सहायता के लिए शेख साहब का हमेशा कृतज्ञ रहूंगा। इस प्रकार काश्मीर पाकिस्तान के हाथ चले जाने से बच गया।

अधिमिलन के सम्बन्ध में शेख अब्दुल्ला के उस समय के विचार आज के विचारों से बिल्कुल भिन्न थे। उन्होंने ३ अक्तूबर को कहा था :

> जम्मू और काश्मीर राज्य के सामने आज एक बड़ी समस्या है और वह यह कि यह राज्य भारत संघ में शामिल हो या पाकिस्तान में या स्वतंत्र रहे, इसमें कोई संदेह नहीं कि मैं आल इंडिया स्टेट पीपुल कान्फरेन्स का प्रेसीडेण्ट हूं और इस मामले में उसकी नीति बिल्कुल स्पष्ट है। पंडित जवाहरलाल नेहरू मेरे बहुत प्रिय मित्र हैं और मैं गांधी जी को बड़े आदर की दृष्टि से देखता हूं। यह भी सत्य है कि कांग्रेस ने हमारे आंदोलन में बड़ी सहायता की है। इन सब बातों के बावजूद यदि आप लोग स्वतंत्र निश्चय लेना चाहें कि काश्मीर राज्य किस डोमिनियन में शामिल हो तो मैं और मेरे विचार आपके निश्चय में बाधक नहीं होंगे।
>
> उन्होंने यह भी कहा कि :
>
> भारत संघ या पाकिस्तान में शामिल होने का आधार जम्मू और काश्मीर में रहने वाले ४० लाख लोगों का कल्याण है। लेकिन हम अगर पाकिस्तान में मिल भी जाते हैं तो हम दो राष्ट्र के सिद्धांत को स्वीकार नहीं करेंगे। इस सिद्धांत ने आज देश में बहुत विषवमन किया है। मैं हिन्दुओं और सिक्खों को आश्वासन देता हूं कि जब तक मैं जीवित रहूंगा, उनका जीवन और उनकी इज़्ज़त बिल्कुल सुरक्षित रहेगी। हम काश्मीर में लोगों का राज्य चाहते हैं। हम ऐसी सरकार स्थापित करना चाहते हैं जो सभी लोगों को एक समान अवसर दे और जिसमें हर जाति और धर्म फले-फूले।

महाराजा के अनुरोध पर और उनके द्वारा अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद काश्मीर के भारत में अधिमिलन को लार्ड माउंटबैटन ने २७ अक्तूबर, सन् १९४७ को स्वीकार कर लिया।

३० अक्तूबर, सन् १९४७ को शेख अब्दुल्ला काश्मीर के प्रधान मंत्री नियुक्त हुए। इस पद पर वे ८ अगस्त, सन् १९५३ तक बने रहे।

काश्मीर पर पाकिस्तान द्वारा आक्रमण की शिकायत भारत ने सुरक्षा परिषद् में १ जनवरी, सन् १९४८ को की। परिषद् में बहस के दौरान शेख अब्दुल्ला ने ज़फ़रुल्ला के इस तर्क का कि काश्मीर में वैध सरकार के स्थान पर निष्पक्ष, तटस्थ प्रशासन की स्थापना की जाएं, इस प्रकार उत्तर दिया था :

> मैं परिषद् को बता रहा था कि यह विवाद किस प्रकार उत्पन्न हुआ, किस प्रकार पाकिस्तान हमको दासता की ज़ंजीर में बांधना चाहता था। हमारी आज़ादी में पाकिस्तान को कोई दिलचस्पी नहीं थी अन्यथा वह तानाशाह शासक के खिलाफ हमारे स्वतंत्रता आंदोलन का विरोध न करता। पाकिस्तान उस समय, जब हमारे सहस्रों देशवासी जेल में बन्द थे और सैकड़ों मार डाले गए थे, हमारा समर्थन करता। लेकिन इसके विपरीत पाकिस्तान के नेता और पाकिस्तानी समाचार पत्र उस समय काश्मीर की पीड़ित जनता पर गोलियों

की बौछार कर रहे थे।

और अब, अचानक पाकिस्तान जम्मू और काश्मीर के लोगों की स्वतंत्रता का समर्थक बन गया है। जब हमने पाकिस्तान की ज़बरदस्ती का मुकाबला किया, उसका विरोध किया तो उसने धावा बोल दिया और कबाइलियों को हमारे विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करने के लिए प्रोत्साहित किया। पाकिस्तान की सहायता और सहयोग के बिना कबाइलियों के लिए हमारे प्रदेश में घुस आना बिल्कुल असम्भव था क्योंकि जम्मू और काश्मीर पहुंचने के लिए उन्हें पाकिस्तानी प्रदेश से गुज़रना होता है। पाकिस्तान के इस तर्क में कि काश्मीर की स्थिति पर काबू पाने के लिए उस प्रदेश में पाकिस्तान और भारत की सेवाएं और प्रदेश पर दोनों डोमिनियनों का संयुक्त नियंत्रण हो कोई सार नहीं है। सामान्य उपायों द्वारा पाकिस्तान जिस उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर सका है वह इस ज़रिये से करना चाहता है। उसका वास्तविक उद्देश्य है राज्य में अपनी फौजें लाना और तदुपरान्त युद्ध करना।

परिषद् में बहस के दौरान शेख अब्दुल्ला ने यह भी कहा था :

वर्तमान स्थिति में राज्य की मौजूदा सरकार का बदला जाना उन्हें स्वीकार्य नहीं है। काश्मीर के लोगों को प्रशासन से अलग नहीं किया जा सकता। काश्मीर के प्रशासन से काश्मीर की जनता सम्बन्धित है न कि पाकिस्तान जिसका इस मसले में कोई अस्तित्व नहीं है।

५ फरवरी, सन् १९४८ को परिषद् में ज़फ़रुल्ला के भाषण का जवाब देते हुए शेख अब्दुल्ला ने कहा था :

> यदि पाकिस्तान के प्रतिनिधि परिषद् से यह कहते कि वे कबाइलियों का समर्थन कर रहे हैं क्योंकि वे समझते हैं कि काश्मीर पाकिस्तान का है न कि भारत का और यह कि काश्मीर का अधिमिलन कपटपूर्ण ढंग से सुनिश्चित किया गया है, तो मैं समझ सकता था। उस समय हम काश्मीर के अधिमिलन की वैधता पर चर्चा कर सकते थे, लेकिन पाकिस्तान के प्रतिनिधि ने ऐसा कोई रुख अख्तियार नहीं किया। ज़फ़रुल्ला खां इस बात से इन्कार करते हैं कि पाकिस्तान की सरकार ने कबाइलियों को कोई सहायता दी है। मैं हैरान हूं कि सुरक्षा परिषद् को किस प्रकार समझाया जाए कि यह बिलकुल गलत है।

शेख अब्दुल्ला ने उस समय अपने सभी बयानों में इसी बात पर ज़ोर दिया था कि काश्मीर भारत का अंग है, काश्मीर का भारत में अधिमिलन अन्तिम है। हमने स्वयं अपनी इच्छा से भारत के साथ रहने का निर्णय किया है और इस निर्णय को किसी भी प्रकार से बदला नहीं जा सकता। २७ नवम्बर, सन् १९४७ को दिल्ली में जो उन्होंने भाषण दिया था उसमें उन्होंने कहा था कि काश्मीर के लोग विधिपूर्वक और संवैधानिक रूप से भारत में सम्मिलित हो चुके हैं। मद्रास में १२ फरवरी, सन् १९५० में अपने भाषण में शेख अब्दुल्ला ने यह ऐलान किया था कि हम सभी काश्मीरी

भारत के साथ रहेंगे, पाकिस्तान के साथ कभी नहीं रह सकते। २३ फरवरी, सन् १६५० को तिथवाल में भाषण देते हुए शेख अब्दुल्ला ने कहा था कि भारत और काश्मीर का बन्धन कानूनी नहीं, बल्कि हृदय और आत्मा का बन्धन है, और इस बन्धन को कभी भी नहीं तोड़ा जा सकता। इसी प्रकार १ जुलाई, सन् १६५० को काश्मीर रेडियो से भाषण देते हुए शेख अब्दुल्ला ने इस बात पर ज़ोर दिया था कि काश्मीर का भारत में अधिमिलन अन्तिम है। १२ अप्रैल, सन् १६५२ को जम्मू में शेख अब्दुल्ला ने जो भाषण दिया था उसमें उन्होंने अपने इस निर्णय को दोहराया था कि हम अपनी इच्छा से भारत के साथ रह रहे हैं। इसके बाद १२ जुलाई, सन् १६५२ को इंदौर में, २७ जुलाई, सन् १६५२ को श्रीनगर में और २२ जनवरी, सन् १६५३ को दिल्ली में शेख अब्दुल्ला ने जो भाषण दिए थे उनमें भी इसी आशय के विचार व्यक्त किए गए थे।

शेख अब्दुल्ला ने उस समय इस बात को कभी सोचा तक नहीं था कि काश्मीर स्विटज़रलैंड की तरह स्वतंत्र रह सकता है। इस बारे में उन्होंने कहा था कि "काश्मीर के स्वतंत्र रहने में वर्तमान समस्या का कोई हल नहीं होगा। काश्मीर की सीमाएं कई देशों से मिलती हैं। वह अपनी सार्वभौमिकता की रक्षा नहीं कर सकता। वास्तव में १५ अगस्त, सन् १६४७ से २२ अक्तूबर, सन् १६४७ तक काश्मीर स्वतंत्र रहा लेकिन नतीजा क्या निकला ? यह कि एक पड़ोसी देश ने राज्य की कमज़ोरी का फायदा उठाकर, यथास्थिति संधि होते हुए भी, काश्मीर पर आक्रमण कर दिया। इसलिए इसकी क्या गारंटी हो सकती है और कौन आश्वासन दे सकता है कि जब काश्मीर स्वतंत्र रहेगा तो उसपर कोई देश आक्रमण नहीं करेगा।"

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि सन् १६५२ के अन्त तक शेख अब्दुल्ला के जो विचार थे उसमें सन् १६५३ के प्रारम्भ से परिवर्तन होने लगा। शेख अब्दुल्ला की वही दुर्बलताएं जो सन् १६३०-३१ में उनमें थीं फिर उभर आईं और उनका रवैया साम्प्रदायिक हो गया। शेख अब्दुल्ला प्रधान मंत्री के पद पर आरूढ़ होने के बाद ऐश और आराम का जीवन बिताने लगे। उच्च सरकारी अधिकारी भ्रष्ट हो गए और उनके विरुद्ध कोई भी कार्यवाही करने में शेख अब्दुल्ला अपनी असमर्थता दिखाने लगे। यही नहीं सजातीय अधिकारियों के अवगुणों एवं भ्रष्टाचार को वे छुपाने लगे थे। तरह-तरह की अफवाहें फैल गईं। काश्मीरियों का विश्वास उनपर से उठ गया। साम्प्रदायिक तनाव बढ़ गया और शेख अब्दुल्ला मुस्लिम उग्रवादी विचारों के प्रति अपनी सद्भावना दिखाने लगे। जम्मू में दंगा हुआ। कई बार गोलियां चलाई गईं। विदेशी कूटनीतिज्ञ इस अवसर से लाभ उठाने लगे और उन्होंने कई प्रकार के प्रलोभन शेख अब्दुल्ला को दिए। शेख अब्दुल्ला उनके जाल में फंस गए।

प्रजा परिषद् ने सन् १६५२ में ही अब्दुल्ला पर अनेक आरोप लगाए थे। उनमें से मुख्य आरोप यह था कि धर्म-निरपेक्षता के नाम पर अब्दुल्ला ने राज्य को मुसलमानी राज्य बनाने की कोशिश की है। उन्होंने हिन्दू-बहुमत के ज़िलों को तोड़ दिया है, संस्कृत शोध विभाग बन्द कर दिया है, उर्दू सभी के लिए अनिवार्य कर दिया

है, मंदिरों और संस्कृत पाठशालाओं के चलाए जाने के लिए धमार्थ न्यास को अपहृत कर लिया है, राज्य की महत्त्वपूर्ण जगहों पर केवल मुसलमानों को नियुक्त किया है, हिन्दुओं और सिखों के पुनर्वासन का विरोध किया है, पाकिस्तान के पक्ष में जो लोग थे, उन्हें जेल से मुक्त करके पाकिस्तान भेज दिया है, आर्थिक सुधार-कार्य, जैसे याता-यात का राष्ट्रीयकरण और राज्य व्यापार, गैर-मुसलमानों को अपंग करने के लिए किया है।

शेख अब्दुल्ला बिल्कुल बदल गए। एक राष्ट्रवादी नागरिक से बदल कर वे घोर साम्प्रदायिक हो गए। मई, सन् १९५३ में नेशनल कान्फरेन्स की कार्यकारिणी समिति की कई बैठकें हुईं। इन बैठकों में शेख साहब ने भारत और काश्मीर के अधि-मिलन के बारे में कई सुझाव रखे जो बिल्कुल भिन्न थे। अधिकतर सदस्य शेख अब्दुल्ला के इन सुझावों से सहमत नहीं थे। इसलिए अपने उन नये विचारों का प्रचार करने के लिए शेख अब्दुल्ला मस्जिदों में भाषण देने लगे और लोगों की धार्मिक भावनाओं के साथ खेलने लगे। अपनी सरकार की असफलताओं का सारा दोष वे काश्मीर के भारत में सम्मिलन पर थोपने लगे। ७ अगस्त, सन् १९५३ को अब्दुल्ला ने कहा कि जम्मू और भारत में साम्प्रदायिकता की जो लहर फैली है उससे वह काश्मीर और भारत के सम्बन्ध में पुनर्विचार करने के लिए बाध्य हो गए हैं। उन्होंने स्वतंत्र काश्मीर का संकेत किया। निःसंदेह उसके पीछे विदेशी राजनीतिज्ञों का हाथ था। कुछ लोगों का विचार है कि अमेरिका के स्टेवेंसन शेख अब्दुल्ला को प्रलोभन दे रहे थे। अब्दुल्ला अपने पुराने रूप में फिर सामने आ रहे थे।

अब्दुल्ला ने नेशनल कान्फरेन्स की कार्यकारिणी समिति में स्वतंत्र काश्मीर घाटी स्थापित किए जाने के बारे में सुझाव रखा। उन्होंने दिल्ली-करारनामे[1] को प्रत्याख्या-पित किया जब कि संविधान सभा के चौथे सत्र में ११ अगस्त, सन् १९५२ को शेख अब्दुल्ला ने कहा था कि २४ जुलाई, सन् १९५२ को पंडित नेहरू और उनके बीच सम्पन्न करारनामा अधिमिलन-पत्र की शर्तों के अधीन किया गया है और उसके अन्तर्गत राज्य की अधिकतम स्वाधीनता सुरक्षित रखी गई है। इसके बदलने का कोई भी सुझाव संविधान का उल्लंघन होगा और हमारे राज्य के लिए उसके परिणाम भंयकर होंगे। शेख अब्दुल्ला के मंत्रिमंडल के आधे से अधिक सदस्यों ने शेख अब्दुल्ला

१. दिल्ली करारनामा २४ जुलाई, सन् १९५२ को घोषित किया गया था। इसके अन्तर्गत भारत ने काश्मीर को संविधान में विशेष स्थिति देना स्वीकार किया था। राज्य को पूर्ण स्वाधीनता दी गई थी, राज्य के शासक के स्थान पर राज्य के अध्यक्ष, जो पांच वर्ष के लिए चुना जाएगा, की व्यव-स्था की गई थी। भारतीय संविधान में दिए हुए मौलिक अधिकार इस प्रतिबन्ध के साथ काश्मीर पर लागू किए गए थे कि वे राज्य में भू-सुधार के कार्यक्रम को किसी प्रकार बाधित नहीं करेंगे। सुप्रीम कोर्ट का अधिक्षेत्र, जहां तक काश्मीर का सम्बन्ध था, अन्तर्राज्य विवाद, मौलिक अधिकार, सुरक्षा, वैदेशिक मामले और संचार तक सीमित रखा गया था। भारत के राष्ट्रीय झंडे को सर्वोच्च स्थान दिया गया था किन्तु काश्मीर का झंडा अलग रखा गया था। भारत के राष्ट्रपति के संकटकालीन अधिकार काश्मीर पर केवल उस राज्य की सरकार की सहमति से ही लागू हो सकेंगे, उक्त करारनामों में ऐसी व्यवस्था की गई थी।

को एक पत्र लिखा और उसकी एक नकल सदर-ए-रियासत को भेजी। उसमें कहा गया कि "शासन में खराबियां तेज़ी से बढ़ रही हैं और उनको रोकने के लिए व लोगों की दशा सुधारने के लिए कई बार शेख साहब से कहा गया लेकिन उन्होंने कुछ नहीं किया। फलतः राजनीतिक अस्थिरता बढ़ गई है और राज्य की आर्थिक स्थिति पर इसका बुरा असर पड़ा है। सम्पूर्ण राज्य में बेरोज़गारी और गरीबी फैल गई है और उनके अनुत्तरदायी भाषणों से लोगों का विश्वास उठ गया है। पिछले कुछ महीनों की घटनाओं ने राज्य को एकदम संकट में डाल दिया है। इस संकट के परिणाम गम्भीर और दीर्घकालीन होंगे। हमें खेद के साथ कहना पड़ता है कि न केवल शेख साहब स्थिति की गम्भीरता को समझने में असफल रहे हैं, बल्कि उनके बयानों और कार्यों से तनाव और अधिक बढ़ गया है। उन्होंने राज्य के प्रधान मंत्री की ज़िम्मेदारियों और राज्य की बुनियादी नीतियों को मानने से इन्कार किया है। उनके व्यवहार से जम्मू और लद्दाख के निवासियों में अनिश्चितता और संदेह उत्पन्न हो गया है। इन कारणों से उन तत्त्वों को शक्ति मिली है जो राज्य की एकता के विरुद्ध हैं।"

बख्शी गुलाम मोहम्मद, गिरधारीलाल डोगरा और श्यामलाल शर्राफ ने शेख अब्दुल्ला को सम्बोधित उस पत्र में आगे चलकर कहा था :

> यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया है कि मिस्टर बेग और आप अपने सहयोगियों के विचारों की उपेक्षा करके और उनसे परामर्श किए बिना सार्वजनिक रूप से ऐसी घोषणा करते हैं जो संयुक्त उत्तरदायित्व के सिद्धान्तों के प्रतिकूल है और जो प्रशासन-नीति के सर्वथा विपरीत है। जब से वर्तमान सरकार बनी है आपने अपने सहयोगियों को विचार-अभिव्यक्ति का अधिकार दिए बिना राज्य के बाह्य और अन्दरूनी मामलों के निस्तारण में स्वेच्छापूर्वक कार्यवाही की है। राजनीतिक और आर्थिक नीतियों के बारे में आपका जो रुख है उससे बहुत गड़बड़ी पैदा हो गई है और अधिकांश लोगों का जीवन दुःखमय हो गया है। प्रशासन ढीला पड़ गया है। मंत्रिपरिषद् के सदस्यों ने सुधारात्मक जो कोई उपाय बताए उनको आपने अच्छी तरह कार्यान्वित नहीं किया। दैनिक प्रशासन कार्य में सतर्कता नहीं बरती गई है। फलतः भ्रष्टाचार और अकर्मण्यता फैल गई है, भाई-भतीजावाद का बोलबाला हो गया है और जनता के धन का अपव्यय हो रहा है। इससे राज्य के लोगों में बड़ा असंतोष फैल गया है।
>
> हमें यह कहते हुए दुःख होता है कि सरकार के अध्यक्ष के रूप में आपने स्थिति को सुधारने का कोई प्रयास नहीं किया बल्कि आपने अपने कामों से, अपने बयानों से, स्थिति को बिगाड़ा ही है। सरकार की जो घोषित नीतियां हैं उनका आपने अनुकरण नहीं किया है। आपने इस प्रकार कार्य किया है जिससे सामान्य रूप से राज्य की जनता में और विशेष रूप से जम्मू और लद्दाख की जनता में अस्थिरता आ गई है। इससे उन लोगों को, जो राष्ट्र की एकता को नष्ट करना चाहते हैं, बल मिल गया है।

> जसा कि सर्वविदित है, पाकिस्तान ने हमारे राज्य पर आक्रमण किया था। उस संकट के समय हम सबने मिलकर भारत से सहायता की याचना की थी और उससे अनुरोध किया था कि वह राज्य के अधिमिलन को स्वीकार कर ले और आक्रमणकारियों को भगाने में तथा राज्य में शांति स्थापित करने में हमारी सहायता करे। भारत में काश्मीर के अधिमिलन के पक्ष में पूरी जनता थी। हमारी प्रार्थना को मानते हुए भारत सरकार ने हमें आश्वासन दिया कि वह हम लोगों को आत्मनिर्णय का अधिकार प्रदान करेगी। संविधान सभा के आयोजन के पश्चात् दिल्ली करारनामे में हमारे राज्य और भारत के बीच क्या सम्बन्ध रहेंगे उनका उसमें उल्लेख किया गया। हमारे राज्य की ओर से आप प्रतिनिधि थे। आपने जो कदम उठाया उसका सरकार ने, नेशनल कान्फरेन्स ने, भारतीय संसद् ने और इस राज्य की संविधान सभा ने एक मत से समर्थन किया, किन्तु न केवल आपने करारनामे को जानबूझ कर कार्यान्वित करने में विलम्ब किया अपितु आपने सार्वजनिक रूप से उसकी निन्दा की। इस प्रकार आपने काश्मीर-भारत के सम्बन्धों को भंग करने की कोशिश की है। आज राज्य में जो गड़बड़ी और अशांति फैल रही है उसको विदेशी शक्तियां अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल कर सकती हैं।
>
> मि० बेग संकुचित जातीयता और सम्प्रदायिकता की नीतियों का अनुकरण करते रहे हैं जिससे राज्य की एकता खतरे में पड़ गई है। दुर्भाग्यवश उनकी नीतियों का आप समर्थन करते रहे हैं। उन सबका नतीजा यह हुआ कि एकता और धर्म-निरपेक्षता, जो हमारे राज्य के दो मूल तत्त्व हैं, खतरे में पड़ गई हैं।

सदर-ए-रियासत ने मंत्रिमंडल के सदस्यों की आपसी फूट पर घोर चिन्ता प्रकट की। उन्होंने सुझाव दिया कि मंत्रिमंडल की एक संकटकालीन बैठक तुरन्त उनके निवास स्थान पर बुलाई जाए जिसमें प्रयत्न किया जाए कि एक स्थायी योग्य शासन की स्थापना हो, लेकिन शेख अब्दुल्ला ने उसका कोई उत्तर नहीं दिया और गुलमर्ग के लिए रवाना हो गए। सदर-ए-रियासत इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि यह मंत्रिमंडल अब और अधिक काम नहीं कर सकता है, अतः उन्होंने शेख अब्दुल्ला को सूचित किया कि उनके नेतृत्व में बना मंत्रिमंडल विघटित किया जाता है।

सदर-ए-रियासत करणसिंह ने इस सम्बन्ध में जो विज्ञप्ति जारी की थी उसका सारांश इस प्रकार है:

> पिछले कुछ महीनों से मैं देख रहा हूं और मुझे इससे बड़ी चिन्ता है कि सरकार के सदस्यों में मौलिक प्रश्नों पर, यथा राजनीतिक, आर्थिक और प्रशासनिक प्रश्नों, पर बड़ा मतभेद है, और चूंकि शासन के सदस्य इन विषयों पर अपने मतभेदों को सार्वजनिक रूप से घोषित करते हैं और चूंकि इन मूल प्रश्नों पर प्रधान मंत्री और उनके एक साथी एवं मंत्रिमंडल के अन्य सदस्यों के विचारों में बड़ा मतभेद है और वे एक दूसरे के खिलाफ हैं और आपस में मिलकर

काम कर सकने में असमर्थ हैं, और चूंकि लोगों की आर्थिक दशा खराब हो गई है और उसको सुधारने की बड़ी आवश्यकता है, और चूंकि ऐसी स्थिति अब आ गई है जब कि ईमानदारी से और कुशलतापूर्वक शासन का कार्य चलाना असम्भव हो गया है, और चूंकि संयुक्त उत्तरदायित्व के आधार पर मंत्रिमंडल कार्य करने में असमर्थ हो गया है और फलतः राज्य की एकता, सम्पन्नता और स्थिरता खतरे में पड़ गई है, इसलिए मैं, करणसिंह, सदर-ए-रियासत राज्य की जनता के हित में शेख अब्दुल्ला को जम्मू और काश्मीर राज्य के प्रधान मंत्री पद से बरखवास्त करता हूं और फलस्वरूप उनकी अध्यक्षता में मंत्रिपरिषद् को भंग किया जाता है।

गुलमर्ग में ६ अगस्त, सन् १९५३ को शेख अब्दुल्ला गिरफ्तार कर लिए गए और उनकी जगह पर बख्शी गुलाम मोहम्मद प्रधान मंत्री बनाए गए। बख्शी गुलाम मोहम्मद ने बताया कि शेख अब्दुल्ला के जमाने में काश्मीर की हालत बदतर हो रही थी, संविधान की अवहेलना की जा रही थी और तनाव बढ़ रहा था इसलिए शेख अब्दुल्ला को गिरफ्तार करना आवश्यक हो गया था।

भारत के कुछ राजनीतिक क्षेत्रों का यह दृढ़ विश्वास था कि शेख अब्दुल्ला स्वतंत्र काश्मीर स्थापित करने का मनसूबा बांध रहे थे। अब्दुल्ला के भाषण से यह साफ हो गया था कि वे पश्चिमी राष्ट्रों के सहयोग से काश्मीर को स्वतंत्र कराने का षड्यंत्र रच रहे थे। भारत की कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने एक पैम्फलेट में यह पर्दाफाश किया था।

बख्शी गुलाम मोहम्मद ने ६ अगस्त, सन् १९५३ को अपने रेडियो भाषण में अब्दुल्ला की बड़ी आलोचना की। उन्होंने बताया कि पाकिस्तान के साथ राज्य को मिलाने का कोई प्रयास करना गलत होगा क्योंकि उससे राज्य का अस्तित्व जाता रहेगा। स्वतंत्र काश्मीर साम्राज्यवादी शक्तियों के प्रभाव में आ जाएगा और उससे भारत और पाकिस्तान दोनों देशों की स्वतंत्रता खतरे में पड़ जाएगी। एक दूसरा कोरिया बन जाएगा।

प्रधान मंत्री नेहरू ने अब्दुल्ला की गिरफ्तारी पर भारतीय संसद् में १० अगस्त, सन् १९५३ को एक विस्तृत बयान दिया। उसमें उन्होंने पूरी स्थिति पर प्रकाश डाला और यह कहा कि काश्मीर के मंत्रिमंडल के सदस्यों में इतना घोर विरोध था कि प्रशासन-कार्य का ठीक तरह से चलना असम्भव हो गया था। सदर-ए-रियासत ने स्वयं अब्दुल्ला से इस बारे में बातचीत की थी और उनसे कहा था कि अपने सहयोगियों से मिलकर कार्य करें। अब्दुल्ला इस सम्बन्ध में कुछ आश्वासन नहीं दे सके। सदर-ए-रियासत ने मंत्रिमंडल की एक संकटकालीन बैठक बुलाने का अनुरोध किया। ऐसी बैठक बुलाने के लिए शेख अब्दुल्ला ने इन्कार किया। फलतः अब्दुल्ला बरखवास्त कर दिए गए। पंडित नेहरू ने बाद में यह भी बताया कि उन्होंने इस सम्बन्ध में बातचीत करने के लिए शेख अब्दुल्ला को दिल्ली बुलाया था लेकिन उन्होंने आने से इन्कार कर दिया और इस प्रकार व्यवहार किया जिससे हम सबको बड़ा दुःख हुआ।

सदर-ए-रियासत की इस सामयिक कार्यवाही की सभी ने प्रशंसा की। काश्मीर के अनेक नेताओं ने कहा कि शेख अब्दुल्ला की गिरफ्तारी से काश्मीर की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति सुधर जाएगी। मीर कासिम ने कहा कि शेख अब्दुल्ला को अपने पद से हटाकर सदर-ए-रियासत ने उन्हीं अधिकारों का प्रयोग किया है जो हमने उन्हें अता किए हैं। शेख अब्दुल्ला ८ जनवरी, सन् १९५८ को रिहा हुए। रिहा होते ही उन्होंने बहुत-से उत्तेजनात्मक भाषण दिए। उन्होंने कहा कि काश्मीर का भारत में अधिमिलन अस्थायी है और केवल जनमत-संग्रह द्वारा ही निश्चय किया जा सकता है कि काश्मीर का भविष्य क्या होगा। उन्होंने यह भी कहा कि जम्मू में मुसलमानों पर अत्याचार किए गए और उसके फलस्वरूप पाकिस्तान ने सन् १९४७ में आक्रमण किया किया था। १७ जनवरी को काश्मीर के मुख्य मंत्री ने शेख अब्दुल्ला को चेतावनी दी किन्तु फिर भी शेख अब्दुल्ला उत्तेजनात्मक और विद्रोहात्मक भाषण देते रहे। उन्होंने कहा कि उनकी गिरफ़्तारी के बाद संविधान सभा का कोई अस्तित्व नहीं रह गया है और काश्मीर की सरकार हिन्दुओं के प्रभाव में आ गई है। उन्होंने ऐलान किया कि जो लोग जनमत-संग्रह के पक्ष में हैं वे काश्मीर के मित्र हैं और जो विपक्ष में हैं वे काश्मीर के शत्रु हैं। १३ अप्रैल को शेख अब्दुल्ला ने पंडित नेहरू को एक पत्र भेजा और उसमें अपने इन्हीं विचारों को व्यक्त किया और कहा कि संसार उनको यह स्वीकार करने के लिए बाध्य करेगा कि काश्मीर के सम्बन्ध में उनकी नीति गलत है और काश्मीर का अधिमिलन अस्थायी है। काश्मीर का भविष्य केवल जनमत-संग्रह द्वारा ही निर्णीत किया जा सकता है।

शेख अब्दुल्ला २९ अप्रैल, सन् १९५८ को निरोधक (प्रिवेंटिव) ऐक्ट के अन्तर्गत फिर गिरफ्तार किए गए और ८ अप्रैल, सन् १९६४ को छोड़ दिए गए। उनके साथ मिर्जा अफजल बेग भी छोड़ दिए गए। लोगों ने भारत के इस निश्चय का स्वागत किया। छूट जाने के बाद शेख अब्दुल्ला अपने भाषणों में बराबर इस बात पर ज़ोर देते रहे कि काश्मीर का भारत में अधिमिलन किसी प्रकार अंतिम नहीं है और काश्मीर के भविष्य का निर्णय करने के लिए काश्मीरियों के विचार जनमत द्वारा मालूम किए जाने चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि काश्मीर की समस्या को सुलझाने के लिए यह ज़रूरी है कि ऐसा कदम उठाया जाए जो भारत, पकिस्तान और काश्मीर को स्वीकार्य हो। शेख अब्दुल्ला दिल्ली गए और वहां प्रधान मंत्री नेहरू से इस सम्बन्ध में बातचीत की। उन्होंने राजगोपालाचारी, बिनोवा भावे आदि नेताओं से भी बातचीत की। शेख अब्दुल्ला ने अपनी बातचीत के बारे में १२ मई, सन् १९६४ को नई दिल्ली में एक बयान जारी किया। उस बयान में शेख अब्दुल्ला ने कहा कि सभी लोग इस बात को अनुभव करते हैं कि भारत और पाकिस्तान में मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बना रहना चाहिए और यह कि काश्मीर-समस्या का स्थायी रूप से समाधान होने के लिए भारत और पाकिस्तान का समर्थन आवश्यक है। समय आ गया है कि भारत और पाकिस्तान के सम्बन्धों में सुधार होना चाहिए। दोनों देशों के नेताओं का यह उत्तरदायित्व है कि वे इस सम्बन्ध में प्रयास करें। काश्मीर की समस्या पिछले सत्रह वर्षों से अनिर्णीत पड़ी हुई है। मैं चाहता

हूं कि इस समस्या का हल निकले। हम लोग एक विशेष सूत्र पर विचार कर रहे हैं और मैं समझता हूं कि उससे काश्मीर समस्या का हल निकल आएगा। उन्होंने यह भी कहा कि उस सूत्र पर बातचीत करने के लिए वे पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट अयूब खां से भी मिलने जाएंगे।

पंडित नेहरू ने शेख अब्दुल्ला के इन प्रयासों की सराहना की। उन्होंने कहा कि शेख अब्दुल्ला धर्म-निरपेक्षता में विश्वास करते हैं। दो-राष्ट्र-सिद्धांत में उनका कोई विश्वास नहीं है। शेख अब्दुल्ला समझते हैं कि भारत के लिए यह सम्भव है कि वह शांतिपूर्वक और मित्रता के वातावरण में पाकिस्तान के साथ रहे और यह भी सम्भव है कि काश्मीर का प्रश्न सदैव के लिए हल हो जाए। मैं आशा करता हूं कि भारत और पाकिस्तान के लिए शांतिपूर्वक रहना सम्भव हो सकेगा। यदि शेख अब्दुल्ला इस दिशा में कुछ कर सकते हैं तो वे दोनों की बड़ी भारी सेवा करेंगे। इसलिए हम शेख अब्दुल्ला को सभी सम्भव सहायता देंगे।

२५-२६ मई, सन् १९६५ को शेख अब्दुल्ला पाकिस्तान गए। वहां उन्होंने प्रेसीडेण्ट अयूब खां से बातचीत की। २७ मई को वे आज़ाद काश्मीर गए। वहीं पर उन्हें मालूम हुआ कि पंडित नेहरू का निधन हो गया है और वे दिल्ली लौट आए।

शेख अब्दुल्ला हज करने मक्का गए। वहीं से वे अन्य यूरोपीय देशों में गए। विदेश-यात्रा का उनका उद्देश्य काश्मीर की स्वतंत्रता के लिए संसार में जनमत बनाना था और जनता को काश्मीरियों की अवस्था से परिचित कराना था। एलजियर्स में उन्होंने चीन के प्रधान मंत्री चाउ एन लाई से भेंट की। चीन ने भारत पर सन् १९६२ में आक्रमण किया था और चीन भारत का शत्रु है। भारत के नागरिक होते हुए भी उन्होंने चीन के प्रधान मंत्री से बातचीत की, जो राष्ट्र के हित में नहीं था। फलत· अब्दुल्ला को आदेश दिया गया कि वे भारत लौट आएं। उनका पासपोर्ट ज़ब्त किया गया। भारत लौटने पर शेख अब्दुल्ला को ८ मई, सन् १९६५ को नजरबन्द कर लिया गया।

यद्यपि शेख अब्दुल्ला की कार्यवाहियां राष्ट्र के हितों के प्रतिकूल थीं और वे राष्ट्रद्रोही कामों के कारण गिरफ्तार किए गए थे तो भी भारत सरकार ने उनके साथ बड़ा अच्छा सलूक किया और उनको खाने-पीने, आदि की सभी सुविधाएं दीं। इसके अतिरिक्त उनकी बेगम[1] को एक हज़ार रुपये मासिक का भत्ता दिया। शेख अब्दुल्ला पर भारत सरकार दस हज़ार रुपये प्रति मास खर्च करती रही।

शेख अब्दुल्ला नजरबन्दी से २ जनवरी, सन् १९६८ को रिहा किए गए। रिहा होने के बाद शेख अब्दुल्ला विभिन्न नेताओं से मिले। ९ जनवरी, सन् १९६८ को पटेल भवन में भाषण देते हुए उन्होंने कहा कि गत २० वर्षों में काश्मीर की समस्या हल नहीं हो सकी है। यह पूछने पर कि उनकी राय में क्या हल होना चाहिए, उन्होंने कहा कि ऐसा हल जो भारत और पाकिस्तान में मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर सके। उन्होंने काश्मीर-विवाद में पाकिस्तान को भी एक पक्ष बताया जब कि सुरक्षा परिषद् में उन्होंने

---

१. निडान होटल, श्रीनगर के मालिक मिस्टर निडान, जो स्विटज़रलैंड के निवासी थे—की पोती मिस निडान से शेख अब्दुल्ला की शादी हुई थी।

कहा था कि पाकिस्तान का इस विवाद में कोई अस्तित्व ही नहीं है, पाकिस्तान ने तो काश्मीर पर आक्रमण किया है।

अपनी राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में पूछे जाने पर शेख अब्दुल्ला ने मूल प्रश्न को टाल दिया और कहा कि भारत मेरा देश है···वह भारत जिसमें पाकिस्तान शामिल है। दिल्ली और पटना आदि में तो उन्होंने अपने भाषणों में संयम से काम लिया, किन्तु श्रीनगर पहुंचते ही वे अपने भाषणों में यह कहने लगे कि काश्मीर प्रश्न उसी समय सुलझ सकता है जब काश्मीर के प्रत्येक व्यक्ति से यह राय ली जाए कि वह भारत में या पाकिस्तान में शामिल होना चाहेगा। उन्होंने कहा कि भारत की ताकत नहीं है कि वह काश्मीरियों को अपना मत व्यक्त करने से रोक सके और अगर भारत कपट करता है तो उसे कभी सफलता नहीं मिल सकती। उन्होंने यह भी कहा कि भारत को भूल नहीं जाना चाहिए कि जलियानवाला कांड से ब्रिटिश साम्राज्यवाद की ताकत नहीं बढ़ी। शेख अब्दुल्ला १८ अप्रैल को बादगाम में उक्त भाषण कर रहे थे।

मुख्य मंत्री सादिक साहब ने शेख के बादगाम के भाषण के बारे में ठीक ही कहा कि शेख की मति भ्रष्ट हो गई है, वे ठीक तरह न सोच सकते हैं और न बोल सकते हैं। उनके हर भाषण में विरोधाभास है। कभी अपने को भारत का मित्र बताते हैं तो कभी शत्रु। अब्दुल्ला पाकिस्तान की भाषा बोलते हैं। उन्हें मालूम होना चाहिए कि विश्व में कोई शक्ति नहीं है जो काश्मीर को प्रेसीडेण्ट अयूब खां को भेंट कर सके।

२० मई को श्रीनगर में तकरीर करते हुए अब्दुल्ला ने कहा कि भारतीय संसद् को काश्मीर के भविष्य के बारे में निर्णय लेने का कोई हक नहीं है, केवल काश्मीरी ही निर्णय ले सकते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि काश्मीर के विवाद में पाकिस्तान भी एक पक्ष है और उसे वही अधिकार है जो भारत को है। उन्होंने एक भाषण में काश्मीरी पडितों को यह धमकी दी कि या तो वे जनमत मोर्चे में शामिल हो जाएं अन्यथा उनको भयंकर परिणाम भोगने पड़ेंगे। उन्होंने अपने भाषणों में यह भी कहा कि भारत फौज के बल पर काश्मीर पर कब्ज़ा किए है और अधिमिलन अस्थायी है। उन्होंने कहा कि सन् १९५३ में उनकी गिरफ्तारी के बाद संविधान सभा प्रतिनिधि सभा नहीं रह गई और इसलिए उसके द्वारा अधिमिलन का स्वीकार किया जाना कोई अर्थ नहीं रखता।

ये शेख वही हैं जिन्होंने काश्मीर संविधान सभा की पहली बैठक में, जो ३१ अक्तूबर, सन् १९५१ को हुई थी, यह घोषित किया था कि संविधान सभा राज्य में सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न है, जो भी निर्णय यह लेगी वह कानूनन अटल होगा। इसी बैठक में अब्दुल्ला ने काश्मीर राज्य के भारत में अधिमिलन के सम्बन्ध में भी कहा था। उस समय पर दिए गए उनके भाषण के कुछ महत्त्वपूर्ण उद्धरण इस प्रकार हैं :

> इंडियन नेशनल कांग्रेस ने निरन्तर देशी राज्यों के लोगों की स्वतंत्रता का समर्थन किया है। नरेशों का स्वेच्छाचारी शासन समाप्त हो चुका है और प्रशासन प्रतिनिधि सरकारों के हाथ में है। लोगों का जीवन-स्तर बढ़ गया है। इसलिए यदि हम भारत से मिल जाते हैं तो सामंतवाद और निरंकुश शासन के

पुनर्जीवित हो जाने का भय नहीं रहता। फिर पिछले चार वर्षों में भारत सरकार ने कभी भी हमारी अन्दरूनी स्वाधीनता में हस्तक्षेप करने की कोशिश नहीं की। इससे हमारा उनमें विश्वास और बढ़ गया है।

किसी राज्य का वास्तविक स्वरूप उसके संविधान में प्रतिबिम्बित होता है। भारत के संविधान में बिना भेद-भाव के न्याय, स्वतंत्रता और समता पर आधारित धर्म-निरपेक्ष प्रजातंत्र की स्थापना की गई है। भारत के संविधान ने सभी नागरिकों को, चाहे जिस धर्म, वर्ण अथवा जाति के वे हों, अधिकारों की समता दे कर किसी धार्मिक राज्य की संकल्पना को अंतिमरूप से अस्वीकृत कर दिया है।

हमारे राज्य के राष्ट्रीय आंदोलन का भी यही आधार है। यहां के लोग ऐसी कोई व्यवस्था नहीं स्वीकार करेंगे जिसमें एक धर्म को दूसरे के खिलाफ या एक वर्ग के लोगों को दूसरे के खिलाफ तरजीह दी जाए। भारत से हमारी राजनीतिक बंधुता है ही, साथ ही पुरातन सम्बन्ध भी है। राज्य के भविष्य निर्धारण में इसका विचार रखना अत्यावश्यक है।

हमने भू-सुधार किए हैं, जमीन जोतने वालों की हो गई है। पाकिस्तान में ताल्लुकेदारी है, हमारी उनकी किस प्रकार पटरी खा सकती है···वहां सामन्त-शाही का बोलबाला है। हमने जो भू-सुधार किए हैं उनकी खबर उन भू-भागों में पहुंच गई है जो आज शत्रु के कब्ज़े में हैं। वे इस प्रकार के सुधार चाहते हैं।

और हमारी आर्थिक उन्नति दस्तकारी शिल्पकला पर निर्भर है और हमारे बेश कीमती माल की मंडी भारत में है। भारत पाकिस्तान से अधिक उद्योगीकृत है। वह हमें तकनीकी परामर्श, साज-सज्जा दे सकता है, वह माल की बिक्री में हमारी सहायता कर सकता है। कच्चा सामान भी हम भारत से अधिक मात्रा में प्राप्त कर सकते हैं।

कहा जाता है कि पाकिस्तान मुस्लिम राज्य है। हमारी अधिकांश जनता मुसलमान है, इसलिए हमारे राज्य को पाकिस्तान में मिल जाना चाहिए। पाकिस्तान मुस्लिम राज्य है यह केवल लोगों को धोखा देने की टट्टी है, पाकिस्तान सामंतशाही राज्य है। पाकिस्तान ने मुसलमानों को तितर-बितर कर दिया है। हज़ार मील की दूरी पर पाकिस्तान के दो अंग स्थित हैं। भारत में ४ करोड़ मुसलमान हैं जब कि पश्चिमी पाकिस्तान में जिसकी सीमा हमारे राज्य की सीमा से संलग्न है, मुश्किल से ढाई करोड़ मुसलमान हैं। तब क्यों न हम ४ करोड़ मुसलमानों के साथ रहें जब मुसलमानों के साथ रहने की ही बात है। पाकिस्तान में कोई संविधान नहीं है। बादशाह खां और उनके साथियों, खान अब्दुल समद खां का पाकिस्तान में क्या हश्र हुआ है यह सभी जानते हैं।

हम स्वतंत्र राज्य के रूप में नहीं रह सकते। १५ अगस्त, सन् १९४७ से २२ अक्तूबर सन् १९४७ तक हमारा राज्य स्वतंत्र रहा, नतीजा क्या हुआ, यही न

कि हमारे पड़ोसी देश ने, जिसके साथ हमारा यथास्थिति करारनामा था, हम पर आक्रमण कर दिया। ऐसा आक्रमण फिर भी हो सकता है। आक्रमण नहीं होगा इसकी क्या गारंटी है ?

जिस व्यक्ति ने पहले यह कहा हो कि भारत और काश्मीर का सम्बन्ध केवल कानूनी न होकर हृदय-आत्मा का है और चिरस्थायी है और वह कभी तोड़ा नहीं जा सकता, वही बाद में यह कहने लगे कि बन्धन अस्थायी है और बलपूर्वक किया गया तो हम यही कहेंगे कि या तो उसका मस्तिष्क फिर गया है या यह कि वह राष्ट्रवादी सिद्धांतों से गिर कर पूर्णतः साम्प्रदायिक हो गया है और अपनी महत्त्वाकांक्षाओं में इतना अन्धा हो गया है कि कौन अपना है, कौन पराया इसका उसे ज्ञान नहीं रह गया है। शेख अब्दुल्ला अब डिक्सन योजना को अपनाने के पक्ष में बोलने लगे हैं। उन्होंने यह मत व्यक्त किया है कि काश्मीर घाटी पर संयुक्त राष्ट्र संघ का ५ वर्ष तक प्रशासन रहे। तत्पश्चात् मत-संग्रह कराया जाए। दूसरे शब्दों में, उन्होंने काश्मीर के उस हिस्से को, जिस पर पाकिस्तान का अवैध कब्ज़ा है, पाकिस्तान के अधिकार में बने रहने को अंगीकृत कर लिया है। डिक्सन योजना के अन्तर्गत यह सुझाव रखा गया था कि जम्मू भारत के अधिकार में, रहे, "आज़ाद काश्मीर" का हिस्सा पाकिस्तान के अधिकार में और काश्मीर घाटी पर प्रशासकीय नियंत्रण संयुक्त राष्ट्र संघ का रहे। इस योजना को भारत ने अस्वीकृत कर दिया था और शेख भी इस योजना के खिलाफ थे। आज शेख उसी योजना के पक्ष में बोल रहे हैं। यह विधि की विडम्बना ही है। शेख के इन विचारों की सभी ने विशेषकर छागला ने, बड़ी निन्दा की है।

शेख अब्दुल्ला के बार-बार यह कहने से कि संगीन के बल पर भारत का काश्मीर पर कब्जा है और काश्मीरी अस्थायी रूप से भारत के नागरिक हैं, पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट अयूब को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। अयूब ने जनवरी, सन् १९६८ को शेख अब्दुल्ला को लिखा कि काश्मीर के लोगों को उनके स्वतंत्रता संघर्ष में और आत्मनिर्णय के अधिकार की उनकी मांग में पाकिस्तान बराबर समर्थन करता रहेगा। अयूब ने यह पत्र अब्दुल्ला के उस पत्र के उत्तर में भेजा था जिसमें शेख ने काश्मीर के लोगों की लड़ाई में समर्थन करने के लिए अयूब को धन्यवाद दिया था।

काश्मीर के मुख्य मंत्री श्री सादिक ने अब्दुल्ला को मुंह तोड़ जवाब दिया है। उन्होंने कहा है कि शेख को न भूल जाना चाहिए कि उन्हीं की वज़ारत में काश्मीर सरकार ने कुछ अहम फैसले लिए थे, जैसे काश्मीर में राजतंत्र की समाप्ति और भू-सम्पत्ति सम्बन्धी ऐक्ट का पारण। यदि अब यह कहा जाए, जैसा अब्दुल्ला कहते हैं, कि संविधान सभा, जिसने भारत में काश्मीर के अधिमिलन को सर्वसम्मति से अंगीकृत किया था, निर्णय लेने के लिए अक्षम थी तो क्या राज्य में राजतंत्र पुनःस्थापित किया जाएगा और ज़मींदारों से जो ज़मीनें ली गई हैं उन्हें वापस कर दी जाएंगी ? श्री सादिक ने कहा कि अब्दुल्ला अपने भाषण-स्वातंत्र्य का दुरुपयोग कर रहे हैं। यदि वे इस प्रकार पाकिस्तान में कहते तो जेल में बन्द होते। उन्होंने शेख साहब को याद दिलाया कि क्या उन्होंने कभी आज़ाद काश्मीर के लोगों के आत्मनिर्णय की मांग का

समर्थन किया है और पाकिस्तान से उनकी मांग मानने के लिए अनुरोध किया है ?

शेख यह समझते थे कि जनवरी सन् १९६८ में रिहा होने के बाद से उनका प्रभुत्व काश्मीर और जम्मू में फिर से स्थापित हो जाएगा और काश्मीर के भविष्य के सम्बन्ध में भारत सरकार उनसे वार्ता करने के लिए बाध्य हो जाएगी। शेख का यह सोचना कि जम्मू में भी उनका महत्त्व बढ़ जाएगा मौलिक रूप से गलत था क्योंकि शेख ने कभी जम्मू का समर्थन नहीं प्राप्त किया और न उसकी ज़रूरत ही समझी। जम्मू के मुसलमान सन् १९४७ ई० के पूर्व भी हिन्दू राजा के विरुद्ध शेख अब्दुल्ला के आंदोलन में शरीक नहीं हुए थे। जम्मू के मुसलमानों ने सन् १९३९ में नेशनल कान्फरेन्स की स्थापना के लिए शेख अब्दुल्ला का समर्थन किया था किन्तु शीघ्र ही उन्होंने उस कान्फरेन्स से किनारा कर लिया क्योंकि उन्होंने यह अनुभव किया कि सम्मेलन में उनका कोई स्थान नहीं था। पहले यह तय हुआ था कि सम्मेलन के प्रेसीडेण्ट और जनरल सेक्रेटरी के पद बारी-बारी से काश्मीर और जम्मू के मुसलमानों को मिलते रहेंगे। किन्तु बराबर इन दोनों पदों पर काश्मीरी ही आसीन रहे। नेशनल कान्फरेन्स के विधायी अंग का नेता एक गैर-काश्मीरी था, किन्तु जब महाराजा ने अपने मंत्रिमंडल में पार्टी को अपना एक प्रतिनिधि मनोनीत करने के लिए आमंत्रित किया तो उस गैर-काश्मीरी नेता का हक मारा गया और मिर्ज़ा मोहम्मद अफज़लबेग को नामित किया गया। गैर काश्मीरी इससे बहुत क्षुब्ध हुए। उनके क्षुब्ध होने का एक कारण यह भी था कि शेख ने सन् १९४६ में 'काश्मीर छोड़ो' का जब आन्दोलन चलाया तब उन्होंने महाराजा से काश्मीर छोड़कर जम्मू में बसने के लिए कहा, गोया जम्मू की स्वाधीनता से शेख का कोई सरोकार न था।

शेख अब्दुल्ला के प्रधान मंत्री होने पर जम्मू के हिन्दुओं और मुसलमानों को कोई अधिकार प्राप्त नहीं हुए। पांच व्यक्तियों के मंत्रिमंडल में एक समय था जब जम्मू का केवल एक ही प्रतिनिधि था। पार्टी की सभी महत्त्वपूर्ण जगहों पर काश्मीरी ही विराजमान थे। जम्मू के प्रति शेख की उदासीनता के फलस्वरूप जम्मू के निवासी शेख के पक्ष में नहीं रहे। फलतः अपना प्रभुत्व जमाने के लिए शेख ने जम्मू में साम्प्रदायिकता के बीज बोना प्रारम्भ कर दिया और पूरे राज्य का वातावरण साम्प्रदायिक कर दिया।

जहां तक भारत सरकार का शेख से बातचीत करने का सम्बन्ध है, भारत सरकार ने शेख के बयानों, भाषणों को कोई महत्त्व नहीं दिया और काश्मीर के भविष्य के बारे में शेख से कोई बातचीत करना पसन्द नहीं की। शेख अब्दुल्ला, मौलवी फारूक मिर्ज़ा, मो० अफज़ल बेग ने अगस्त में सफरादल निर्वाचन क्षेत्र में होने वाले उप-निर्वाचन में भाग न लेने के लिए लोगों से अपील की, किन्तु इसका कोई असर नहीं हुआ। बादगाम में १०,००० वोट पड़े और बख़्शी गुलाम मोहम्मद ३००० वोट से विजयी घोषित हुए।

अपनी बिगड़ती हुई राजनीतिक स्थिति को संभालने के लिए और राज्य की जनता पर अपना सिक्का फिर से जमाने के लिए शेख ने काश्मीर के भविष्य के सम्बन्ध में विचार करने के लिए ११ अक्तूबर, सन् १९६८ को पांच दिवसीय जम्मू व काश्मीर

राज्य लोक सम्मेलन आयोजित किया और उसमें शामिल होने के लिए अनेक नेताओं को आमंत्रित किया। प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के नेता श्री एन० जी० गोरे ने निमंत्रण को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि भारत में काश्मीर का विलयन अन्तिम है और उस पर कोई बहस नहीं की जा सकती और पाकिस्तान का इस मामले में कोई अस्तित्व नहीं है। जनसंघ के प्रेसीडेण्ट अटलबिहारी वाजपेयी ने कहा कि वे उस समय तक सम्मेलन में भाग नहीं ले सकते जब तक कि शेख यह न कह दें कि वे भारतीय नागरिक हैं, पाकिस्तान आक्रमणकारी है और काश्मीर भारत का अभिन्न अंग है।

शेख अपनी हैसियत को भूल गए और भारत के प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी और पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट अयूब को निमंत्रण दे डाला मानो वे स्वयं जम्मू और काश्मीर राज्य के अध्यक्ष थे। उन्होंने श्रीमती गांधी से आज़ाद काश्मीर से ४७ लोगों को सम्मेलन में भाग लेने के लिए अनुमति मांगी जो तुरन्त अस्वीकृत कर दी गई।

काश्मीर के सम्बन्ध में श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा समय-समय पर व्यक्त भाषणों से शेख अब्दुल्ला को यह भ्रम हो गया था कि वे काश्मीर में जनमत-संग्रह कराने के पक्ष में हैं। शेख ने श्री जयप्रकाश को सम्मेलन का उद्घाटन करने के लिए आमंत्रित किया और अपने परिचय-भाषण में जयप्रकाश नारायण की स्पष्टवादिता, ईमानदारी, आत्मसंयम और निर्भीकता की प्रशंसा की। श्री जयप्रकाश ने अपने उद्घाटन-भाषण में शेख और उनके साथियों को सलाह दी कि वे काश्मीर का हल भारतीय संघ के ढांचे के भीतर ही ढूंढने की कोशिश करें। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि सन् १९६५ के भारत-पाक संघर्ष के बाद कोई भी भारतीय सरकार ऐसा सुझाव स्वीकार नहीं कर सकती जो काश्मीर को भारतीय संघ से अलग करे।

श्री जयप्रकाश नारायण की उक्त सलाह को ठुकराते हुए उसी मंच से शेख ने 'करो या मरो' का नारा बुलन्द किया और धमकी के स्वर में कहा कि आज़ादी तोहफे के तौर पर हासिल नहीं की जाती बल्कि छीनी जाती है। उन्होंने यह इंगित किया कि अब वे काश्मीर में एक ऐसा आन्दोलन छेड़ेंगे जैसा कि भारत ने अंग्रेज़ों के खिलाफ अगस्त, सन् १९४२ में छेड़ा था। शेख अब्दुल्ला कदाचित् भूल जाते हैं कि वे स्वतंत्र काश्मीर का आज वैसा ही स्वप्न देख रहे हैं जैसा उन्होंने सन् १९५३ में देखा था।

भारत-विरोधी और देशद्रोही भाषण देने के बावजूद यदि आज शेख अब्दुल्ला स्वतंत्र हैं तो उन्हें इसे भारत की बड़ी कृपा समझनी चाहिए और काश्मीर सरकार की उदारता और विशाल-हृदयता।

सम्मेलन आयोजित करने का शेख का उद्देश्य निष्फल रहा है, भारत सरकार शेख को अब कोई महत्त्व नहीं देती। शेख का हाल बेहाल है।

अध्याय १२

उपसंहार

काश्मीर का इतिहास बहुत प्राचीन है। कहते हैं, कश्यप ऋषि ने काश्मीर घाटी को जन्म दिया था। 'राजतरंगिणी' के अनुसार पांडव वंश के राजाओं ने भी काश्मीर पर राज्य किया था। परीक्षित के पुत्र तथा अर्जुन के प्रपौत्र हरनदेव का काश्मीर पर शासन रहा है। काश्मीर सम्राट् अशोक के भी शासनाधीन रहा है। अशोक ने यहां ६६,००० निवास गृह, अनेक विहार और स्तूपों का निर्माण कराया था। काश्मीर में बौद्धधर्म के प्रचार का श्रेय अशोक को ही था। कल्हण के अनुसार अशोक ने वर्तमान श्रीनगर के निकट 'श्रीनगरी' की स्थापना की थी।

काश्मीर का शासक मिहिरकुल जैसा निर्दयी व्यक्ति भी रहा है जिसने, कहा जाता है, अपने मनोरंजनार्थ पीर पंजाल दर्रा से १०० हाथियों को गिराने का आदेश दिया था। गोनन्द वंश के युधिष्ठिर के राजसिंहासन-च्युत होने के बाद काश्मीर के अमीरों ने भारत के राजा विक्रमादित्य के एक मंत्री को भारत से आमंत्रित किया था और उसे प्रतापादित्य प्रथम के नाम से राजगद्दी पर बैठाया था। काश्मीर का राज्य भारतीय राजाओं के अधीन आ गया था और भारतीय राजा गवर्नर अथवा वाइसराय द्वारा काश्मीर पर शासन करते थे। मातृगुप्त काश्मीर का एक ऐसा ही गवर्नर था। कुछ विद्वानों का मत है कि मातृगुप्त ही सम्राट् कवि कालिदास था। यह मत भी प्रतिपादित किया जाता है कि कालिदास का जन्मस्थान काश्मीर में था क्योंकि जिस सुन्दरता से कालिदास ने अपनी कृतियों में हिमालय की प्राकृतिक छटा का वर्णन किया है उससे कोई सन्देह नहीं रह जाता कि कालिदास काश्मीर के निवासी नहीं थे। काश्मीर का एक राजा प्रवरसेन था जो इतना उदार और विशाल हृदय था कि जिस देश को यह जीत लेता था उसे यह पराजित शासक को फिर से दे देता था। कहते हैं, प्रवरसेन देहावसान पर सशरीर स्वर्ग को गया था।

यहीं चन्द्रापीड जैसा शक्तिशाली राजा सन् ७११-७१६ में हुआ जिसकी महत्ता चीन का राजा भी स्वीकार करता था। सन् ७२४ ई० में काश्मीर के सिंहासन पर ललितादित्य बैठा। ललितादित्य की तुलना अलेक्ज़ेण्डर से की जाती है। वीरता, पराक्रम, हृदय की विशालता में ललितादित्य की कोई समता नहीं कर सकता। इसकी विजय-पताका पंजाब, कन्नौज, तिब्बत पर फहराती थी। उसके राज्य का विस्तार उत्तर

में तिब्बत से लेकर द्वारिका और उड़ीसा के सागर तट तक और दक्षिण में दकन, पूर्व बंगाल, पश्चिम में विदिशा और मध्य एशिया तक था।

सम्राट् ललितादित्य का साम्राज्य बहुत ही सम्पन्न और समृद्धिशाली था। एशिया के सभी देशों से व्यापार होता था। काश्मीर की वस्तुएं विदेशी बाजारों में बिकती थीं। कला, व्यापार उन्नति के शिखर पर था। उसके शासन-काल में लोग बहुत खुशहाल थे। ललितादित्य के दरबार में भारत के कोने-कोने से विद्वान् और कवि आमंत्रित किए जाते थे।

काश्मीर में भारत के अन्य भागों से लोग संस्कृत पढ़ने आते थे। संस्कृत की शिक्षा-दीक्षा में, दर्शन-शास्त्र, ललितकला, धर्म, विज्ञान और वास्तुकला में काश्मीर भारत के सब भागों से अद्वितीय था। हिन्दू शासन-काल में वह वास्तविक अर्थ में भारत का मुकुट था।

तेरहवीं शताब्दी में काश्मीर की अंतिम हिन्दू रानी कोटा थी, जिसकी मृत्यु से काश्मीर में हिन्दू राज्य का अन्त हो गया। नवीं शताब्दी से काश्मीर के शासकों ने घाटी को भारत से बिलकुल अलग कर दिया था। जब तक काश्मीर का भारत के अन्य भाग से व्यापार चलता रहा और लोगों का आना-जाना बना रहा, काश्मीर में ललित-कला और संस्कृति की बड़ी उन्नति हुई और देश की सम्पन्नता भी बढ़ी।

सम्राट् ललितादित्य के समय, जैसा हम देख चुके हैं, काश्मीर अपनी उन्नति के शिखर पर था। अवन्तिवर्मन और शंकरवर्मन ने भी इस उन्नति को बनाए रखने का प्रयास किया। उनका यह भी प्रयास रहा कि उत्तरी भारत के सम्राट् काश्मीर में न आने पाएं। इस उद्देश्य से प्रेरित होकर उन्होंने दर्रों को बन्द कर दिया। फलतः काश्मीर का दम घुट गया। राज दरबार के खर्च बढ़ते रहे और चूंकि बाहर से कोई व्यापार होता नहीं था इसलिए आमदनी के स्रोत नहीं रहे। आर्थिक स्थिति बिगड़ गई। जनता पर मनमानी कर लगाये जाने लगे। शासक मंदिरों की सोने और चांदी की मूर्तियां अपना खर्च चलाने के लिए गलाने लगे। सिपाहियों को तनख्वाहें नहीं दी जाने लगीं और वे सेना छोड़ कर भागने लगे। राज दरबार में षड्यन्त्र रचे जाने लगे और विद्रोह तथा उपद्रव दिन-प्रतिदिन होने लगे। पुरानी परम्परा लुप्त हो गई और राज-कर्मचारियों में भ्रष्टता फैल गई।

इधर भारत के उत्तर-पश्चिम में इस्लाम धर्म जोर पकड़ रहा था। यद्यपि घाटी के दर्रे बन्द कर दिए गए थे तो भी लोगों पर उसका प्रभाव पड़ने लगा था। बारहवीं शताब्दी के बाद से घाटी के लोग धीरे-धीरे इस्लाम धर्म को अपनाने लगे थे। यही कारण था कि कोटा रानी के बाद शाहमीर को स्थानीय समर्थक मिल गए और उनकी सहायता से वह काश्मीर का राजा बन बैठा।

काश्मीर में इस्लाम धर्म के प्रचारक और प्रवर्तक के रूप में बुलबुलशाह का नाम प्रसिद्ध है। बुलबुलशाह राजा सहदेव के समय काश्मीर में आया था। वह शाह नियामत उल्ला फर्सी का शिष्य था। सूफी सन्त होने के नाते उसका लोगों पर बड़ा प्रभाव था। बुलबुलशाह ही के कारण काश्मीर रेंछन मुस्लिम शासक के आधिपत्य

में आ गया था।

कोटा रानी के बाद शाहमीर सन् १३३९ में काश्मीर के सिंहासन पर बैठा। उसने अपना नाम शमशुद्दीन रखा और सुल्तान वंश का संस्थापक बना। इस वंश के बादशाहों ने २२२ वर्ष तक काश्मीर पर राज्य किया। इस अवधि में इस्लाम धर्म का झंडा काश्मीर में गड़ गया था। इसी वंश में जैनुल-आब्दीन नामक सहृदय, योग्य, लोकप्रिय बादशाह हुआ। शाहमीर के बाद लगभग १०० वर्ष तक काश्मीर की राज-भाषा संस्कृत रही। जैनुल-आब्दीन के समय यह भाषा फारसी हो गई।

सुल्तान शहाबुद्दीन (१३५४-७३) की फौज और दिल्ली के सुल्तान फ़ीरोज़ तुगलक की फौज में सतलुज के पास घमासान लड़ाई हुई थी अन्त में दोनों में संधि हो गई और फ़ीरोज की दो पुत्रियों की शादी शहाबुद्दीन और उसके भाई कुतुबुद्दीन से कर दी गई और शहाबुद्दीन की पुत्री की शादी फ़ीरोज तुगलक से कर दी गई।

शहाबुद्दीन के सेनापति, मंत्री और उच्चाधिकारी सभी हिन्दू थे। शहाबुद्दीन के बाद उसका छोटा भाई कुतुबुद्दीन सन् १३७३ में राजगद्दी पर बैठा। सन् १३८९ में उसकी मृत्यु पर उसका पुत्र जो उस समय बहुत छोटा था गद्दी पर बैठा। इसने सन् १४१३ तक राज्य किया। केन्द्रीय एशिया और परशिया में सिकन्दर ने अपना नाम कर लिया था। जैनुल-आब्दीन इसी का पुत्र था। सिकन्दर के बाद उसका बड़ा पुत्र अलीशाह गद्दी पर बैठा और उसने सन् १४२० तक राज्य किया। इसके बाद जैनुल-आब्दीन गद्दी पर बैठा और उसने ५० वर्ष तक (१४२०-७०) तक राज्य किया। इसके समय में काश्मीर की प्रजा बड़ी सुखी थी, इसके दरबार में दूर-दूर से विद्वान् और कवि आमंत्रित किए जाते थे। संगीत और नृत्य कला को इसके शासन-काल में बड़ा प्रश्रय मिला। लोग धर्म के प्रति सहिष्णु थे, हिन्दू-मुसलमान में बड़ा प्रेम और भाईचारा था। श्री भट्ट, तिलकाचार्य, शिवभट्ट, श्री रामानन्द आदि हिन्दू बड़े-बड़े पद पर आसीन थे। प्रशासन की बागडोर काश्मीरी पंडितों के हाथ में थी। न्यायालय की भाषा फारसी कर दी गई थी। अक्तूबर, सन् १५८६ तक सुलतान वंश का राज्य रहा।

चक सुल्तानों के ज़माने में सुन्नियों पर बड़ी ज़्यादतियां की जाती थीं। ब्राह्मणों को कर, दंड आदि देने पर धार्मिक क्रियाओं के करने की अनुमति थी। १४ अक्तूबर, सन् १५८६ को मुगल सेना ने काश्मीर पर आधिपत्य कर लिया और उस समय से काश्मीर मुगल सम्राट् का एक प्रान्त हो गया। मुगल साम्राज्य का आधिपत्य सन् १७५३ तक रहा।

काश्मीर में पहली बार अकबर सन् १५८९ में गया था। उसके सुझाव पर काश्मीर की कुछ नौकाएं नौका-गृह में परिवर्तित की गई थीं। जहांगीर अपने पिता के साथ ही काश्मीर गया था। काश्मीर की अनुपम छटा, प्राकृतिक सौन्दर्य से वह इतना प्रभावित हुआ कि काश्मीर में अनेकों बार आया। साथ में उसकी मलका भी आई थीं। जहांगीर के शासन-काल में काश्मीर में कई उद्यान लगाए गए। शालामार बाग उसी का देन है। बादशाह ने शालामार बाग सन् १६१९ में लगवाया था और निशातबाग को नूरजहां के भाई आसफखां ने लगवाया था। जहांगीर के पूर्व कुछ पहाड़ियों में हिन्दू

मुसलमान लड़की से शादी कर सकते थे और इसी प्रकार मुसलमान हिन्दू लड़की से शादी करते थे। जहांगीर ने यह आदेश दिया कि मुसलमान लड़की की किसी हिन्दू से शादी नहीं हो सकती। जहांगीर अंतिम बार सन् १६२७ में काश्मीर आया। शाहजहां दोबारा काश्मीर आया। उसके ज़माने में कई सुन्दर बाग लगाए गए और अच्छी-अच्छी सड़कें बनवाई गईं। चश्माशाही बाग लगाने का श्रेय शाहजहां ही को है। औरंगज़ेब केवल एक बार सन् १६६५ में काश्मीर अपनी पुत्री रोशनआरा के साथ आया था।

सन् १७५२ में मुगल आधिपत्य की समाप्ति पर अफगान शासकों का काश्मीर पर राज्य हुआ। इनका राज्य सन् १८१६ तक रहा। इस अवधि में काश्मीरियों पर बड़ा ज़ुल्म ढाया गया। पठान गवर्नर असद खां काश्मीरी पंडितों को घास के बोरों में बन्द करके डल झील में डुबवा देता था। हिन्दुओं पर जज़िया फिर लगाया गया। मीर हज़ार एक दूसरा गवर्नर हुआ जो चमड़े के बोरों में हिन्दुओं और शिया मुसलमानों को बन्द करके डल झील में फिंकवा देता था। अता मुहम्मद खां ऐसा गवर्नर हुआ जिसके ज़माने में काश्मीरी अपनी सुन्दर लड़कियों का सर मुंड़वा देते थे, उनकी नाक काट देते थे जिससे वे कुरूप लगें, और अता खां के चंगुल से बच सकें।

पठान गवर्नरों से काश्मीर की जनता इतनी पीड़ित थी कि काश्मीर घाटी के एक सरदार बीरबल ने लाहौर के सिख दरबार में जाकर रणजीतसिंह से काश्मीर पर आक्रमण करने का अनुरोध किया। सन् १८१६ में रणजीतसिंह की सेनाओं ने काश्मीर पर आधिपत्य कर लिया। पांच शताब्दी तक मुस्लिम शासन के बाद काश्मीर एक बार फिर हिन्दू राजाओं के अधीन हो गया।

यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। नृशंस बर्बर पठान के शासन का अंत होना ही था। काश्मीर की जनता विदेशी दासता से अपने को मुक्त करने के लिए बेचैन थी। अपनी विवशता में पठान-पीड़ित जनता ने सिख शासन को आमंत्रित किया था।

काश्मीर की जनता ने इस्लाम धर्म को ऐसे समय सहर्ष कबूल किया था जब हिन्दू जनता हिन्दू राजाओं और रानियों के अत्याचार, कुशासन से पीड़ित थे और ब्राह्मण रीति और रिवाजों को निर्धन जनता पर आरोपित किए हुए थे। शाहमीर के शासन-काल में पीड़ित और कर शोषित जनता को आराम मिला था। कृषि की फिर उन्नति हुई, कराधान कम हुआ। सुल्तान शहाबुद्दीन के ज़माने में कर्कोट वंश की परम्पराएं पुनर्जीवित हुईं और काश्मीर का आदर-सम्मान निकटवर्ती प्रदेशों में होने लगा। पहले सुल्तानों के ज़माने में हिन्दुओं को अपने धर्म के अनुकूल आचरण की पूरी स्वतंत्रता थी। बाद में परशिया और केन्द्रीय एशिया से सैय्यदों और उपदेशकों के आ जाने से ब्राह्मणों पर अत्याचार किए जाने लगे। इससे शासन-तंत्र ढीला हो गया। सुल्तान जैनुल-आब्दीन ने इस नीति में परिवर्तन किया। वह दयालु और धर्म सहिष्णु शासक था। उसके समय में काश्मीर उन्नति के शिखर पर पहुंच गया था।

अरबी और फारसी संस्कृति के सम्मिलन का प्रभाव लोगों के रहन-सहन, रीति रिवाज पर पड़ा, मुसलमानों और हिन्दुओं में शादी-विवाह होने लगे, पहले

सुल्तान मूर्ति-पूजक भी थे, संस्कृत राज-काज और न्यायालय की भाषा मुसलमान शासन के प्रारम्भ होने के २०० वर्ष तक बनी रही। किन्तु यह स्थिति अधिक समय तक नहीं कायम रही। बाद के राजाओं और उनके उत्तराधिकारियों में संघर्ष होता रहा, राजगद्दी के लिए लड़ाइयां लड़ी जाती रहीं, लोगों पर भारी कर लगाया जाता रहा, प्रशासन में खराबियां आ गईं, शिया और सुन्नियों में संघर्ष होते रहे। फलतः सुलतान की हुकूमत जर्जर हो गई और मुगल बादशाह के लिए काश्मीर पर कब्ज़ा कर लेना सरल हो गया। काश्मीर की स्वतंत्रता जाती रही और वह भारत का केवल एक प्रान्त बन कर रह गया। इसमें संदेह नहीं कि मुगल बादशाहों के ज़माने में घाटी में शांति का साम्राज्य रहा। उच्च पदों पर धीरे-धीरे मुगल अधिकारी नियुक्त हो गए, स्थानीय सेना भंग कर दी गई। फिर आश्चर्य क्या यदि घाटी अफगान बादशाह अहमद-शाह अब्दाली के हाथों में आ गई। अफगानों के शासन-काल में काश्मीरियों को बड़े अत्याचार सहने पड़े किन्तु तो भी उनमें धर्मान्धता नहीं आई थी संकीर्णता उनको छू नहीं गई थी। संस्कृत, फारसी और काश्मीरी भाषाओं में उन्होंने अनेक ग्रंथ लिखे।

सत्ताईस वर्ष तक (सन् १८१९–१८४६) काश्मीर सिखों के आधिपत्य में रहा। सिख शासनावधि के प्रमुख गवर्नर मोतीराम, कृपाराम, शेरसिंह, मियांसिंह, गुलाम मोहिउद्दीन और इमामुद्दीन थे। महाराजा रणजीतसिंह के पुत्र गवर्नर शेर-सिंह के ज़माने में अक्तूबर, सन् १८३२ में काश्मीर में भीषण अकाल पड़ा। शेरसिंह ने बाहर से अनाज मंगाने का और जनता को खिलाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। वह भोग-विलास में लिप्त रहा। फलतः काश्मीर की ७५ फीसदी जनता नष्ट हो गई। रणजीतसिंह ने शेरसिंह को वापस बुला लिया और मियांसिंह गवर्नर नियुक्त किए गए। मियांसिंह ने पंजाब से अनाज, अंडे आदि मंगा कर काश्मीरी जनता की सहायता की। इसने कुशलतापूर्वक शासन किया। सिख सेना की ज्यादतियों को वह रोकना चाहता था। फलतः सैनिक उससे रुष्ट हो गए और १७ अप्रैल, सन् १८४१ को उन्होंने उसके शयन-कक्ष में उसकी हत्या कर दी। उपद्रवी सैनिकों को दंड देने के लिए महाराजा शेरसिंह ने राजा गुलाबसिंह को भेजा। उपद्रव शांत कर दिया गया और सन् १८४२ में महाराजा ने गुलाबसिंह की सिफारिश पर शेख गुलाम मोहिउद्दीन को काश्मीर का गवर्नर नियुक्त किया।

सन् १८२० में महाराजा रणतीतसिंह ने राजा गुलाबसिंह को जम्मू का शासक बनाया। गुलाबसिंह का प्रभाव बराबर बढ़ता गया और काश्मीर में मोहिउद्दीन के गवर्नर हो जाने से घाटी में गुलाबसिंह का प्रभाव अत्यधिक बढ़ गया। शेख गुलाम मोहिउद्दीन ने श्रीनगर में जामा मस्जिद को, जो सन् १८१९ से बंद पड़ी थी, फिर से खोल दिया। उसने श्रीनगर में शंकराचार्य पहाड़ी पर स्थित मंदिर का जीर्णो-द्धार किया और एक नया लिंग वहां स्थापित किया। विद्यार्थियों, कवियों और धार्मिक नेताओं को उसने आर्थिक सहायता दी।

शेख मोहिउद्दीन की मृत्यु के बाद उसका पुत्र शेख इमामुद्दीन राजा गुलाब-सिंह की सिफारिश से काश्मीर का गवर्नर नियुक्त हुआ। इस समय गुलाबसिंह और

उसके दोनों भाई ध्यानसिंह और सुचेतसिंह बहुत शक्तिशाली हो गए थे। ध्यानसिंह लाहौर में दीवान था, गुलाबसिंह समस्त पहाड़ी देश पर जहां डोगरा रहते थे, काबिज था और सुचेतसिंह सिख सेनाधिपति था। महाराजा ने अपने जीवन-काल में ही गुलाबसिंह को जम्मू का राज्य दे दिया था, ध्यानसिंह पुंछ के राजा बना दिए गए थे और सुचेतसिंह रामनगर के सूबेदार बना दिए गए थे। सन् १८३९ में महाराजा रणजीतसिंह की मृत्यु के बाद पंजाब में अराजकता फैल गई। इन तीनों भाइयों ने आस-पास के सभी प्रदेशों को जीत लिया। महाराजा शेरसिंह और ध्यानसिंह की हत्या के बाद और सुचेतसिंह एवं उसके पुत्र हीरासिंह की हत्या के बाद भाइयों का सारा इलाका गुलाबसिंह के हाथ में आ गया। पुंछ का राज्य लाहौर की सरकार ने जब्त कर लिया।

सन् १८४६ में पहली सिख लड़ाई के बाद अंग्रेज और लाहौर सरकार के बीच सुलह और समझौता कराने का भार गुलाबसिंह को सौंपा गया। ९ मार्च, सन् १८४६ को एक संधि हुई जिसके अन्तर्गत सिख शासक से क्षतिपूर्ति के रूप में एक करोड़ रुपया ईस्ट इंडिया कम्पनी को देने के लिए कहा गया। साथ ही उससे सतलुज और व्यास नदियों के बीच सभी पहाड़ी और मैदानी प्रदेश को समर्पित करने के लिए कहा गया। सिख शासक एक करोड़ रुपया देने में असमर्थ था इसलिए उसे ब्यास और सिंध नदी के बीच सभी पहाड़ी प्रदेशों को, जिसमें जम्मू और काश्मीर शामिल था, छोड़ देना पड़ा। १६ मार्च, सन् १८४६ की अमृतसर संधि के अनुसार यह तय हुआ कि गुलाबसिंह ७५ लाख रुपया अंग्रेज़ सरकार को देंगे और ब्रिटिश सरकार जम्मू, काश्मीर और गिलगिट पर गुलाबसिंह के आधिपत्य को स्वीकार कर लेगी। इमामुद्दीन काश्मीर का गवर्नर था, वह गुलाबसिंह को काश्मीर पर आसानी से कब्जा नहीं दे रहा था। ब्रिटिश और जम्मू सरकार ने मिलकर मोर्चा लिया और इमामुद्दीन ने आत्मसमर्पण कर दिया। गुलाबसिंह का आधिपत्य पूरे जम्मू और काश्मीर प्रदेश पर हो गया।

गुलाबसिंह की मृत्यु के बाद उसका पुत्र रणवीरसिंह राजा हुआ और सन् १८८५ में उसकी मृत्यु के बाद गद्दी प्रतापसिंह को मिली। सन् १८८९ में अंग्रेजों ने ब्रिटिश पोलीटिकल एजेण्ट के अधीन गिलगिट एजेन्सी कायम की। सन् १९२५ में प्रतापसिंह का निधन हो गया और राजगद्दी लेफ्टीनेण्ट जनरल महाराजा सर हरीसिंह को मिली। हरीसिंह सन् १९२५ से सन् १९४८ तक जम्मू और काश्मीर के महाराजा रहे।

भारत के विभाजन के पूर्व नई दिल्ली में १५ नवम्बर, सन् १९४६ को एक प्रेस कान्फरेन्स में मोहम्मद अली जिन्ना ने कहा था कि पाकिस्तान और हिन्दुस्तान इस उपमहाद्वीप में मित्र के रूप में रहेंगे क्योंकि इन दोनों के हित एक समान हैं, उनकी सीमा एक दूसरे से मिली हुई हैं। खतरे के समय वे एक दूसरे की मदद करेंगे और अन्य राष्ट्रों को पास नहीं फटकने देंगे। इसके पहले भी वे कह चुके थे कि भारत भारतीयों का है। हम किसी को चाहे वह अफगान हो या पठान अपने देश के पास नहीं आने देंगे। पाकिस्तान यह नहीं बरदाश्त कर सकेगा कि कोई भारत पर आंख उठाये। किन्तु कहनी

और करनी में कितना अन्तर था यह बाद की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया।

देशी राज्यों के सम्बन्ध में जिन्ना यही कहते रहे कि ब्रिटिश भारत का विभाजन हुआ है न कि देशी राज्यों का। देशी राज्य किसी भी डोमिनियन में शामिल होने के लिए पूर्णतया स्वतंत्र हैं। जिन्ना का ऐसा कहना आश्चर्यरहित नहीं है। अधिकतर देशी राज्य भारत डोमिनियन में स्थित थे। जिन्ना नहीं चाहते थे कि वे सब भारत डोमिनियन में शामिल हो जाएं और भारत की स्थिति सुदृढ़ हो जाए। इसीलिए बार-म्बार जिन्ना देशी नरेशों से यही कहते थे कि ब्रिटिश सर्वोच्च सत्ता की समाप्ति के बाद वे स्वतंत्र हो जाएंगे और यह उनकी इच्छा पर निर्भर होगा कि वे किसी डोमिनियन से मिलें या न मिलें। जम्मू और काश्मीर के शासक को जिन्ना ने बहुत पहले से यह आश्वासन दे रखा था कि मुस्लिम लीग की नीति महाराजा के प्रशासन में हस्तक्षेप करने की नहीं है और न वह महाराजा की जनता और महाराजा के बीच कोई गम्भीर राजनीतिक प्रश्न ही खड़ा करना चाहती है।

जिन्ना के प्रतिनिधि जफ़रुल्ला खां ने पाकिस्तान में न केवल उन रियासतों के अधिमिलन को, जहां की अधिकांश आबादी मुसलमानों की थी, सुनिश्चित करने का प्रयास किया अपितु उन्होंने ऐसी देशी रियासतों को भी, जहां की आबादी गैर मुसलमानों की थी, पाकिस्तान में शामिल होने के लिए प्रलोभन दिया और प्रत्येक सम्भव उपाय किया कि वे पाकिस्तान में मिल जाएं। जोधपुर, जैसलमेर और बीकानेर रियासतों को पाकिस्तान में मिलाने की क्या कोशिश नहीं की गई। अपने दस्तखत करके एक सादा कागज़ जिन्ना ने जोधपुर शासक को अधिमिलन की शर्तें भरने के लिए दिया। इन सभी राज्यों की अधिकांश आबादी हिन्दुओं की थी। ऐसा करने का जिन्ना का उद्देश्य सिर्फ एक था और वह यह कि भारत में पाकिस्तान द्वीप स्थापित हो जाएं। यह दूसरी बात है कि जिन्ना अपने प्रयास में सफल नहीं हुए।

जिन्ना के इस कथन से कि १५ जुलाई, सन् १९४७ के बाद से सभी देशी रियासतों को पूर्ण रूप से स्वतंत्र होने का अधिकार होगा और ब्रिटिश साम्राज्य की सर्वोच्च सत्ता स्वतः उनको प्राप्त हो जाएगी, कई शासकों को अपने को सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न शासक घोषित करने के लिए बल मिल गया था। धीरे-धीरे सब देशी राज्य भारत डोमीनियन में मिल गए। काश्मीर यह निश्चित नहीं कर सका कि वह भारत डोमिनियन में मिले या पाकिस्तान डोमिनियन में या अपने को स्वतंत्र घोषित करे। मुस्लिम लीग बराबर काश्मीर के महाराजा से अनुरोध करती रही कि वह अपने को स्वतंत्र घोषित कर दे।

काश्मीर की नेशनल कान्फरेन्स राज्य के भारत में अधिमिलन के पक्ष में थी। भारत धर्म-निरपेक्ष राज्य था, यहां सभी जातियों और धर्म के लोगों के लिए सादर स्थान प्राप्त था, पाकिस्तान इस्लामी राज्य था, उसकी स्थापना का आधार दो राष्ट्र-सिद्धांत था। काश्मीर के राजनीतिक गतिरोध को दूर करने का प्रयास लूइस मांउट बैटन और गांधी जी ने किया किन्तु महाराजा किसी निश्चय पर नहीं पहुंच सके। वे पूर्व में स्विट्ज़रलैंड बनाने का स्वप्न देख रहे थे।

काश्मीर के महाराजा ने १२ अगस्त, सन् १९४७ को भारत और पाकिस्तान से यथास्थिति करारनामा करने की इच्छा व्यक्त की। करारनामे में यह व्यवस्था रखी गई कि जब तक नये करारनामे न किए जाएं मौजूदा करारनामे और प्रशासकीय व्यवस्थाएं चलती रहेंगी और यदि कोई विवाद उठ खड़ा होगा तो पंच-निर्णय द्वारा उसका समाधान किया जाएगा और यह कि करारनामे की किसी भी बात से महाराजा की सर्वोच्च सत्ता पर कोई असर नहीं पड़ेगा। १४ अगस्त, सन् १९४७ को पाकिस्तान की सरकार ने यथास्थिति करारनामे को स्वीकार कर लिया। भारत सरकार का यह रुख था कि वह काश्मीर की सरकार से कोई करारनामा उसी समय कर सकती है जब काश्मीर की जनता के प्रतिनिधि उसे स्वीकार करें।

१५ अगस्त, सन् १९४७ को काश्मीर एक प्रकार से स्वतंत्र हो गया क्योंकि वह उस तारीख को किसी भी डोमिनियन में शामिल नहीं हुआ था। पाकिस्तान अब यह ज़ोर-दबाव डालने लगा कि काश्मीर पाकिस्तान में मिल जाए। काश्मीर को पाकिस्तान में शामिल होने को बाध्य करने की हर मुमकिन कोशिश की गई। २२ दिसम्बर को मुस्लिम कान्फरेन्स का जलसा किया गया और उसमें महाराजा से पाकिस्तान में तुरन्त शामिल होने के लिए कहा गया।

जब पाकिस्तान ने यह अनुभव किया कि महाराजा किसी प्रकार पाकिस्तान में शामिल होने को तैयार नहीं है तो यथास्थिति करारनामा के बावजूद उसने काश्मीर की आर्थिक नाकाबन्दी शुरू कर दी। खाद्य पदार्थ, पेट्रोल और दूसरी जरूरी वस्तुओं की सप्लाई काश्मीर को बन्द कर दी गई। काश्मीर की सीमा पर हमले शुरू कर दिए गए। मुसलमानों को रियासत में साम्प्रदायिक दंगे करने के लिए भड़काया गया।

महाराजा यह समझ गए कि उनका स्वतंत्र रहना नामुमकिन है। १५ अक्तूबर को उन्होंने पाकिस्तान द्वारा नाकाबन्दी की शिकायत ब्रिटिश प्रधान मंत्री से की। उन्होंने यह भी शिकायत की कि पाकिस्तान के अखबार राज्य में साम्प्रदायिकता फैला रहे हैं और उनके राज्य पर प्रत्येक दबाव डाला जा रहा है कि वह पाकिस्तान में शामिल हो जाए। पुंछ में सशस्त्र पाकिस्तानियों की घुसपैठ की भी शिकायत की गई। ब्रिटेन के प्रधान मंत्री ने कोई उत्तर नहीं दिया। महाराजा ने भारत से भी राष्ट्रमंडल का सदस्य होने के नाते पाकिस्तान के विरुद्ध शिकायत की। १५ अक्तूबर, सन् १९४७ को जम्मू और काश्मीर की सरकार ने पाकिस्तान को यह स्पष्ट रूप से बता दिया कि यदि वे घुसपैठियों को नहीं रोकते और नाकाबन्दी नहीं उठाते तो काश्मीर सरकार दूसरों से सहायता की याचना करेगी।

बाईस अक्तूबर, सन् १९४७ को पाकिस्तान के उत्तर पश्चिम से सशस्त्र कबाइली मोटर गाड़ियों में चढ़कर काश्मीर में घुसने लगे। आधुनिक शस्त्रों से सुसज्जित होकर पैदल और मोटरगाड़ियों में चढ़कर लगभग २००० आक्रमणकारियों ने मुजफ्फराबाद में प्रवेश किया। उन्होंने सरकारी दफ्तर लूटे, उनको नष्ट किया। गुरुद्वारा जलाया, महिलाओं से बलात्कार किया और बच्चों को मार डाला। २५-२६ अक्तूबर को उन्होंने मोहरा बिजली घर को तोड़ डाला और बारामूला में स्थित एक अस्पताल

और गिरिजाघर को २७ अक्तूबर को नष्ट कर दिया। उन्होंने मुसलमानों के परिवारों को भी नहीं छोड़ा। बारामूला में १४ हज़ार मुसलमानों में ३ हज़ार मुसलमान उनके आक्रमण के बाद बचे।

श्रीनगर को आक्रमणकारियों से बचाने के लिए महाराजा ने २४ अक्तूबर, सन् १९४७ की शाम को भारत सरकार से सहायता की याचना की। आक्रमणकारी श्रीनगर से केवल ३५ मील दूर रह गये थे। भारत सरकार की रक्षा समिति ने २७ अक्तूबर को सहमति दी कि महाराजा के अधिमिलन की प्रार्थना को स्वीकार कर लिया जाए। तदनुसार महाराजा को सूचित कर दिया गया कि महाराजा द्वारा हस्ताक्षरित अधिमिलन को गवर्नर-जनरल ने २७ अक्तूबर को स्वीकार कर लिया है। काश्मीर का भारत में अधिमिलन संवैधानिक दृष्टि से और कानूनन पूर्ण हो गया।

भारत सरकार ने यह इच्छा व्यक्त की कि राज्य में शांति और व्यवस्था पुन:स्थापित हो जाने पर काश्मीर के अधिमिलन के प्रश्न पर जनता की राय ली जाएगी। यह इच्छा अधिमिलन-पत्र में नहीं व्यक्त थी, एक अलग पत्र में व्यक्त की गई थी। इच्छा की अभिव्यक्ति से अधिमिलन किसी प्रकार प्रतिबन्धित नहीं होता। इस अभिव्यक्ति का कोई कानूनी पहलू नहीं है। अधिमिलन के प्रश्न पर जनता का मत लेना भारत सरकार का केवल नैतिक उत्तरदायित्व था। यह उत्तरदायित्व उस समय पूरा हो गया जब सन् १९५१ में जम्मू और काश्मीर के लिए संविधान सभा बनाने के प्रश्न पर प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर राज्य में निर्वाचन किए गए और जनता को अपना मत व्यक्त करने का अवसर मिला। इंडियन इंडिपेंडेंस ऐक्ट में प्रतिबन्धित अधिमिलन की कोई व्यवस्था नहीं है और न कानून की दृष्टि में भारत सरकार को कोई अधिकार प्राप्त है कि वह काश्मीर के महाराजा द्वारा अधिमिलन-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद काश्मीर के भारत में अधिमिलन के प्रश्न को पुनर्निश्चित करने के लिए पाकिस्तान से कोई करारनामा करे।

अधिमिलन के बाद भारत सरकार ने काश्मीर में आक्रमणकारियों को आगे बढ़ने से रोकने के लिए हवाई जहाज़ से भारतीय सैनिक भेजे। आक्रमणकारी आगे बढ़ने से रोक दिए गए। काश्मीर में एक नयी समस्या उत्पन्न हो गई, कारण यह था कि काश्मीर पर आक्रमण में पाकिस्तान की साजिश थी और उसके नियमित सैनिक घुसपैठियों के भेस में काश्मीर में लड़ रहे थे।

भारत ने पाकिस्तान को २८ अक्तूबर को सूचित किया कि काश्मीर भारत में मिल गया है और यह आशा व्यक्त की कि पाकिस्तान आक्रमणकारियों को काश्मीर से हटाने में भारत से सहयोग करेगा। पाकिस्तान ने प्रत्युत्तर में कहा कि काश्मीर में भारत द्वारा सेना के भेजे जाने से स्थिति बिगड़ गई है और इसकी ज़िम्मेदारी भारत की है। भारत और पाकिस्तान में विवाद की उत्पत्ति इस प्रकार हुई।

भारत के लिए एक ऐसे राज्य का मामला था जो भारत में शामिल हो चुका था और भारत का एक भाग बन चुका था—वह भाग जिसपर हमलावर दूसरे देश के सक्रिय सहयोग और समर्थन से आक्रमण कर रहे थे। भारत अपनी भूमि से आक्रमण-

कारियों को मार भगाना अपना पुनीत कर्तव्य समझता था। पाकिस्तान के लिए एक ऐसे राज्य का मामला था जिसके सम्मिलन की वह आशा करता था किन्तु जो अब भारत में सम्मिलित हो गया था। वह समझता था कि जब तक कुछ न किया जाएगा अधिमिलन संसार की दृष्टि में पूर्ण माना जाएगा। उसके विचार में आक्रमणकारियों को सहायता न देना भारत में काश्मीर के अधिमिलन को स्वीकार करना होगा। भारत-पाकिस्तान-विवाद की वास्तव में जड़ यही थी।

भारत के नेताओं ने इस विवाद को सुलझाने का प्रयास किया किन्तु जब पाकिस्तान ने इस समस्या पर असंगत प्रश्नों को खड़ा करना शुरू कर दिया और काश्मीर के भारत में अधिमिलन पर आपत्ति करना शुरू कर दिया और आक्रमण-कारियों को सहायता न देने की भारत की अपील को ठुकरा दिया तो विवश होकर भारत ने पाकिस्तानी राष्ट्रिकों और कबाइलियों द्वारा जम्मू और काश्मीर राज्य के खिलाफ सैनिक कार्यवाही करने के विरुद्ध पहली जनवरी, सन् १९४८ को संयुक्त राष्ट्र के चार्टर आर्टिकल ३५ के अन्तर्गत सुरक्षा परिषद् से शिकायत की और प्रार्थना की कि वह पाकिस्तान सरकार से अनुरोध करे कि वह अपने कर्मचारियों को (सैनिक और असैनिक) काश्मीर पर आक्रमण करने या आक्रमण में सहयोग देने से या काश्मीर के खिलाफ सैनिक कार्यवाही करने से रोके और यह कि वह आक्रमणकारियों की ऐसी कोई सहायता न करे जिससे वर्तमान संघर्ष चलते रहने की आशंका हो।

काश्मीर में गिरफ्तार किए गए आक्रमणकारियों को सैनिक शिक्षा पाकि-स्तानी अधिकारियों द्वारा दी गई थी, उन्हें अस्त्र-शस्त्र पाकिस्तान में दिए गए थे। आक्रमणकारियों की गाड़ियों में पेट्रोल पाकिस्तान में भरा जाता था और गाड़ियों की मरम्मत पाकिस्तान के कारखानों में की जाती थी।

अनेक प्रमाणों के होते हुए भी सुरक्षा परिषद् ने भारत की शिकायत पर कोई ठोस कार्यवाही नहीं की और न इस प्रश्न पर विचार किया कि पाकिस्तान आक्रमण-कारी है। उसने भारत की इस प्रार्थना पर भी विचार नहीं किया कि आक्रमणकारियों को कोई सहायता अथवा सहयोग न देने के लिए पाकिस्तान से कहा जाए। अलबत्ता सुरक्षा परिषद् में भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों में वाग्युद्ध चलता रहा और सुरक्षा परिषद् प्रस्ताव पर प्रस्ताव पारित करती रही, आयोग नियुक्त करती रही और काश्मीर-समस्या सुलझाने के लिए मध्यस्थ पर मध्यस्थ नियुक्त करती रही। समस्या सुलझती कैसे जब मूल प्रश्न की ही उपेक्षा की जाती रही।

इधर भारत की फौजें घाटी में बढ़ गई थीं। १५ नवम्बर तक भारतीय फौज ने पुंछ पर पाकिस्तानी घेरे को तोड़ दिया था। भारतीय फौज की स्थिति सुदृढ़ हो गई थी। पाकिस्तान समझने लगा था कि यदि वह लड़ाई बन्द नहीं करता तो भारतीय फौजें पाकिस्तान के प्रदेश में घुस जाएंगी और काश्मीर के जितने भी क्षेत्र पर वह काबिज़ है वह उसके हाथ से निकल जाएगा। उधर ब्रिटेन भी घबड़ा गया कि कहीं भारत सब क्षेत्र पर पुनः अधिकार न जमा ले और पाकिस्तानी इलाके में घुस न जाए। फिर क्या था कोशिश की गई कि युद्धबन्दी कर दी जाए। दोनों सरकारों ने पहली जनवरी, सन्

१९४९ को मध्यरात्रि से एक मिनट पूर्व लड़ाई-बन्दी के आदेश जारी कर दिए। पाकिस्तान ने बाल्टिस्तान, स्करदू, कारगिल और ट्रास पर कब्जा कर लिया। लड़ाई-बन्दी के समय पाकिस्तान के आधिपत्य में काश्मीर का एक तिहाई भाग आ गया था।

यदि लड़ाई-बन्दी न हुई होती तो न केवल इस तिहाई भाग से पाकिस्तानी फौजें खदेड़ दी जातीं बल्कि पाकिस्तान में भी भारतीय सेना घुस जाती और उसपर अपना आधिपत्य कर लेती। पं० नेहरू शांतिप्रिय व्यक्ति थे, उन्होंने तुरन्त लड़ाई-बन्दी कर दी। इस लड़ाई-बन्दी से काश्मीर-समस्या का कोई समाधान नहीं हुआ बल्कि समस्या और जटिल हो गई। इंदिरा गांधी ने ठीक ही २४ अप्रैल, सन् १९६४ को न्यूयार्क में कहा कि सुरक्षा परिषद् में शिकायत करके और युद्ध-बन्दी स्वीकार करके भारत ने गलती की। भारतीय फौज को आगे बढ़ने देना चाहिए था। मसला स्वयं सुलझ जाता।

यद्यपि युद्धबन्दी हो गई किन्तु दोनों ओर फौजों का निःशस्त्रीकरण नहीं हो सका। फलतः स्थिति में वैसा ही तनाव बना रहा। संयुक्त राष्ट्र द्वारा नियुक्त मध्यस्थ और पारित विभिन्न प्रस्ताव इस तनाव को कम नहीं कर सके और न काश्मीर-समस्या को सुलझा ही सके। अलबत्ता पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल गुलाम मोहम्मद के समय में मई, सन् १९५५ में मोहम्मद अली, इस्कन्दर मिर्ज़ा और पं० नेहरू और पंत की वार्ता से आशा होने लगी थी कि भारत-पाकिस्तान के बीच सभी मतभेद दूर हो जाएंगे और काश्मीर-समस्या का समाधान हो जाएगा। यह भी सुनने में आया कि काश्मीर की घाटी भारत के पास रहेगी और उसके एवज़ में पाकिस्तान को काश्मीर का दूसरा भाग मिल जाएगा। इस आशाजनक वातावरण को पैदा करने का बहुत कुछ श्रेय गुलाम मोहम्मद को था। किन्तु इसके शीघ्र बाद पाकिस्तान की राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन हो गया। इस्कन्दर मिर्ज़ा गवर्नर-जनरल हो गए, प्रधान मंत्री ने इस्तीफा दे दिया। मोहम्मद अली के खिलाफ पाकिस्तान के अखबारों में लेख प्रकाशित होने लगे कि काश्मीर-समस्या पर वार्ता करते समय पाकिस्तान का हित उन्होंने अपने सामने नहीं रखा। मोहम्मद अली से जवाब तलब किया जाने लगा। वातावरण ने एकदम करवट बदली और पाकिस्तान के सरकारी वक्ताओं ने कहना प्रारम्भ कर दिया कि संयुक्त राष्ट्र से काश्मीर के प्रश्न को हटाने का कोई इरादा नहीं है और इस मसले पर कोई ऐसा समझौता नहीं किया जा सकता जो पाकिस्तान के लोगों को नापसन्द हो। भारत-विरोधी भाषण पाकिस्तान में दिए जाने लगे। एक बार फिर भारत-पाकिस्तान-सम्बन्ध कटु हो गए। यह बिलकुल स्पष्ट हो गया कि पाकिस्तान काश्मीर-समस्या का कोई संतोषप्रद हल करने के लिए तैयार नहीं है।

काश्मीर-मसले पर अपने पक्ष में फैसला सुनिश्चित करने के लिए धर्म के आधार पर भारत के खिलाफ मुस्लिम देशों को भड़काने और बरगलाने का बीड़ा पाकिस्तान ने उठाया। पाकिस्तान ने नारे लगाना शुरू किया कि भारत में मुसलमानों का जन-वध हो रहा है, "इस्लाम खतरे में है", "इस्लामी संस्कृति नष्ट हो रही है"। मुस्लिम देशों की अपनी बाहरी और अन्दरूनी समस्याएं थीं और वे पाकिस्तान के प्रचार से

प्रभावित नहीं हुए। अरब लीग के प्रथम सेक्रेटरी-जनरल आज़म पाशा ने कहा, "हम अव्वल मिस्र वासी हैं, दोयम अरब और आखिर में मुसलमान।"

पाकिस्तान ने अरब और गैर अरब मुस्लिम देशों को इंटर इस्लामिक कान्फरेंस बुलाने के बहाने मिलाने की बड़ी कोशिश की लेकिन कोई खास कामयाबी उसे नहीं मिली। मुस्लिम देशों में पाकिस्तान की सच्चाई पर शुबहा किया जाने लगा क्योंकि उसका ब्रिटेन से घनिष्ठ सम्बन्ध कायम था। पाकिस्तान का एक पैर ब्रिटिश कैम्प में था और दूसरा वह मुस्लिम कैम्प में जमाना चाहता था। इस चाल को मुस्लिम देश समझ गए थे।

जुलाई, सन् १९५५ में तुर्किस्तान, ईराक और पाकिस्तान के बीच बगदाद संधि करके पाकिस्तान ने एफ्रो एशिया संसार पर कुठाराघात किया। संधि न केवल रूस अपितु गुट निरपेक्ष अरब राज्यों के भी खिलाफ थी। काश्मीर-प्रश्न पर अपना मोर्चा सबल करने के लिए पाकिस्तान ने इस संधि से भारत के खिलाफ लाभ उठाया। ब्रिटेन और ईराक ने ४ अप्रैल, सन् १९५५ को एक विशेष करारनामा किया जिसका कोई भी उपबन्ध इज़रायल के खिलाफ लागू नहीं किया जा सकता था। इज़रायल की स्थापना से मिस्र और अन्य अरब देशों में बड़ा रोष था। उन्होंने बगदाद-संधि की निन्दा की और कहा कि इस संधि का उद्देश्य इज़रायल को समर्थन देना है। नासर ने फरवरी, सन् १९५८ में दमिश्क मेंबगदाद-संधि की बड़ी आलोचना की। बगदाद-संधि ने अरब-संसार को विभाजित कर दिया था और उस क्षेत्र में अस्थिरता उत्पन्न कर दी थी। पाकिस्तान का संदेह था कि एफ्रो एशिया देश पं० नेहरू के समर्थक हैं, इसलिए सुरक्षा परिषद् में उनके अधिक प्रतिनिधित्व का विरोध पाकिस्तान ने सन् १९५५ में बांडुंग सम्मेलन में किया। स्वेज नहर संकट के समय एक अरब राज्य के मुकाबले पाकिस्तान ने ब्रिटेन, फ्रांस और इज़रायल का समर्थन किया।

मुस्लिम देशों में भारत के खिलाफ वातावरण पैदा करने का बड़ा प्रयास किया गया। इस्लाम के नाम पर भारत के विरुद्ध पाकिस्तान का समर्थन करने की प्रार्थना की गई। कहा गया कि संसार में सर्वत्र मुसलमान एक समान हैं और वे एक दूसरे से अल्ला के नाम पर बंधे हैं। मक्का में, जहां कुछ वर्ष पूर्व नेहरू को 'रसूल अस सलाम' से सम्बोधित किया गया था, अयूब खां ने भारत के विरुद्ध भाषण दिया और कहा कि भारत काश्मीर को अवैध रूप से अपने अधिकार में लिए है। रंगून में भी इसी आशय का भाषण अयूब ने दिया।

यू० ए० आर० और भारत के बीच फूट के बीज बोने में न सफल होने पर पाकिस्तान ने भारत और इंडोनेशिया के सम्बन्ध बिगाड़ने की कोशिश की। किन्तु वहां भी अयूब को सफलता नहीं मिली। यदि पाकिस्तान को किन्हीं मुस्लिम देशों में भारत के विरुद्ध प्रचार करने में सफलता मिली तो वे थे तुर्की और ईरान।

जब पाकिस्तान को भारत के विरुद्ध मुस्लिम देशों को बरगलाने में सफलता नहीं मिली तो वह अमेरिका की ओर झुका। वह अमेरिकी सहायता और समर्थन से अपनी स्थिति भारत के मुकाबले में सुदृढ़ करना चाहता था। फरवरी, सन् १९५४ में

पाकिस्तान ने अमेरिकी सैनिक सहायता की याचना की, तर्क यह था कि सुरक्षा की पर्याप्त व्यवस्था करने के लिए उसके पास यथेष्ट साधन नहीं हैं। नाटो का सदस्य होने के लिए पाकिस्तान पश्चिमी देशों को यह बताने लगा कि पूर्वी पाकिस्तान में कम्यूनिस्ट षड्यन्त्र की आशंका है, इसलिए सुरक्षा की दृष्टि से उसका अमेरिकी समर्थन प्राप्त करना अत्यावश्यक है। वाशिंगटन की प्रेरणा से पाकिस्तान ने टर्की से अप्रैल, सन् १९५४ में मैत्रीपूर्ण सहयोग का करारनामा कर लिया। इस प्रकार पाकिस्तान सीटो का सदस्य हो गया और अगले वर्ष उसने, जैसा हम पहले कह चुके हैं, बगदाद-संधि कर ली। बगदाद-संधि को बाद में सेंटो के नाम से सम्बोधित किया गया। पाकिस्तान ने मार्च, सन् १९५९ में अमेरिका से सहयोग का करारनामा कर लिया। सीटो और सेंटो के बारे में अयूब खां ने वाशिंगटन में कहा कि पाकिस्तान आंख बन्द करके इन संस्थाओं में शामिल नहीं हुआ है। वह शामिल हुआ है अपनी सुरक्षा और स्थिति सुदृढ़ करने के लिए। प्रश्न उठता है किसके विरुद्ध स्थिति सुदृढ़ करने के लिए—स्पष्टतः भारत के विरुद्ध। अमेरिका से पाकिस्तान को पहले कुछ वर्षों में ८-९ करोड़ डालर प्रति वर्ष की सैनिक सहायता मिली। सन् १९५७ में पाकिस्तान को कम से कम २० करोड़ डालर की सैनिक सहायता मिली। इस सहायता में वह सहायता शामिल नहीं है जो पाकिस्तान को सेंटो के अधीन मिली। फिर अमेरिका ने सामरिक महत्त्व की सड़कों के निर्माण, पुल, हवाई अड्डे आदि के निर्माण में विपुल धनराशि खर्च की। पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट के शब्दों में सन् १९५७ में पाकिस्तान बजट के ४० प्रतिशत की धनराशि की सामरिक सहायता अमेरिका से पाकिस्तान को प्राप्त हुई। सन् १९५४-५८ के बीच ६९·८ करोड़ डालर की अमेरिकी सैनिक सहायता पाकिस्तान को मिली। १ जुलाई, सन् १९६१ के पूर्व दस वर्षों में पाकिस्तान को अमेरिकी आर्थिक सहायता प्रति वर्ष प्रति व्यक्ति १५ डालर प्राप्त हुई जब कि भारत को उसी अवधि में प्रतिव्यक्ति ६·२ डालर। अमेरिकी सैनिक सहायता प्रोग्राम के अन्तर्गत, अमेरिकी स्टेट डिपार्टमेंट के कथनानुसार, पाकिस्तान को प्रति वर्ष २५ करोड़ डालर की सैनिक सहायता दी गई। यह सब सहायता मुफ्त दी गई। अमेरिका ने पैटन टैंक, एफ ८६ जैट लड़ाकू विमान, एफ १०४ लड़ाकू विमान आदि पाकिस्तान को दिये। पाकिस्तानी सेना के ५ डिवीज़न अमेरिकी अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित किए गए, ब्रिटेन से पाकिस्तान को समुद्री जहाज़ आदि मिले।

पाकिस्तान की सामरिक स्थिति वास्तव में सुदृढ़ हो चली थी। ३० जनवरी, सन् १९५७ को पाकिस्तान के सेनाधिपति अयूब खां ने कहा, "हमारे पास अब आदमियों और सामान की कोई कमी नहीं है।" पाकिस्तान के प्रधान मंत्री ने कहा कि हमारी सेना सर्वोत्तम है और हम संसार की किसी भी सेना का मुकाबला कर सकते हैं। इस प्रकार की डींग हांकने का पाकिस्तान के नेताओं के पास आधार था। उन्हें असंख्य डालरों की सैनिक सहायता मिल चुकी थी। उनका देश सीटो और सेंटो का सदस्य था।

पश्चिमी राष्ट्रों से आश्वस्त और अमेरिकी अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित पाकिस्तान कहने लगा कि यदि काश्मीर और सिंध नदी नहर-जल जैसी बड़ी समस्याएं

सुलझ जाएं तो पाकिस्तान भारत के साथ बाहरी आक्रमण के रक्षार्थ संयुक्त सुरक्षा संधि करने को तैयार है। भारत सिद्धांतत: सैनिक करारनामों के पक्ष में नहीं था। वह किसी ऐसे देश से जो सेंटो और सीटो का सदस्य था सैनिक संधि नहीं कर सकता था। पाकिस्तान ने संयुक्त सुरक्षा-संधि का प्रस्ताव केवल काश्मीर-समस्या को जीवित रखने के लिए और अपने पक्ष में उसे निर्णीत किए जाने के लिए रखा था। अयूब ने तेहरान में दिसम्बर, सन् १९५९ में कहा कि भारत से संयुक्त सुरक्षा का प्रश्न उसी समय उठ सकता है जब काश्मीर तथा अन्य समस्याओं का समाधान हो जाए।

भारत की नीति सदा से सभी मसलों को आपसी बातचीत द्वारा तय करने की रही है। उसने सिंधु-जल-समस्या पर भी बातचीत की और वर्ल्ड बैंक की मध्यस्थता से संतोषजनक रूप से इसे हल कर दिया। सिंधु-जल-संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए पं० नेहरू सितम्बर, सन् १९६० में पाकिस्तान गए। वर्ल्ड बैंक ने यह प्रस्ताव किया था कि तीन पश्चिमी नदियों—सिंधु, झेलम और चिनाव पाकिस्तान को प्रदिष्ट कर दी जाएं और तीन पूर्वी नदियां—रावी, सतलुज और व्यास—भारत को। पाकिस्तान से संधि हो जाने के शीघ्र बाद अयूब फिर काश्मीर का राग अलापने लगे। अक्तूबर, सन् १९६० को मुज़फ्फराबाद में अयूब ने ऐलान किया कि पाकिस्तान भारत का उस समय तक विश्वास नहीं कर सकता जब तक काश्मीर का मसला तय नहीं हो जाता और यह कि पाकिस्तानी सेना अनिश्चित काल तक काश्मीर-प्रश्न को अनिर्णीत नहीं छोड़ सकती। इस ऐलान के ज़रिये भारत को धमकी दी गई थी। भारत का यह कहना था कि काश्मीर-प्रश्न पर यदि कोई समझौता हो सकता है तो वह वर्तमान युद्धबन्दी रेखा के आधार पर ही हो सकता है।

पाकिस्तान की यह चाल रही है कि ज़ोर-ज़बरदस्ती से वह भारत से एक-एक मसले पर निर्णय अपने पक्ष में करा लेता था, तत्पश्चात् फिर वही काश्मीर का राग अलापने लगता था। निष्क्रांत सम्पत्ति के सम्बन्ध में उसने यही चाल चली और भारत ने जनवरी, सन् १९४९ में करारनामा निष्पादित किया जो पाकिस्तान के अनुकूल था। सिंधु-नदी-जल के सम्बन्ध में भी निष्पादित संधि पाकिस्तान के अनुकूल रही। किन्तु काश्मीर का मामला उसी प्रकार जीवित रहा।

पाकिस्तान के मित्र राष्ट्र काश्मीर के मसले पर सुरक्षा परिषद् में पाकिस्तान के अनुकूल कोई निर्णय रूस के निषेधाधिकार के भय से नहीं करा पा रहे थे। प्रेसीडेण्ट कैनेडी अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में भारत की तटस्थ नीति को समझने लगे थे। पाकिस्तान किसी भी प्रकार से काश्मीर को अपने कब्ज़े में करने में सफल नहीं हो सका था। इसलिए अब वह चीन से दोस्ती गांठने की फिक्र में लग गया। जनरल असेम्बली में पाकिस्तान संयुक्त राष्ट्र में चीन के प्रतिनिधित्व के खिलाफ बराबर वोट दे रहा था। अयूब खां के संयुक्त सुरक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव से चीन प्रसन्न नहीं था। अयूब चीन को प्रसन्न करने और उसे अपनी ओर झुकाने के लिए मौका ढूंढ़ रहे थे। पाकिस्तान ने सन् १९५९-६० में सिंकिआंग और उत्तर काश्मीर में सीमा परिभाषित करने के लिए चीन से वार्ता शुरू की। इस सीमा पर कोई झड़पें नहीं हुई थीं, न कोई वारदातें। तो भी पाकिस्तान

ने चीन से सीमा-निर्धारण की बातचीत चलाई। उसकी इसमें एक ही चाल थी और वह यह कि पाकिस्तान और चीन दो मोर्चों का सामना करने को भारत बाध्य होकर काश्मीर में पर्याप्त संख्या में अपनी फौज नहीं रख सकेगा और विवश होकर उसे पाकिस्तान से समझौता करना पड़ेगा।

यद्यपि पाकिस्तान और चीन की विचारधारा अलग-अलग थी तो भी भारत के खिलाफ वे एक दूसरे से मिल गए। दोनों देश भारतीय प्रदेश पर अवैध कब्ज़ा करना चाहते थे। पाकिस्तान काश्मीर में और चीन लद्दाख और हिमालय-सीमा के अन्य क्षेत्रों में। भारत आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ हो रहा था। वहां स्थायी सरकार थी। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत का मान था। चीन इसे सहन नहीं कर सकता था। वह एशिया का नेता स्वयं बनना चाहता था। पाकिस्तान चीन से मिलकर अप्रत्यक्ष रूप से अमेरिका को चेतावनी देना चाहता था कि यदि उसने काश्मीर के मसले में उसकी सहायता न का तो वह पूर्णतया चीन-शिविर में चला जाएगा, सेंटो और सीटो भंग हो जाएंगे। इस चाल के कारण पाकिस्तान अमेरिका से और अधिक आधुनिक अस्त्र-शस्त्र पाने में सफल हो गया। साथ ही उसने पश्चिम, दक्षिण और दक्षिण-पूर्व में अपनी शक्ति और बढ़ा ली।

पांच-छः वर्ष पहले भारत और चीन में बड़ी मित्रता थी। जब चाऊ एन-लाई जून, सन् १९५४ में भारत आए थे तो 'हिन्दी-चीनी भाई-भाई' के नारे लगे थे। किन्तु कुछ ही समय बाद देखने में आया कि चीन के नक्शों में नेफा में स्थित ५०,००० वर्ग मील भारतीय प्रदेश और लद्दाख चीनी प्रदेश में दिखाए जाने लगे। नेहरू ने अक्तूबर, सन् १९५४ में चीन के नेताओं का ध्यान नक्शे की इस त्रुटि की ओर आकर्षित किया, बाद में नेहरू और चाऊ एन-लाई में वार्ता भी हुई किन्तु सीमा के सम्बन्ध में कोई समझौता नहीं हो सका। सीमा-निर्धारण के विवाद ने उग्र रूप धारण कर लिया। जब सन् १९५९ में दलाई लामा ने तिब्बत से भागकर भारत में शरण ली तो भारत से चीन के सम्बन्ध बिल्कुल खराब हो गए। तिब्बत के लोगों के साथ और दलाई लामा के साथ भारत की सहानुभूति के गलत अर्थ लगाए गए और चीनी प्रचारकों ने यह कहना प्रारम्भ कर दिया कि भारत साम्राज्यवादी है, अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहता है।

चीन ने भूटान से स्वतंत्र रूप से चीनी-भूटानी सीमा को परिभाषित करने की वार्ता आरम्भ करने की कोशिश की, जब कि चीन जानता था कि भूटान की सुरक्षा का दायित्व भारत पर है और वास्तव में भूटान संधि के अन्तर्गत भारत ही इस प्रकार की वार्ता कर सकता था।

चीन-भारत के सम्बन्ध खराब थे ही। इसका पाकिस्तान ने फायदा उठाया। १५ जनवरी, सन् १९६१ को पाकिस्तान ने घोषित किया कि उत्तरी काश्मीर की सीमा के निर्धारण को चीन ने सिद्धांततः मान लिया है और करारनामा हो जाने पर सीमा-निर्धारण कार्य प्रारम्भ हो जाएगा। मई, सन् १९६२ के प्रथम सप्ताह में पाकिस्तान और चीन की सरकारों ने एक साथ घोषित किया कि सिंकिआंग-काश्मीर की सीमा के

निर्धारण के बारे में उनमें करारनामा हो गया है। इस करारनामे के अधीन पाकिस्तान द्वारा २०२५ वर्गमील भारतीय प्रदेश चीन को भेंट कर दिया गया था।

८ सितम्बर, सन् १९६२ को चीन ने नेफा में मैकमोहन रेखा पार करके और २० अक्तूबर, सन् १९६२ को लद्दाख में प्रवेश करके भारत पर आक्रमण कर दिया। पाकिस्तान ने तुरन्त अपनी सहानुभूति चीन के प्रति प्रदर्शित की और भारत को आक्रमणकारी बताया, यद्यपि पूरे एफ्रो-अरब एशिया संसार में भारत के प्रति सहानुभूति दिखाई जा रही थी। भारत को सैनिक क्षति हुई, इससे पाकिस्तान प्रसन्न हुआ। भुट्टो ने कहा कि चीन पाकिस्तान का मित्र है, चीन-भारत के युद्ध में पाकिस्तान भारत का साथ नहीं देगा; जो ऐसा समझते हैं वे गलती कर रहे हैं। यही नहीं, मार्च, सन् १९६३ में, जैसा पहले कहा जा चुका है, पेकिंग में पाकिस्तान ने चीन के साथ सीमा-निर्धारण करारनामा पर दस्तखत करके २०५० वर्गमील भारतीय प्रदेश चीन को भेंट कर दिया। भारत ने इसके विरोध में सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट को पत्र लिखा। भारत को अस्त्र-शस्त्र के रूप में अमेरिका से और रूस से कुछ सैनिक सहायता मिली।

चीन ने २१-२२ नवम्बर, सन् १९६२ को युद्धबन्दी कर दी और पहली दिसम्बर से उसके सैनिक पूर्व घोषित कार्यक्रम के अनुसार हटने लगे। सम्पूर्ण नेफा पर आक्रमण करने के बाद चीन क्यों वापस हो गया, उसने युद्धबन्दी क्यों कर दी—यह कोई रहस्य की बात नहीं है। पहाड़ियों के नीचे और मैदान में उतरने पर चीनी सैनिकों को रसद मिलने में कठिनाई होती, उनके पास कुछ ही हफ्तों की रसद थी। उसकी समाप्ति पर उनको हटना था ही। यदि नेफा से हटना उनकी विशालहृदयता का सूचक था तो वे लद्दाख की सिविल चौकियों से भी हट सकते थे, जो उन्होंने नहीं किया। उनका हटना रणनीति के अनुकूल था।

पश्चिमी राष्ट्रों ने भारत को सीमित मात्रा में ही सैनिक सहायता दी थी, अस्त्र-शस्त्र दिया था। किन्तु वे चिंतित थे कि पाकिस्तान में इसकी क्या प्रतिक्रिया होगी। पहली जनवरी, सन् १९६४ को अयूब खां ने रेडियो पर अपने भाषण में इस बात पर ज़ोर दिया कि भारत ने चीनी आक्रमण का मुकाबला करने के बहाने काफी परिमाण में अस्त्र-शस्त्र एकत्र कर लिया है और यह कि यह सर्वविदित है कि चीन का वास्तविक उद्देश्य भारत पर आक्रमण करना नहीं था और न है। अयूब ने पश्चिमी राष्ट्रों को चेतावनी दी की भारतीय आक्रमण से बचने के लिए पाकिस्तान चीन से अच्छी तरह मित्रता कर लेगा।

भारत को अपने पड़ोसियों से पृथक् करने के लिए अयूब ने यह कहना शुरू किया कि भारत की शक्ति भारत के पड़ोसियों के लिए घातक सिद्ध होगी। लंका संसद् में ९ दिसम्बर, सन् १९६३ को भाषण देते हुए उन्होंने इसी मत का प्रतिपादन किया। पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने कहा कि भारत काबुल से लेकर मेकांग तक सभी देशों के लिए खतरा उपस्थित कर रहा है।

१७ जुलाई, सन् १९६३ को भुट्टो का नेशनल असेम्बली में यह भाषण कि

यदि भारत पाकिस्तान पर हमला करता है तो पाकिस्तान संघर्ष में अकेला नहीं उतरेगा, बड़ा महत्त्व रखता है। निस्संदेह यह भाषण चीन की सहमति से दिया गया था।

३१ जुलाई, सन् १९६४ को पाकिस्तान के वाणिज्य मंत्री ने घोषित किया कि चीन निर्ब्याज ६ करोड़ डालर का ऋण पाकिस्तान को देगा। इसके तुरन्त बाद चीन हवाई बेड़ा के कमाण्डर-इन-चीफ पाकिस्तान आए। पाकिस्तान सेना के ७ अफसर सैनिक प्रशिक्षण के लिए चीन भेजे गए। चीन से दोस्ती करने के वाद, अमेरिका से सैनिक सहायता प्राप्त कर लेने के बाद एक बार फिर पाकिस्तान में भारत के खिलाफ जेहाद का नारा लगाया जाने लगा। 'भातर से घृणा करो' का वातावरण पैदा किया जाने लगा। पाकिस्तान ने सोचा कि बलपूर्वक काश्मीर-समस्या को अपने पक्ष में हल करने का स्वर्ण अवसर आ गया है।

जनवरी, सन् १९६५ में पाकिस्तान ने कंजरकोट के इलाके में आक्रमण कर दिया। सुराई से डोंग तक पाकिस्तान ने पहले ही पक्की सड़क बना ली थी। उसी सड़क से उसने अपनी बख्तरबन्द गाड़ियां कच्छ में भेजीं। कच्छ का रन गुजरात के कच्छ ज़िले में है। इसका क्षेत्रफल लगभग ९,००० वर्गमील है। इसका अधिकतर भाग समुद्र की सतह से ६०० फुट नीचे हैं और दलदल है। यही कारण है कि मई से अक्तूबर तक, वर्षा के ज़माने में, रन का अधिकांश भाग समुद्री खारा पानी से भर जाता है। भारत ने भी अपनी सेना मुकाबले में भेजी। वह ९ अप्रैल को कच्छ पहुंच गई और अपने मोर्चे बनाए। उसने पाकिस्तानी द्वारा अनधिकृत रूप से ले ली गई चौकियों को मुक्त कर लिया।

ब्रिटेन के प्रधान मंत्री ने बीच-बचाव किया और ३० जून, सन् १९६५ को युद्ध-विराम हो गया और कच्छ का मामला फैसले के लिए अन्तर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरण को सौंप दिया गया। इससे पाकिस्तान को बल मिला। वह जानता था कि न्यायाधिकरण के निर्णय में उसे कुछ न कुछ प्रदेश अवश्य मिल जाएगा। और वास्तव में ऐसा ही हुआ। न्यायाधिकरण के १९ फरवरी, सन् १९६८ के निर्णय के अनुसार विवादास्पद कच्छ के रन का १० प्रतिशत क्षेत्र पाकिस्तान को मिल गया। यह निर्णय भारत के विरुद्ध हुआ और इस राजनीतिक निर्णय के खिलाफ भारत में बड़ा क्षोभ था। इस प्रकार पाकिस्तान अपनी चाल से ऐसे क्षेत्र पर अधिकार पाने में सफल हो गया जो उसका था ही नहीं।

पाकिस्तान का हौसला बढ़ गया। अगस्त-सितम्बर, सन् १९६५ में चीनी नेता कराची, रावलपिंडी, ढाका गए। मार्च, सन् १९६५ में अयूब पेकिंए गए। मार्च के अन्त में चेन-ई पाकिस्तान आए। २ अप्रैल, सन् १९६५ को भुट्टो ने चाउ एन-लाई से कराची में बातचीत की। ९ जून को चाउ एन-लाई २ घंटे के लिए पाकिस्तान के हवाई अड्डे पर ठहरे। खिचड़ी पक रही थी। रज़ाकार और मुजाहिदों को सशस्त्र ट्रेनिंग दी जा रही थी। युद्ध-विराम-रेखा का काश्मीर में अतिक्रमण हो रहा था। इन अतिक्रमणों की संख्या सन् १९६३ में ४४८ से बढ़कर सन् १९६५ में जुलाई मास के अन्त तक १८००

से अधिक हो गई थी।

५ अगस्त, सन् १९६५ को ४७० मील लम्बी युद्ध-विराम-रेखा को पार करके ५,००० पाकिस्तानी सैनिक नागरिकों की पोशाक में घने जंगलों, दुर्गम पहाड़ियों में छिपते हुए जम्मू और काश्मीर में घुस आए। उन्होंने लद्दाख में तैनात भारतीय सैनिकों की रसद को रोकने के लिए कारगिल के निकट श्रीनगर-लेह मार्ग को काट देने की कोशिश की। इन आक्रमणकारियों का मकसद तोड़-फोड़ करके काश्मीर में विद्रोहात्मक स्थिति पैदा करना था जिससे काश्मीर को हड़पने में आसानी हो सके। उनकी योजना रेडियो स्टेशन, हवाई अड्डे और अन्य महत्त्वपूर्ण स्थानों पर कब्ज़ा करने की थी। पाकिस्तानी सैनिक का ख्याल था कि काश्मीरी मुसलमान उनका साथ देंगे। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। आक्रमणकारियों को कोई स्थानीय सहायता नहीं मिली। उनका राशन खत्म हो गया, गोला-बारूद समाप्त हो चला और वे युद्धबन्दी रेखा को पार करके अपने प्रदेश में भागने लगे।

भारतीय सेना ने जवाबी हमला किया, थानामंडी को मुक्त कर लिया और २६ अगस्त को उड़ी से दक्षिण युद्ध-विराम-रेखा को पार करके उन अड्डों की ओर बढ़ने लगी जहां से पाकिस्तानी आक्रमणकारी गुलमर्ग और काश्मीर घाटी में घुसे थे और जहां से उनको शस्त्र दिए जा रहे थे। २८ अगस्त को भारतीय सेना ने हाजी पीर पर कब्ज़ा कर लिया और पाकिस्तानी चाल को विफल कर दिया। पाकिस्तान अधिकृत कुछ भागों को मुक्त भी कर लिया गया। दूसरे दिन भारतीय सेना की दो टुकड़ियां तिथवाल पहुंच गईं और तीन पाकिस्तानी चौकियों पर, जिनमें से एक पीर साहिब की चौकी थी, कब्ज़ा कर लिया।

पहली सितम्बर को जम्मू-पश्चिमी पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का उल्लंघन करके पाकिस्तान ने आक्रमण कर दिया। छम्ब-जोड़ियां क्षेत्र में पाकिस्तानी आक्रमण का मुख्य उद्देश्य अखनूर पुल को उड़ा कर जम्मू और काश्मीर को शेष भारत से काट देने का था।

कारगिल और उड़ी-पुंछ क्षेत्र में जब पाकिस्तान जवाबी प्रहार करने में सफल न हो सका तो उसने अमरीकी पैटन टैंकों की मदद से जम्मू क्षेत्र में एक नया मोर्चा खोल दिया। देवा, छम्ब और जोड़ियां से अर्ध चन्द्राकार हमला करके पाकिस्तान ने भारतीय फौजों को घेरने की कोशिश की। भारतीय सेना ने पैटन टैंकों पर प्रहार करना शुरू कर दिया और २ सितम्बर को शत्रु के १३ टैंक और दो एफ—८६ विमान मार गिरा दिए गए।

भारत ने भी दूसरा मोर्चा खोल दिया और ६ सितम्बर को फिरोजपुर-गुरदास-पुर और अमृतसर-बागा की ओर से भारतीय सेना लाहौर की ओर बढ़ी। ७ सितम्बर को सियालकोट की ओर अभियान शुरू हुआ और ८ सितम्बर को हैदराबाद-सिंध की ओर बाड़मेर क्षेत्र में गदरा नगर पर कब्जा करके भारतीय सैनिक शत्रु के प्रदेश में ६ मील अन्दर घुस गए। जम्मू-सियालकोट क्षेत्र, गुरदासपुर पश्चिमी क्षेत्र, अमृतसर-बागा क्षेत्र, फिरोजपुर-कसरूर क्षेत्र, सुलेमानकी क्षेत्र, छम्ब-जोड़ियां क्षेत्र, उड़ी-पुंछ क्षेत्र, और

बाड़मेर पश्चिमी पाकिस्तान (सिंध) क्षेत्र में भारतीय सैनिकों ने पाकिस्तानी फौजों का मान मर्दन प्रारम्भ कर दिया।

सियालकोट क्षेत्र में शत्रु ने घुटने टेक दिए। ७ सितम्बर को इस क्षेत्र में युद्ध प्रारम्भ हुआ और २३ सितम्बर को समाप्त हो गया। इन १७ दिनों में भारतीय सेना शत्रु के प्रदेश में २० मील अन्दर घुस गई। पश्चिमी पाकिस्तान के ३०० वर्ग मील प्रदेश पर भारतीय सैनिकों का कब्जा हो गया। सियालकोट-कसरूर रेलवे लाइन पर भारतीय सेना का नियंत्रण हो गया। इस मोर्चे पर पाकिस्तान ने बख्तरबन्द डिवीज़न लगाए थे और कई किस्म के टैंक झोंक दिए थे। शत्रु के बख्तरबन्द दस्ते को छिन्न-भिन्न कर दिया गया। फिलौरा पर कब्जा करने के लिए ११ सितम्बर को भीषण टैंक-युद्ध हुआ। इस युद्ध में शत्रु के २४६ टैंकों को नष्ट कर दिया गया। पूरा क्षेत्र अमेरिकी टैंकों से पट गया। कसूर क्षेत्र में दुश्मन के १०० टैंक नष्ट हुए। यह क्षेत्र भी अमेरिका पैटन टैंकों का कब्रिस्तान बन गया। २१ सितम्बर को भारतीय जवानों ने इछोगिल नहर की ओर बढ़ते हुए डोगराई नामक पाकिस्तानी गांव पर कब्ज़ा कर लिया। शत्रु भाग खड़ा हुआ।

संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी-जनरल के प्रयास से २२ सितम्बर, सन् १९६५ को १० बजे रात्रि को युद्धबन्दी हो गई। इस लड़ाई में पाकिस्तान के ४७१ टैंक नष्ट हुए जिनमें से २६२ पैटन टैंक थे। शत्रु के ६९० वर्ग मील प्रदेश पर भारतीय फौजों ने कब्ज़ा कर लिया जब कि पाकिस्तान ने २१० वर्गमील प्रदेश पर अधिपत्य कर लिया था। पाकिस्तान के लगभग ५८०० जवान और आधिकारी मारे गए जब कि भारत के १६१ अधिकारी और २०६५ अन्य कर्मचारी मारे गए।

बाईस दिन के भारत-पाकिस्तान युद्ध ने यह सिद्ध कर दिया कि काश्मीर में हिन्दू-मुस्लिम एक हैं, उन दोनों ने मिलकर दुश्मन का सामना किया और पाकिस्तानी घुसपैठियों को पकड़ने में भारतीय सेना की सहायता की, अपने देश की रक्षा के लिए प्राणों की बाज़ी लगा दी। क्वार्टर मास्टर हमीद अपनी वीरता, अपने शौर्य, अपने बलिदान से अमर हो गए। यह भी सिद्ध हो गया कि पाकिस्तान ने अमेरिकी टैंक आदि भारत के खिलाफ लड़ने के लिए ही लिया था और यह कि भारत को अमेरिका का यह आश्वासन कि अमेरिकी सैनिक सामग्री भारत के खिलाफ नहीं प्रयुक्त की जाएगी मिथ्यापूर्ण था। युद्ध ने पाकिस्तान के जोश को ठंडा कर दिया और पाकिस्तान को बता दिया कि भारत से लड़ना पत्थर से सिर टकराना है।

सामान्यतया किसी मसले के लिए युद्ध लड़ा जाता है और युद्ध उस मसले को निर्णीत कर देती है। यद्यपि काश्मीर के प्रश्न पर भारत-पाकिस्तान में दो बार युद्ध हुआ—पहला सन् १९४८ में और दूसरा सन् १९६५ में—तो भी प्रश्न अनिर्णीत ही रहा। सन् १९४९ में यदि भारत युद्धबन्दी न स्वीकार कर लिया होता और संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् में पाकिस्तान के विरुद्ध शिकायत न की होती तो सदा के लिए यह प्रश्न तय हो गया होता।

युद्धबन्दी तो हो गई थी किन्तु तनाव दोनों पक्षों में वैसे ही बना था। पाकि-

स्तान ने मुंह की खाई थी, उसके मनसूबे नष्ट हो चुके थे। वह क्षुब्ध था। भारत समझता था कि यदि अमेरिका पाकिस्तान को इतनी ज़्यादा सैनिक सहायता न देता जितनी उसने दी थी और पाकिस्तान को टैंकों, विमानों और अन्य युद्ध-सामग्री से न पाट देता तो पाकिस्तान का भारत पर आक्रमण करने का कदापि साहस न होता। दोनों देशों के मतभेद दूर करने पर जब सुरक्षा परिषद् सफल नहीं हुई तो रूस के प्रिसीडियम के चेयरमैन कोसिगिन ने इस दिशा में अपनी सेवाएं अर्पित कीं और भारत के प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री और पाकिस्तान के प्रेसीडेण्ट श्री अयूब खां को ताशकन्द में आमंत्रित किया गया। कोसिगिन के अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप १० जनवरी, सन् १९६६ को दोनों नेताओं ने एक घोषणा पर, जो ताशकंद-घोषणा के नाम से प्रसिद्ध है, हस्ताक्षर कर दिए। उन्होंने प्रतिज्ञान किया कि वे दोनों इस बात का निरन्तर प्रयास करेंगे कि भारत-पाकिस्तान के बीच सम्बन्ध अच्छे बने रहें और वे अपने विवाद तय करते समय बल का प्रयोग नहीं करेंगे बल्कि शांतिमय ढंग से उसे सुलझाने की कोशिश करेंगे। दुर्भाग्यवश इस घोषणा पर हस्ताक्षर करने के कुछ ही घंटे बाद श्री लालबहादुर शास्त्री का निधन हो गया।

पाकिस्तान के भारत-विरोधी प्रचार के बावजूद, भारत पर उसके दो आक्रमणों के बावजूद भारत पाकिस्तान के प्रति बड़े भाई जैसा व्यवहार करता रहा, विशाल हृदयता और उदारता का परिचय देता रहा। सन् १९४९ में भारत ने काश्मीर का तिहाई भाग पाकिस्तान के कब्ज़े में रहने दिया, यद्यपि वह उस प्रदेश से पाकिस्तान को खदेड़ सकता था; कच्छ के रन के मसले को वह अन्तर्राष्ट्रीय न्यायाधिकरण को सौंपने को राज़ी हो गया यद्यपि उस प्रदेश पर पाकिस्तान का कभी भी कोई अधिकार नहीं रहा है। भारत जानता था कि न्यायाधिकरण को कच्छ का मामला सौंपने का अर्थ कच्छ का कुछ भाग पाकिस्तान को देना होगा। सितम्बर, सन् १९६५ के पाकिस्तानी युद्ध के बाद उसने समस्त पाकिस्तानी प्रदेश, जो क्षेत्रफल में उस प्रदेश से कहीं अधिक था जिस पर शत्रु ने कब्ज़ा कर लिया था, पाकिस्तान को वापस कर दिया; यही नहीं उसने उड़ी-पुंछ, तिथवाल और कारगिल क्षेत्रों में सामरिक महत्त्व के स्थल, जहां शत्रु एकत्र होकर काश्मीर पर हमला करते थे, पाकिस्तान को वापस कर दिए। यह सब इस आशा से किया गया था कि पाकिस्तान छोटे भाई जैसा व्यवहार करना सीख जाएगा। किन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ। ताशकन्द-घोषणा पर स्याही सूखी भी न थी कि पाकिस्तान के विदेश मंत्री ने यह कहना शुरू कर दिया कि काश्मीर-समस्या के समाधान के लिए, जहां तक बल के प्रयोग न करने का सम्बन्ध है, पाकिस्तान ताशकन्द-घोषणा से बाध्य नहीं है।

सितम्बर, सन् १९६५ की लड़ाई में, जैसा हम पहले कह चुके हैं, पाकिस्तान के बहुत-से टैंक और जहाज़ नष्ट हो गए थे। ताशकन्द-घोषणा पर हस्ताक्षर करने के तुरन्त बाद पाकिस्तान उस क्षति की पूर्ति करने और अधिक मात्रा में अस्त्र-शस्त्र प्राप्त करने की कोशिश करने लगा। सितम्बर, सन् १९६५ में अमेरिका ने पाकिस्तान और भारत के हाथ अस्त्र-शस्त्र की बिक्री नियंत्रित कर दी थी। मार्च, सन् १९६६ में अमेरिका

ने अघातक अस्त्रों की फिर से बिक्री करने का फैसला लिया। उसने ऐसे शस्त्रों और सामान के, जो वह पहले बेच चुका था, फालतू कल-पुर्ज़ों को भी बेचने का फैसला लिया। इससे पाकिस्तान को क्षतिग्रस्त टैंकों, विमानों आदि के पुर्ज़े और भाग खरीदने का और उन्हें फिर से काम के लायक बनाने का अवसर मिल गया जब कि भारत के लिए यह निर्णय बेकार साबित हुआ क्योंकि उसके पास अमेरिकी अस्त्र-शस्त्र, टैंक आदि थे नहीं। चीन के आक्रमण के बाद भारत को ७·६ करोड़ रु० की लागत के रेडार, और सड़क-निर्माण के उपयंत्र आदि मिले थे, जब कि ११ वर्षों की अवधि में पाकिस्तान को ५० करोड़ रु० की लागत की सैनिक सामग्री निःशुल्क दी गई थी। इसलिए अमेरिका के इस निर्णय का परिणाम पाकिस्तान के अस्त्र-शस्त्र और वायुसेना की आक्रमण-क्षमता का बढ़ाना ही था। ऐसे स्थिति में भारत का यह निष्कर्ष कि अमेरिका पाकिस्तान को भारत पर आक्रमण के लिए पुरस्कृत कर रहा है, बेजा नहीं था। वास्तव में अमेरिका का यह निर्णय काश्मीर-समस्या के समाधान के लिए बाधक सिद्ध हो गया क्यों कि दोनों देशों में शस्त्र-दौड़ फिर प्रारम्भ हो गई और पाकिस्तान को अपनी युद्धशक्ति बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन मिला।

इसी समय पाकिस्तान के समाचारपत्रों ने यह कहना शुरू कर दिया कि अमेरिकी घातक शस्त्र अप्रत्यक्ष रूप से अन्य देशों के माध्यम से खरीदे जा सकते हैं और इसमें कोई रुकावट नहीं है। कैनाडा-निर्मित एफ—८६ सैवर जेट जो पश्चिमी जर्मनी द्वारा ईरान को दिए गए थे ईरान ने पाकिस्तान के हवाले कर दिए। भारत अमेरिका का ध्यान बराबर इस ओर आकर्षित करता रहा कि पाकिस्तान को फिर शस्त्र देने का असर खतरनाक होगा, किन्तु अमेरिका का यह ख्याल है और रहा है कि वह शस्त्र देकर पाकिस्तान को चीन से और कम्यूनिस्ट देशों से अलग कर लेगा। यह ख्याल गलत साबित हुआ है क्यों कि पाकिस्तान ने शस्त्रादि न केवल टर्की, ईरान, पश्चिमी जर्मनी से लेना शुरू कर दिया बल्कि चीन से भी। जनवरी, सन् १९६७ में पाकिस्तानी वायुसेना के कमाण्डर-इन-चीफ ने गर्वान्वित होकर कहा कि पाकिस्तान की वायुसेना अब बहुत मज़बूत हो गई है और उसकी प्रहार-शक्ति बहुत बढ़ गई है। नई किस्म के हवाई जहाज़, लड़ाकू जहाज़ पाकिस्तानी हवाई बेड़ा के लिए खरीद लिए गए हैं। ऐसी दशा में भारत का चिन्तित होना स्वाभाविक है।

सोवियत रूस काश्मीर के प्रश्न पर भारत का साथ देता रहा है। सुरक्षा परिषद् में उसने इस मसले में अनेक बार अपना निषेधाधिकार इस्तेमाल करके पाकिस्तान के पक्ष में ब्रिटेन और अमेरिका द्वारा प्रस्तावित संकल्पों और चालों को निष्फल कर दिया है। काश्मीर के प्रश्न पर रूस के विचारों में परिवर्तन लाने और उसे अपनी ओर मिलाने के लिए पाकिस्तान प्रयत्नशील रहा है। इसी उद्देश्य से तत्कालीन प्रेसीडेण्ट अयूब, अप्रैल, सन् १९६५ में पहली बार रूस गए थे। यद्यपि दक्षिण-पूर्वी एशिया में चीन के विस्तारवाद के खिलाफ भारत के सहयोग और उसकी मैत्री की रूस को आवश्यकता है और वह भारत को काश्मीर के मसले पर पूरा समर्थन दे रहा है तो भी पाकिस्तान को चीन से अलग करने की कोशिश में वह पाकिस्तान को अप्रसन्न रखना नहीं

चाहता। यही कारण है कि उसने अप्रत्यक्ष रूप से काश्मीर के बारे में पाकिस्तान को भी एक पक्ष स्वीकार कर लिया। भारत ने रूस की इस नई नीति के बारे में राजनयिक ढंग से चर्चा की और रूस को बताया कि उसका ऐसा करना गुट-निरपेक्ष राज्यों को निर्बल करना होगा। रूस ने भारत को आश्वासन दिया कि भारत के हित सर्वोपरि रहेंगे और वह ऐसा कोई कदम नहीं उठाएगा जिससे भारत के लिए खतरा पैदा होने की आशंका हो।

सन् १९६६ में एयर मार्शल नूर खां की अध्यक्षता में पहला पाकिस्तानी सैनिक मिशन रूस गया और वार्ता के फलस्वरूप रूस हेलीकॉप्टर, बुलडोजर और इसी प्रकार की अन्य सामग्री पाकिस्तान को देने के लिए रज़ामन्द हो गया। श्रीमती गांधी उसी वर्ष जुलाई में रूस गईं और इस बारे में फिर बातचीत की। कोसीगिन ने आश्वासन दिया कि रूस पाकिस्तान को कोई शस्त्रास्त्र नहीं देगा यद्यपि पाकिस्तान उसकी मांग कर रहा है।

इस बीच यह स्पष्ट होने लगा था कि रूस कदाचित् यह समझता है कि यदि पाकिस्तान को कुछ शस्त्र दे दिए जाते हैं और काश्मीर के प्रश्न पर रूस अपनी नीति में कुछ परिवर्तन कर लेता है तो पाकिस्तान को चीन से तथा सीटो और सेंटो संधियों से अलग किया जा सकता है। इसी उद्देश्य से कोसीगिन सोवियत सैनिक सामग्री के मुख्य विक्रेता जेनरल सीडोरोविच के साथ इस वर्ष पाकिस्तान गए। रूस पेशावर में स्थित अमेरिकी अड्डे को भी समाप्त करना चाहता था। इस अड्डे की समाप्ति रूस की सुरक्षा के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। खबर है कि पाकिस्तान उस अड्डे को समाप्त कर देने के लिए राज़ी हो गया है। इसके प्रतिफल में उसने रूस से अस्त्र-शस्त्र की मांग की। जनरल (अब राष्ट्रपति) याह्या खां की इस वर्ष मास्को-यात्रा का यही उद्देश्य था। रूस ने पाकिस्तान को कुछ यात्री विमान तथा कम दूरी से मार करने वाले विमान, रक्षक जलपोत, सुरंग-खोजक पोत, गश्ती पोत देना स्वीकार कर लिया है।

इस खबर से भारत सरकार की चिन्ता बढ़ गई है और जनता में बड़ा रोष है क्योंकि यह निश्चित है कि पाकिस्तान इन शस्त्रों का प्रयोग भारत के खिलाफ करेगा। कहा जाता है कि रूस ने भारत के खिलाफ इन शस्त्रों के न इस्तेमाल किए जाने का आश्वासन पाकिस्तान से ले लिया है। यह बेमानी है। पाकिस्तान ने अमेरिका को भी इसी आशय का आश्वासन दिया था लेकिन उसने अमेरिकी शस्त्रों आदि को भारत पर आक्रमण करने में इस्तेमाल किया। यद्यपि अभी रूस और पाकिस्तान में कोई विधिवत् करारनामा नहीं हुआ है तो भी इसकी पुष्टि हो गई है कि रूस अर्ध-घातक किस्म के कुछ शस्त्रास्त्र पाकिस्तान को देगा। इससे भारत और पाकिस्तान के बीच तनाव बढ़ेगा और काश्मीर-समस्या के हल में बाधा पड़ेगी।

जुलाई, सन् १९६८ की रूस-यात्रा में भारत के प्रेसीडेण्ट डा० ज़ाकिर हुसैन ने इस मसले पर रूसी नेताओं से बात की। यद्यपि वार्ता-विज्ञप्ति में पाकिस्तान को अस्त्र-शस्त्र दिए जाने का कोई ज़िक्र नहीं है, तो भी विश्वास किया जाता है कि कोसीगिन ने डा० ज़ाकिर हुसैन को आश्वासन दिया था कि रूस और भारत की मित्रता चिरस्थायी

है और उन दोनों में कोई देश फर्क नहीं डाल सकता ।

इसमें सन्देह नहीं कि रूसी अस्त्र-शस्त्र मिल जाने पर पाकिस्तान की प्रहार-शक्ति बढ़ जाएगी और वह इसका उपयोग करके काश्मीर-समस्या का राजनीतिक समाधान कराने का प्रयत्न करेगा । पाकिस्तान ने अपने इस इरादे को छिपाया नहीं है। पाकिस्तानी सेना अधि कारी लाहौर, सियालकोट और मुलतान में पाकिस्तानी सेना में जवानों की भर्ती के लिए दौरे लगा रहे हैं । वहां के शासकों ने कहना शुरू कर दिया है कि पाकिस्तानी से ना बड़ी शक्तिशाली है और वह उसे और शक्तिशाली बनाने का प्रयास कर रहे हैं जिससे दुश्मनों से पाकिस्तान की रक्षा की जा सके । जैसा भारत के रक्षा मंत्री ने जुलाई, सन् १९६८ में कहा है, पाकिस्तान की सेनाशक्ति पहले से दुगनी हो गई है । सामरिक अध्ययन इन्स्टीच्यूट, लन्दन के अनुसार पाकिस्तान सुरक्षा पर प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति ४ डालर व्यय करता है जब कि भारत जो पाकिस्तान से चार-पांच गुना बड़ा है प्रति वर्ष प्रतिव्यक्ति सुरक्षा पर २·५ डालर व्यय करता है। पाकिस्तान की जो पराजय सन् १९६५ में हुई थी उसीका बदला लेने के लिए तैयारी करने में पाकिस्तान व्यस्त है ।

इतिहास साक्षी है कि जब-जब पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया तो उसने पहले कोई बहाना ढूंढा है । सन् १९४८ में उनका कहना था कि चूंकि काश्मीर में मुसलमानों का जनवध हो रहा था इसलिए कबाइलियों ने काश्मीर पर चढ़ाई कर दी। सन् १९६५ में कच्छ के रन पर उसने अपने हक की मांग की और बाद में आक्रमण कर दिया। कच्छ के सम्बन्ध में निष्पादित संधि पर हस्ताक्षर सूखने भी नहीं पाए थे कि उसने ५ सितम्बर को भारत पर भारी आक्रमण कर दिया । अब वह अपनी युद्ध-शक्ति बढ़ा रहा है और साथ ही फरक्का बाँध की झूठी समस्या खड़ा कर रहा है। झूठा प्रचार किया जा रहा है कि भारत फरक्का बांध बनाकर पूर्वी पाकिस्तान को जलविहीन कर रहा है । इस प्रचार का उद्देश्य पूर्वी पाकिस्तान में, जिसका काश्मीर-समस्या के प्रति रवैया अभी तक सामान्य रहा है, भारत के खिलाफ नफरत पैदा करना है ।

फरक्का बांध का मसला जान-बूझकर खड़ा किया गया है । गंगा १३५० मील लम्बे भू-भाग में बहती है। इसमें से केवल ८८ मील पाकिस्तानी प्रदेश की भूमि है। भारत के २० करोड़ लोग गंगा से लाभान्वित होते हैं जब कि पाकिस्तान के केवल ३·५ करोड़ व्यक्ति इसके जल का उपयोग करते हैं। फरक्का बांध उस पानी की सप्लाई को जो पाकिस्तान को नदी से प्राप्त हो रहा है बिल्कुल नहीं रोकता । पाकिस्तान की आवश्यकता ३५०० क्यूबिक्स है किन्तु अब पाकिस्तान अपनी आवश्यकता को बढ़ाकर ४९,००० क्यूबिक्स बताता है । ब्रह्मपुत्र से पानी पाकिस्तान ले सकता है किन्तु वह यह नहीं करता, उसे तो भारत से झगड़ा मोल लेना है । यदि भारत पाकिस्तान को सलाह देता है कि वह जल की अपनी अतिरिक्त आवश्यकता ब्रह्मपुत्र से पूरी कर सकता है तो तुरन्त पाकिस्तान भारत से इस नदा से जल की व्यवस्था करने के लिए खर्चे की मांग करेगा ।

इस विकट स्थिति में भारत यह आशा करता था कि कम से कम रूस, जिसके अथक प्रयासों से ताशकन्द संधि निष्पादित हुई थी और जिसके कहने से भारत ने हाजीपीर दर्रा जैसे सामरिक महत्त्व के स्थल पाकिस्तान को लौटा दिए थे, ऐसा कोई कदम नहीं उठाएगा जिससे पाकिस्तान की युद्धशक्ति में वृद्धि हो, भारत और पाकिस्तान में तनाव बढ़े और पाकिस्तान बलपूर्वक काश्मीर-समस्या को हल करने की कोशिश करे। किन्तु रूस के अपने स्वार्थ हैं और अपने हित में वह पाकिस्तान को सब समझते हुए भी अस्त्र-शस्त्र देना चाहता है। भारत अपना रोष प्रकट करने के अतिरिक्त क्या कर सकता है। और उसने रोष प्रकट भी किया। वह अलबत्ता हथियारों के मामले में आत्मनिर्भर, स्वावलम्बी बनने के अपने दृढ़ संकल्प को दोहरा सकता है और देश की सुरक्षा के लिए हर मुमकिन तैयारी कर सकता है।

काश्मीर-प्रश्न ऐसा विकट या जटिल नहीं है जिसका हल न हो। समस्या-समाधान के लिए सर्वप्रथम आवश्यक यह है कि भारत-पाकिस्तान के बीच सेना-संतुलन न बिगड़ने दिया जाए। दूसरे शब्दों में, इसका विशेष ध्यान रखा जाए कि आक्रमण-कारी देश पाकिस्तान की सैनिक और प्रहार-शक्ति इतनी न बढ़ने पाए कि वह अपने पड़ोसी देश के लिए कंटक बन जाए। यह उसी समय सुनिश्चित किया जा सकता है जब विभिन्न राष्ट्र उसे युद्ध-सामग्री अंधाधुंध न देकर केवल सीमित परिमाण में दें। ताजाखबरों से मालूम हुआ है कि पाकिस्तान ने तुर्की से करारनामा कर लिया है जिसके अधीन तुर्की पाकिस्तान को १०० अमरीकी एम — ८५ पैटन टैंक देगा। इससे पाकिस्तान की आक्रमण-नीति को प्रोत्साहन मिला है।

काश्मीर को अन्तर्राष्ट्रीय बिसात में शतरंज की गोट न बनाया जाए, इसके लिए सभी राष्ट्रों को अपने स्वार्थ की तिलांजलि देनी होगी। गुटबाज़ी का ध्यान न रखकर प्रश्न पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना होगा। उन्हें यह कहने में कोई संकोच न होना चाहिए कि काश्मीर महाराजा के भारत में अधिमिलन के बाद काश्मीर राज्य भारत का विधिवत् अंग हो गया है और उस भाग की सुरक्षा का उत्तरदायित्व पूर्णतः भारत पर है और चूंकि पाकिस्तान ने सुरक्षा परिषद् के मूलभूत प्रस्तावों का कार्यान्वयन नहीं किया है और सन् १९४८ से अब स्थिति बिल्कुल बदल गई, इसलिए आत्म-निर्णयार्थ मतदान नहीं किया जा सकता। वह देश, जहां पिछले २१ वर्ष में कोई सार्वजनिक निर्वाचन न हुआ हो और जहां लोगों को सामान्य मतदान का अवसर न दिया गया हो, काश्मीर के लिए किस मुंह से इस किस्म की मांग कर सकता है—यह वहां के अधिकारियों को स्पष्ट रूप से बता दिया जाना चाहिए, जैसा कि पाकिस्तान के नेशनल असेम्बली में स्वर्गीय मियां इफ्तिखारुद्दीन के पुत्र ने कुछ समय हुए कहा था।

काश्मीर स्वतंत्र नहीं रह सकता जिसका स्वप्न आज शेख अब्दुल्ला देख रहे हैं। कुछ ही दिनों तक काश्मीर ने स्वतंत्र रहने की कोशिश की। परिणाम क्या निकला—यही कि पाकिस्तान ने उसपर आक्रमण कर दिया और महाराजा को काश्मीर की रक्षा के लिए, काश्मीरी जनता की सुरक्षा के लिए भारत से सहायता की याचना करनी पड़ी। महाराजा ने जम्मू-काश्मीर राज्य को भारत में मिलाने के लिए अधिमिलन-पत्र

पर हस्ताक्षर कर दिए। काश्मीर आज भारत का अंग है, भारत का एक प्रदेश है जिस प्रकार भारत के अन्य प्रदेश हैं। शेख अब्दुल्ला को आज लाखों रुपये गुप्त स्रोतों से मिल रहे हैं और वह उन्हीं बातों को जिन्हें उन्होंने स्वयं स्वीकार किया था पलटने के लिए अनर्गल बातें कर रहे हैं। काश्मीर में बड़ी प्रगति हो गई है। नई सड़कें बन रही हैं। एक सड़क टनमर्ग और जम्मू तक जाएगी। दूसरी सड़क अनन्तनाग और ईश्वर क्षेत्र को मिलाएगी। सन् १९४७ में पूरे राज्य में शिक्षा पर ३०·३५ लाख रुपया खर्च होता था। अब यह खर्चा सन् १९६८ में ६ करोड़ हो गया है। राज्य में डाक्टरों, इंजीनियरों आदि की संख्या बहुत बढ़ गई है। जिस प्रकार भारत के अन्य प्रदेशों में प्रगति हो रही है उसी प्रकार इस प्रदेश में भी, जब कि पाकिस्तान के अधीन के काश्मीर भाग ज्यों का त्यों पिछड़ा हुआ है, लोगों को वहां कोई स्वतंत्रता नहीं है, उनका प्रेसीडेण्ट नाम मात्र का है, उसको कोई अधिकार नहीं है। पाकिस्तान का विदेश मंत्रालय वास्तविक शासक है। आज जैसा, काश्मीर के मुख्य मंत्री सादिक साहब ने बताया है, उस भाग के कितने ही बाशिन्दे भारतीय काश्मीर में आ जाना चाहते हैं। ऐसी दशा में कोई राजनीतिक उलट-फेर असंख्यक लोगों के जीवन के साथ खेलना होगा।

शेख अब्दुल्ला डिक्सन योजना को कार्यान्वित करने को कहते हैं। इस योजना को पहले ही अस्वीकार किया जा चुका है। काश्मीर घाटी को विभाजित करने की या संयुक्त राष्ट्र की देख-रेख में उसमें अलग से कोई मतदान लेने की, कि वह भारत में रहेगा या पाकिस्तान में कोई, आवश्यकता नहीं है। यदि कोई समाधान इस समस्या का हो सकता है तो वर्तमान युद्धबन्दी रेखा के आधार पर ही हो सकता है। पाकिस्तान के गवर्नर जनरल गुलाम मोहम्मद इसी रेखा के आधार पर सदैव के लिए इस समस्या का समाधान करना चाहते थे किन्तु उस समय के पाकिस्तान के नेताओं ने देश में भारत के विरुद्ध घृणा का वातावरण उत्पन्न कर दिया और उपर्युक्त आधार पर काश्मीर-समस्या के हल को निष्फल कर दिया। भारत द्वारा विभाजन का यह आधार मान लेना ही उसकी विशालहृदयता का द्योतक है क्योंकि वह भाग वास्तव में भारत का है, पाकिस्तान का कब्ज़ा उसपर अनधिकृत है। पाकिस्तान को वह भाग आक्रमण-रिक्त करना चाहिए।

इस उपमहाद्वीप में शांति स्थापना के लिए भारत इससे अधिक कुछ नहीं कर सकता। अब समय आ गया है कि पाकिस्तान को स्पष्ट शब्दों में बता दिया जाए कि उसकी आक्रमणकारी नीति को निष्फल किया जाएगा और बल की धमकी देकर व अन्य देशों के शस्त्र-अस्त्र से सुसज्जित होकर वह भारत को आक्रांत नहीं कर सकता। भारत पाकिस्तान के चैलेंज को स्वीकार करेगा और अपनी सुरक्षा के लिए सभी सम्भव त्याग करेगा। यदि पाकिस्तान भारत पर अंगुली उठाने की जुर्रत करता है तो उसे मुंह की खानी पड़ेगी।

जनवरी, सन् १९६८ में रिहा होने के बाद शेख अब्दुल्ला समझते थे कि रियासत की पूरी जनता उनका समर्थन करेगी और भारत सरकार रियासत के भविष्य के बारे में उनसे वार्ता करने को बाध्य होगी। इसी उद्देश्य से उन्होंने ११ अक्तूबर, सन् १९६८

को एक लोक सम्मेलन का आयोजन किया जो पांच दिन तक चलता रहा। एन० जी० गोरे, अटलविहारी वाजपेयी आदि नेताओं ने सम्मेलन में भाग लेने के शेख के निमंत्रण को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि भारत में काश्मीर का विलयन अन्तिम है और इस प्रश्न पर किसी बहस की गुंजाइश नहीं है। श्री जयप्रकाश नारायण ने सम्मेलन का उद्घाटन किया और उन्होंने अपने उद्घाटन भाषण में शेख और उनके मित्रों को परामर्श दिया कि वे काश्मीर-समस्या का समाधान भारतीय संघ के ढांचे के भीतर ही ढूंढने का प्रयास करें। शेख जयप्रकाश से कदाचित् इसकी आशा नहीं करते थे, उनका ख्याल था कि वे जनमत-संग्रह की उनकी मांग का समर्थन करेंगे। जब जयप्रकाश ने ऐसा नहीं किया तो शेख बौखला गए और उसी मंच में 'करो या मरो' की धमकी दी और कहा कि आज़ादी भेंट में नहीं मिलती, उसे छीना जाता है। उन्होंने भारतीयों को काश्मीर से निकालने के लिए सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो' आंदोलन के आधार पर एक आंदोलन प्रारंभ करने की धमकी दी। किन्तु शेख की इन गीदड़-भभकियों से भारत भयभीत नहीं। भारत काश्मीर को शेख की सल्तनत बनाने के लिए तैयार नहीं और न वह राजगोपालाचारी के इस प्रस्ताव को ही अंगीकार करने को तैयार है कि भारत और पाकिस्तान मिलकर अमेरिका, ब्रिटेन और रूस से दस वर्ष के लिए काश्मीर को अपने नियंत्रण में रखने का अनुरोध करें और उस अवधि के अन्त में काश्मीर के भविष्य-निर्धारण के बारे में काश्मीर की जनता की राय लें।

राजगोपालाचारी के इस प्रस्ताव की भारत और काश्मीर के नेताओं ने कटु आलोचना की है। काश्मीर के मुख्य मंत्री श्री सादिक, बख्शी गुलाम मोहम्मद और श्री बजाज आदि सभी ने इस प्रस्ताव का घोर विरोध किया है।

काश्मीर का भारत में विलयन पूर्ण और वैधानिक है। गजेन्द्र गड़कर जांच आयोग ने जनवरी, सन् १९६९ में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में कहा है कि सभी दलों ने आयोग को बताया कि काश्मीर का भारत में विलयन अन्तिम और अविच्छिन्न है। उसने यह मत व्यक्त किया है कि क्षेत्रीय स्वायत्तता न स्वीकार की जाए। काश्मीर की सुरक्षा के लिए भारत उत्तरदायी है और वह अपना उत्तरदायित्व पूर्णतया निभाने के लिए कटिबद्ध है। पाक-अधिकारी और शेख धमकियों से भारत को अपने कर्त्तव्य से विमुख नहीं कर सकते।

भारत पाकिस्तान से मित्रता बनाए रखना चाहता है, वह सभी मसलों को ताशकन्द घोषणा के अनुरूप शान्तिपूर्वक तय करना चाहता है। इसलिए उसने ताशकन्द की तीसरी वर्षगांठ के अवसर पर १० जनवरी, सन् १९६९ को इस प्रयोजन से भारत-पाकिस्तान के एक संयुक्त संगठन की स्थापना का प्रस्ताव किया, किन्तु वहां के शासक वही पुराना राग अलाप रहे हैं कि पहले काश्मीर तथा अन्य समस्याओं को हल करने के लिए कोई उचित व्यवस्था की जाए। दोनों देशों में शान्ति स्थापित करने के भारत के सभी प्रस्तावों को पाकिस्तान के शासक ठुकराते रहे हैं। यदि वे समझते हों कि बल-प्रयोग से वे भारत की भूमि पर कब्ज़ा कर लेने में समर्थ होंगे या काश्मीर के मामले में अपने पक्ष में फैसला करा लेंगे तो वे भूल करते हैं।

परिशिष्ट

अध्याय ३ से सम्बन्धित

भारत में राज्य के अधिमिलन की प्रार्थना करते हुए महाराजा सर हरीसिंह का लार्ड माउण्टबटन को सम्बोधित पत्र दिनांकित २६ अक्तूबर, १९४७

प्रिय लार्ड माउंटबैटन,

मैं महामहिम को यह सूचना देता हूं कि मेरे राज्य में गम्भीर आपत्तिकालीन स्थिति उत्पन्न हो गई है और मैं आपकी सरकार की तात्कालिक सहायता की याचना करता हूं।

जैसा कि आपको ज्ञात है, जम्मू और काश्मीर राज्य भारत या पाकिस्तान डोमिनियमों में से किसी में भी शामिल नहीं हुआ है। भौगोलिक दृष्टि से मेरा राज्य दोनों डोमिनियनों से मिला हुआ है। दोनों से इसके महत्त्वपूर्ण आर्थिक और सांस्कृतिक सम्पर्क हैं। इसके अतिरिक्त, सोवियत रिपब्लिक और चीन से भी मेरे राज्य की सीमा मिली है। भारत और पाकिस्तान डोमिनियन अपने वैदेशिक सम्बन्धों में इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते।

तदनुसार मैंने भारत और पाकिस्तान डोमिनियनों से मेरे राज्य से यथास्थिति करारनामा करने की प्रार्थना की थी। पाकिस्तान सरकार ने इस करारनामा को मान लिया। भारत की डोमिनियन ने मेरी सरकार की प्रतिनिधियों से इस सम्बन्ध में और वार्ता करने की इच्छा प्रकट की। मैं निम्न बातों के कारण इसकी व्यवस्था नहीं कर सका। वास्तव में, पाकिस्तान सरकार यथास्थिति करारनामा के अन्तर्गत मेरे राज्य के भीतर डाक और तार की व्यवस्था कर रही है।

यद्यपि पाकिस्तान सरकार से हमारा यथास्थिति करारनामा है तो भी पाकिस्तान सरकार मेरे राज्य को खाद्य, नमक और पेट्रोल की सप्लाई में बराबर अत्यधिक कमी करती जा रही है।

पाकिस्तान आधुनिक अस्त्र-शस्त्र के साथ अफरीदी, सादी पोशाक में सैनिक और desperadoes को मेरे राज्य में पहले पुंछ क्षेत्र में, फिर सियालकोट में और अन्ततः बड़ी भारी संख्या में राजकोट की ओर हजारा ज़िले के समीपवर्ती क्षेत्र में घुसपैठ करने दे रहा है। फलतः राज्य में जो सीमित संख्या में सैनिक थे उन्हें इधर-

उधर तैनात किया गया और एक साथ कई स्थलों पर उन्हें दुश्मन का सामना करना पड़ा। इस प्रकार जीवन और सम्पत्ति के अन्धाधुन्ध विनाश और लूटमार को बचाना असम्भव हो गया है। महोरा बिजली घर, जो पूरे श्रीनगर को बिजली सप्लाई करता है, जला दिया गया है। इतनी अधिक औरतों को भगा लिया गया है और उनके साथ बलात्कार किया गया है कि मेरा हृदय रो उठता है। इस प्रकार अत्याचारी मेरी सरकार की ग्रीष्म राजधानी श्रीनगर पर कब्जा करने के लिए आगे बढ़ रहे हैं। वे पूरे राज्य को रौंद डालना चाहते हैं।

नार्थ वेस्टर्न फ्रंटियर प्रान्त के दूरस्थ क्षेत्रों से जो कबाइली आकर सामूहिक रूप से मेरे राज्य में घुसपैठ कर रहे हैं वे आधुनिकतम अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित बराबर नियमित रूप से मनशेहरा-मुजफ्फराबाद मार्ग से होकर मोटर ट्रकों में आ रहे हैं। ऐसा नार्थ वेस्टर्न फ्रंटियर प्रान्त की सरकार और पाकिस्तान की सरकार की जानकारी के बिना नहीं किया जा रहा है। मेरी सरकार द्वारा बराबर अनुरोध करने पर भी, इन घुसपैठियों को रोकने या मेरे राज्य में उनके आने को बन्द करने की कोई कोशिश नहीं की गई है। वास्तव में पाकिस्तान रेडियो और समाचारपत्र दोनों ने इन वाकयों की सूचना दी है। पाकिस्तान रेडियो ने यह भी कहा है कि काश्मीर में एक अस्थायी सरकार की स्थापना की जा चुकी है। मेरे राज्य की जनता, मुसलमान और गैर-मुसलमान ने सामान्यतया इसमें कोई हिस्सा नहीं लिया है।

मेरे राज्य में जो फिलहाल हालत है और जो गंभीर आपत्तिकालीन स्थिति उत्पन्न हो गई है उसको देखते हुए भारतीय डोमिनियन से सहायता मांगने के सिवाय मेरे पास कोई चारा नहीं है। स्वभावतः भारत डोमिनियन में मेरे राज्य के शामिल हुए बिना वह मेरे द्वारा मांगी गई सहायता नहीं भेज सकते। तदनुसार मैंने ऐसा करना निश्चय कर लिया है और मैं आपकी सरकार की स्वीकृति के लिए अधिमिलन-पत्र संलग्न करता हूं। एक दूसरा रास्ता और है और वह यह कि मैं अपने राज्य और अपनी जनता को लुटेरों की दया पर छोड़ दूं। यह मैं कभी नहीं होने दूंगा जब तक मैं इस राज्य का शासक हूं और अपने देश की रक्षा करने के लिए मुझमें प्राण हैं।

मैं आपकी सरकार को यह भी बताना चाहता हूं कि मेरा विचार तुरन्त एक अंतरिम सरकार स्थापित करने और शेख अब्दुल्ला को अपने प्रधान मंत्री के साथ इस संकट-कालीन स्थिति में काम करने के लिए आमंत्रित करने का है।

यदि मेरे राज्य को बचाना है तो श्रीनगर में तात्कालिक सहायता उपलब्ध करनी आवश्यक है। स्थिति की गम्भीरता का बोध भी वी० पी० मेनन को भली भांति है और वे स्थिति की जानकारी आपको बताएंगे यदि और जानकारी की आवश्यकता हो।

शीघ्रता में शुभाकांक्षाओं सहित

आपका

(ह०) हरीसिंह

काश्मीर का अधिमिलन-पत्र

चूंकि इंडियन इंडिपेंडेंस ऐक्ट, १९४७ में यह व्यवस्था है कि पन्द्रह अगस्त, सन् १९४७ से एक स्वतंत्र डोमिनियन 'भारत' स्थापित किया जाएगा, और ऐसी लुप्तियों (ओमिशन), संशोधनों, अनुकूलनों और रूपान्तरणों के साथ जो गर्वनर-जनरल आदेश द्वारा निर्दिष्ट करें गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट, १९३५ भारत की डोमिनियन पर लागू होगा।

और चूंकि गवर्नर-जनरल द्वारा इस प्रकार अनुकूलित गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट, १९३५ में यह व्यवस्था है कि कोई देशी राज्य उसके शासक द्वारा अधिमिलन-पत्र के निष्पादित करने पर भारत की डोमिनियन में शामिल हो सकता है:

अतएव मैं श्रीमान् इन्द्र महादर राजराजेश्वर महाराजाधिराज श्री हरीसिंह, जम्मू और काश्मीर राज्य का शासक, अपने उक्त राज्य पर अपनी सर्वोच्च सत्ता का प्रयोग करके एतद्द्वारा यह अधिमिलन-पत्र निष्पादित करता हूं और

१. मैं एतद्द्वारा घोषित करता हूं कि मैं भारत की डोमिनियन में इस आशय से शामिल होता हूं कि भारत के गवर्नर-जनरल, डोमिनियन विधान मंडल, संघ न्यायालय और डोमिनियन के प्रयोजनों के लिए स्थापित डोमिनियन का कोई अन्य प्राधिकारी, मेरे इस अधिमिलन-पत्र के कारण, किन्तु सदैव उसकी, शर्तों के अधीन और केवल डोमिनियन के प्रयोजनों के लिए, जम्मू और काश्मीर राज्य (जिसे बाद में यह 'राज्य' कहा जाएगा) के बारे में ऐसे कृत्य करेगा जो १५ अगस्त, सन् १९४७ को भारत के डोमिनियन में गवर्नमेंट आफ इंडिया ऐक्ट, १९३५ (जो इस प्रकार लागू है और जिसे बाद में 'ऐक्ट' कहा गया है) द्वारा या उसके अन्तर्गत उसमें निहित हों।

२. मैं एतद्द्वारा यह सुनिश्चित करने का उत्तरदायित्व लेता हूं कि इस ऐक्ट के उपबन्ध, इस राज्य में, जहां तक वे मेरे अधिमिलन-पत्र के कारण, लागू होते हैं, कार्यान्वित होंगे।

३. मैं स्वीकार करता हूं कि इस अधिमिलन-पत्र से संलग्न परिशिष्ट में निर्दिष्ट मामलों के बारे में इस राज्य के लिए डोमिनियन विधानमंडल कानून बना सकता है।

४. मैं एतद्द्वारा घोषित करता हूं कि मैं इस आश्वासन पर भारत की डोमिनियन में शामिल होता हूं कि यदि गवर्नर-जनरल और इस राज्य के शासक में करारनामा होता है जिसके फलस्वरूप डोमिनियन विधानमंडल के किसी कानून से सम्बन्धित प्रशासकीय कार्य को इस राज्य के शासक सम्पादित करेंगे तो यह समझा जाएगा कि ऐसा करारनामा इस अधिमिलन-पत्र का अंग है और तदनुसार उसका प्रभाव पड़ेगा।

५. मेरे इस अधिमिलन-पत्र की शर्तों में इस ऐक्ट या इंडियन इण्डिपेंडेंस ऐक्ट, १९४७ के किसी संशोधन से कोई परिवर्तन न होगा जब तक कि मैं इस अधिमिलन-पत्र के अनुपूरक पत्र द्वारा उसे स्वीकार नहीं करता।

६. इस अधिमिलन-पत्र की किसी भी बात से डोमिनियन विधान मंडल को इस राज्य के लिए कोई ऐसा कानून बनाने का, जो किसी भी प्रयोजन के लिए भूमि के अनिवार्य अधिग्रहण को प्राधिकृत करे, अधिकार न होगा, किन्तु एतद्द्वारा मैं वचन देता हूं कि यदि डोमिनियन के किसी कानून, जो इस राज्य पर लागू होता है, के प्रयोजनों के लिए, डोमिनियन यह समझती है कि किसी भूमि का अधिग्रहण आवश्यक है, तो मैं उसकी प्रार्थना पर उसके खर्चे से वह भूमि ले लूंगा या यदि वह भूमि मेरी सम्पत्ति है तो मैं ऐसी शर्तों पर जो तय हों, उसको सक्रमित कर दूंगा या तय न होने की दशा में भारत के चीफ जस्टिस द्वारा नियुक्त किसी मध्यस्थ द्वारा निर्धारित शर्तों पर उसे संक्रमित कर दूंगा।

७. इस अधिमिलन-पत्र की किसी भी बात से यह न समझा जाएगा कि मैं भारत के किसी भावी संविधान को स्वीकार करने के लिए किसी भी प्रकार बाध्य हूं या ऐसे किसी भावी संविधान के अधीन भारत सरकार से कोई प्रबन्ध करने के मेरे विवेक पर कोई प्रतिबन्ध है।

८. इस अधिमिलन-पत्र की किसी भी बात से इस राज्य पर मेरी सर्वोच्च सत्ता के बने रहने पर, कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, या जैसा कि इस अधिमिलन-पत्र के अन्तर्गत या उसके द्वारा उपबंधित है उसको छोड़कर, अन्य प्रकार से इस राज्य का शासक होने के नाते मेरे किसी अधिकार, प्राधिकार या स्वत्व पर कोई प्रभाव न पड़ेगा, या इस राज्य में सम्प्रति लागू किसी कानून की वैधता पर कोई प्रभाव न पड़ेगा।

९. मैं एतद्द्वारा घोषित करता हूं कि मैं इस राज्य की ओर से यह अधिमिलन-पत्र निष्पादित करता हूं और इस पत्र में जहां मेरा अथवा इस राज्य के शासक का हवाला आया है उससे यह समझा जाएगा कि इस हवाले का सम्बन्ध मेरे वारिसों और उत्तराधिकारियों से है।

आज २६ अक्तूबर, उन्नीस सौ सैंतालीस को मेरे द्वारा निष्पादित

(ह०) हरीसिंह
महाराजाधिराज,
जम्मू और काश्मीर राज्य

भारत के गवर्नर-जनरल द्वारा जम्मू और काश्मीर राज्य के अधिमिलन-पत्र की स्वीकृति

मैं एतद्द्वारा इस अधिमिलन-पत्र को स्वीकार करता हूं।

आज सत्ताइस अक्तूबर, उन्नीस सौ सैंतालीस

(हस्ताक्षर) माउन्टबैटन आफ बर्मा
भारत के गवर्नर-जनरल

परिशिष्ट

विषय जिसके सम्बन्ध में डोमिनियन विधान मंडल इस राज्य के लिए कानून

बना सकता है।

......(संक्षेप)

(क) **प्रतिरक्षा**...

१. डोमिनियन की नौसेना, सेना और वायुसेना और डोमीनियन द्वारा अनुरक्षित या भर्ती अन्य सशस्त्र सेना, कोई सशस्त्र सेना जिसमें किसी अधिमिलन-राज्य द्वारा अनुरक्षित या भर्ती सेना शामिल है, जो डोमिनियन की किसी भी सशस्त्र सेना से सम्बद्ध हो या उसके साथ कार्य कर रही हो।

२. नौसेना, सेना और वायुसेना से सम्बन्धित निर्माण-कार्य, कैण्टोनमेंट क्षेत्रों का प्रशासन।

३. अस्त्र-शस्त्र, आग्नेयास्त्र और गोला-बारूद।

४. विस्फोटक।

(ख) **वैदेशिक कार्य**

१. वैदेशिक कार्य, अन्य देशों से सम्पन्न संधियां और करारनामों का कार्यान्वयन, प्रत्यावर्तन, जिसमें अपराधी और दोषसिद्ध व्यक्तियों का भारत के बाहर सम्राट् की डोमिनियन के किसी भाग में अभ्यर्पण शामिल है।

२. भारत में लोगों के आने-जाने या भारत से निष्कासन।

३. देशीकरण।

(ग) **संचार**

१. डाक और तार, टेलीफोन, वायरलेस, प्रसारण आदि।

२. रेलवे, उससे सम्बन्धित सभी वस्तुएं।

३. समुद्री जहाज़, नौचालन आदि।

४. पत्तन संगरोध।

५. बड़े बन्दरगाह।

६. हवाई जहाज़, वायु चालन, हवाई अड्डे आदि।

७. जलदीप (लाइट हाउस) आदि।

८. समुद्र या वायु द्वारा यात्री और सामान का लाना-ले जाना।

९. पुलिसदल के कर्मचारियों के अधिकार-क्षेत्र का रेलवे क्षेत्र पर विस्तार।

(घ) **अनुषंगी**

१. डोमिनियन विधानमंडल के लिए निर्वाचन।

२. किसी भी उपर्युक्त विषय से सम्बन्धित कानूनों के खिलाफ़ अपराध।

३. किसी भी उपर्युक्त विषय के प्रयोजनों के लिए जांच और आंकड़े।

४. किसी भी उपर्युक्त विषय के सम्बन्ध में समस्त न्यायालयों के अधिकार-क्षेत्र और अधिकार, किन्तु ऐसे अधिमिलन-राज्य के शासक की सहमति के बिना उस राज्य के बारे में सामान्य रूप से अधिकार-क्षेत्र रखने वाले न्यायालयों के अलावा अन्य न्यायालयों को ऐसे अधिकार-क्षेत्र न दिए जाएंगे।

महाराजा सर हरीसिंह को लार्ड माउण्टबैटन का उत्तर दिनांकित २७ अक्तूबर, सन् १९४७

प्रिय महाराजा साहब,

श्री वी० पी० मेनन ने आपका पत्र दिनांकित २६ अक्तूबर मुझे दिया। आपके द्वारा उल्लिखित विशेष परिस्थितियों में मेरी सरकार ने काश्मीर राज्य का भारत डोमिनियन में अधिमिलन स्वीकार करना निश्चय कर लिया है। उसकी इस नीति को दृष्टि में रखकर कि यदि किसी राज्य के अधिमिलन का प्रश्न विवाद का विषय हो तो उस राज्य की जनता की इच्छाओं के अनुसार उसका निश्चय किया जाना चाहिए, मेरी सरकार की यह इच्छा है कि जैसे ही काश्मीर में विधि और व्यवस्था फिर से स्थापित हो जाए और आक्रमणकारी राज्य से भगा दिए जाएं राज्य के अधिमिलन का प्रश्न जनमत द्वारा तय किया जाना चाहिए। इस बीच, सैनिक सहायता की आपकी अपील को मानकर, भारतीय सेना के सिपाहियों को, आपके प्रदेश की रक्षा करने और आपकी जनता की सम्पत्ति, उनके जीवन और उनकी इज़्ज़त की रक्षा करने के वास्ते आपकी फौज की सहायतार्थ भेजे जाने की आज कार्यवाही की गई है।

मेरी सरकार और मुझे इस बात से संतोष है कि आपने शेख अब्दुल्ला को अपने प्रधान मंत्री के साथ काम करने के लिए अंतरिम सरकार बनाने को आमंत्रित करने का निश्चय किया है।

आपका

(ह०) माउण्टबैटन आफ बर्मा

अध्याय ४ से संबंधित

सुरक्षा परिषद् के अध्यक्ष को सम्बोधित भारत के प्रतिनिधि का पत्र दिनांकित पहली जनवरी, १९४८

महोदय,

भारत सरकार ने मुझे निम्नलिखित तार-पत्र आपको प्रेषित करने का निर्देश दिया है :

१. संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के आर्टिकल ३५ के अधीन कोई भी सदस्य सुरक्षा परिषद् का ध्यान किसी ऐसी स्थिति की ओर आकर्षित कर सकता है जो अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए खतरा पैदा करती हो। भारत और पाकिस्तान में इस समय ऐसी स्थिति है। जम्मू और काश्मीर, जो भारत डोमिनियन में सम्मिलित हो गया है और भारत का एक भाग है, के खिलाफ फौजी कार्यवाही के लिए आक्रमणकारियों को, जिनमें पाकिस्तान के राष्ट्रीय और उत्तर-पश्चिम में पाकिस्तान के निकट-

वर्ती प्रदेश के कबाइली शामिल हैं, पाकिस्तान से सहायता मिलने के कारण यह स्थिति उत्पन्न हुई है। इस ज्ञाप में अधिमिलन की परिस्थितियों, आक्रमणकारियों की कार्यवाहियों, जिनके कारण भारत सरकार को उनके विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करनी पड़ी, और उस सहायता का विवरण, जो आक्रमणकारियों को पाकिस्तान से प्राप्त हुई है और अब भी प्राप्त हो रही है, दिया हुआ है। भारत सरकार सुरक्षा परिषद् से अनुरोध करती है कि वह पाकिस्तान से ऐसी सहायता का दिया जाना तत्काल बन्द करने को कहे, क्योंकि ऐसी सहायता का दिया जाना भारत के विरुद्ध आक्रमणकारी कार्यवाही है। यदि पाकिस्तान ऐसी सहायता देना बन्द नहीं करता, तो भारत सरकार, आत्मरक्षा में आक्रमणकारियों के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करने के लिए पाकिस्तानी प्रदेश में प्रवेश करने को बाध्य होगी। इसलिए यह मामला अत्यावश्यक है, और अन्तर्राष्ट्रीय शांति भंग होने से रोकने के लिए सुरक्षा परिषद् द्वारा तत्काल कार्यवाही का किया जाना बहुत ज़रूरी है।

२. सितम्बर, १९४७ के मध्य से भारत सरकार को जम्मू और काश्मीर राज्य के जम्मू प्रदेश के पश्चिमी भागों में सशस्त्र आक्रमणकारियों के घुसपैठ की रिपोर्ट मिलती रही है। जम्मू, पश्चिमी पंजाब से, जो पाकिस्तान डोमिनियन का एक भाग है, मिला है। इन आक्रमणकारियों ने उस क्षेत्र को बड़ी क्षति पहुंचाई है और राज्य के प्रदेश के एक भाग पर आधिपत्य कर लिया है। २४ अक्तूबर को भारत सरकार को पाकिस्तान डोमिनियन के फ्रण्टियर प्रदेश से काश्मीर की घाटी पर बड़े पैमाने पर आक्रमण की सूचना मिली। दो हज़ार और उससे भी अधिक आदमी, जो पूरी तरह से सशस्त्र और सुसज्जित थे, मोटरगाड़ियों पर जम्मू और काश्मीर राज्य के प्रदेश में घुस आए, मुज्जफराबाद नगर को लूटा-खसोटा, असंख्य लोगों को मौत के घाट उतारा और जम्मू और काश्मीर राज्य की ग्रीष्म राजधानी श्रीनगर की ओर झेलम घाटी मार्ग पर आगे बढ़े। बीच रास्ते में जो भी नगर और गांव पड़े उन्हें लूटा और जलाया गया और असंख्य लोगों को मार डाला गया। श्रीनगर से ५० मील की दूरी पर उड़ी नाम के एक नगर के निकट राज्य के सैनिकों ने इन आक्रमणकारियों को कुछ समय के लिए रोक लिया किन्तु आक्रमणकारी उन पर हावी हो गए और महोरा बिजली घर को, जो पूरे काश्मीर को बिजली सप्लाई करता था, जला डाला।

३. २६ अक्तूबर के प्रातः स्थिति यह थी कि बारामूला नगर में काश्मीर राज्य के सैनिकों और कुछ सशस्त्र नागरिकों ने इन आक्रमणकारियों को आगे बढ़ने से रोक लिया। बारामूला के बाद श्रीनगर तक कोई बड़ी बाधा नहीं उपस्थित थी। इस बात का तुरन्त खतरा था कि आक्रमणकारी श्रीनगर पहुंच जाएंगे और बहुत-से हिन्दू और मुसलमानों को मार डालेंगे। राज्य के सैनिक पूरे राज्य में फैले हुए थे और अधिकांश जम्मू प्रदेश के पश्चिमी सीमा पर तैनात थे। वे छोटे-मोटे समूह में बंटे थे और आक्रमणकारियों का सप्रभाव प्रतिरोध करने में असमर्थ थे। राज्य के बहुत-से कर्मचारी विपद्ग्रस्त क्षेत्र से भाग गए थे और नागरिक प्रशासन ठप हो गया था। आक्रमणकारियों ने मार्ग में जिस प्रकार गांवों को लूटा, जलाया था और लोगों को

मार डाला था उससे श्रीनगर के निवासियों में, जो सब जाति के थे और निःशस्त्र थे, अपनी रक्षा करने की दृढ़ता आ गई थी। श्रीनगर में उस समय अधिक संख्या में हिन्दू और सिख शरणार्थी भी थे, जो पश्चिम पंजाब से साम्प्रदायिक उपद्रव होने के कारण, वहां भाग आए थे। इसमें कोई सन्देह नहीं था कि यदि आक्रमणकारी श्रीनगर पहुंच जाते तो इन शरणार्थियों का कत्लेआम हो जाता।

४. जम्मू और काश्मीर राज्य में आक्रमण के तुरन्त शुरू होने पर अनौपचारिक रूप से भारत सरकार से अनुरोध किया गया कि वह भारत डोमिनियन में राज्य के अधिमिलन को स्वीकार कर ले। (यहां यह बताना उपयुक्त होगा कि जम्मू और काश्मीर एक राज्य है जिसके शासक ने, ब्रिटेन द्वारा भारत और पाकिस्तान डोमिनियनों को अधिकार संक्रमण करने के पूर्व, ब्रिटिश सम्राट्-सम्राज्ञी से संधि कर रखी थी, जिसके अनुसार राज्य के वैदेशिक सम्बन्ध ब्रिटिश सम्राट्-सम्राज्ञी के नियंत्रणाधीन था और उनपर राज्य की सुरक्षा का उत्तरदायित्व था। गत १५ अगस्त को अधिकार-संक्रमण के साथ ही संधि-दायित्व समाप्त हो गया और अन्य राज्यों की भांति जम्मू और काश्मीर को भारत अथवा पाकिस्तान किसी भी डोमिनियन में सम्मिलित होने का अधिकार प्राप्त हो गया।)

५. घटनाचक्र बहुत तेज़ी से चला और काश्मीर घाटी को खतरा अत्यधिक हो गया। २६ अक्तूबर को राज्य के शासक, हिज़ हाइनेस महाराजा श्री हरीसिंह, ने तत्काल सैनिक सहायता के लिए भारत सरकार से अपील की। उन्होंने यह भी अनुरोध किया कि जम्मू और काश्मीर को भारत डोमिनियन में शामिल हो जाने दिया जाए। साथ ही, काश्मीर के अत्यधिक लोकप्रिय संगठन, नेशनल कान्फरेन्स, ने भी जिसके अध्यक्ष शेख अब्दुल्ला हैं, भारत सरकार से सहायता के लिए अपील की। इसके अतिरिक्त, कान्फरेन्स ने भारत डोमिनियन में राज्य के अधिमिलन के प्रस्ताव का बहुत समर्थन किया। इस प्रकार भारत सरकार से, न केवल सरकारी तौर पर राज्य के प्राधिकारियों की ओर से अपितु काश्मीर की जनता की ओर से भी सैनिक सहायता और भारत में राज्य के अधिमिलन के लिए अनुरोध किया गया।

६. काश्मीर घाटी में आक्रमण के फलस्वरूप निर्दोष लोगों के जीवन और उनकी सम्पत्ति को तथा जम्मू और काश्मीर राज्य की सुरक्षा को जो बड़ा खतरा पैदा हो गया था उससे भारत सरकार के लिए उपर्युक्त दोनों प्रार्थनाओं पर तात्कालिक निश्चय लेना ज़रूरी हो गया था। संकटकालीन अवस्था को देखते हुए यह अत्यावश्यक था कि जम्मू और काश्मीर की रक्षा का भार ऐसी सरकार अपने ऊपर ले जो उसे निर्वहन करने में समर्थ हो। किन्तु इस विचार से कि कहीं यह न समझा जाए कि भारत सरकार ने काश्मीर राज्य के तात्कालिक संकट का राजनीतिक लाभ उठा लिया है, भारत सरकार ने यह स्पष्ट किया कि राज्य की भूमि से आक्रमणकारियों को निकाल देने के बाद और सामान्य स्थिति पुनःस्थापित हो जाने के बाद, राज्य के लोगों को जनमत के मान्य प्रजातांत्रिक ढंग से अपना भविष्य निश्चित करने की स्वतंत्रता होगी। यह जनमत, पूर्णरूपेण निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए, अन्तर्राष्ट्रीय संस्था

की देख-रेख में लिया जा सकता है।

७. भारत सरकार ने सशस्त्र सहायता की अपील को स्वीकार करना अपना कर्तव्य समझा। क्योंकि :

(१) वह इसकी अनुमति नहीं दे सकता था कि उसके किसी पड़ोसी और मित्रराज्य को बलपूर्वक उसके आंतरिक मामलों या वाह्य सम्बन्धों को निर्धारित करने के लिए बाध्य किया जाए।

(२) भारत की डोमिनियन में जम्मू और काश्मीर राज्य के अधि-मिलन से वास्तव में राज्य की रक्षा का उत्तरदायित्व भारत पर आ गया था।

८. भारत सरकार के हस्तक्षेप से श्रीनगर बच गया। आक्रमणकारी बारामूला से उड़ी भगा दिए गए, और वहां भारतीय सैनिकों ने उन्हें रोक दिया। उस क्षेत्र में लगभग १९,००० आक्रमणकारी डोमिनियन के सैनिकों का सामना कर रहे हैं। जब से काश्मीर की घाटी में सैनिक कार्यवाही शुरू हुई, जम्मू और काश्मीर राज्य की पश्चिमी और दक्षिण-पश्चिमी सीमा पर आक्रमणकारियों का दबाव बहुत बढ़ गया है। सही-सही पूरे आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। अनुमान है, लगभग १५,००० आक्रमणकारी राज्य के उस भाग में सक्रिय हैं। कुछ क्षेत्रों में राज्य के सैनिक घिरे हुए हैं। आक्रमणकारी राज्य के प्रदेश में घुस रहे हैं, वे कत्ल कर रहे हैं, लूटमार और आगज़नी कर रहे हैं और औरतों का अपहरण कर रहे हैं। लूटमार का सामान एकत्र किया जाता है और कबाइलियों के क्षेत्र में ले जाया जाता है जिससे आक्रमणकारियों के दल में और अधिक क़बाइली भर्ती होने के लिए आकर्षित हो सकें। आक्रमण में सक्रिय भाग लेने वाले लोगों के अतिरिक्त, अनुमान है १,००,००० कबाइली और अन्य लोग जम्मू और काश्मीर के सीमावर्ती पश्चिमी पंजाब के ज़िलों में विभिन्न जगहों पर एकत्र हैं और उनमें से अधिकांश को पाकिस्तानी नागरिकों, जिनमें पाकिस्तान सेना के अधिकारी शामिल हैं, द्वारा सैनिक शिक्षा दी जा रही है। इन लोगों की देख-रेख पाकिस्तान प्रदेश में हो रही है उनको वहां खिलाया-पिलाया जा रहा है, शस्त्र-अस्त्र दिए जा रहे हैं और अन्य रूप से सुसज्जित किया जा रहा है और प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से पाकिस्तान के सैनिक और नागरिक अधिकारियों की सहायता से उन्हें जम्मू और काश्मीर प्रदेश में मोटर-गाड़ियों द्वारा भेजा जा रहा है।

९. जैसा पहले बताया जा चुका है, आक्रमणकारी, जो काश्मीर घाटी में अक्तूबर में घुसे, मुख्यतया पाकिस्तान के उत्तर पश्चिम के कबाइली क्षेत्रों से आए थे और काश्मीर पहुंचने के लिए पाकिस्तानी प्रदेश से गुज़रे थे। राज्य की दक्षिण-पश्चिम सीमा पर जो हमले, घाटी पर आक्रमण करने के पूर्व, हुए थे वे वास्तव में पाकिस्तानी प्रदेश से संचालित किए गए थे और उनमें पाकिस्तानी राष्ट्रिकों ने भाग लिया था। पाकिस्तानी प्रदेश से जम्मू और काश्मीर राज्य में आने की और इस राज्य के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करने के लिए पाकिस्तानी प्रदेश के उपयोग करने की क्रिया अब भी जारी है। हाल ही में, राज्य की पश्चिमी और दक्षिण-पश्चिमी सीमाओं पर सैनिक कार्यवाही

की तीव्रता बढ़ा दी गई है और आक्रमणकारियों में पाकिस्तान के राष्ट्रिक और कबाइली दोनों हैं। इन आक्रमणकारियों के पास आधुनिक शस्त्रास्त्र हैं; मोर्टार, मीडियम मशीन-गन हैं। ये नियमित सैनिकों की भांति युद्ध की पोशाक पहनते हैं और अभी हाल में जो लड़ाइयां हुई हैं उनमें देखा गया है कि ये आक्रमणकारी नियमित रूप से रणव्यूह बनाकर लड़े हैं और आधुनिक रणकौशल का उपयोग किया है। ये पीठ पर लादे हुए वायरलेससेट का इस्तेमाल करते हैं। चिह्नित सुरंगों का भी प्रयोग किया गया है। आने-जाने के लिए इन आक्रमणकारियों ने बराबर मोटर गाड़ियों का इस्तेमाल किया है। निःसन्देह इन्हें पाकिस्तान सेना के नियमित अधिकारी ट्रेनिंग दे रहे हैं और कुछ सीमा तक उनका नेतृत्व भी कर रहे हैं। इन्हें अपना राशन और अन्य वस्तुएं पाकिस्तान प्रदेश से प्राप्त होती हैं।

१०. इन तथ्यों से निश्चिय रूप से यह निष्कर्ष निकलता है कि :

(क) इन आक्रमणकारियों को पाकिस्तान से होकर आने-जाने दिया जाता है,

(ख) इन्हें सैनिक कार्यवाही करने के लिए पाकिस्तानी प्रदेश को अड्डा बनाने दिया जाता है,

(ग) इनमें पाकिस्तान राष्ट्रिक शामिल हैं,

(घ) इन्हें अपना अधिकांश सैनिक साज-सज्जा, परिवहन और वस्तुएं (जिनमें पेट्रोल भी शामिल है) पाकिस्तान से प्राप्त होती हैं, और

(ङ) पाकिस्तानी अधिकारी उन्हें ट्रेनिंग देते हैं, उनका मार्ग-दर्शन करते हैं और अंततः उनकी सक्रिय सहायता करते हैं।

पाकिस्तान के अतिरिक्त ऐसा कोई स्रोत नहीं है जहां से उन्हें इतने परिमाण में आधुनिक सैनिक उपकरण, इतनी ट्रेनिंग या मार्ग-दर्शन मिल सकता। भारत सरकार ने कई बार पाकिस्तान सरकार से अनुरोध किया कि वह आक्रमणकारियों को सुविधाएं न दे क्योंकि ऐसा करना भारत के खिलाफ आक्रमण करना और शत्रुता करना होगा, किन्तु उसका कोई फल नहीं निकला। पिछली बार ऐसा अनुरोध २२ दिसम्बर को किया गया था जब भारत के प्रधान मंत्री ने स्वयं पाकिस्तान के प्रधान मंत्री को एक पत्र दिया था जिसमें संक्षेप में बताया गया था कि पाकिस्तान की सरकार आक्रमण-कारियों की क्या-क्या सहायता कर रही है। पत्र में पाकिस्तान की सरकार से तुरन्त ऐसी सहायता बन्द करने को कहा गया था। २६ दिसम्बर को तार द्वारा अनुस्मारक भेजे जाने पर भी उस पत्र का अभी तक कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ है।

११. उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट होगा कि आक्रमणकारियों को सामान और आदमियों की शक्ल में पाकिस्तान प्रदेश से और पाकिस्तानी राष्ट्रिकों से, जिसमें पाकि-स्तान सरकार के सैनिक और नागरिक दोनों शामिल हैं, जो सहायता मिल रही है उसे पाकिस्तान की सरकार बन्द करने को रज़ामन्द नहीं है। यह रुख न केवल निष्पक्ष नहीं है अपितु भारत के विरुद्ध, जिसका एक भाग जम्मू और कश्मीर राज्य है, सक्रिय आक्रमणकारी है।

१२. भारत सरकार ने पाकिस्तान सरकार के इस रुख में परिवर्तन लाने के लिए हर सम्भव उपाय किया है और धैर्य से काम लिया है। किन्तु उसको कोई सफलता नहीं मिली है और फलतः ऐसी स्थिति आ गई है जो जम्मू-काश्मीर राज्य की रक्षा में बाधक है। उस राज्य से आक्रमणकारियों को मार भगाने के लिए जो उपाय भारत सरकार करती है उसमें पाकिस्तान द्वारा आक्रमणकारियों को प्राप्त समर्थन और सहायता बड़ी रुकावट डाल रही है। आक्रमणकारी अब भी जम्मू और कश्मीर की भूमि पर मौजूद हैं और राज्य के निवासियों के लिए एक बर्बर शत्रु के अत्याचारों का खतरा बना है। पाकिस्तान के उन भागों में, जो जम्मू और काश्मीर राज्य के अतिरिक्त भारतीय प्रदेश के भागों के सन्निकट हैं, बड़ी संख्या में आक्रमणकारियों की उपस्थिति शेष भारत के लिए संकटमय है। वर्तमान सैनिक कार्यवाहियों के अन्तिम रूप से चलते रहने के कारण जम्मू और काश्मीर के लोगों का कष्ट बढ़ता जा रहा है, भारत के साधनों का ह्रास हो रहा है और भारत तथा पाकिस्तान के बीच शांति बनाए रखने में बराबर खतरा पैदा हो रहा है। इसलिए, जम्मू और काश्मीर राज्य से आक्रमणकारियों को मार भगाने के लिए और अधिक प्रभावकारी सैनिक कार्यवाही करने के सिवाय कोई दूसरा उपाय भारत सरकार के पास नहीं है।

१३. भारतीय प्रदेश से आक्रमणकारी को हटाने और उसे दुबारा आक्रमण करने से रोकने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारतीय सैनिकों को पाकिस्तान प्रदेश में प्रवेश करना पड़ेगा। केवल इसी प्रकार आक्रमणकारियों को पाकिस्तानी अड्डे के प्रयोग से वंचित किया जा सकता है और पाकिस्तान से उसकी सप्लाई और कुमुक रोकी जा सकती है। चूंकि आक्रमणकारियों को पाकिस्तान से जो सहायता मिल रही है वह भारत के खिलाफ आक्रमण की कार्यवाही है, इसलिए, अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अधीन, भारत सरकार को, आक्रमणकारियों के विरुद्ध सख्त कार्यवाही करने के लिए, अपनी सशस्त्र फौज पाकिस्तान के प्रदेश में भेजने का अधिकार है। चूंकि इस कार्यवाही से पाकिस्तान से सशस्त्र संघर्ष हो सकता है, इसलिए भारत सरकार, जो सदैव से संयुक्त राष्ट्र चार्टर के सिद्धान्तों और उद्देश्यों के अनुसार कार्य करना चाहती है, चार्टर के आर्टिकल ३५ के अन्तर्गत सुरक्षा परिषद् को इस स्थिति की सूचना देती है। भारत सरकार समझती है कि उसकी सुरक्षा परिषद् से यह प्रार्थना न्यायोचित है कि परिषद् पाकिस्तान सरकार से यह कहे कि,

(१) वह पाकिस्तान सरकार के कर्मचारियों, सैनिक और असैनिक, को जम्मू और काश्मीर राज्य पर आक्रमण करने, उसमें सहायता देने या भाग लेने से रोके,

(२) वह अन्य पाकिस्तानी राष्ट्रिकों से जम्मू और काश्मीर राज्य में हो रही लड़ाई में कोई भाग न लेने को कहे,

(३) वह आक्रमणकारियों को (क) काश्मीर के विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करने के निमित्त अपने प्रदेश के आर-पारजाने या उसके प्रयोग करने को बन्द करे, (ख) सैनिक और अन्य वस्तुओं की

सप्लाई बन्द करे, (ग) ऐसी सभी सहायता देना बन्द करे जो वर्तमान संघर्ष को बढ़ाएगा।

१४. भारत सरकार अपनी प्रार्थना पर सुरक्षा परिषद् द्वारा तत्काल कार्यवाही करने की अत्यावश्यकता पर ज़ोर देती है। भारत सरकार यह कहना चाहती है कि इधर कुछ दिनों से आक्रांत क्षेत्रों में सैनिक कार्यवाही इतनी तेज़ी पकड़ रही है कि आत्मरक्षा हेतु भारत सरकार किसी भी समय, जैसी आवश्यकता प्रतीत हो, ऐसी सैनिक कार्यवाही करने को, जो स्थिति द्वारा अपेक्षित हो, स्वतंत्र होगी।

१५. भारत सरकार को अत्यन्त खेद है कि पाकिस्तान से उसके सम्बन्ध में ऐसी संकटमय स्थिति उत्पन्न हो गई है। न केवल पाकिस्तान एक पड़ोसी देश है अपितु हाल के पृथकीकरण के बावजूद भारत और पाकिस्तान के बीच बहुत-से बन्धन हैं और उनके हित मिलते-जुलते हैं। भारत की हार्दिक इच्छा अपने पड़ोसी राज्य के साथ घनिष्ठता और मित्रता से रहना है। शांति का बना रहना दोनों राज्यों के हित में है, वास्तव में ऐसा विश्व के हित में है। भारत सरकार ने सुरक्षा परिषद् से उक्त प्रार्थना इस आशा से प्रेरित होकर की है कि परिषद् द्वारा शीघ्र कार्यवाही से शांति बनी रहेगी।

१६. सुरक्षा परिषद् को भेजे गए इस पत्र का लेख्य पाकिस्तान सरकार को तार से भेजा जा रहा है।

मैं हूं,
आपका आज्ञाकारी सेवक,
पी०पी० पिल्लै
संयुक्त राष्ट्र के भारत के प्रतिनिधि

अध्याय ६ से संबंधित

सुरक्षा परिषद् का २० जनवरी, १९४८ का प्रस्ताव

(आयोग के विचारार्थ विषय का उल्लेख)

सुरक्षा परिषद्

इस विचार से कि वह किसी ऐसे विवाद या स्थिति की जांच कर सकती है जिसके बने रहने से अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को खतरा हो, और यह कि भारत और पाकिस्तान की मौजूदा स्थिति में इस प्रकार की जांच अत्यावश्यक है,

निम्नलिखित प्रस्ताव अंगीकार करती है :

(क) सुरक्षा परिषद् का एक आयोग एतद्द्वारा स्थापित किया जाता है, इसमें संयुक्त राष्ट्र के तीन सदस्य होंगे, एक भारत द्वारा, दूसरा पाकिस्तान द्वारा और तीसरा इन दो चुने हुए सदस्यों द्वारा नामित किया जाएगा। आयोग के प्रत्येक सदस्य को अपना एवज़ी या सहायक चुनने का

अधिकार होगा।

(ख) आयोग यथाशीघ्र मौके पर जाएगा। वह सुरक्षा परिषद् के प्राधिकार और परिषद् से प्राप्त निर्देशों के अनुसार कार्य करेगा। वह सुरक्षा परिषद् को अपनी कार्यवाहियों और स्थिति में परिवर्तन से अवगत करता रहेगा। वह नियमित रूप से सुरक्षा परिषद् को रिपोर्ट भेजेगा और उसके साथ अपने प्रस्ताव और निष्कर्ष प्रस्तुत करेगा।

(ग) आयोग को दो कार्य सुपुर्द किए गए हैं :

(१) चार्टर के आर्टिकल ३४ के अनुसार तथ्यों की जांच करना।

(२) सुरक्षा परिषद् के कार्य में कोई विघ्न डाले बिना मध्यस्थता द्वारा ऐसे उपाय करना जिससे कठिनाइयां दूर हो सकें, सुरक्षा परिषद् द्वारा दिए गए निदेशों को कार्यान्वित करना, और यह रिपोर्ट देना कि सुरक्षा परिषद् द्वारा दी गई सलाह और निदेश किस सीमा तक कार्यान्वित हो चुके हैं।

(घ) आयोग खंड ग में बताए हुए कृत्यों को करेगा :

(१) सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट को सम्बोधित भारत के प्रतिनिधि के १ जनवरी, १९४८ के पत्र और सेक्रेटरी-जनरल को सम्बोधित पाकिस्तान के विदेश मंत्री के १५ जनवरी, १९४८ के पत्र में उल्लिखित जम्मू और काश्मीर राज्य में स्थिति के बारे में,

(२) सेक्रेटरी-जनरल को सम्बोधित पाकिस्तान के विदेश मंत्री के १५ जनवरी, १९४८ के पत्र में उल्लिखित अन्य स्थितियों के बारे में, जब सुरक्षा परिषद् ऐसा निदेश करे।

(च) आयोग बहुमत से अपना निर्णय लेगा। वह अपनी प्रक्रिया निर्धारित करेगा। वह अपने सदस्यों, एवज़ी सदस्यों, उनके सहायकों और कर्मचारिवर्ग में ऐसे कर्तव्यों का नियतन करेगा जिनका आयोग के उद्देश्य-पूर्ति के लिए और निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए किया जाना आवश्यक हो।

(छ) आयोग, उसके सदस्य, एवज़ी सदस्य, उनके सहायक और कर्मचारिवर्ग को अलग-अलग और साथ ही उन स्थानों को, जहां उनको सुपुर्द काम के लिए उनका जाना आवश्यक हो और विशेषकर उन प्रदेशों के अन्दर जहां वे घटनाएं हो रही हों जो सुरक्षा परिषद् का विचार-विषय है, यात्रा करने का अधिकार होगा।

(ज) संयुक्त राष्ट्र का सेक्रेटरी-जनरल आयोग को ऐसे कर्मचारी और ऐसी सहायता देगा जो वह आवश्यक समझे।

२१ अप्रैल, १९४८ का परिषद् का प्रस्ताव

(आयोग के अतिरिक्त विचारार्थ विषय और जनमत की शर्तें)

सुरक्षा परिषद्

जम्मू और काश्मीर राज्य से सम्बन्धित विवाद के बारे में भारत सरकार की शिकायत पर विचारोपरान्त, उस शिकायत के समर्थन में भारत के प्रतिनिधि को सुनने और पाकिस्तान के प्रतिनिधि के प्रत्युत्तर और जवाबी शिकायत सुनने के बाद,

इस दृढ़ मत का होते हुए कि जम्मू और काश्मीर में शीघ्र ही शांति और व्यवस्था के पुन:स्थापन की अत्यावश्यकता है और भारत और पाकिस्तान को सभी लड़ाई के बन्द करने की पूरी कोशिश करनी चाहिए।

इस बात पर सन्तोष प्रकट करते हुए कि भारत और पाकिस्तान दोनों चाहते हैं कि प्रजातांत्रिक ढंग से स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत द्वारा जम्मू और काश्मीर के भारत या पाकिस्तान में अधिमिलन का प्रश्न तय किया जाना चाहिए।

यह विचार करते हुए कि विवाद के चलते रहने से अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के खतरे में पड़ जाने की सम्भावना है,

परिषद् के सत्रह जनवरी के प्रस्ताव की पुन: पुष्टि करती है;

यह संकल्प करती है कि परिषद् के २० जनवरी, सन् १९४८ के प्रस्ताव द्वारा स्थापित आयोग की सदस्यता बढ़ाकर पांच कर दी जाएगी और उस प्रस्ताव में उल्लिखित सदस्यों के अतिरिक्त, उसमें······के प्रतिनिधि और······के प्रतिनिधि सम्मिलित होंगे और यदि इस प्रस्ताव के अंगीकार के दस दिन के भीतर आयोग की सदस्यता पूर्ण नहीं हो जाती तो परिषद् का प्रेसीडेण्ट संयुक्त राष्ट्र के ऐसे सदस्य या सदस्यों को नामित कर देगा जो पांच की सदस्यता को पूरी करने के लिए अपेक्षित हों;

आयोग को अनुदेश देती है कि वह तुरन्त भारत उपमहाद्वीप जाए और शांति एवं व्यवस्था पुन:स्थापित करने और दोनों सरकारों द्वारा जनमत लिए जाने के बारे में आवश्यक उपाय करने के लिए अपनी मध्यस्थता और अपनी सेवा भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार को अर्पित करे जो एक दूसरे के सहयोग से और आयोग के सहयोग से कार्य करेंगी, आयोग को यह भी अनुदेश देती है कि वह इस प्रस्ताव के अन्तर्गत और उस उद्देश्य से किए गए कार्य की सूचना परिषद् को देगी।

भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार से निम्नलिखित उपायों की संस्तुति करती है जो परिषद् की राय में लड़ाई बन्द करने के लिए और यह निश्चय करने के लिए कि जम्मू और काश्मीर का राज्य भारत या पाकिस्तान में मिलेगा एक स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत लिए जाने के हेतु अनुकूल परिस्थितियां पैदा करने के लिए उपयुक्त हैं।

क. शांति और व्यवस्था का पुनःस्थापन

१. पाकिस्तान सरकार का यह उत्तरदायित्व है कि वह :

(क) जम्मू और काश्मीर राज्य से कबाइलियों और ऐसे पाकिस्तानी राष्ट्रिकों को, जो सामान्यतः उस राज्य के निवासी नहीं हैं और जो लड़ाई के प्रयोजनों के लिए राज्य में घुस आए हैं, वापस बुलाने, और इस प्रकार के लोगों द्वारा राज्य में अतिक्रमण को रोकने और राज्य में लड़ने वाले लोगों को सार्थक सहायता दिए जाने को रोकने,

(ख) सभी सम्बन्धित व्यक्तियों को यह प्रख्यापित करने, कि इसमें और निम्नांकित पैराग्राफों में उल्लिखित उपायों में, वर्ण, जाति या दल का ख्याल न करते हुए राज्य के सभी नागरिकों को अपने विचार व्यक्त करने और राज्य के अधिमिलन के प्रश्न पर मत देने की पूरी स्वतंत्रता है और इसलिए शांति और व्यवस्था बनाए रखने में उन्हें सहयोग देना चाहिए,

का भरसक प्रयास करेगी।

२. भारत सरकार···

(क) जब परिषद् के २० जनवरी के प्रस्ताव के अनुसार स्थापित आयोग के सन्तोषानुसार यह निश्चित हो जाए कि कबाइली वापस जा रहे हैं और लड़ाई-बन्दी के इंतज़ाम हो चुके हैं, तो जम्मू और काश्मीर से अपनी फौजें हटाने और उत्तरोत्तर उनकी संख्या कम करने के लिए और विधि एवं व्यवस्था बनाए रखने के हेतु असैनिक अधिकारियों के सहायतार्थ न्यूनतम संख्या में फौजें वहां रखे जाने के लिए आयोग के परामर्श से एक योजना कार्यान्वित करेगी;

(ख) यह प्रख्यापित करेगी कि प्रक्रमों में सैनिक हटाए जा रहे हैं और वह प्रत्येक प्रक्रम की समाप्ति का एलान करेगी;

(ग) जब उपर्युक्त (क) के अनुसार न्यूनतम संख्या में भारतीय फौज रह जाती हैं, आयोग के परामर्श से बाकी फौजों को, निम्नांकित सिद्धांतों के अनुसार तैनात करने की व्यवस्था करेगी;

(१) सैनिकों की उपस्थिति से राज्य के निवासी अभित्रस्त नहीं होते और न इसका आभास हो कि वे अभित्रस्त हो रहे हैं,

(२) अग्रक्षेत्रों में कम से कम संख्या में सैनिक रखे जाते हैं,

(३) आरक्षित सैनिक जिनकी संख्या कुल संख्या में सम्मिलित है अपने वर्तमान अड्डा क्षेत्र में रखे जाते हैं।

३. भारत सरकार को इससे सहमत होना चाहिए कि उस समय तक जब तक जनमत प्रशासक, जिनका उल्लेख नीचे किया गया है, राज्य की

फौजों और पुलिस को निर्देश देने और उनकी देख-रेख करने, जिसकी व्यवस्था पैराग्राफ ८ में की गई है, के अधिकार का प्रयोग आवश्यक न समझे, वे जनमत प्रशासक द्वारा संमत क्षेत्रों में रखे जाएंगे ।

४. पैराग्राफ २ (क) में उल्लिखित योजना के कार्यान्वयन के बाद प्रत्येक ज़िले में स्थानीय रूप से भरती किए गए कर्मचारी, यथासम्भव विधि और व्यवस्था पुनःस्थापित करने और बनाए रखने के लिए, अल्प-संख्यकों के संरक्षण को ध्यान में रखते हुए इस्तेमाल किए जाने चाहिए, परन्तु शर्त यह है कि पैराग्राफ ७ में उल्लिखित जनमत प्रशासक द्वारा जो भी अतिरिक्त कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी उनकी व्यवस्था की जाएगी ।

५. यदि स्थानीय फौज अपर्याप्त मालूम पड़े तो आयोग भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार की सहमति से किसी भी डोमिनियन की ऐसी फौज को, जो वह शांति-स्थापना के लिए कारगर समझे, इस्तेमाल करने की व्यवस्था करेगा ।

ख. जनमत

६. भारत सरकार का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह यह सुनिश्चित करे कि राज्य की सरकार, जब जनमत-संग्रह की तैयारी हो रही हो और जनमत लिया जा रहा हो, मंत्रियों के स्तर पर प्रशासन के संचालन में प्रमुख राजनीतिक वर्गों के उत्तरदायी प्रतिनिधियों को आमंत्रित करती है ।

७. भारत सरकार का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह यह सुनिश्चित करे कि जम्मू और काश्मीर में जनमत-प्रशासन स्थापित किया जाए जो भारत या पाकिस्तान में राज्य के अधिमिलन के प्रश्न पर यथाशीघ्र जनमत लेगा ।

८. भारत सरकार का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह यह सुनिश्चित करे कि राज्य द्वारा जनमत-प्रशासक को वे अधिकार हस्तांतरित कर दिए जाते हैं जो वह न्याययुक्त और निष्पक्ष रूप से जनमत लिए जाने के लिए आवश्यक समझें । इन अधिकारों में केवल इस प्रयोजन के लिए, राज्य की फौजों और पुलिस को निदेश देना और उनकी देख-रेख करना शामिल होगा ।

९. भारत सरकार जनमत-प्रशासक की प्रार्थना पर भारतीय फौजों से ऐसी सहायता उपलब्ध कराएगी जो वह अपने कर्तव्यों के पालन के लिए आवश्यक समझे ।

१०. (क) भारत सरकार इससे सहमत होगी कि संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी-जनरल द्वारा नामित व्यक्ति जनमत-प्रशासक नियुक्त होगा,

(ख) जनमत-प्रशासक, जम्मू और काश्मीर राज्य के अधिकारी के

रूप में कार्य करेगा, और उसे अपने सहायकों और अन्य अधीनस्थ कर्मचारियों को नामित करने और जनमत-सम्बन्धित विनियमों का मसविदा तैयार करने का अधिकार होगा। इस प्रकार नामित व्यक्तियों की नियुक्ति विधिवत् होनी चाहिए और इस प्रकार के विनियम विधिवत् जम्मू और काश्मीर द्वारा प्रख्यापित किए जाने चाहिए।

(ग) भारत सरकार का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह यह सुनिश्चित करे कि जम्मू और काश्मीर सरकार जनमत-प्रशासक द्वारा नामित पूर्णतः अर्ह व्यक्तियों को राज्य की न्यायिक व्यवस्था के अन्तर्गत विशेष मजिस्ट्रेट ऐसे मुकद्दमों की सुनवाई के लिए नियुक्त करती है जिनका जनमत प्रशासक की राय में स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत की तैयारी और उसके संचालन से निकट सम्बन्ध हो।

(घ) प्रशासक की सेवा-शर्तें संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी-जनरल और भारत सरकार द्वारा अलग से तय की जाएंगी। प्रशासक अपने सहायकों और अधीनस्थ कर्मचारियों की सेवा-शर्तें निर्धारित करेगा।

(च) प्रशासक को राज्य सरकार और सुरक्षा परिषद् के आयोग से सीधे और आयोग के माध्यम से सुरक्षा परिषद्, भारत सरकार, पाकिस्तान सरकार और आयोग से सम्बद्ध उनके प्रतिनिधियों से पत्र-व्यवहार करने का अधिकार होगा। उसका यह कर्तव्य होगा कि वह उपर्युक्त किन्हीं या सभी को (जैसा वह अपने विवेक से निश्चय करे) ऐसी परिस्थितियों की सूचना दे जो उसकी राय में स्वतंत्ररूप से जनमत के लिए जाने में विघ्न डालती हों।

११. भारत सरकार का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह जनमत के लिए जाने में मतदाताओं को धमकी देने या रिश्वत द्वारा या अन्य प्रकार से उन पर बेजा ज़ोर-दबाव डालने को खुद रोके और उसके रोकने में प्रशासक और उसके अमला को पूरा सहयोग दे। भारत सरकार को सार्वजनिक रूप से यह घोषित कराना चाहिए कि ऐसा करना एक अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व है और जम्मू और काश्मीर में सभी सरकारी अधिकारी और कर्मचारी उससे बाध्य होंगे।

१२. भारत सरकार को स्वयं और राज्य सरकार के द्वारा भी यह घोषित करना चाहिए और यह प्रख्यापित करना चाहिए कि जम्मू और काश्मीर राज्य के सभी नागरिकों को, चाहे जिस जाति, वर्ण, दल के वे हों, राज्य के अधिमिलन के प्रश्न पर अपना मत व्यक्त करने की स्वतंत्रता होगी और उन्हें कोई भय नहीं होगा और लोगों को भाषण की, यात्रा करने की, वैधरूप से राज्य में आने-जाने की स्वतंत्रता होगी और प्रेस को भी स्वतंत्रता रहेगी।

१३. भारत सरकार भरसक प्रयत्न करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि उन नागरिकों के अलावा, जो राज्य में सामान्यतया रहते हों या जो १५ अगस्त, सन् १९४७ को या उसके बाद वैध प्रयोजनों से राज्य में आ गए हों, सभी भारतीय राष्ट्रिक राज्य से बाहर चले जाते हैं।

१४. भारत सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि राज्य सरकार सभी राजनीतिक बंदियों को मुक्त कर देती है और सभी संभव उपाय करेगी कि···

(क) राज्य के समस्त नागरिक जो उपद्रव के कारण राज्य से बाहर चले गए हैं अपने घरों में वापस आने के लिए आमंत्रित किए जाते हैं और वे राज्य के नागरिकों की तरह अपने अधिकारों का प्रयोग करते हैं और ऐसा करने के लिए स्वतंत्र हैं।

(ख) किसी को परेशान नहीं किया जाता है,

(ग) राज्य के सभी भागों में अल्पसंख्यकों को पर्याप्त संरक्षण दिए जाते हैं।

१५. जनमत-संग्रह के अन्त में सुरक्षा परिषद् का आयोग परिषद् को यह प्रमाणपत्र देगा कि जनमत स्वतंत्र और निष्पक्ष रूप से लिया गया है या नहीं।

ग. सामान्य उपबन्ध

१६. भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार से ऐसी सहायता के लिए जिसकी आयोग अपने कार्य-पालन के हेतु अपेक्षा करे, आयोग से सम्बद्ध किए जाने के लिए एक प्रतिनिधि को नामित करने का अनुरोध किया जाएगा।

१७. आयोग जम्मू और काश्मीर में ऐसे प्रेक्षकों को नियुक्त करेगा, जिनकी उसे उपर्युक्त पैराग्राफों में उल्लिखित उपबन्धों के अनुसार कार्यवाही करने के लिए आवश्यकता हो।

१८. सुरक्षा परिषद् आयोग एतद्द्वारा सुपुर्द कर्तव्यों का पालन करेगा।

अध्याय ७ से संबंधित

आयोग का प्रस्ताव

१३ अगस्त, सन् १९४८

भारत और पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र का आयोग :

भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों द्वारा जम्मू और काश्मीर राज्य में स्थिति के बारे में व्यक्त विचारों पर सावधानी के साथ विचारोपरान्त, और

इस मत का होते हुए कि अंतिमरूप से स्थिति का समाधान करने के लिए भारत और पाकिस्तान सरकारों को सहायतार्थ उसके प्रयासों को फलीभूत करने के

लिए तुरन्त लड़ाई-बन्दी और स्थिति का सुधार, जिसके बिना अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा खतरे में पड़ने की सम्भावना है, परमावश्यक है।

भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार को एक साथ निम्नांकित प्रस्ताव भेजने का संकल्प करता है :

लड़ाई-बन्दी आदेश

(क) भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार सहमत हैं कि दोनों सरकारों द्वारा इन प्रस्तावों के स्वीकृत होने के चार दिनों के भीतर दोनों सरकारों द्वारा परस्पर सम्मत यथाशीघ्र किसी व्यावहारिक दिनांक या दिनांकों को उनके उच्चकमान (हाई कमाण्ड) अलग-अलग और एक साथ लड़ाई-बन्दी के आदेश जारी करेंगे जो जम्मू और काश्मीर राज्य में उनके नियंत्रणाधीन समस्त फौजों पर लागू होगा।

(ख) भारत और पाकिस्तान फौजों के उच्चकमान (हाई कमाण्ड) सहमत हैं कि वे ऐसे कोई उपाय न करेंगे जो जम्मू और काश्मीर राज्य में उनके नियंत्रणाधीन फौजों की सैनिक शक्ति में वृद्धि करे।

इन प्रस्तावों के प्रयोजन के लिए "उनके नियंत्रणाधीन फौजों में" ऐसी सब फौजें शामिल समझी जाएंगी जो संगठित और असंगठित हों, जो अपनी-अपनी ओर लड़ रही हों, या लड़ाई में भाग ले रही हों।

(ग) भारत और पाकिस्तान के कमाण्डर-इन-चीफ फौजों की वर्तमान तैनाती में आवश्यक स्थानीय परिवर्तनों के बारे में, जिससे लड़ाई-बन्दी में सुगमता हो, शीघ्र वार्ता करेंगे।

(घ) आयोग, अपने विवेक से और जैसा वह व्यावहारिक समझे, सैनिक प्रेक्षक नियुक्त करेगा, जो आयोग के प्राधिकार से और दोनों कमानों के सहयोग से लड़ाई-बन्दी के आदेश के अनुपालन की देख-रेख करेंगे।

(च) भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार सहमत हैं कि वे अपने-अपने लोगों से अनुरोध करेंगे कि वे और बातचीत करने के विचार से अनुकूल वातावरण बनाने और उसे बनाए रखने में सहायता दें।

भाग २

संधि करारनामा

भाग १ में उल्लिखित तुरन्त लड़ाई-बन्दी के प्रस्ताव की स्वीकृति के साथ साथ दोनों सरकारें निम्नलिखित सिद्धांतों को संधि-करारनामा का आधार स्वीकार करते हैं, इसके ब्योरे उनके प्रतिनिधियों और आयोग के विचार-विमर्श से तय किए जाएंगे।

(क) १. चूंकि जम्मू और काश्मीर राज्य के प्रदेश में पाकिस्तान के सैनिकों की उपस्थिति से स्थिति में, उस समय से जब पाकिस्तान की सरकार ने उसके बारे में कहा था, अब सारवान् परिवर्तन हो गया है, पाकिस्तान की सरकार उस राज्य से अपने सैनिक हटाने के लिए सहमत है।

२. पाकिस्तान की सरकार जम्मू और काश्मीर राज्य से कबाइलियों और

पाकिस्तानी राष्ट्रिकों को, जो सामान्यतया वहां के निवासी नहीं हैं और जो लड़ाई के प्रयोजनों के लिए वहां घुस आए हैं, हटाए जाने के लिए भरसक प्रयास करेगी।

३. जब तक समस्या का अंतिम समाधान नहीं हो जाता, पाकिस्तानी सैनिकों द्वारा खाली किए गए क्षेत्र आयोग की देख-रेख में स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा प्रशासित होंगे।

(ख) १. जब आयोग भारत सरकार को यह सूचित कर देगा कि भाग २ क (२) में उल्लिखित कबाइली और पाकिस्तानी राष्ट्रिक हट गए हैं, और फलतः वह स्थिति समाप्त हो गई है, जिसका उल्लेख भारत सरकार ने सुरक्षा परिषद् से किया था और जिसके फलस्वरूप कहा गया था कि भारतीय फौजों की उपस्थिति वहां आवश्यक हो गई थी और जम्मू और काश्मीर राज्य से पाकिस्तानी फौजें हटाई जा रही हैं, तब भारत सरकार उस राज्य से अपनी अधिकांश फौजों को आयोग द्वारा सम्मत प्रक्रमों में हटाएगी।

२. जब तक जम्मू और काश्मीर राज्य में स्थिति के अंतिम समाधान के लिए शर्तें स्वीकार न हो जाएँ, भारत सरकार लड़ाई-बन्दी की मौजूदा हद में अपनी सेना की ऐसी फौजें रखेगी जो आयोग की सहमति से स्थानीय प्राधिकारियों को विधि और व्यवस्था कायम रखने में सहायता देने के लिए आवश्यक समझी जाएं।

३. भारत सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि जम्मू और काश्मीर राज्य की सरकार सार्वजनिक रूप से यह प्रख्यापित करने के लिए कि शांति विधि और व्यवस्था की रक्षा की जाएगी और सभी मानव अधिकार तथा राजनीतिक अधिकार जनता को प्राप्य होंगे, यथाशक्ति सभी उपाय काम में लाएगी।

(ग) १. हस्ताक्षर हो जाने के बाद, जैसा भी दोनों सरकारों और आयोग के बीच तय हो, संधि-करारनामा का पूरा पाठ या उसके सिद्धांतों के बारे में एक विज्ञप्ति सार्वजनिक रूप से घोषित की जाएगी।

भाग ३

भारत सरकार और पाकिस्तान की सरकार फिर से प्रतिज्ञान करती हैं कि जम्मू और काश्मीर राज्य का भविष्य लोगों की इच्छानुसार निर्णीत होगा और इस उद्देश्य से, संधि करारनामा के स्वीकार हो जाने पर, दोनों सरकारें न्यायसंगत और न्याययुक्त शर्तों के तय करने के लिए, जिससे मत-अभिव्यक्ति स्वतंत्र हो सके, आयोग से परामर्श करने का करार करती हैं।

आयोग का प्रस्ताव

५ जनवरी, सन् १९४९

भारत और पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र का आयोग···

भारत सरकार से उनके २३ दिसम्बर के पत्र द्वारा और पाकिस्तान सरकार से उनके २५ दिसम्बर, १९४८ के पत्र द्वारा निम्नलिखित सिद्धांतों[1] की जो आयोग के

---

१. जम्मू और काश्मीर राज्य के भारत या पाकिस्तान में अधिमिलन का प्रश्न प्रजातंत्रात्मक ढंग से स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत द्वारा तय किया जाएगा।

२. जनमत उस समय लिया जाएगा जब आयोग को यह ज्ञात हो जाएगा कि १३ अगस्त, १९४८ के आयोग के संकल्प के भाग १ और २ में उल्लिखित लड़ाई-बन्दी और संधि-करारनामा के इन्तज़ाम हो चुके हैं और जनमत सम्बन्धी इन्तजाम पूरे किए जा चुके हैं।

३. (क) संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी-जनरल, आयोग की सहमति से एक जनमत प्रशासक नामित करेगा जिसका व्यक्तित्व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का होगा और जिसे सामान्य रूप से सभी का सामान्य विश्वास प्राप्त होगा। वह विधिवत् जम्मू और काश्मीर की सरकार द्वारा नियुक्त किया जाएगा।

(ख) जनमत-प्रशासक जनमत संगठित और संचालित करने के लिए और जनमत की स्वतंत्रता और निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए जम्मू और काश्मीर राज्य से ऐसे अधिकार प्राप्त करेगा जो वह आवश्यक समझे।

(ग) जनमत प्रशासक को ऐसे सहायकों और प्रेक्षकों को, जिन्हें वह आवश्यक समझे, नियुक्त करने का प्राधिकार होगा।

४. (क) आयोग के १३ अगस्त १९४८ के संकल्प के भाग १ और २ के कार्यान्वित हो जाने के बाद, और जब आयोग इस बात से संतुष्ट हो जाए कि राज्य में शांतिमय स्थिति फिर से स्थापित हो गई है, आयोग और जनमत प्रशासक, भारत सरकार के परामर्श से, भारतीय और राज्य की सशस्त्र फौजों के अन्तिम निपटारे के बारे में तय करेंगे, फौजों का निपटारा राज्य की सुरक्षा और जनमत की स्वतंत्रता का यथोचित ध्यान रखते हुए किया जाएगा।

(ख) जहां तक १३ अगस्त के संकल्प के भाग २ के क (२) में निर्दिष्ट प्रदेश का सम्बन्ध है, उस प्रदेश में सशस्त्र फौजों का अंतिम निपटारा आयोग और जनमत प्रशासक, स्थानीय अधिकारियों के परामर्श से करेंगे।

५. राज्य में सभी असैनिक और सैनिक प्राधिकारी एवं राज्य के प्रमुख राजनीतिक दलों से अपेक्षा की जाएगी कि वे जनमत की तैयारी और उसके संग्रह में जनमत प्रशासक को सहयोग दें।

६. क. राज्य के सभी नागरिकों को, जो उपद्रव के कारण राज्य से बाहर चले गए हैं, राज्य में वापिस लौटने और नागरिकों की तरह अपने समस्त अधिकारों को प्रयोग करने के लिए, आमंत्रित किया जाएगा और उन्हें राज्य में वापस आने की स्वतंत्रता होगी। देश-प्रत्यावर्तन में सुविधा देने के प्रयोजन से दो आयोग नियुक्त किए जाएंगे। एक में भारत द्वारा नामित व्यक्ति होंगे और दूसरे में पाकिस्तान द्वारा नामित व्यक्ति। आयोग जनमत-प्रशासक के निदेशाधीन कार्य करेगा। इस उपबन्ध को कार्यान्वित करने में भारत और पाकिस्तान की सरकारें और जम्मू और काश्मीर राज्य में सभी प्राधिकारी जनमत-प्रशासक से सहयोग करेंगे।

ख. ऐसे सभी व्यक्तियों से [राज्य के नागरिकों के अलावा] जो, १५ अगस्त, १९४७ को या उसके बाद वैध प्रयोजनों के अलावा अन्य प्रयोजनों के लिए, राज्य में घुस आए हैं राज्य से चले जाने को कहा जाएगा।

१३ अगस्त, १९४८ के संकल्प के पूरक स्वरूप हैं, स्वीकृति मिल जाने पर

भारत और पाकिस्तान की सरकारों से संस्तुत करता है कि करारनामा के अनुसार जैसी कि व्यवस्था आयोग के १३ अगस्त १९४८ के संकल्प में की गई है, पहली जनवरी १९४९ की मध्यरात्रि के एक मिनट पूर्व लड़ाई बन्दी के आदेश देने की तत्काल कार्यवाही करें, और

संकल्प करता है कि वह १३ अगस्त १९४८ के संकल्प और उपर्युक्त सिद्धांतों द्वारा आरोपित दायित्वों को पूरा करने के लिए फिर निकट भविष्य में उप-महाद्वीप को लौटेगा।

अध्याय ८ से सम्बन्धित

सत्रह दिसम्बर, १९४९ को आयोजित सुरक्षा परिषद् की ४५७ वीं बैठक में लिए गए विनिश्चय के अनुसार जम्मू और काश्मीर के बारे में संयुक्त

---

७. जम्मू और काश्मीर राज्य में स्थित सभी प्राधिकारियों का, जनमत प्रशासक के सहयोग से, यह सुनिश्चित करने का दायित्व होगा कि···

क. जनमत संग्रह में मतदाताओं को न कोई धमकी दी जाती है, न उनपर कोई ज़ोर-दवाव डाला जाता है, न उन्हें घूस दिया जाता है और न उन पर अन्य प्रकार से कोई बेजा दवाव डाला जाता है।

ख. सम्पूर्ण राज्य में वैध राजनीतिक कार्यकलापों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाता। राज्य के सभी नागरिक, चाहे जो भी उनका धर्म हो, और चाहे जिस जाति या दल के वे सदस्य हों, भारत या पाकिस्तान में राज्य के अधिमिलन के प्रश्न पर मतदान कर सकेंगे और अपने विचारों को अभिव्यक्त कर सकेंगे और ऐसा करने की उन्हें स्वतंत्रता होगी। राज्य में प्रेस,और भाषा सम्बन्धी स्वतंत्रता, सम्मेलन की स्वतंत्रता और यात्रा की स्वतंत्रता होगी, इसमें वैध प्रयोजनों के लिए राज्य में आने-जाने की भी स्वतंत्रता शामिल है।

ग. सभी राजनीतिक बन्दी छोड़ दिए जाते हैं।

घ. राज्य के सभी भागों में अल्पसंख्यकों को पर्याप्त संरक्षण दिए जाते हैं, और

ङ. किसी को परेशान या उसपर अत्याचार नहीं किया जाता है।

८. जनमत-प्रशासक भारत और पाकिस्तान के लिए नियुक्त संयुक्त राष्ट्र आयोग को ऐसी समस्याओं को, जिनके बारे में उसे सहायता की अपेक्षा हो, निर्देशित कर सकेगा, और आयोग अपने विवेक से, अपने सुपुर्द किसी उत्तरदायित्व को अपनी ओर से पूरा करने के लिए जनमत प्रशासक से कह सकेगा।

९. जनमत संग्रह की समाप्ति पर, जनमत प्रशासक उसके परिणाम को आयोग और जम्मू और काश्मीर सरकार को सूचित करेगा। आयोग तत्पश्चात् सुरक्षा परिषद् को प्रमाणित करेगा कि आया जनमत संग्रह स्वतंत्र और निष्पक्ष रहा है या नहीं।

१०. संधि करारनामा पर हस्ताक्षर हो जाने के बाद, उपर्युक्त प्रस्तावों के ब्यौरे आयोग के १३ अगस्त १९४८ के संकल्प के भाग ३ में निर्दिष्ट ढंग से परामर्श लेने के बाद निश्चित किए जाएंगे। इन परामर्शों में जनमत प्रशासक पूरी तौर से भाग लेगा।

राष्ट्र की सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट जनरल ए० जी० एल० मैकनाटन के प्रस्ताव

सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेंट के निम्नलिखित प्रस्तावों के पीछे मुख्य विचारणीय बातें इस प्रकार थीं :

(क) प्रजातांत्रिक ढंग से स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत द्वारा, जो यथाशीघ्र आयोजित किया जाएगा, जम्मू और काश्मीर के भविष्य का निर्धारण।

(ख) राज्य के निवासियों द्वारा स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त मत के अनुसार, जैसा कि दोनों सरकारें चाहती हैं, भारत और पाकिस्तान की सरकारों के बीच इस प्रश्न का समाधान।

(ग) संयुक्त राष्ट्र के तत्त्वावधान में दोनों सरकारों के बीच निश्चित मूल सिद्धांतों पर पर्याप्त मात्रा में सहमति बनाए रखना।

(घ) पिछले विवादास्पद विषयों पर अलाभकारी वाद-विवाद न करना और भविष्य में दोनों महान् राष्ट्रों के बीच अच्छे पड़ोसी जैसे और रचनात्मक सहयोग के लिए आशा रखना।

जनमत से पूर्व निःशस्त्रीकरण

२. उत्तरोत्तर निःशस्त्रीकरण का एक सम्मत कार्यक्रम होगा उसका मूल सिद्धांत लड़ाई-बन्दी रेखा के दोनों तरफ सशस्त्र फौजों की संख्या में कमी करना होगा, यह कमी ऐसे प्रक्रमों में फौजों के हटाने, उनको निःशस्त्र करने और उनको भंग करने से की जा सकती है जिससे लड़ाई-बन्दी रेखा के दोनों तरफ किसी भी स्थल पर लोगों को कोई भय न हो।

उद्देश्य यह होगा कि जम्मू और काश्मीर राज्य में लड़ाई-बन्दी रेखा के दोनों तरफ सशस्त्र कर्मचारियों की संख्या घटाकर कम से कम रखी जाए जो सुरक्षा और स्थानीय विधि एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यक हो, यह संख्या काफी कम होगी और फौजों की तैनाती इस प्रकार की जाएगी कि जनमत के प्रयोजनों के लिए मत की स्वतंत्र अभिव्यक्ति पर कोई प्रतिबन्ध न रहे।

(क) निःशस्त्रीकरण के कार्यक्रम में, जम्मू और काश्मीर राज्य से पाकिस्तान की नियमित फौजों का हटाया जाना, और लड़ाई-बन्दी की भारतीय रेखा की तरफ भारत की ऐसी नियमित फौजों का हटाया जाना, जिनकी सुरक्षा के लिए या स्थानीय विधि और व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यकता न हो, शामिल होगा। इस कार्यक्रम में स्थानीय सेनाओं, जिनमें एक तरफ काश्मीर राज्य की सशस्त्र फौजें और मिलीशिया और दूसरी तरफ आजाद फौजें शामिल हैं, को भंग करके और निःशस्त्र करके उनकी संख्या में कमी करना भी शामिल होगा।

(ख) निःशस्त्रीकरण के उपर्युक्त कार्यक्रम में 'उत्तरी क्षेत्र' भी शामिल होगा, और इसका प्रशासन, संयुक्त राष्ट्र के नियंत्रणाधीन, वर्तमान स्थानीय

प्राधिकारियों द्वारा किया जाता रहेगा।

करारनामा का संस्तुत आधार

३. भारत और पाकिस्तान की सरकारें निम्नलिखित बातों पर विलम्बतम ३१ जनवरी, १९५० तक न्यूयार्क में करार करेंगी।

(क) पाकिस्तान की सरकार बिना किसी शर्त के भारत सरकार को आश्वासन देगी कि वह अपनी सीमा के अन्दर प्रभावपूर्ण ढंग से जम्मू और काश्मीर में कबाइलियों के आक्रमण की किसी भी सम्भावना को रोकेगी जिससे किसी भी परिस्थिति में कबाइली पाकिस्तान के प्रदेश से या वहां से होकर अवैधरूप से जम्मू और काश्मीर राज्य में दाखिल न हो सकें। पाकिस्तान सरकार की जिम्मेदारी होगी कि वह संयुक्त राष्ट्र के ज्येष्ठ सैनिक प्रेक्षक को सूचित करें और संतुष्ट करें कि इस प्रयोजन से जो प्रबन्ध किए गए हैं वे काफी हैं और काफी रहेंगे।

(ख) भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार इसकी संपुष्टि करेगी कि 'लड़ाई-बन्दी रेखा' की अलंघनीयता बराबर कायम रहेगी।

(ग) उपर्युक्त पैराग्राफ २ में उल्लिखित निशस्त्रीकरण के मूल सिद्धांतों पर दोनों सरकारें सहमत होंगी।

(घ) सुरक्षा और स्थानीय विधि एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए आवश्यक न्यूनतम फौजों के बारे में और उनकी सामान्य तैनाती के बारे में दोनो सरकारें सहमत होंगी।

(च) उपर्युक्त पैराग्राफ २ में निर्दिष्ट स्तर तक फौजों में कमी किस तारीख तक करनी है, इस बारे में दोनों सरकारें सहमत होंगी।

(छ) इस बारे में वे सहमत होंगी कि उत्तरोत्तर क्या उपाय किए जाएं जिससे उपर्युक्त पैराग्राफ २ में उल्लिखित स्तर तक फौजें कम की जा सकें और उन्हें पुनर्वितरित किया जा सके।

४. उपर्युक्त विषयों के बारे में भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार इससे भी सहमत होंगी कि संयुक्त राष्ट्र का प्रतिनिधि, जो दोनों सरकारों की सहमति से संयुक्त राष्ट्र के सेक्रेटरी-जनरल द्वारा नियुक्त किया जाएगा, सशस्त्र फौजों में कमी करने के उत्तरोत्तर उपायों के कार्यान्वयन और सशस्त्र फौजों के पुनर्वितरण की देख-रेख करेगा, और संयुक्त राष्ट्र के इस प्रतिनिधि का लड़ाई-बन्दी रेखा के दोनों तरफ लोगों को यह आश्वासन देने का उत्तरदायित्व होगा कि इस प्रक्रिया में किसी भी प्रकार डरने का कोई कारण नहीं है। संयुक्त राष्ट्र के इस प्रतिनिधि का यह कर्त्तव्य और अधिकार होगा कि वह

(क) उपर्युक्त पैराग्राफ ३ उपपैराग्राफ ग, घ, ङ के अनुसार पक्षों में दिए गए करारनामों की व्याख्या करे, और

(ख) भारत और पाकिस्तान की सरकारों के परामर्श से उपर्युक्त पैराग्राफ ३ (च) में निर्दिष्ट सशस्त्र फौजों में कमी करने और उनको पुन-

वितरित करने की योजनाओं के कार्यान्वयन को निश्चित करे।

५. जब संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि के संतोषानुसार जनमत के पूर्व निःशस्त्रीकरण का सम्मत कार्यक्रम निष्पादित कर लिया जाए, तब जनमत प्रशासक, आयोग के ५ जनवरी, १९४९ के संकल्प के उपवन्धों, जो आयोग के १३ अगस्त, १९४८ के संकल्प के साथ भारत और पाकिस्तान की सरकारों द्वारा स्वीकृत किए जा चुके हैं और जिनकी इन सरकारों द्वारा पुनः सम्पुष्टि की जाती है, जहां तक उनमें उल्लिखित उपबन्ध इस लेख्य के प्रासंगिक उपबन्धों द्वारा संशोधित हुए हैं, के अधीन उसको सुपुर्द कर्तव्यों को निष्पादित करने की तुरन्त कार्यवाही करेगा। जनमत प्रशासक के कर्तव्य और अधिकार वही रहेंगे जो आयोग के ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्प में दिए हुए हैं।

६. संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि को भारत और पाकिस्तान की सरकारों को ऐसे कोई भी सुझाव देने का प्राधिकार होगा जो काश्मीर प्रश्न के शीघ्र और स्थायी समाधान में सहायक हों, उसे अपनी सेवाएं दोनों सरकारों को अर्पित करने का भी प्राधिकार होगा।

सुरक्षा परिषद् का संकल्प
१४ मार्च, सन् १९५०

बीस जनवरी और इक्कीस अप्रैल, सन् १९४८ के संकल्पों द्वारा भारत और पाकिस्तान के लिए स्थापित संयुक्त राष्ट्र आयोग की रिपोर्टें प्राप्त होने पर और उन पर ध्यान देने के बाद।

और सत्रह दिसम्बर सन् १९४९ को सुरक्षा परिषद् द्वारा लिए गए विनिश्चय के अनुसार भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों से जनरल ए० जी० एल० मैकनाटन द्वारा की गई वार्ता के फलस्वरूप जनरल की रिपोर्ट प्राप्त होने और उसपर ध्यान देने के बाद,

भारत और पाकिस्तान की सरकारों को लड़ाई-बन्दी के लिए, जम्मू और काश्मीर राज्य के निःशस्त्रीकरण के लिए और प्रजातांत्रिक ढंग से स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत द्वारा लोगों की इच्छा के अनुसार अंतिमरूप से राज्य के निस्तारण को विनिश्चय करने के लिए, संयुक्त राष्ट्र आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों में समाविष्ट करारनामों पर सहमत होने के लिए उनकी प्रशंसा करते हुए, और विशेष रूप से पक्षों की उनके द्वारा इन संकल्पों को आंशिक रूप से···

१. पहली जनवरी, सन् १९४९ को लड़ाई-बन्दी करके।

२. सत्ताईस जुलाई, सन् १९४९ को लड़ाई-बन्दी-रेखा स्थापित करके, और

३. इससे सहमत होकर कि फ्लीट एडमिरल चेस्टर डब्ल्यू निमिट्ज़ जनमत-प्रशासक होंगे,

कार्यान्वित करने के लिए प्रशंसा करते हुए।

इस बात का विचार करते हुए कि बाकी कठिनाइयों का समाधान मौलिक सिद्धांतों पर पहले से हुई काफी मात्रा में सहमति के आधार पर किया जाना चाहिए, और यह कि राज्य के निःशस्त्रीकरण के लिए और निवासियों द्वारा स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त मत के अनुसार उसका भविष्य निर्धारण के लिए तुरन्त उपाय किए जाने चाहिए,

सुरक्षा परिषद्

१. भारत और पाकिस्तान की सरकारों से अनुरोध करती है कि वे अपने अधिकारों या दावों को प्रभावित किए बिना और विधि एवं व्यवस्था की अपेक्षाओं का समुचित ध्यान रखते हुए, इस संकल्प की तारीख से पांच महीनों की अवधि के भीतर, जनरल मैकनाटन के प्रस्ताव के पैराग्राफ २ के सिद्धांतों के आधार पर या इन सिद्धांतों के पारस्परिक सम्मत संशोधनों के आधार पर निःशस्त्रीकरण का कार्यक्रम तैयार करेंगी।

२. निम्नलिखित प्रयोजनों के लिए संयुक्त राष्ट्र का एक प्रतिनिधि नियुक्त करने का विनिश्चय करती है, जिसे अपने कर्तव्यों को, ऐसे स्थान या उन स्थानों पर, जिन्हें वे उचित समझें, निष्पादित करने का अधिकार होगा:

(क) ऊपर निर्दिष्ट निःशस्त्रीकरण के कार्यक्रम को तैयार करना और उसके कार्यान्वियन की देख-रेख करना और निःशस्त्रीकरण के लिए पक्षों में निष्पादित करारनामों की व्याख्या करना।

(ख) भारत और पाकिस्तान की सरकारों को अपनी सेवाएं अर्पित करना और इन सरकारों या सुरक्षा परिषद् के समक्ष ऐसे कोई सुझाव रखना, जो, उसके मत में, जम्मू और काश्मीर राज्य के बारे में दोनों सरकारों के बीच उत्पन्न विवाद के शीघ्र और स्थायी समाधान के लिए सहायक सिद्ध हों।

(ग) सुरक्षा परिषद् के वर्तमान संकल्पों के कारण और संयुक्त राष्ट्र आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों में समाविष्ट पक्षों के करारनामों के कारण संयुक्त राष्ट्र आयोग पर जो ज़िम्मेदारियां आयद हो गई हैं और जो उसे अधिकार प्राप्त हो गए हैं उन सबको निभाना और प्रयुक्त करना।

(घ) निःशस्त्रीकरण के उपयुक्त प्रक्रम पर पक्षों में निष्पन्न करारनामों के अधीन जनमत-प्रशासक को सौंपे गए कर्त्तव्यों को उसके द्वारा पालन करने के लिए व्यवस्था करना।

(च) सुरक्षा परिषद् को रिपोर्ट करना, जैसा वह आवश्यक समझे, और अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करना तथा ऐसी सिफारिशें करना, जो वह चाहे।

३. दोनों सरकारों से प्रार्थना करती है कि वे यह सुनिश्चित करने के लिए कि लड़ाई-बन्दी सम्बन्धी उनके करारनामों का सम्यक् पालन होता रहेगा सभी आवश्यक पूर्वोपाय करें, और उनसे यह अनुरोध करती है कि वे आगे वार्ता करने के लिए अनुकूल वातावरण पैदा करने और उसे बनाए रखने की गरज़ से सभी सम्भव उपाय करें,

४. भारत और पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र के आयोग के सदस्यों के प्रति और जनरल ए० जी० एल० मैकनाटन के प्रति उनके कठिन और फलप्रद परिश्रम के लिए धन्यवाद प्रकट करती है,

५. इससे सहमत है कि भारत और पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र आयोग समाप्त कर दिया जाए, और यह विनिश्चय करती है कि ऐसा दोनों पक्षों द्वारा संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि को यह सूचित किए जाने के एक महीने बाद होगा कि वे उपर्युक्त पैराग्राफ २ (ग) में निर्दिष्ट संयुक्त-राष्ट्र आयोग की ज़िम्मेदारियों, और उसके अधिकारों को उसे हस्तांतरित किए जाने में सहमत हैं।

सुरक्षा परिषद् का संकल्प
३० मार्च, सन् १९५१

सुरक्षा परिषद् के संकल्प दिनांक १४ मार्च, सन् १९५० द्वारा परिकल्पित अपने मिशन के सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि सर ओवन डिक्सन की रिपोर्ट की प्राप्ति और उसके अध्ययन के बाद।

यह जानकर कि भारत और पाकिस्तान की सरकारों ने संयुक्त राष्ट्र आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों के उपबन्धों को स्वीकार कर लिया है और यह पुनःप्रतिज्ञान किया है कि जम्मू और काश्मीर राज्य का भविष्य संयुक्त राष्ट्र के तत्त्वावधान में प्रजातांत्रिक ढंग से आयोजित स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत द्वारा किया जाएगा ;

और यह भी जानकर कि २७ अक्तूबर, सन् १९५० को 'आल जम्मू और काश्मीर नेशनल कान्फरेन्स' की आम सभा ने एक संकल्प पारित किया है जिसमें यह सिफारिश की गई है कि 'जम्मू और काश्मीर राज्य की भविष्य की रूप-रेखा और सम्बन्ध' के निर्धारण के प्रयोजन के लिए एक संविधान सभा बुलाई जाएगी; और उत्तरदायी प्राधिकारियों के बयानों से यह भी जानकर कि इस प्रकार की संविधान सभा के बुलाने की कार्यवाही के किए जाने का प्रस्ताव है और यह कि जिस क्षेत्र से ऐसी संविधान सभा का निर्वाचन किया जाएगा वह जम्मू और काश्मीर के सम्पूर्ण प्रदेश का केवल एक भाग है,

सम्बन्धित सरकारों और प्राधिकारियों का ध्यान सुरक्षा परिषद् के २१ अप्रैल, सन् १९४८, ३ जून, सन् १९४८ और १४ मार्च, सन् १९५० के संकल्पों और संयुक्त राष्ट्र आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों में

निहित इस सिद्धांत की ओर दिलाते हुए कि जम्मू और काश्मीर राज्य का अंतिम निस्तारण, संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में प्रजातांत्रिक ढंग से आयोजित स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत के ज़रिये जम्मू और काश्मीर राज्य के लोगों द्वारा अभिव्यक्त इच्छा के अनुसार किया जाएगा।

यह प्रतिज्ञान करते हुए कि "आल जम्मू और काश्मीर नेशनल कान्फरेन्स" की आम सभा द्वारा संस्तुत संविधान सभा का आयोजन और सम्पूर्ण राज्य या उसके भाग की भविष्य की रूपरेखा और सम्बन्ध-निर्धारण के बारे में संविधान सभा द्वारा की गई किसी कार्यवाही को उपर्युक्त सिद्धांत के अनुसार राज्य का निस्तारण न समझा जाएगा;

अपना यह विश्वास व्यक्त करते हुए कि अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के अपने प्रारम्भिक दायित्व के निर्वहन में सुरक्षा परिषद् का यह कर्तव्य होगा कि वह काश्मीर विवाद के सौहार्दपूर्ण समाधान में दोनों पक्षों की सहायता करे और यह कि अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के लिए काश्मीर विवाद का शीघ्र समाधान अत्यावश्यक है;

सर ओवन डिक्सन की रिपोर्ट से यह जानकारी प्राप्त करते हुए कि दोनों पक्षों में निम्नलिखित बातों के सम्बन्ध में मतभेद के कारण समझौता नहीं हो सका है :

(क) जनमत-संग्रह के पूर्व राज्य के निःशस्त्रीकरण की सीमा और प्रक्रिया, और

(ख) स्वतंत्र और न्याययुक्त जनमत-संग्रह सुनिश्चित करने के लिए सरकार के कार्यों पर अपेक्षित नियंत्रण की मात्रा,

सुरक्षा परिषद्

१. सर ओवन डिक्सन की प्रार्थना के अंगीकरण में उनके त्यागपत्र को स्वीकार करती है और जिस योग्यता और लगन से सर ओवन ने अपना कार्य किया है उसके प्रति आभार प्रकट करती है,

२. सर ओवन डिक्सन के स्थान पर भारत और पाकिस्तान के लिए एक संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि नियुक्त करती है,

३. संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि को उपमहाद्वीप जाने और भारत सरकार तथा पाकिस्तान सरकार से परामर्श करने के उपरान्त भारत और पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों के आधार पर जम्मू और काश्मीर राज्य का निःशस्त्रीकरण करने का अनुदेश देती है।

४. दोनों पक्षों से अनुरोध करती है कि जम्मू और काश्मीर राज्य के निःशस्त्रीकरण में संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि को पूरा सहयोग दें,

५. संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि को अनुदेश, देती है कि वह उपमहाद्वीप में पहुंचने की तारीख से तीन महीनों के अन्दर सुरक्षा परिषद् को रिपोर्ट देगा। यदि रिपोर्ट देने के समय उसने उपर्युक्त पैराग्राफ ३ के अनुसार

निःशस्त्रीकरण नहीं किया है या इस प्रकार की निःशस्त्रीकरण योजना के सम्बन्ध में दोनों पक्षों की सहमति न प्राप्त की हो तो संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ में सम्मत संकल्पों के कार्यान्वियन और व्याख्या के सम्बन्ध में दोनों पक्षों के मतभेद की ऐसी बातों की, जिनका निःशस्त्रीकरण के लिए उसके मत में समाधान आवश्यक है, रिपोर्ट सुरक्षा परिषद् को करेगा;

६. दोनों पक्षों से अनुरोध करती है कि वे, यदि संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि से विचार-विमर्श करने पर उनमें पूरी सहमति नहीं होती, मतभेद की ऐसी सभी बातों पर, जिसके बारे में संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि उपर्युक्त पैराग्राफ ५ के अनुसार रिपोर्ट करे, मध्यस्थनिर्णय स्वीकार करें, यह मध्यस्थ-निर्णय दोनों पक्षों के परामर्श से इण्टरनेशनल कोर्ट आफ जस्टिस के प्रेसीडेण्ट द्वारा नियुक्त एक मध्यस्थ या कई मध्यस्थों द्वारा कार्यान्वित किया जाएगा;

७. निश्चय करती है कि सैनिक प्रेक्षक दल राज्य की लड़ाई-बन्दी रेखा की निगरानी करता रहेगा;

८. भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार से प्रार्थना करती है कि वे लड़ाई बन्दी के समझौते का पूर्णतः पालन करती रहेंगी और उनसे अनुरोध करती है कि वे ऐसे सभी यथासम्भव उपाय करेंगी जिनसे और वार्ता करने के लिए अनुकूल वातावरण पैदा हो और कायम रहे और यह कि वे ऐसी कोई कार्यवाही नहीं करेंगी जिससे न्याययुक्त और शांति-पूर्ण समझौता न होने की सम्भावना हो।

९. सेक्रेटरी-जनरल से प्रार्थना करती है कि वह भारत और पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि को ऐसी सभी सेवाएं-सुविधाएं उपलब्ध करेगा जो इस संकल्प के उपबन्धों के कार्यान्वियन के लिए आवश्यक हों।

पहली मई, सन् १९५१ को जम्मू और काश्मीर के अध्यक्ष द्वारा निर्गत उद्घोषणा

चूंकि जम्मू और कशमीर राज्य के लोगों की यह आम इच्छा है कि राज्य के लिए संविधान बनाने के प्रयोजन से एक संविधान सभा स्थापित की जाए;

चूंकि आमतौर से यह अनुभव किया जाता है कि सभा के बुलाए जाने में कोई विलम्ब राज्य के भावी कल्याण के लिए अहितकारी होगा;

और चूंकि महाराजा द्वारा निर्गत ५ मार्च, सन् १९४८ की उद्घोषणा के खंड ४ से ६ की शर्तों से, जिनका सम्बन्ध नेशनल असेम्बली के बुलाए जाने से है, वर्तमान स्थिति की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती;

इसलिए, मैं, युवराज करणसिंह, एतद् द्वारा निर्देश करता हूं कि…

१. जम्मू और काश्मीर राज्य के लिए संविधान बनाने के प्रयोजन से प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधियों की एक संविधान सभा तुरन्त गठित की जाएगी;
२. उक्त निर्वाचनों के प्रयोजनार्थ राज्य को अनेक प्रादेशिक क्षेत्रों में विभाजित किया जाएगा, प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र में ४०,००० या यथासम्भव उसके निकट लोगों की आबादी होगी, और प्रत्येक क्षेत्र एक सदस्य को निर्वाचित करेगा;
३. संविधान सभा में निर्वाचन प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर होगा, अर्थात् विज्ञप्ति सं०······में परिभाषित ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को, जो राज्य का निवासी हो और जो मार्च की पहली तारीख को २१ वर्ष से कम की उम्र का न हो, और जो नियमों में निर्धारित अवधि तक निर्वाचन-क्षेत्र में निवासी रहा हो, उस निर्वाचन-क्षेत्र की निर्वाचन-सूची में अपना नाम दर्ज कराने का अधिकारी होगा, बशर्ते ऐसा कोई व्यक्ति जिसका मस्तिष्क अस्वस्थ हो या
जिसके बारे में किसी सक्षम न्यायालय ने इस प्रकार की घोषणा की हो, निर्वाचन-सूची में अपना नाम नहीं दर्ज करा सकेगा ।
४. निर्वाचन में मतदान प्रत्यक्ष और गुप्त शलाका द्वारा होगा ।
५. संविधान सभा को कार्य करने का अधिकार होगा भले ही उसके किसी सदस्य का स्थान रिक्त हो ।
६. संविधान सभा अपनी कार्यावली स्वयं बनाएगी और अपने कार्य तथा प्रक्रियासंचालन के लिए नियमावली बनाएगी ।

सरकार इस उद्घोषणा की शर्तों को कार्यान्वित करने के लिए यथावश्यक अनुदेश और आदेश निर्गत करेगी और नियम बनाएगी ।

सुरक्षा परिषद् का संकल्प
१० नवम्बर, सन् १९५१

सुरक्षा परिषद्

तीस मार्च, सन् १९५१ के संकल्प द्वारा नियुक्त संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि डा० फ्रैंक ग्राहम की रिपोर्ट की प्राप्ति और उसके अध्ययन के बाद और १८ अक्तूबर को परिषद् में डा० ग्राहम के अभिभाषण को सुनने के बाद ।

संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि द्वारा ७ सितम्बर, सन् १९५१ को भारत और पाकिस्तान के प्रधान मंत्रियों को प्रस्तुत निःशस्त्रीकरण कार्यक्रम जो दोनों पक्षों द्वारा पहले दिए गए आश्वासन के अनुसार कार्यान्वित किया जा सकता था, के आधार का अनुमोदन करते हुए ।

१. सन्तोष प्रकट करती है कि दोनों पक्ष डा० ग्राहम के प्रस्तावों के उन भागों पर सहमत हैं, जिनमें उनकी इस दृढ़ प्रतिज्ञा का उल्लेख है कि वे

शांतिमय समझौते की कोशिश करेंगे, लड़ाई-बन्दी करारनामा का अनुपालन करेंगे और जिसमें यह कहा गया है कि वे इस सिद्धांत को स्वीकार करते हैं कि संयुक्त राष्ट्र के तत्त्वावधान में आयोजित स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत द्वारा जम्मू और काश्मीर राज्य के अधिमिलन को निश्चित किया जाएगा;

२. संयुक्त राष्ट्र के प्रतिनिधि को अनुदेश देती है कि वह जम्मू और काश्मीर राज्य के निःशस्त्रीकरण को कार्यान्वित करने की योजना पर दोनों पक्षों द्वारा समझौता किए जाने की अपनी कोशिश जारी रखें;

३. पक्षों से अनुरोध करती है कि वे संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि को उनके बीच मतभेद दूर करने के उसके प्रयासों में पूरा सहयोग दें;

४. संयुक्त राष्ट्र प्रतिनिधि को अनुदेश देती है कि वह इस संकल्प के कार्यान्वियन के विलम्बतम ६ सप्ताह के भीतर अपने प्रयासों की रिपोर्ट सुरक्षा परिषद् को दें और साथ ही उसको सुपुर्द समस्याओं के बारे में अपने विचार भी व्यक्त करें।

सुरक्षा परिषद् का संकल्प
२४ जनवरी, सन् १९५७

सुरक्षा परिषद् जम्मू और काश्मीर राज्य से सम्बन्धित विवाद के बारे में भारत और पाकिस्तान सरकारों के प्रतिनिधियों के कथन को सुनने के बाद,

२१ अप्रैल, सन् १९४८, ३ जून, सन् १९४८, १४ मार्च, सन् १९५० और ३० मार्च सन् १९५१ के अपने संकल्पों और भारत तथा पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र आयोग के १३ अगस्त, सन् १९४८ और ५ जनवरी, सन् १९४९ के संकल्पों में निहित इस सिद्धांत की ओर, कि जम्मू और काश्मीर राज्य का अंतिम निस्तारण संयुक्त राष्ट्र के तत्त्वावधान में आयोजित प्रजातांत्रिक ढंग से संचालित स्वतंत्र और निष्पक्ष जनमत द्वारा लोगों के अभिव्यक्त मतानुसार किया जाएगा, सम्बन्धित सरकारों और प्राधिकारियों का ध्यान आकृष्ट करते हुए,

तीस मार्च, सन् १९५१ के अपने संकल्प में उल्लिखित इस प्रतिज्ञा को फिर दोहराता है और यह घोषित करता है कि आल जम्मू और काश्मीर नेशनल कान्फरेंस की आम सभा द्वारा संस्तुत संविधान सभा के आयोजन से और सम्पूर्ण राज्य या उसके किसी भाग की भविष्य की रूप-रेखा या उसके सम्बन्ध के निर्धारण के लिए की गई या की जाने वाली किसी कार्यवाही से या संविधान सभा की किसी ऐसी कार्यवाही के समर्थन में सम्बन्धित पक्षों द्वारा की गई या की जाने वाली किसी कार्यवाही से उपर्युक्त सिद्धांतों के अनुसार राज्य का निस्तारण नहीं समझा जाएगा।

निश्चय करता है कि विवाद पर वह विचार-विमर्श जारी रखेगी।

सुरक्षा परिषद् का संकल्प
२१ फरवरी, सन् १९५७

सुरक्षा परिषद्

भारत पाकिस्तान प्रश्न पर २४ जनवरी, सन् १९५७ के अपने संकल्प, इसके पूर्व पारित अपने संकल्प और भारत तथा पाकिस्तान के लिए नियुक्त आयोग के संकल्प की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए :

सुरक्षा परिषद् के प्रेसीडेण्ट (स्वीडेन के प्रतिनिधि) से प्रार्थना करता है कि वे सुरक्षा परिषद् के पिछले संकल्पों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार से विचार-विमर्श करके ऐसे किसी प्रस्ताव की जांच करें जो उनके मत में विवाद के समाधान में योगदान दे सकें, और इस प्रयोजन के लिए उपमहाद्वीप जाएं, और विलम्बतम १५ अप्रैल, सन् १९५७ तक सुरक्षा परिषद् को रिपोर्ट दें,

भारत सरकार और पाकिस्तान सरकार से अनुरोध करती है कि वे उक्त प्रेसीडेण्ट को उनके कार्य-निर्वाह में सहयोग दें और

सेक्रेटरी-जनरल और भारत तथा पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र-प्रतिनिधि से प्रार्थना करती है कि वे प्रेसीडेण्ट को ऐसी सहायता दें जिसकी वे अपेक्षा करें।

संदर्भ पुस्तकें

1. A History of Kashmir by P. N. K. Bamzai, Metropolitan Book Co.
2. Twenty two Fateful Days by D. R. Mankekar, Manaktalas, Bombay.
3. Kashmir—A Study in India Pakistan Relation by Sisir Gupta, Asia Publishing House, Bombay.
4. Legal Aspects after Kashmir problem by H.S. Gurunaj Rao, Asia Publishing House, Bombay.
5. Pakistan—Her Relation with India 1947-66 by K. C. Saxena, Vir Publishing House, New Delhi.
6. The Kashmir Story by B. L. Sharma, Asia Publishing House, Bombay.
7. The Indo-Pakistan Conflict by Russell Briness, Pall Mall Press, London, 1968.
8. India & Pakistan—A Political Analysis by Hugh Tuiker, Pall Mall Press, London, 1967.
9. The Untold Story by Lt. Gen. B. M. Kaul, Allied Publishers Pvt. Ltd., 1967.
10. The Guilty men of 1962 by D. R. Mankekar, The Tulsi Shah Enterprises, Bombay, 1968.
11. Revolution in Pakistan by Herbert Feldman, Oxford University Press, 1967.
12. Indo-Pakistan-War and Peace by Ram Gopal, Pustak Kendra, Lucknow, 1965.
13. India—A Historical Survey—Allied Publishers Pvt. Ltd., 1966.
14. India since 1947 edited by A.Chakrabarti, Allied Publishers Pvt. Ltd., 1967.
15. The Last Years of British India by Michael Edwardes, Allied Publishers Pvt. Ltd., 1963.
16. Accession of Kashmir to India—The Inside Story by M. C. Mahajan, Institute of Public Administration, Sholapur, 1950.
17. Mission with Mountbatten by Campbelle Johnson, Robert Hale, London, 1951.
18. Daily Newspapers—The National Herald, The Sunday Standard, The Pioneer, नवजीवन.

कश्मीर

समस्या और पृष्ठभूमि

गोपीनाथ श्रीवास्तव

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली--६